हिंदी 'नयी कविता' और मराठी 'नव कविता' आंदोलनों का तुलनात्मक अध्ययन

(हैदराबाद विश्वविद्यालय की पीएच.डी. (हिंदी) उपाधि हेतु प्रस्तुत शोध-प्रबंध)

2010

शोधार्थी

मनोहर गंगाधरराव चपळे

निर्देशक:

सच्चिदानंद चतुर्वेदी

हिंदी विभाग,
मानविकी संकाय,
हैदराबाद विश्वविद्यालय,
हैदराबाद - 500 046

विभागाध्यक्ष:

प्रो.रविरंजन

हिंदी विभाग,
मानविकी संकाय,
हैदराबाद विश्वविद्यालय,
हैदराबाद - 500 046

CERTIFICATE

Department of Hindi
School of Humanities
University of Hyderabad
Hyderabad – 500 046

Hyderabad,
Date:

This is to certify that **MANOHAR GANGADHAR RAO CHAPLE** has carried out the research embodied in the present thesis entitled "हिन्दी नई कविता और मराठी नव कविता आन्दोलनों का तुलनात्मक अध्ययन" (**HINDI NAYEE KAVITA AUR MARATHI NAV KAVITA ANDOLANON KA TULANATMAK ADHYAYAN**) for the full period prescribed under Ph.D. ordinances of the University of Hyderabad.

I declare to the best of my knowledge that no part of thesis was earlier submitted for the award of research degree of any university.

Signature of the Supervisor
Dr. SACHIDANANDA CHATURVEDI

Signature of the Candidate
MANOHAR GANGADHAR RAO CHAPLE
Enrollment No: 05HHPH04

Head, Department of Hindi

Dean, School of Humanities

विषयानुक्रमणिका

विषयानुक्रमणिका

पृ.सं.

प्राक्कथन I-VI

प्रथम अध्याय **1-41**
नई कविता

1.1 नयी कविता : पृष्ठभूमि

1.1.1 राजनीतिक

1.1.2 सामाजिक

1.1.3 साहित्यिक

1.2 नयी कविता : नामकरण

1.3 नयी कविता : अवधारणा, परिभाषा

1.4 नयी कविता : आंदोलनात्मक रूप

1.5 नयी कविता की प्रवृत्तियाँ तथा विशेषताएँ

द्वितीय अध्याय **42-71**
मराठी नव कविता : एक परिचय

2.1 आधुनिक मराठी कविता के इतिहास का संक्षिप्त परिचय

2.2.1 आधुनिक मराठी साहित्य इतिहास : काल विभाजन

2.2.2 आधुनिक मराठी कविता-प्रथम कालखंड-1818-1875

2.2.3 आधुनिक मराठी कविता-द्वितीय कालखंड-1876-1886

2.2.4 आधुनिक मराठी कविता-तृतीय कालखंड-1886-1905 (पूर्वार्ध)

2.2.5 आधुनिक मराठी कविता-तृतीय कालखंड-1905-1920 (उत्तरार्ध)

2.2.6 मराठी कविता में रोमेंटिसिज्म का कालसंदर्भ

2.2.7 आधुनिक मराठी कविता चतुर्थ कालखंड-1920-1940

2.2 आधुनिक मराठी साहित्य के इतिहास में 'नव कविता' का स्थान

तृतीय अध्याय **72-122**

हिंदी नई कविता: एक परिचय

3.1 आधुनिक हिंदी कविता के इतिहास का संक्षिप्त परिचय

3.1.1 भारतेंदु-युग

3.1.2 द्विवेदी-युग

3.1.3 छायावाद

3.1.4 प्रगतिवाद

3.1.5 प्रयोगवाद

3.2 आधुनिक हिंदी कविता के इतिहास में 'नई कविता' का स्थान

चतुर्थ अध्याय **123-182**

नई कविता के प्रमुख कवि एवं उनकी काव्य विषयक मान्यताएँ

4.1 सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायण 'अज्ञेय'

4.2 गजानन माधव मुक्तिबोध

4.3 गिरिजा कुमार माथुर

4.4 धर्मवीर भारती

4.5 सर्वेश्वर दयाल सक्सेना

4.6 भवानी प्रसाद मिश्र

4.7 शमशेर बहादुर सिंह

4.8 प्रभाकर माचवे

4.9 केदारनाथ सिंह

4.10 सुमन राजे

पंचम अध्याय **183-234**

मराठी नव कविता के प्रमुख कवि एवं उनकी काव्य विषयक मान्यताएँ

5.1 बाळ सीताराम मर्ढेकर

5.2 पु.शि.रेगे

5.3 सदानंद रेगे

5.4 शरच्चंद्र मुक्तिबोध

5.5 इंदिरा संत

5.6 विं दा करंदीकर

5.7 मंगेश पाडगांवकर

5.8 य.द.भावे

5.9 दिलीप पुरुषोत्तम चित्रे

षष्ठम अध्याय **235-319**

नई कविता और नव कविता आंदोलनों का तुलनात्मक अध्ययन

6.1 उदय और विकास के स्तर पर तुलना

6.2 युगीन परिस्थितियों के स्तर पर तुलना

6.3 विविध दार्शनिक विचारधारात्मक प्रभाव के स्तर पर तुलना

6.4 आंदोलनात्मक रूप से स्तर पर तुलना

6.5 सामाजिक परिवेश के स्तर पर तुलना

6.6 कथ्य और विषय के स्तर पर तुलना

6.7 भाषा एवं शिल्प के स्तर पर तुलना

6.8 अर्थ लय की अवधारणा के स्तर पर तुलना

उपसंहार **320-326**

संदर्भ एवं आधार ग्रंथ सूची **327-347**

प्राक्कथन

साहित्य मानव मन और उसकी संवेदनागत चेतना का प्रतिबिंब और उसके विविध विचारों की शाब्दिक अभिव्यक्ति का रूप है। सचेत मानव का मन निरंतर विचार मग्न रहता है और अपने आसपास की व्यवस्था, समाज, उसके सुख-दुःख आदि के संदर्भ में अपनी वैचारिक एवं भावात्मक प्रतिक्रिया व्यक्त करता रहता है। इसी प्रक्रिया को वह भाषा के माध्यम से साहित्य की विविध विधाओं में अभिव्यक्त करता है। प्रत्येक युग का साहित्य युगीन स्थितियों को प्रकट करता है और अपने युग जीवन और विचारधारा का दर्शन कराता है। अतः हम प्रत्येक युग के साहित्य अध्ययन द्वारा उस युग की समाज व्यवस्था, सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, साहित्यिक गतिविधियों का ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं। अतः साहित्य में प्रत्येक युग का अस्तित्व विद्‍यमान रहता है। रामचंद्र शुक्ल ने साहित्येतिहास की परिभाषा करते हुए लिखा है-"जबकि प्रत्येक देश का साहित्य वहाँ की जनता की चित्तवृत्ति का संचित प्रतिबिंब होता है। तब यह निश्चित है कि जनता की चित्तवृत्ति के परिवर्तन के साथ-साथ साहित्य के स्वरूप में भी परिवर्तन होता चला जाता है... जनता की चित्तवृत्ति बहुत कुछ राजनीतिक, सामाजिक, सांप्रदायिक तथा धार्मिक परिस्थिति के अनुसार होती है।" इस आधार पर भारतीय भाषाओं के साहित्य पर दृष्टिपात करने से स्पष्ट होता है कि प्रत्येक भाषा-भाषी समाज की 'चित्तवृत्ति' अपने-अपने प्रादेशिक, राजनीतिक, सामाजिक, सांप्रदायिक तथा धार्मिक गतिविधियों से प्रभावित है और यह प्रभाव प्रत्येक युग के साथ निरंतर रहा है। अपने युगीन विचारधारा से कोई भी साहित्य अलग नहीं रह पाया। मानव जीवन गतिशीलता का प्रतिबिंब मानव ने साहित्य के माध्यम से अभिव्यक्त किया है। किसी भी भाषा-भाषी समाज को जानने के लिए उस युग के साहित्य का अध्ययन करने पर हम उसे स्पष्ट रूप से जान सकते हैं। अर्थात् युगीन साहित्य के माध्यम से उस युग विशेष की चेतना को, उसकी वैचारिक गतिविधियों को हम जान सकते हैं और उसकी कारण मीमांसा कर सकते हैं। मुझे लगता है साहित्य मानव मन, उसकी चेतना और संवेदना का चित्र है। अतः कोई सृजनात्मक साहित्य पढ़ते हुए उस रचना के साथ मेरी संवेदनात्मक भूमिका निर्मित होती है। इस का प्रत्यय मुझे स्नातक स्तर के साहित्य अध्ययन से होता रहा है। इसी भूमिका

से मेरी साहित्य अध्ययन की रुचि विकसित हुई। हिंदी भाषा साहित्य का अध्येता और मूल रूप से मराठी मातृभाषी साहित्य पाठक होने के कारण मेरी जिज्ञासा तुलनात्मक रूप से जागृत होती रही कि हिंदी की रचनाओं में किस प्रकार के विचार, भाव हैं और मराठी रचनाओं के भाव भावाभिव्यंजना किस प्रकार है, अतः इसी रूप में मैं उभय साहित्य का पाठक बना। स्नातकोत्तर स्तर के अध्ययन से यह रुचि और विकसित हुई। एम.फिल. अनुसंधान के उपरांत पीएच.डी. के शोध विषय के संदर्भ में विचार विमर्श करने पर मुझे लगा कि हिंदी और मराठी साहित्य में सन् 1945 से 1960 तक की काव्यधारा क्रमशः 'नयी कविता' और 'नव कविता' नाम से प्रचलित रही। अतः क्यों न इस पर शोध कार्य किया जाए। इस शोध विषय पर गुरुवर्य डॉ.सच्चिदानंद चतुर्वेदी जी से विचार विमर्श करने पर उन्होंने उत्साहवर्धन कर इस विषय पर शोध करने की अनुमति प्रदान की।

हिंदी और मराठी भाषा बहनें मानी जाती हैं। दोनों का कुल और लिपि एक ही है। अतः प्रादेशिक तत्व होने पर भी दोनों साहित्यों में अधिकतम समानताएँ दिखाई देती हैं। इस रूप में मेरा विचार रहा कि दोनों साहित्य में प्रवाहित 'नयी कविता', 'नव कविता' आंदोलन कैसे निर्मित हुए, क्या वे एक दूसरे का अनुकरण तो नहीं? आदि प्रश्नों की जिज्ञासा तथा दोनों आंदोलनों की कारण मीमांसा करने का और दोनों साहित्यों के अध्ययन से दोनों भाषा-भाषी समाजों की विचारधारा और जीवनदृष्टि को जानने का अवसर इस शोध कार्य से मिला। हिंदी नयी कविता और मराठी नव कविता आंदोलन की पार्श्वभूमि में भारतीय स्वतंत्रता की आशाएँ, मोहभंग और विश्व युद्ध की विभीषिका के साथ युगीन वैचारिक आंदोलन की भूमिका रही है। इस युग का संपूर्ण जीवन और विचारधाराओं के अंकन के साथ मानवीय संवेदना की अभिव्यक्ति उभय कविता आंदोलन में हुई है। अतः इस युग के साहित्य अध्ययन से हम युगीन मानव की चेतना-चिंतन को समझ सकते हैं। इस रूप में यह दोनों आंदोलन अपने युग बोध के साथ जुड़े हुए हैं। आधुनिकता के आरंभ तथा औद्योगिक विज्ञानवादी सभ्यता के साथ मानव की विचारधारा में परिवर्तन हुआ। वह जीवन के प्रति आकांक्षी बना। नए जीवन के स्वप्न बुनने लगा। किंतु स्वतंत्रता प्राप्ति तथा महायुद्ध के बाद उसकी आशाएँ भंग हुईं। मानवीय सभ्यता विज्ञान और यंत्र सभ्यता से संवेदनाहित हो रही थी। अतः स्पर्धा, वर्गवाद आदि की भावना तेज़ होकर मानव अपना प्राकृतिक मानवीय रूप खो रहा था। इस युग के चेतना की संपूर्ण अभिव्यक्ति

उभय साहित्य के ‘नव कविता आंदोलन’ की कविता में हुई है। अतः प्रादेशिक होते हुए भी एक राष्ट्रीय संकट की स्थिति थी जिसका अंकन सटीक रूप से दोनों साहित्यों में हुआ है। जिसका विस्तृत अध्ययन इस शोध प्रबंध में करने का प्रयास किया गया है।

अध्ययन की सुविधा के लिए इस शोध विषय को मैंने छः अध्यायों में विभाजित किया है।

प्रथम अध्याय-‘नई कविता’ शीर्षक में नई कविता की पृष्ठभूमि अवधारणा, परिभाषा, नामकरण और नई कविता की विशेषताओं की चर्चा की गई है और नई कविता आंदोलन को संपूर्ण रूप से जानने का प्रयास किया गया है।

द्वितीय अध्याय में ‘मराठी नव कविता:एक परिचय’ शीर्षक के अंतर्गत मराठी नव कविता की अवधारणा को स्पष्ट किया गया तथा साथ ही आधुनिक मराठी कविता के इतिहास का संक्षिप्त परिचय देते हुए युगीन काव्यधारा में ‘नव कविता’ के स्थान का मूल्यांकन किया गया है।

तृतीय अध्याय ‘हिंदी नई कविता:एक परिचय’ शीर्षक के अंतर्गत आधुनिक हिंदी कविता के इतिहास का संक्षिप्त परिचय देते हुए आधुनिक हिंदी कविता में नयी कविता के स्थान का मूल्यांकन किया गया है। किसी भी साहित्यिक, राजनीतिक आंदोलन के पार्श्व में उस युग के नेता, कवि आदि की राजनीतिक, साहित्य विषयक मान्यताएँ, धारणाएँ महत्वपूर्ण होती हैं। अतः इसकी उपयोगिता को ध्यान में रखते हुए **चतुर्थ अध्याय-‘नयी कविता के प्रमुख कवि एवं उनकी काव्य विषयक मान्यताओं’** शीर्षक में हिंदी के प्रमुख नये कवियों की काव्य विषयक मान्यताओं का विवेचन किया गया है।

पंचम अध्याय-‘मराठी नव कविता के प्रमुख कवि एवं उनकी काव्य विषयक मान्यताएँ’ शीर्षक में मराठी नवकविता के प्रमुख कवियों का जीवन परिचय एवं उनकी काव्य विषयक मान्यताओं का विवेचन किया है, जिससे उनकी काव्य विषयक विचारधारा स्पष्ट होती है।

षष्ठम अध्याय में ‘नई कविता और नवकविता आंदोलनों का तुलनात्मक अध्ययन’ शीर्षक में शोध विषय के अनुसार हिंदी नयी कविता और मराठी नव कविता आंदोलन का निम्नलिखित प्रमुख स्तरों के आधार पर तुलनात्मक अध्ययन विवेचन किया है। तुलना के स्तर

निम्नलिखित हैं-(1) उदय और विकास के स्तर पर तुलना, (2) युगीन परिस्थितियों के स्तर पर तुलना, (3) विविध दार्शनिक, विचारधारात्मक प्रभाव के स्तर पर तुलना, (4) आंदोलनात्मक रूप के स्तर पर तुलना, (5) सामाजिक परिवेश के स्तर पर तुलना, (6) काव्य और विषय के स्तर पर तुलना, (7) भाषा एवं शिल्प के स्तर पर तुलना और, (8) 'अर्थ-लय' की अवधारणा के स्तर पर तुलना। साथ ही प्रत्येक बिंदु के अंतर्गत तुलनात्मक तत्व के रूप में तदरुपात्मकता, भिन्नता और व्यतिरेक को विवेचित किया है और संपूर्ण शोध का सार उपसंहार के रूप में प्रस्तुत किया गया है।

इस शोधकार्य की योजना बनाने से लेकर इसकी पूर्णता तक गुरुवर्य डॉ.चतुर्वेदी जी ने सुयोग्य मार्गदर्शन किया तथा समय-समय पर प्रेरणा देकर गतिशील बनाया। इनकी प्रेरणा से ही मैं अपने कार्य में सदा सक्रिय रूप से कर्मरत रहा। उनके आदर्श ही मेरे जीवन के मार्ग हैं। अतः इस शोध कार्य की पूर्णाहुती पर उनको विनम्र प्रणाम निवेदन करते हुए प्रार्थना करता हूँ कि आजन्म उनका आशीर्वाद और उनकी अनुकंपा मुझ पर बनी रहे। साथ ही हिंदी विभाग के सभी गुरुजन प्रो.शशि मुदिराज जी, प्रो.सुवास कुमार जी, प्रो.नूरजहाँ बेगम जी, प्रो.सर्राजु जी, प्रो.कृष्ण जी, विभागाध्यक्ष प्रो.रवि रंजन जी, डॉ.श्यामराव जी, डॉ.गरिमा श्रीवास्तव जी, आलोक पांडे जी, डॉ.भीमसिंह जी, डॉ.आंजनेयलु जी आदि ने विविध प्रकार से मार्गदर्शन और सहयोग दिया उनको भी मैं अपना प्रणाम निवेदित करते हुए आशा करता हूँ कि उनके शुभाशीर्वाद सदा मेरे साथ रहेंगे।

इस शोध कार्य के महत्वपूर्ण आधार प्रो.दादेगांवकर सर जी रहे हैं, उनकी प्रेरणा और मार्गदर्शन, प्रोत्साहन तथा सहयोग के अभाव में इस शोध कार्य का पूर्ण होना असंभव था। आपने तथा प्रो.सौ.दादेगांवकर जी ने अपने निजी ग्रंथालय से मराठी के महत्वपूर्ण अनुपलब्ध ग्रंथ अध्ययन के लिए प्रदान किए जिससे महत्वपूर्ण सामग्री प्राप्त हुई। इस अवसर पर गुरुवर्य के प्रति आभार की धृष्ठता न करते हुए अपना विनम्र प्रणाम निवेदित करते हुए आपके निरंतर आशीर्वाद की कामना करता हूँ।

केंद्रीय हिंदी संस्थान, हैदराबाद केंद्र के निदेशक प्रो.टी.के.नारायण पिल्लै जी ने शोध कार्य के लिए अनेक सुविधाएँ प्रदान की तथा गुरुवर्या डॉ.गांगुली जी, प्रो.रेड्डी जी, प्रा. श्री चंद्रप्रताप सिंह जी, मित्र डॉ.शशांक शुक्ल आदि ने भी विविध प्रकार से सहयोग एवं मार्गदर्शन किया। इनकी प्रेरणा से

संबल मिलता रहा। इन सभी को अपना प्रणाम निवेदित करते हुए धन्यवाद देता हूँ। साथ ही आभारी हूँ हिंदी विभाग के अतिथि आचार्य प्रो.शीतांशु जी का तथा श्री सूर्यनारायण रणसुभे जी का जिन्होंने समय देकर इस शोध-विषय पर चर्चा की तथा मार्गदर्शन किया।

लाल बहादुर शास्त्री महाविद्यालय, धर्माबाद के संचालक श्री गंगाधरराव शंकरराव पाटील (दादा) को अपना प्रणाम निवेदित करता हूँ जिन्होंने मराठी विषय के संदर्भ ग्रंथ संकलन में विशेष सहयोग दिया। मैं आभारी हूँ डॉ.शिवाजीराव पटवारी सर, श्रीराम गव्हाणे सर, चंद्रकांत साखरे सर (मुखेड), अरविंद पाटील जी का जिन्होंने निरंतर इस शोध कार्य के लिए प्रेरणा प्रदान की।

हिंदी विभाग के बंधु-चंदु खंदारे, अविनाश, अनुज भैय्या, आनंद पाटील, विनायक काळे, चपळे साईनाथ, प्रणव कुमार ठाकुर, ए.बाबुराव, विलास, गणेश पालदेवाड, वासुदेव आदि ने उचित सहयोग दिया। इस शोध कार्य में कनिष्ठ बंधु सम मोबिन शेख तथा संदिप चौहान ने विशेष सहयोग दिया। अतः इन मित्रों के प्रति आभार की औपचारिकता न रखते हुए कामना करता हूँ इनके स्नेह की वर्षा सदैव मुझ पर होती रहेगी।

प्रिय अंतरंग मित्र प्रा.साईनाथ शाहू ने इस शोध विषय के संदर्भ में अनेक विश्वविद्यालयों तथा पुस्तक मेलों में अपनी सच्ची मित्रता से सहयोग दिया और विविध संदर्भ ग्रंथों का संकलन किया। साथ ही चि.साईप्रसाद ने भी विविध प्रकार से सहयोग किया। अतः इनको इस क्षण केवल याद करता हूँ क्योंकि ये सभी मेरे जीवन के अभिन्न अंग हैं।

इस समय मैं याद करता हूँ माता-पिता तथा वरिष्ठ बंधुओं-भाभियों को जिनके कारण ही मैं आज इस स्थिति पर पहुँचा, उनका स्नेह एवं प्रेरणा मेरे जीवन का मूल आधार है। मेरा जीवन उन्हीं के प्रेम और प्रेरणाओं से निर्मित महल है। अतः मेरा जीवन इन्हीं से निर्मित एवं इनको ही समर्पित है।

इस शोध कार्य की सामग्री संकलन में विशेष रूप से लाल बहादुर शास्त्री महाविद्यालय, जयकर ग्रंथालय, पुणे विश्वविद्यालय, डॉ.बाबासाहेब आंबेडकर मराठवाडा विश्वविद्यालय, औरंगाबाद, पीपल्स महाविद्यालय, नांदेड, केंद्रीय ग्रंथालय, हैदराबाद तथा मराठी ग्रंथ संग्रहालय, इंदिरा गांधी स्मारक ग्रंथालय, हैदराबाद विश्वविद्यालय, हैदराबाद के ग्रंथपाल एवं कर्मचारियों ने सहयोग दिया। अतः इन सभी को मैं अपना आभार निवेदित करता हूँ। साथ ही मैं श्रीमती राधा जी

का आभार मानता हूँ जिन्होंने विशेष परिश्रम कर शुद्ध टंकण कार्य किया। अंततः इस शोध कार्य में प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से बहुत सारे लोगों ने सहयोग दिया, जिनका नामोल्लेख करना संभव नहीं है। अतः उन सभी को मैं अपना धन्यवाद निवेदित करता हूँ।

मैं अपने गुरुवर्य कै.डॉ.शिवनारायण व्यास जी तथा श्री किशनराव लचमापूरकर जी को याद करता हूँ जिन्होंने हिंदी साहित्य में अभिरुचि जगाई और इस ओर पथ निर्देश किया। अतः यह शोध कार्य उन्हीं के चरणों में समर्पित करता हूँ।

मनोहर गंगाधरराव चपळे

प्रथम अध्याय

नई कविता

प्रथम अध्याय

नई कविता

1.6 नयी कविता : पृष्ठभूमि

1.6.1 राजनीतिक

1.6.2 सामाजिक

1.6.3 साहित्यिक

1.7 नयी कविता : नामकरण

1.8 नयी कविता : अवधारणा, परिभाषा

1.9 नयी कविता : आंदोलनात्मक रूप

1.10 नयी कविता की प्रवृत्तियाँ तथा विशेषताएँ

प्रथम अध्याय

नई कविता

1.1 नयी कविता:पृष्ठभूमि:

साहित्य संवेदनाओं का पुंज है और यह संवेदनाएँ मानव अपने युग-परिवेश तथा परिस्थितियों से ग्रहण करता है। सुप्रसिद्ध विचारक कॉडवेल ने कहा है कि साहित्य का मोती समाज की सीपी से जन्म लेता है तथा रामचंद्र शुक्ल ने साहित्य को 'जनता की चित्तवृत्ति का संचित प्रतिबिंब'[1] तथा बालकृष्ण भट्ट ने जनसमूह के हृदय का विकास कहा है। साहित्य इन्हीं 'चित्तवृत्ति' और 'हृदय का विकास' को रेखांकित करने की कला है। इसी संदर्भ में मुक्तिबोध का कथन है कि- "बाह्य का अभ्यंतरीकरण और अभ्यंतर का बाह्यीकरण एक निरंतर चक्र है, कला आभ्यंतरीकरण के बाह्यीकरण का एक रूप है।"[2] अतः यह विविध मत साहित्य और समाज के अनिवार्य अंतःसंबंधों को रेखांकित करते हैं। सर्वमान्य है कि कोई वैचारिक धारा, साहित्यिक धारा अपने युग से प्रभाव ग्रहण कर उदित होती है। उसमें युगीन परिस्थितियों का दबाव, तनाव, प्रभाव आदि दिखाई देता है। सारांश रूप में हम कह सकते हैं कि कोई विचारधारा अथवा राजनैतिक साहित्यिक धारा क्षण में उदित और लुप्त नहीं होती, इसके पीछे उस युग की विशिष्ट, परिस्थितियाँ उसके निर्माण का कारण बनती हैं।

---

[1] हिंदी साहित्य का इतिहास-आ.रामचंद्र शुक्ल-भूमिका से

[2] नयी कविता का आत्मसंघर्ष तथा अन्य निबंध-ग.मा.मुक्तिबोध-पृ.8

इसी आधार पर हम कह सकते हैं कि नयी कविता के उद्‌भव और विकास के संदर्भ में उस युग की परिस्थितियों का महत्वपूर्ण, अनिवार्य योगदान रहा होगा। किसी भी साहित्य का मूल्यांकन उस युग की परिस्थितियों के आधार पर ही किया जा सकता है। अतः अगर किसी सिद्धांत, विचारधारा, साहित्यिक धारा को हम अधिरचना के रूप में देखें तो निश्चित ही उसका आभार कोई परिस्थिति दिखाई देगी ही, अतः आधार के बिना अधिरचना नहीं हो सकती। नई कविता का अध्ययन करने के लिए उस की पृष्ठभूमि का अध्ययन हमें अनिवार्य रूप से करना ही होगा। अतः नई कविता की इस पृष्ठभूमि को हम समझ लें जिनकी वह उपज है, जिसके भीतर नई कविता की वह समस्त चेतना अवस्थित है।

1.1.1 राजनीतिक परिस्थितिः

मानव की सभ्यता और उसके विकास का लंबा इतिहास है। अतः आज का मानव अपनी विकास की परंपरा में चलते हुए आज वर्तमान आधुनिक, उत्तर-आधुनिक युग में पहुँच गया है। इस विकास की एक निरंतर विकसित परिवर्तित होती हुई परंपरा है वैसे ही आज का साहित्य अपनी ऐतिहासिक परंपरा और परिवर्तनों के साथ विकसित हुआ है। नई कविता की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर विचार करते हुए हम कह सकते हैं कि नयी कविता अपने साहित्यिक विकास के साथ तादात्म्य रखकर विकसित हुई है। कोई भी साहित्य आंदोलन अथवा साहित्यिक प्रकृति अचानक उदित नहीं होती। उसके लिए पउसय युग विशेष की चेतना तथा परिस्थितियाँ उसके उदय और विकास की मूल प्रेरणा होती है। नई कविता के संदर्भ में यह बात लागू होती है। "नई कविता के आरंभ का काल भारत में अंग्रेज़ी शासन का अंतिम चरण है।"[3] यह अंतिम चरण भारतीय स्वतंत्रता का प्रथम चरण भी है। इस युग की परिस्थितियाँ अंग्रेज़ी दमनकारी शासन की श्रृंखलाएँ तोड़कर भारतीय स्वतंत्रता के आकाश में नए स्वप्न देखने वाली थी। स्वतंत्रता के पश्चात देश आजादी की खुशियों के साथ नई समस्याओं से ग्रसित था। विभाजन की त्रासदी सांप्रदायिक दंगे, शरणार्थियों की समस्या गांधी की मृत्यु तथा पूर्व घटित महायुद्धों का वैश्विक प्रभाव आदि इसमें प्रमुख हैं। साधारणतः देश आनंद और

---

[3] नयी कविताःउद्‌भव और विकास-रामवचन राय-पृ.18

समस्याओं की मनस्थितियों से ग्रस्त था और इससे आगे निकलने की कोशिश कर रहा था। विभाजन की परिनति सांप्रदायिक दंगों, विद्वेष में हुआ जिससे मानव-मानव से घृणा कर रहा था तथा गांधी हत्या के बाद यह रूप मानव की अमानवीयता, विद्वेष और अविश्वास को प्रकट कर रहा था जिस कारण उस युग की स्थिति मनुष्य को संवेदनात्मक स्तर पर बेचैन करनेवाली थी। विभाजन के साथ शरणार्थियों की समस्या तथा उनका पुनर्वास महत्वपूर्ण था। जिसने अनेक समस्याओं को जन्म दिया। स्वतंत्र भारत की बागडोर कांग्रेस पार्टी ने संभाली और प्रधानमंत्री के पद का भार नेहरू ने संभाला तथा वे अपनी शक्ति तथा विकासवादी दृष्टि से भारत का परिवर्तन करना चाहते थे। विकास योजनाओं के लिए उन्होंने बहुउद्देशीय पंचवर्षीय योजनाओं को कार्यान्वित किया तथा राजनैतिक धरातल पर समाजवादी व्यवस्था को स्वीकार कर विकास के सोपानों की खोज शुरू की। अतः कई कारणों से आत्मनिर्भरता का उद्देश्य रखनेवाली पंचवर्षीय योजनाएँ असफल रही अर्थात् आशा के अनुकूल सफलता नहीं मिली। आर्थिक स्थिति में भी सुधार न हो सका। इस संबंध में नामवर सिंह लिखते हैं "आजादी के आरंभिक तीन चार वर्ष भारी उथल-पुथल के थे। इतिहास में भाग लेने वाली सभी शक्तियाँ भावी इतिहास में अपना स्थान निर्धारित करने के लिए प्रयत्नशील थी। परिवर्तन की प्रकृति को ठीक-ठीक पहचानना और पहचानकर उसके साथ अपनी संगति बैठाना आसान न था। किंतु तीन चार वर्ष की कशमकश और उहापोह के बाद 1951 के आसपास वातावरण में स्थिरता आई। संविधान निर्माण, गणतंत्र की घोषणा, बालिग मानवाधिकार के आधार पर प्रथम आम चुनाव, केंद्र तथा राज्यों में जनतांत्रिक सरकारों के गठन के साथ देश में कांग्रेस शासन का वह दौर शुरू हुआ, जिसे वर्णन की सुविधा के लिए संक्षेप में 'नेहरू युग' कहते हैं।[4] नेहरू जी ने आजादी के इन वर्षों में कई समाजवादी देशों के यात्रा की और उस समाजवादी शासन से यह काफी प्रभावित हुए। अतः भारत को मजबूत बनाने के लिए समाजवादी व्यवस्था का स्वीकार किया। अतः 1955 ई में 'अवाडी' कांग्रेस के अधिवेश में समाजवादी-व्यवस्था पर विचार कर उसकी रूपरेखा तैयार की गई तथा उसे लागू करने की घोषणा की गई। इस युग की राजनीतिक स्थिति पर कांग्रेसपार्टी का

---

[4] कविता के नए प्रतिमान-नामवर सिंह-पृ.95-96

अधिशासन था। अतः कई चुनावों के साथ सत्ता कांग्रेस पार्टी की ही र्थी। इसी रूप में देश की अनेक समस्याओं ने अपना सिर उठाया। चीनी आक्रमण, समाजवादी दलों में एकता और फूट की पद्धतियाँ, लोहिया के नेतृत्व में संयुक्त समाजवादी दल की स्थापना आदि समाजवादी विचारधारा के विकास का युग था। यह भी सपना धीरे-धीरे लुप्त हो गया। 1964 में नेहरू की मृत्यु हो गई तथा इसके बाद लाल बहादुर शास्त्री प्रधानमंत्री बने।

साधारणतः इस युग की ऐतिहासिक पार्श्वभूमि के रूप में उथल-पुथल, सृजन, नवनिर्माण, योजना आदि के साथ अनेक संकटों का युग था। भारत अपने विकास पथ की ओर अग्रसर होने के सपने देखता और उसे साकार करने के लिए अनेक कष्ट उठाने पड़ते थे। इस स्थिति में जनता अपने शासन से मोह भंग की स्थिति में थी। कई प्रयत्नों के बावजूद भारत की स्थिति में सुधार नहीं हुआ। इस युग की परिस्थिति पर विचार करते हुए रामवचन राय लिखते हैं "साठोत्तर दशक में भारतीय राजनीति का वह ढांचा टूट गया जो 1947 से चला आ रहा था। यह मोहभंग भारत के युवा मानस का था। क्योंकि पुरानी पीढ़ी के लोग राजनीति सरकारी तंत्र और बड़े-बड़े प्रतिष्ठानों से जुड़े हुए थे, परंतु विश्वविद्यालय की ऊँची डिग्रियाँ लेकर निकलने वाले नौजवान जिंदगी के चौराहे पर निराश खड़े थे। पहली बार उनकी आँखों में देश का मानचित्र धुंधला पड़ गया। भूख, बेरोजगारी के दमघोंटू माहौल में वह बेगाना हो गए अपने ही घर में अजनबी।"[5]

साधारणतः देश की इस उथल-पुथल की राजनीति का चित्रण हमें नई कविता में दिखाई देता है। मोहभंग की स्थिति में सामान्य एवं मध्यवर्ग का चित्रण बदली हुई मानसिकता, अनेक दल, गठबंधनों का चित्रण उदास निरीह होता हुआ आम आदमी और उसकी स्थिति आदि के संदर्भ में नई कविता और इस युग की परिस्थितियों में अनेक समानताएँ दिखाई देती हैं। अतः स्वातंत्र्योत्तर काल नई कविता के विकास का काल है और राष्ट्रीय घटनाओं और परिस्थितियों का प्रभाव इस पर काफी रूप में दिखाई देता है। पंचवर्षीय योजनाओं की विफलता ने जनता का मोहभंग कर दिया। आजादी के बाद भारतीय जनता में जो खुशहाली के जीवन का सपना था वह टूट गया। धीरे-धीरे जन-जीवन में

---

[5] नई कविता उद्भव और विकास-रामवचन राय-पृ.21

निराशा का भाव भरने लगा। नई कविता में उस निराशा और अवसाद की स्थितियों में मानव की स्थिति का चित्रण हुआ है। सन् 1950 से 60-62 के युग में भारतीय राजनीति के इतिहास में जो परिवर्तन, गठबंधन, मोहभंग, टकराव हुआ उसका चित्रण नई कविता में मौजूद है। इस युग की छोटी-छोटी पार्टियों को कविता आंदोलन के विविध प्रकार के रूप में हम देख सकते हैं। अतः इस युग में कविता ने 'लघुमानव' की ओर ध्यान दिया तथा उसकी समस्त चिंता चेतना को कविता के माध्यम से अभिव्यक्त किया है।

1.1.2 सामाजिक परिस्थितियाँ:

समाज विहीन विचार, चिंतन, संस्कृति, साहित्य, सभ्यता की बात अधूरी है। समाज इन सभी का स्रोत और आधार भूमि है। समाज की चित्तवृत्ति जनता की चित्तवृत्ति को प्रतिबिंबित करती है। नयी कविता युगीन सामाजिक परिस्थितियों पर विचार करके ही उसका मूल्यांकन हो सकता है। इस युग में सामाजिक स्थिति संक्रमण की थी। स्वतंत्रता प्राप्ति के साथ ही भारत को नए उत्तरदायित्वों को निभाना पड़ा जिसमें विभाजन, सांप्रदायिक दंगे, शरणार्थियों की समस्या आदि महत्वपूर्ण हैं। आज़ादी के बाद भारत में भ्रष्टाचार, अवसरवादिता, घूसखोरी, भाई भतीजावाद आदि ने सिर उठाया और आम आदमी के सपने चूर-चूर हो गए। नवयुवकों की मानसिक स्थिति विभ्रम की हो गई तथा बेकारी की समस्या तथा भूख के कारण वह गुमराह होने लगे। राजनीति के चलते समाज के सामने कोई नया आदर्श नहीं रहा। यह स्थिति आजाद भारत के प्रांरभिक दशक की थी जहाँ भारतीय जनता अपनी संपूर्ण चेतना के साथ इन समस्याओं से लड़ रही थी।

अंग्रेज़ों के भारत छोड़ने के बाद भी अंग्रेज़ीपन लोगों के तन-मन से नहीं गया। नौकरशाहों तथा राजनेताओं के कुचक्र में आकर सामान्य जनता परेशान हो रही थी। विभाजन के कारण सामाजिक स्थितियों में घृणा, अविश्वास की भावना वृद्धीगत हुई जिसकी परिणति अनेक सांप्रदायिक दंगों ने ले लिया। अतः समाज अनेक समस्याओं से ग्रस्त था और मानव की स्थिति बेहाल थी। उसके मन में अनेक द्वन्द्वों ने स्थान ले लिया। वह सामाजिक स्थति के द्वंद्व में घसीटता जा रहा था। समाज धर्म, संप्रदाय, जाति के आधार पर तथा वर्ग के आधार पर विभाजित हो रहा था। जिसके चलते स्वातंत्र्योत्तर एकता की भूमिका टूटकर समाज विभाजित और अव्यवस्थित हो रहा था।

इस युग की परिस्थितियों को रेखांकित करते हुए ग.मा.मुक्तिबोध लिखते हैं-"आज का कवि एक असाधारण असामान्य युग में रह रहा है। वह एक ऐसे युग में है, जहाँ मानव सभ्यता संबंधी प्रश्न महत्वपूर्ण हो उठे हैं। समाज भयानक रूप से विषमताग्रस्त हो गया है। चारों ओर नैतिक न्हस के दृश्य दिखाई दे रहे हैं। शोषण और उत्पीडन पहले से बहुत अधिक बढ़ गया है। नोच खसोट, अवसरवाद, भ्रष्टाचार का बाजार गर्म है... समाज के भीतर के विभिन्न वर्गों की खाइयाँ और भी चौड़ी हो गई हैं। यहाँ तक कि मध्यवर्ग में भी श्रेणियाँ पैदा होकर अपनी परस्पर दूरी खतरनाक तरीके से गहरी और चौड़ी कर रही है। जनपद स्कूल के शिक्षक और युनिवर्सिटी प्रोफेसर के बीच दूरियाँ और खाइयाँ मुँह फाड़े खड़ी हैं-किसान मज़दूर और पूंजीपति-जमींदार के बीच की दुरियों का तो क्या कहना। मानव संबंध टूट-फूट गये हैं, उलझ गए हैं। समाज में शोषकों, उत्पीड़कों और उसके साथियों का जोर बढ़ गया है।"[6]

अंग्रेज़ों की नीति के कारण भारतीय समाज का आर्थिक सामाजिक, सांस्कृतिक ढांचा टूटने लगा। अंग्रेज़ों के बाद भी यही स्थिति बनी रही। भारतीय ग्रामों में बेरोजगारी बढ़ने लगी तथा ग्रामीण जनता रोजगार की खोज में नगरों की ओर निर्वसनरत हुई साथ ही भारतीय संयुक्त परिवार का ढांचा टूटकर स्वतंत्र परिवारों की संकल्पना आगे आने लगी। इसी विभिन्न परिस्थितियों में अनेक आंदोलनों ने जन्म लिया तथा श्रमिक, किसानों ने अपने अधिकारों की मांग की। जिसके फलस्वरूप 1936 में प्रगतिशील लेखक संघ की स्थापना हुई थी। आधुनिकता की प्रक्रिया के कारण तथा पंचवर्षीय योजनाओं में औचित्योपयोगिता की प्रधानता के कारण अनेक कारखानों का निर्माण किया गया। इसका विपरीत परिणाम यह हुआ कि मज़दूर और पूंजीपतियों का वर्ग निर्माण होने लगा। इसी रूप में सामाजिक सुधारों की प्रक्रिया भी जारी रही तथा प्रार्थना समाज, ब्रह्म समाज, आर्य समाज की विचारधाराएँ समाज में प्रचलित थीं।

साधारणतः इस युग की परिस्थिति तनाव, दबाव और विभ्रम की थी। स्वतंत्र भारत अनेक संकटों का सामना कर रहा था और पाश्चात्य शिक्षा के प्रसार के कारण अनेक विचारधाराओं का

---

[6] नयी कविता का आत्मसंघर्ष तथा अन्य निबंध-ग.मा.मुक्तिबोध-पृ.14-15

सूत्रपात हुआ। मार्क्स, लेनिन, फ्रायड, कामु आदि के दर्शन का प्रभाव भारतीय जनमानस पर होने लगा। साधारण मानव अपनी विभ्रमित अवस्था में आजीविका की खोज में था। संपूर्ण समाज मोहभंग की स्थिति से गुजर रहा था तथा नये परिवर्तन, नवीनता का अभिलाषी था। इस प्रकार के समाज की अवस्था का चित्रण नई कविता की आधारभूमि के रूप में उभरता है। वह अपनी कविता में आंदोलनों के साथ 'लघु मानव' की स्थापना करता है।

1.1.3 साहित्यिक परिस्थितियाँ:

परिवर्तन सृष्टि का महत्वपूर्ण नियम है। इस परिवर्तन की गति में ही विकास का पथ प्रशस्त होता है। हिंदी साहित्य के इतिहास पर दृष्टिपात करने पर हम पाते हैं कि चित्तवृत्तियों का निरंतर परिवर्तन और उसका रेखांकन हिंदी साहित्य की महत्वपूर्ण विशेषता है। युगीन विचारधारा परिस्थितियों से परिचालित होकर यह साहित्य युगीन चेतना को आत्मसात और अभिव्यक्त करता रहा। साहित्य अपनी युगीन परिस्थितियों से प्रभावित होता है तथा अपने युगीन साहित्य को प्रभावित करता है। अतः इसी क्रम में इस प्रभाव-परिवर्तन के चक्र में साहित्य गतिमान और विकसित होता है। इसी रूप में इस साहित्यिक-परिवर्तन विकास का प्रतिफलन नयी कविता का उदय है।

आधुनिकता की विचारधारा ने संपूर्ण विश्व को प्रभावित किया तथा इसी प्रकार हिंदी साहित्य पर उसका प्रभाव परिलक्षित होता है। भारतेंदु युगीन साहित्य में प्रथम आधुनिक विचारधारा और दृष्टि दिखाई देती है। इस युग में भारतेंदु मंडल के कवियों ने पुरातनता का त्याग करते हुए नयी विचारधारा नयी समाज दृष्टि का विकास किया। इस युग की चेतना पाश्चात्य शिक्षा से प्रभावित थी। अतः इसी क्रम में द्विवेदी युग तथा आगे चलकर छायावाद का विकास होता है। छायावादी कविता को हिंदी साहित्य का महत्वपूर्ण काव्यांदोलन के रूप में गौरवान्वित किया गया। द्विवेदी युग में भाषा परिमार्जन पर अधिक जोर था। किंतु इसी रूप में छायावाद युग में भाषा का स्वच्छंद मुक्त प्रयोग किया गया तथा काव्य-भाषा छंदों के बंधन से मुक्त हो गई। छायावादी काव्य अपनी अमूर्त सौंदर्यवादी, रहस्यात्मक वायवी, अभिव्यक्तियों के कारण छायाभासी था। इसके आगे की विकासधारा में मार्क्स के वैश्विक विचारधारा से प्रभावित तथा परिचालित प्रगतिवादी कविता का आरंभ होता है जिसमें शोषितों की पक्षधरता और शोषकों की निंदा की गई। 1936 के प्रगतिशील लेखक संघ की

स्थापना से भारतीय साहित्य में मार्क्सवादी विचारधारा को प्रगतिशील साहित्य के माध्यम से अभिव्यक्त किया गया। इस संदर्भ में नामवर सिंह का कथन है-"छायावाद के गर्भ से सन् 30 के आसपास नवीन सामाजिक चेतना से युक्त जिस साहित्यधारा का जन्म हुआ, उसे सन् 1936 में प्रगतिशील साहित्य अथवा प्रगतिवाद की संज्ञा दी गई।"[7] अतः प्रगतिवाद, मार्क्सवाद का साहित्यिक अनुशीलन है। इसके बाद सप्तक के प्रकाशन से 1943 प्रयोगवादी काव्यधारा की शुरुआत होती है। कविता की प्रवृत्ति और उसकी लेखन शैली को देखकर आलोचकों ने कविता में प्रयोग की कल्पना को परिलक्षित करते हुए उसे प्रयोगवाद नाम दिया। इस धारा के कवियों ने स्वयं इसे अस्वीकार किया है। अज्ञेय का कथन है-"प्रयोग का कोई वाद नहीं है। हम वादी नहीं रहे हैं, नहीं हैं। न प्रयोग अपने आप में इष्ट या साध्य है। ठीक इसी तरह कविता का भी कोई वाद नहीं है। कविता भी अपने आप में इष्ट या साध्य नहीं है। हमें प्रयोगवादी कहना उतना ही सार्थक या निरर्थक है, जितना हमें कवितावादी कहना। "[8] प्रयोगवादी काव्य का प्रणेता अज्ञेय को माना जाता है। किंतु अज्ञेय इस 'वाद' को स्वीकार नहीं करते हैं। अज्ञेय द्वारा संपादित 'तार सप्तक' में सात कवियों की कविता को स्थान दिया जिसमें अज्ञेय, ग.मा.मुक्तिबोध, गिरिजा कुमार माथुर, प्रभाकर माचवे, नेमीचंद्र जैन, भारत भूषण अग्रवाल रामविलास शर्मा संकलित है। इन कवियों की विचारधारा के संबंध में अज्ञेय लिखते हैं-"तार सप्तक में सात कवि संग्रहित हैं। सातों एक दूसरे के परिचित है-बिना इसके इस ढंग का सहयोग कैसे प्राप्त होता? किंतु इससे यह परिणाम न निकाला जाए कि वे कविता के किसी एक 'स्कूल' के कवि था कि साहित्यिक जगत के किसी गुट अथवा दल के सदस्य या समर्थक हैं। बल्कि उनके तो एकत्र होने का करण ही यही है कि वे किसी एक स्कूल के नहीं हैं, किसी मंजिल पर पहुँचे नहीं हैं, अभी राही हैं-राही नहीं, राहों के अन्वेशी। उनमें मतैक्य नहीं है, सभी महत्वपूर्ण विषयों पर उनकी राय अलग-अलग है-जीवन के विषय में, समाज और धर्म और राजनीतिक विषय में, काव्यवस्तु और शैली के, छंद और

---

[7] आधुनिक साहित्य की प्रवृत्तियाँ-प्रो.नामवर सिंह-पृ.81

[8] आज का भारतीय साहित्य-अज्ञेय-पृ.403

तुक्के, कवि के दायित्वों के-प्रत्येक विषय में उनका आपस में मतभेद है।"[9] इसी प्रकार विभिन्न विचारधाराओं के सात तारों का गुंफन सप्तक में हुआ। आगे चलकर दूसरा सप्तक तीसरा सप्तक एवं चौथा सप्तक तक यह यात्रा चलती रही। इसी युग में जगदीश गुप्त, विजयदेवनारायण साही, रामस्वरूप चतुर्वेदी के संपादन में नई कविता 1954 प्रकाशित हुई। अतः प्रयोगवादी काव्यधारा का अगला रूप 'नयी कविता' आलोचक मानते हैं। इस संबंध में रामदरश मिश्र लिखते हैं-"नयी कविता नाम स्वतंत्रता के बाद लिखी गई उन कविताओं के लिए रूढ़ हो गया, जो अपनी वस्तु छवि और रूप छवि दोनों में पूर्ववर्ती प्रगतिवाद और प्रयोगवाद का विकास होकर भी विशिष्ट है।"[10]

साधारण रूप से इस युग की परिस्थितियाँ परिवर्तनशील तथा गत्यात्मक थी और युग के साथ साहित्य भी परिवर्तन का अनुगामी था। पाश्चात्य साहित्य चिंतन का प्रभाव इस युग के साहित्य पर दिखाई देता है। अतः रामस्वरूप चतुर्वेदी के अनुसार हिंदी नवलेखन पर 'न्यू राइटिंग', 'न्यू पोएट्री' का प्रभाव है। अतः उनके अनुसार "हिंदी नवलेखन की साहित्यिक पृष्ठभूमि का संदर्भ तब तक अधूरा रहेगा जब तक अंग्रेज़ी तथा युरोपियन नवलेखन की रूपरेखा नहीं समझ ली जाती।"[11] इसी संदर्भ में प्रो.सुवासकुमार जी का कथन उल्लेखनीय है-"ऐतिहासिक दृष्टि से देखें तो विदेशों में 1950 के आसपास जो 'न्यू पोएट्री' आंदोलन चला था उसी के तर्ज पर हिंदी में भी यह नाम तत्कालीन कविता में विषयवस्तु और शिल्प की नवीनता के कारण और प्रयोगवादी काव्य से इसका अंतर दिखाने के लिए-अनूदित कर चलाया गया। मगर तथ्य कुछ और भी कहते हैं। इलाहाबाद से प्रकाशित 'नयी कविता' के द्वारा यह नाम अच्छा-खासा प्रचारित हुआ, किंतु इसके बावजूद 'नयी कविता' आंदोलन के अंतर्गत खुले आम प्रयोगवादी प्रवृत्तियों को भी प्रश्रय दिया गया। हिंदी कविता में पचास का दर्शन ऐसा था जबकि प्रयोगवाद और 'नयी कविता' के फर्क को बहुत कुछ नज़र-

---

[9] तार सप्तक-अज्ञेय-पृ.12 (1943-विवृति और पुरावृत्ति)

[10] हिंदी साहित्य का इतिहास-सं.नगेंद्र-छायावादोत्तर काल-रामदरश मिश्र-पृ.629

[11] हिंदी नवलेखन-रामस्वरूप चतुर्वेदी-पृ.18

अंदाज कर दिया गया। साथ ही यह भी मार्के की बात है कि नयी कविता प्रगतिशीलता की परंपरा का स्वाभाविक विकास ठहरती है।"[12]

उपर्युक्त कथन के आलोक में नयी कविता की युगीन साहित्यिक परिस्थितियाँ स्पष्ट होती हैं अतः कविता के क्षेत्र में वस्तु, भाव, छंद, बिंब का नयापन प्रगति, प्रयोगवादी धारा से शुरू हुआ बल्कि उसका अंश हम पुर्वोत्तर कविता में भी पाते हैं। नयी कविता इन्हीं साहित्यिक धाराओं परिवर्तनों तथा दृष्टियों की अगली आंदोलनात्मक कड़ी है जो कि रामस्वरूप चतुर्वेदी के शब्दों में "नयी कविता संपूर्ण जीवन की कविता है।"[13] अतः इसके बाद या इसी कालखंड में अनेक काव्यांदोलन का सूत्रपात हुआ। जैसे नकेनवाद, अकविता आदि।

सारांशतः नई कविता के युग की साहित्यिक प्रवृत्तियों, परिस्थितियों में नवीनता की विचारधारा और चिर परिवर्तनशीलता दिखाई दती है। अतः इस युग पर पाश्चात्य साहित्य का प्रभाव और उसका अनुकरण दिखाई देता है। साथ ही कविता के क्षेत्र में विभिन्न आंदोलनों का सूत्रपात इस युग की महत्वपूर्ण विशेषता है।

साधारण रूप से नयी कविता की धारा अपेन इन्हीं राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक पृष्ठभूमि के आधार पर अपने नवीन नयी कविता रूप भवन का निर्माण कर सकी यह परिस्थितियाँ नई कविता की आधारभूमि के रूप में महत्वपूर्ण स्थान रखती है। इन परिस्थितियों के आधार पर ही नयी कविता का मूल्यांकन हो सकता है। इस युग की राजनीतिक परिस्थितियों का चित्रण और उसके प्रभाव को नयी कविता अभिव्यक्त करती है तथा सामाजिक बिखराव अन्य समस्याओं का प्रतिबिंब नयी कविता में दिखाई देता है। अतः स्पष्ट है कि नयी कविता अधिरचना है तो आधार के रूप में यह युगीन परिस्थितियाँ।

---

[12] आधुनिक हिंदी कविता:आत्मनिर्वासन तथा अकेलेपन का संदर्भ-प्रो.सुवास कुमार-पृ.227-228

[13] हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास:रामस्वरूप चतुर्वेदी-पृ.236

1.2 नयी कविता:नामकरण:

प्रयोगवादी काव्यधारा के बाद विकसित हुई काव्यधारा को कवियों ने 'नई कविता' के नाम से अभिहित किया और इसके नए पन पर प्रकाश डाला। किंतु विभिन्न आलोचकों में इस 'नयी कविता' के नामकरण संबंधी मतभेद दिखाई देते हैं। हिंदी साहित्य में नई कविता का ऐतिहासिक महत्व है क्योंकि प्रयोगवादी काव्यधारा से विकसित होकर भी वह उससे अलग होने का दावा करती है। वह मानव के भोगे हुए यथार्थ के साथ उसके संवेदनात्मक अनुभवों की अभिव्यक्ति बदलते हुए युगबोध, परिस्थितियों और मानव मूल्यों के आधार को रेखांकित करती है। कविता के क्षेत्र में यह पहला आंदोलनात्मक प्रयत्न था जो निश्चित सिद्धांत और उद्देश्य को लक्ष्य बनाकर-'नयी कविता' 1954 के माध्यम से संघटनात्मक प्रयत्न किया गया। फिर भी विभिन्न स्थितियों में कवि की अभिव्यक्तियों में भेद दिखाई देता है। अतः इनमें समानता की सुचकधाराएँ भी हैं। 'नयी कविता' किस रूप से 'नई' है इस पर भी अनेक विद्वानों ने पक्ष-विपक्ष रूप से विचार किया। 'नयी कविता' शब्द कविता के क्षेत्र में प्रथम- अज्ञेय ने प्रचलित किया। अतः इस संदर्भ में वे लिखते हैं-"नयी कविता सबसे पहले एक नयी मनस्थिति का प्रतिबिंब है-एक नए मोड़ का-एक नये राग संबंध का।"[14] इसी क्रम में शंभुनाथ सिंह के अनुसार-"नयी कविता में नवीन जीवन मूल्यों की स्थापना का विशेष आग्रह दिखाई पड़ता है।"[15] तथा बालकृष्ण राव ने नई कविता के स्वर की स्थापना करते हुए लिखा है-"नयी कविता का सच्चा, आधुनिक, स्वस्थ स्वर व्यक्ति का स्वर है, समूह का कोलाहल नहीं, पर इस व्यक्ति के स्वर में ही समूह मुखरित हो उठा है।"[16] नयी कविता के नएपन को रेखांकित करते हुए मुक्तिबोध लिखते हैं- "आज की कविता का मूल प्रश्न जीवन-जगत् के ज्ञान के अधूरेपन या पूरेपन, विकारग्रस्तता या शुद्धता के प्रश्न के साथ अटूट रूप से जुड़ा हुआ है। आज के कवि की अर्थात् हमें ज्ञानपथ के विकास की जितनी आवश्यकता है, उतनी पहले कभी नहीं रही।"[17] अतः इस विवेचन से हमें ज्ञात होता है कि

---

[14] हिंदी साहित्यःएक आधुनिक परिदृश्य-अज्ञेय-पृ.141
[15] प्रयोगवाद और नयी कविताःडॉ.शंभुनाथ सिंह-पृ.149
[16] उद्‌दृत, नयी कविता में मूल्य बोध-शशि सहगल-पृ.52
[17] नयी कविता का आत्मसंघर्ष तथा अन्य निबंध-ग.मा.मुक्तिबोध-पृ.14

नई कविता किस रूप में नई है, इसका नयापन अन्यों से कैसा है। इस संदर्भ में हम कह सकते हैं कि प्रत्येक युग में लिखी गई कविता इस काल खंड विशेष के लिए नई होती है, किंतु नयी कविता का नयापन अपने कालखंड विशेष के लिए नया होते हुए भी साहित्य जगत् के लिए विविध आयामों से नया है। इस संदर्भ में जगदीश गुप्त का मत उल्लेखनीय है। उनके अनुसार "नयी कविता लिखना और नयी कविता के 'स्टाईल' में लिखना सर्वथा भिन्न बाते हैं।"[18] अतः 'नयी कविता' के संपादक के अनुसार नयी कविता अपनी पूर्ववर्ती परंपरा से भावबोध के साथ शैलीपक्ष में नवीन है, यह उसका नयापन है। अतः रामस्वरूप चतुर्वेदी भी इसी ओर इंगित करते हैं-"नव शब्द लेखक अथवा युग का परिचायक न होकर नवीन परिप्रेश्य का द्योतक है।... नव लेखन वस्तु, विधान, भाषा अथवा शैली-संबंधी आंदोलन नहीं है, वह तो समस्त साहित्यिक कृतित्व को नया परिप्रेक्ष्य, एक नवीन मर्यादा प्रदान करता है।"[19]

अतः नयी कविता का नयापन, अर्थात 'नयी' यह शब्द कविता को दिया गया काल, युग के नएपन पर आधारित नहीं है। वह एक विशेष प्रकार की काव्य चेतना है। यह नवीनता, उसका नयापन साहित्यिक-परिप्रेक्ष्य में नया है। साधारणतः 'नयी कविता' में 'नयी' यह शब्द उसे अपनी अंतर्भूत साहित्यिक दृष्टि लेखन और विषय वस्तु के नएपन से मिली है, अर्थात् यह नयापन उसकी संज्ञा है। विशेषण रूप नहीं। नयी कविता की विचारधारा, वर्ण्यविषय, सैद्धांतिकी और इसके विविध आयाम साहित्य की परंपरा में नए हैं, तथा वह कविता अपने समस्त विविधांगी आयामों में नवीनता की द्योतक है। इसी रूप में यह कविता नयी कविता है। अतः विविध विचार परिक्रमा में नयी कविता की नव्यता के आधार पर इसे साहित्य की धारा में नयी कविता के नामकरण से अभिहित किया गया है।

1.3 नयी कविता:अवधारणा, परिभाषा:

हिंदी साहित्य के इतिहास में कविता का महत्वपूर्ण स्थान है। काव्य आदिकाल से लेकर आधुनिक, उत्तर-आधुनिक युग तक की यात्रा में अपनी निरंतर परिवर्तन की धारा में बहती चली आ

---

[18] नयी कविता में मूल्यबोध-शशि सहगल-पृ.54
[19] हिंदी नव लेखन-रामस्वरूप चतुर्वेदी-पृ.11-12

रही है। यात्रा में अनेक परिवर्तन हुए हैं और यह परिवर्तन कभी काव्य, वर्ण्य विषय, कथन, भंगिमा, काव्योपकरण और छंद वैविध्य के रूप में हुआ है। कविता की यात्रा को वीरकाव्य, भक्तिकाव्य, श्रंगारकाव्य, राष्ट्रीय कविता, छायावादी, प्रगतिवादी, प्रयोगवादी कविता और नई कविता आदि नामकरणों के रूप में सुधी आलोचकों ने अभिहित किया है। इन नामकरणों के अलावा भी अन्य प्रवृत्ति की कविताएँ लिखी गई किंतु यह नामकरण उस युग की कविता की प्रमुख प्रवृत्ति के आधार पर किया गया है। इसी प्रकार साधारणतः नई कविता स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद में लिखी गई उन कविताओं को कहा जाता है जो वर्ण्यविषय और वैचारिक सैद्धांतिकी के आधार पर हिंदी कविता यात्रा में अपनी अलग पहचान रखनेवाली कविता है। अतः इस प्रकार की कविता के प्रवर्तक अज्ञेय थे और 'जगदीश गुप्त' ने अपनी पत्रिका 'नयी कविता 1953' के माध्यम से हिंदी साहित्य में इसे प्रचलित किया। नई कविता के जीवन-जगत् के प्रति वैचारिक-संवेदनात्मक दृष्टिकोण नया था। यह नयापन इसे संज्ञा रूप में प्राप्त हुआ है।

भारतीय स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद का कालखंड साहित्य और समाज के संदर्भ में अनेक नवीन धारणाओं, योजनाओं, विचारों के निर्माण का कालखंड था और शिक्षा-दीक्षा से इस युग का मानव काफी समृद्ध था और इसका वैचारिक आधार नवनिर्माण था। भारतीय पारंपरिक जीवन मानो में बदलाव आ गया था और मानव अनेक नवीन विचारधाराओं से प्रभावित हो गया। अतः इस संक्रमण काल की स्थिति में सजग सृजनकर्ताओं ने कविता को फिर से कल्पना की गर्त से उठाकर उसे नवीन आभा प्रदान की। इसमें अपने वर्तमान जीवन-मान के आधार पर समाज, साहित्य, राजनीति और मानव की स्थिति विविधांगी नवीन दृष्टिकोणों से अभिव्यक्त हुई है। साहित्यिक जगत् में तथा समाज में यूरोपीय विचारधाराओं का प्रचलन हुआ तथा लेनिन, मार्क्स, फ्रायड़, नित्से आदि की विचारधारा को समाज के साथ-साथ साहित्य में प्रश्रय मिल रहा था और इन विचारों से प्रभावित साहित्य सृजन हो रहा था। इसी परंपरा के प्रत्यक्ष-परोक्ष प्रभाव के आधार पर हिंदी साहित्य में सृजनकार्य शुरू हुआ और इस साहित्यिक नवीनताओं में कविता ने अपनी मूल संज्ञा के साथ-साथ सन् 1950-60 के दशक में 'नयी कविता' को जोड़ लिया।

हिंदी साहित्य की यात्रा में नयी कविता का अपना एक अलग स्थान दिखाई देता है और यह वह कविता है जिस पर अत्याधिक रूप से विचार-विमर्श आलोचना-प्रत्यालोचना हुई है। परंपरा की प्रतिबद्धता में सकारात्मक विद्रोह नवीनता का महत्वपूर्ण गुण है। इसी रूप में साहित्य के आधुनिक युग में नवीन विचार-भावधारा का प्रवाह निर्माण करने का कार्य नई कविता ने किया है। हिंदी साहित्य में नयी कविता नयी अभिरुचि की कविता है। इस अभिरुचि के संदर्भ में जगदीश गुप्त लिखते हैं- "अब प्रश्न यह है कि नयी कविता का भावक-वर्ग कौन-सा और कैसा है। हिंदी कविता को विकास की नयी दिशाओं में ले जानेवाला कवि किस विवेकशील प्रबुद्ध चेता भावक को लक्ष्य करके अपनी बात कहता है या कहने का साहस करता है। निश्चय ही वह किसी भी कवि की तरह उनको लक्षित नहीं करता जो संवेदनशीलता से हीन, अरसिक तथा अक्षम होते हैं। यह अक्षमता अज्ञान का परिणाम भी हो सकती है और कवि की अभिव्यक्ति के उपादानों के समानांतर चलने में असामर्थ्यजन्य भी हो सकती है। नया कवि इस रूढ़िवाद को भी अपना लक्ष्य नहीं बनाता जो हर प्राचीन के प्रति आकर्षण और हर नवीन के प्रति विकर्षण के भाव से परिचालित होता है। ऐसे व्यक्तियों में एक जड़ता निहित रहती है जो उनकी आंतरिक अप्रगति की द्योतक होती है।"[20] इसी क्रम में वे आगे लिखते हैं "कुछ लोग ऐसे भावुक होते हैं कि अपनी तन्मयता में कविता का अर्थ बिना समझे उसके संगीत पर ही मुग्ध हो उठते हैं। नयी कविता कदाचित् ऐसे व्यक्तियों के लिए भी नही है। वह उन प्रबुद्ध विवेकशील आस्वादकों को लक्षित करके लिखी जा रही है, जिनकी मानसिक अवस्था और बौद्धिक चेतना नये कवि के समान है अर्थात् जो उसके समान धर्मा है; एक ओर जो पुरानी कविता की अभिव्यंजना प्रणालियों, शक्तियों और सीमाओं से परिचित है और जिनकी परितृप्ति परंपरागत वस्तु और अभिव्यक्ति से नहीं होती या होती है तो संपूर्ण रूप में नहीं, दूसरी ओर जो नयी दिशाएँ खोजने में संलग्न नूतन प्रतिभा की क्षणिक असकलताओं और कठिनाइयों के प्रति सहानुभूतिशील होकर नये कवि की वास्तविक उपलब्धि की आशंसा करने में संकोच नहीं करते। प्राचीन अभाव और नवीन आविर्भाव के बीच विवेक करते हुए ऐसे ही व्यक्ति कविता के क्षेत्र में किए गए नवीन प्रयत्नों का

[20] नयी कविता : सं.जगदीश गुप्त-पृ.17

सम्यक मूल्यांकन कर सकते हैं।"[21] इस उद्धरण के आलोक में हम समझ सकते हैं कि नयी कविता विशिष्ट अभिरुचि, विचारधारा की कविता है जो विशिष्ट मानसिक वैचारिक गठन के लोगों द्वारा उन्हीं लोगों के अनुसार पाठकगणों के लिए लिखी गई कविता है। अतः हम यह सकते हैं कि यह विशिष्ठता ही नयी कविता का नयापन है।

नयी कविता पर हिंदी साहित्य में अनेक विचार-विमर्श, वाद-विवाद तथा आलोचना प्रत्यालोचना हुई है। हम नयी कविता पर विचार करते हुए, नयी कविता पर विभिन्न विद्वानों के विचारों का अवलाकन करेंगे।

नयी कविताःपरिभाषा :

* ओम प्रकाश अवस्थी ने अपने शोध-प्रबंध 'नयी कविताःरचना-प्रक्रिया' में नयी कविता को 'परिभाषा हीन विद्रोह' कहा है और साथ ही प्रेमचंद का उद्धरण देते हुए विस्तृत रूप से लिखा है-"उपन्यास की परिभाषा के संबंध में प्रेमचंद ने लिखा है-इसकी कोई परिभाषा नहीं है जिससे सभी लोग सहमत हों। ठीक यही बात नई कविता के संबंध में कही जा सकती है। और इसके कई कारण हैं-

1) तारसप्तक निकालने की योजना किस महानुभाव के मस्तिष्क में आई-यह बात विवादास्पद बनी इसलिए तार सप्तक में संग्रहीत सभी कवि जो आगे चलकर नयी कविता के पुरोधा बने एक दूसरे के प्रति पूर्वागृहीत होते गये। सप्तक की भूमिकाएँ, तार सप्तक द्वितीय संस्करण के 'पुनश्च' 'पट परिवर्तन' तथा, पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित लेख, कविताएँ, कवियों के स्वतंत्र संकलन इसके प्रमाण हैं।

2) प्रयोग शब्द को लेकर छायावादी, प्रगतिवादी, ऐतिहासिक आलोचकों में पर्याप्त मतभेद है। इसलिए परिभाषाएँ भी अपने-अपने लक्षणों के आधार पर निर्मित हैं।

3) नयी कविता के कवि एक ओर तो आपस में मतैक्य नहीं रखते सभी महत्वपूर्ण विषयों में उनकी राय अलग है, दूसरे कुछ कवि जो सप्तकों में संग्रहीत नहीं हो पाए उनमें नयी कविता के प्रति

---

[21] नयी कविताःसं.जगदीश गुप्त-पृ.18

कुछ दूसरा भाव बन गया है, तीसरे-आलोचकों में वे स्वयं है इसलिए आलोचकों से दनका मन वैभिन्य है।

4) नयी कविता, नयी कहानी नव गीत आदि में नवीनता की दर्शन बघारने की ललक सभी में है एतदर्थ कोई परिभाषा ऐसी नहीं जिसे सभी मानकर चलते हों।

5) नयी कविता के जन्म, उसके आदिम तत्व, विकास सर्वप्रथम नया कवि कौन इन सभी विषयों में नये कवियों में मतांतर है, इसलिए भी कोई परिभाषा ठीक नहीं बन सकी।

6) नयी कविता अच्छी है या खराब है, परंपरा से जुड़ी है या कटी है, पाठ्यांश प्रभाव अधिक है या कम है या बिल्कुल नहीं है। इस विषय के मतभेद पूर्ण होने के कारण भी परिभाषा नहीं बन सकी।

7) नयी कविता का शिल्प पर अधिक बल है या वस्तु पर, यह भी परिभाषा हीनता में पर्याप्त सहायक है।"[22] अतः डॉ.अवस्थी के अनुसार उपर्युक्त कारणों से नयी कविता परिभाषाहीन तथा प्रेमचंद की उपन्यास विषयक अवधारणा के अनुसार व्यापक है, किंतु नयी कविता के कवियों तथा आलोचकों ने नयी कविता जिस पर विचार किया इससे हमें नयी कविता की अवधारणा तथा परिभाषा समझ में आ सकती है। डॉ.अवस्थी इन आलोचकों के मतों से सहमत नहीं है और उनके अनुसार नयी कविता की अवधारणात्मक परिभाषा व्यापक है।

* गिरिजा कुमार माथुर नयी कविता पर विचार करते हुए लिखते हैं-"नयी कविता से हमारा अर्थ उस कविता से है जो पुरानी धारा की प्रतिक्रिया स्वरूप काव्य क्षितिज पर उदित हुई। कविता में वस्तु और शैली की हम कोई वर्णाश्रम व्यवस्था मानने के पक्ष में नहीं हैं, शैली या विचार वस्तु से श्रेष्ठ तत्व, चाहे वह काव्य के किसी निकाय से आयें हो हमारे लिए अछूते नहीं।"[23] इसी क्रम में वह आगे नयी कविता के स्वरूप उद्देश्य पर प्रकाश डालते हुए लिखते हैं, नयी कविता में एक ओर सामाजिक दायित्वों की जागरूकता और प्रगतिवादी विचारधारा के पृष्ठ में उदित

---

[22] नयी कविता : रचना प्रक्रिया-डॉ.ओमप्रकाश अवस्थी-पृ.81, 82
[23] पूर्व उदित नयी कविता : रचना प्रक्रिया-ओम प्रकाश अवस्थी-पृ.82

वस्तुपरक दृष्टि तथा व्यापक मानवीयता का समावेश हुआ। नयी कविता का क्रमशः विकसित स्वर व्यक्ति की पावनता और सामाजिक गरिमा की आकांक्षा का स्वर है।"[24]

* नंद दुलारे वाजपेयी के अनुसार "नयी कविता की मुख्य उपलब्धि भाषा-शैली और शिल्पपक्ष में अधिक है। गद्य का काव्यात्मक मार्जन इसकी एक मुख्य विशेषता है। रूपों और बिंबों की योजना भी इसका एक क्रियाशील पक्ष है। संपूर्ण स्थिति को देखते हुए यदि इस नयी कविता का शैलीगत नामकरण किया जाए तो यह तथ्य के अधिक समीप होगा। हम तो इस कविता को प्रयोगशील नाम दे सकते हैं, क्योंकि प्रयोगशील मुख्यतः शैली की वस्तु है और यदा कदा अपरिनिष्ठित वस्तु पक्ष को इंगित करती है और अधिक स्पष्टता लाने के लिए इस कविता को शैली के मार्जन और उन्नयन का काव्य भी कह सकते हैं। एक शब्द में इसे प्रयोग शिल्पी काव्य कह सकते हैं।"[25] अतः यह परिभाषा नयी कविता की शैली शिल्प के आधार पर की गई है। वह इसे प्रयोगवाद का अगला रूप मानते हैं तथा शैली शिल्प की नवीन कविता।

* ओम प्रकाश अवस्थी के अनुसार 'नयी कविता के संपूर्ण रचना-विधान और भावपक्ष को देख्कर कहा जा सकता है कि नयी कविता मानवीय मानसिक परिकल्पनाओं का यथार्थ चित्रण है, जिसमें एक ओर परंपरा से अलग दिखाई देने के मोह के फलस्वरूप अनुकांत छंद विधान, नूनत बिंब, नवीन प्रतीक तथा नयी भाषा-शैली का उपयोग है, इसी के साथ ही उसके अंतर में जो वैज्ञानिक बोध के कारण बदलते मानव मूल्यों का उद्घाटन है वही उसकी अंतः सलिलाधार है।"[26] अतः अवस्थी जी के अनुसार नयी कविता को परिभाषित करना कठिन कार्य है फिर भी वह अपने विचारधारा पर नयी कविता को 'वैज्ञानिक बोध के कारण बदलते मानव मूल्यों का उद्घाटन' मानते हैं।

* बच्चनसिंह के अनुसार "दूसरा सप्तक 1951 के प्रकाशन के साथ ही प्रयोगवाद की रूपवादी रुझान के विरुद्ध कथ्य और रूप में संतुलन स्थापित करने की दृष्टि से कविता को 'नयी कविता'

---

[24] नयी कविताः सीमाएँ और संभावनाएँ-गिरिजा कुमार माथुर-पृ.134
[25] धर्मयुग 27 अगस्त 67 सं.धर्मवीर भारती
[26] नयी कविताः रचना प्रक्रिया-ओमप्रकाश अवस्थी-पृ.84

का नाम दिया गया। 'तीसरा सप्तक' की रचनाओं को उसके संपादक अज्ञेय ने 'नयी कविता' ही कहा है। वास्तविकता यह है कि प्रयोगवाद ही संतुलन की खोज में 'नयी कविता' हो जाता है। दूसरे शब्दों में प्रयोगवादी कविता का स्वाभाविक विकास नयी कविता है। छठा दशक नयी कविता का दशक है।"[27] अतः बच्चन सिंह जी के अनुसार प्रयोगवादी कविता में स्थित असंतुलन को संतुलित करने के प्रतिफलन से नयी कविता का निर्माण हुआ है। अतः प्रयोगवादी काव्य का अगला चरण नयी कविता है। इस के 'नामकरण' के आधार की संभावना डी.एच.लॉरेन्स के काव्य संकलन 'न्यु पोयम्स 1920' तथा 'न्यू सिग्नेचर' 1932 का[28] अनुकरण मानते हैं।

* डॉ.रामदरश मिश्र नयी कविता के संदर्भ में अपने विचार प्रस्तुत करते हुए लिखते हैं "'नयी कविता' भारतीय स्वतंत्रता के बाद लिखी गई उन कविताओं को कहा गया, जिनमें परंपरागत कविता से आगे नये भावबोधों की अभिव्यक्ति के साथ ही नये मूल्यों और नये शिल्प-विधानों का अन्वेषण किया गया... फिर भी नयी कविता नाम स्वतंत्रता के बाद लिखी गयी उन कविताओं के लिए रूढ़ हो गया, जो अपनी वस्तु-छवि और रूप-छवि दोनों में पूर्ववर्ती प्रगतिवाद और प्रयोगवाद का विकास होकर भी विशिष्ट हैं। ... कथ्य की व्यापकता और सृष्टि की उन्मुक्तता नयी कविता की सबसे बड़ी विशेषता है।"[29]
* डॉ.रघुवंश के अनुसार "आज की कविता का कवि युग चेतना की मूलधारा का अंग है और उसकी आकूलता की संवेदनीयता मूल धारा तक ही सीमित जान पड़ती है। परंतु धारा समग्र प्रवाह की गति का लक्षण है, प्रतीक है और इसी प्रकार नयी कविता का संबंध युग से है। समाज से है। वह आज के युग के संघर्ष को झेलने वाली चेतना का स्फूरण है, और इसकी प्रेषणीयता भविष्य के विश्वास तथा आस्था को जन्म देने की पीड़ा सहने वालों की वस्तु है।"[30]

---

[27] आधुनिक हिंदी आलोचना के बीज शब्द-बच्चन सिंह-पृ.48
[28] आधुनिक हिंदी आलोचना के बीज शब्द-बच्चन सिंह-पृ.48
[29] हिंदी साहित्य का इतिहास 'छायावादोत्तर काल' सं.डॉ.नगेंद्र-पृ.629

* लक्ष्मीकांत वर्मा 'नयी कविता' की मनोवैज्ञानिक पृष्ठभूमि को स्पष्ट करते हुए लिखते हैं "नयी कविता के नयेपन में यही ऐतिहासिक, वैयक्तिक सामाजिक और आत्मव्यंजक सत्य वे आयाम और धरातल विकसित करते हैं जो परंपरा से भिन्न होते हुए भी सार्थक एवं समर्थ रूप में नयी अभिव्यंजना को अवतरित करते हैं। यही नहीं, इस नयेपन में इस नवीन धरातल, मानसिक स्थिति, अनुभूति और संवेदनशील तथ्यों की अभिव्यक्ति मिलती है, जिसमें यथार्थ की स्वीकृति है, मिश्रित भावनाओं की संवेदना है, रस बोध के नये स्वर हैं, सौंदर्यानुभूति की भिन्न सार्थकता है और बदलते हुए संदर्भों में मानव जीवन के प्रति जागरूक जिज्ञासा है। नयी कविता का विचारबोध और उसकी अभिव्यक्ति वह चरम-बिंदु है जहाँ कलाकार अथवा कवि की कलाकृति उन माध्यमों को त्याग कर चलती है जो निष्प्राण, चेतनाहीन रूप में अपने-जीर्ण-शीर्ण कलेवर के साथ आज के जीवन में स्वरोपित रूप से जीना चाहते हैं।"[31]
* देवीशंकर अवस्थी ने नयी कविता और इसके पूर्ववर्ती कविताओं को 'श्रंखला की ही कड़ियाँ'[32] बनाते हुए लिखते हैं "नयी कविता में केवल 'आस्था और साहस, विश्वास और संकल्प ही होते तो मुझे वह अधिक अपूर्ण लगती। उसमें अनास्था भी है और शंकाकुलता भी बात केवल शक्ति की है। शक्ति पूर्ण अनास्था काव्य के लिए अनुपेक्षणीय है।'"[33]
* रवींद्र भ्रमर नयी कविता पर विस्तृत विचार करते हुए लिखते हैं जिससे नयी कविता की परिभाषा स्पष्ट होती है-"नये युगबोध की अभिव्यक्ति नवीन यथार्थ विषयों के अंगीकरण तथा नयी शिल्प विधि के विन्यास के कारण नयी कविता का स्वरूप कुछ नया होना था। इस दिशा में एक ओर तो उसने प्रयोगवाद द्वारा चलाई गई आभापूर्ण प्रयोगशीलता की परिपाटी का परित्याग किया, विषय भूमि के केंद्र में एक नये स्वाधीन हुए देश के सामान्य मनुष्य की प्रतिष्ठा की ओर दूसरी ओर रचना की विवेक तथा व्यंजनापूर्ण नूतनपद्धतियों का विकास करते हुए

---

[30] नयी कविता; नयी कविता का सामाजिक परिवेश-सं.जगदीशगुप्त-पृ.143
[31] नयी कविता : नयी कविता : मनोवैज्ञानिक पृष्ठभूमि-सं.जगदीश गुप्त-पृ.145
[32] आलोचना का द्वंद्व-देवीशंकर अवस्थी-पृ.25
[33] आलोचना का द्वन्द्व-देवी शंकर अवस्थी-पृ.26

काव्य के अनाहत अर्थगर्भित स्वरूप को अधिक गौरव प्रदान किया। इस प्रकार उसका नयी कविता कहलाने का दावा सार्थक सिद्ध हुआ। हमारे संस्कारों में काव्य के जो दायित्व हैं, उसके कितने उपकरण हो सकते हैं उन सबमें समयानुकूल परिवर्तन करते हुए और उन्हें 'नयी' या 'नये' विशेषण से अलंकृत करते हुए कविता की कोई प्रतिमा बनाई जाए तो वह नयी कविता होगी। विषय, दृष्टिकोण और सृजन-शिल्प की नवीनता के कारण 'नयी कविता' सच्चे अर्थों में नयी है और इसके इस स्वरूप को मान्यता प्रदान करते हुए इसे 'नयी कविता' के नाम से ही संबोधित किया जाता है।"[34]

अतः भ्रमर जी के अनुसार सकारात्मक प्रभाव ग्रहण कर नवीनता की परिपाटी को, नवता, नूतनता को स्वीकृत करने वाली कविता नयी कविता है।

* डॉ.रामगोपाल शर्मा 'दिनकर' के अनुसार "नयी कविता का स्वरूप स्पष्ट करने के लिए परिप्रेक्ष्य की नवीनता मनोवैज्ञानिक पृष्ठभूमि, भाव-बोध के नये स्तर, सौंदर्यबोध के नए तत्व, यथार्थ के नए धरातल, मानव विशिष्टता और आत्म-विधान के आधार आधुनिकता आदि की बात की जाती है। उसकी यह सभी विशेषताएँ कथ्यगत हैं। शिल्पगत विशेषताओं की गणना कराते समय नूतन बिंब विधान, नयी प्रतीक योजना, नवीन सादृश्य-संयोजन, भाषा की व्यंग्यात्मकता तथा शब्द में नए अर्थ का संक्रमण आदि का उल्लेख आवश्यक हो जाता है। निःसंदेह ये सभी प्रवृत्तियाँ संख्या में इतनी अधिक हैं कि उनके होते हुए नयी-पुरानी का अंतर कर पाना कठिन नहीं है। प्रथम कोटि की अर्थात् कथ्यगत प्रवृत्तियाँ यदि नयी कविता की आत्मा के परिवर्तन का संकेत करती है, तो द्वितीय कोटि की अर्थात् कथ्यगत प्रवृत्तियाँ उसके शरीर की सूचना देती हैं।"[35]
* ग.मा.मुक्तिबोध नयी कविता पर विविधांगी दृष्टिकोण से विचार करते हुए लिखते हैं-"नयी कविता, वैविध्यमय जीवन के प्रति आत्मचेतस व्यक्ति की संवेदनात्मक प्रक्रिया है, चूँकि आज

---

[34] नयी कविता-डॉ.रवींद्र भ्रमर-सम्मेलन पत्रिका भाग-61, शक-1896 सं.प्रेमनारायण शुक्ल

[35] नयी कविता और सामाजिक चेतना, आलोचना अप्रेल 1968, सं.वाजपेयी नंददुलारे-पृ.50, 51

का वैविध्यात्मक जीवन विषम है, आज की सभ्यता त्रस-ग्रस्त है। इसलिए आज की कविता में तनाव होना स्वाभाविक है। किसी भी युग का काव्य अपने परिवेश से या तो द्वन्द्व रूप में स्थित होता है या सामंजस्य के रूप में। नयी कविता अधिकतर द्वन्द्व रूप में स्थित है। इसका अर्थ यह नहीं है कि नयी कविता में हृदय का सहज रस या रमणीयता नहीं है... नयी कविता ने नये विषय, नयी उपमाएँ नयी प्रतीक योजना, नयी पद्धति प्रदान की है। लेकिन, यह सब बातें मैं सिर्फ इसलिए कह रहा हूँ कि हम लोग उसकी उपलब्धियों को सबसे पहले पहचान लें। नयी कविता का स्वर एक नहीं, विविध है।"[36] मुक्तिबोध के अनुसार नयी कविता बदले हुए अर्थात् नयी अभिव्यक्ति को अभिव्यक्ती करती है। अतः उनकी यह धारणा नयी कविता वस्तु और रूप की ओर इंगित करती है। मुक्तिबोध की धारणा है कि "आज की कविता का मूल प्रश्न जीवन-जगत के ज्ञान के अधूरेपन या पूरेपन, विकारग्रस्त या शुद्धता के प्रश्न के साथ अटूट रूप से जुड़ा हुआ है।"[37] तथा वे अपने "'साहित्य का सौंदर्यशास्त्र' में लिखते हैं नयी कविता उस प्रकार की आईवरी टावर की रोमांटिक स्वप्नशीलता की, एकांत प्रिय आत्मरतिप्रिय आध्यात्मिकता की कविता नहीं है, जैसे कि पुराने रोमांटिक युग की हुआ करती थी। वह मूलतः एक परिस्थिति के भीतर पलते हुए मानव-हृदय की पर्सनल सिचुएशन की कविता है।"[38]

* रामस्वरूप चतुर्वेदी के अनुसार-"'नयी कविता' शब्द अब एक व्यापक अर्थ में प्रयुक्त होता है, जिसमें कविता ही नहीं, वरन् इस पूरे रचना-युग की प्रवृत्तियाँ व्यंजित होती हैं, जिन्हें समष्टि रूप में 'नवलेखन' भी कहा गया है। नयी कविता में मनुष्य और इसके समग्र अनुभव को पकड़ने का यत्न हुआ है। यों मनुष्य को इसकी संपूर्णता में देखेन और समझने की प्रतिज्ञा हर नए वैचारिक और रचना आंदोलन ने की है-15 वीं शती के युरोपीय पुनर्जागरण से लेकर 20 शती की हिंदी छायावादी कविता तक। पुनर्जागरण का समग्र बल समग्र मनुष्य ('होल मैन') की धारणा पर था। और आधुनिक हिंदी कवि भी कहता है कि जाति, वर्ण, संस्कृति, समाज से

---

[36] नयी कविता और सामाजिक चेतना, आलोचना अप्रेल 1968, सं.वाजपेयी नंददुलारे-पृ.50-51

[37] नयी कविता का आत्मसंघर्ष तथा अन्य निबंधःमृ.ग.मा.मुक्तिबोध-पृ.12

[38] नये साहित्य का सौंदर्यशास्त्र, ग.मा.मुक्तिबोध-पृ.54

'मूल व्यक्ति' को फिर से चाल कर निकाला जाए। नयी कविता में समग्र मनुष्य की बात ही नहीं कही गई, वरन मनुष्य के समग्र-अनुभव खंडों को संयोजित किया गया है।"[39]

* रामवचन राय के अनुसार "नयी कविता में आज के युग-जीवन का स्वर समाहित है, इसलिए वह वर्तमान जीवन से साक्षात्कार की कविता है। हमारा जीवन अपनी तमाम विसंगति ओर विडंबनाओं के साथ उसमें उपस्थित हो रहा है, अतः नई कविता सामयिक जीवन स्तर पर भोगने और रचने के तादात्म्य की कविता है।"[40] उपर्युक्त विवेचन के आधार पर हम नयी कविता की अवधारणा को समझ सकते हैं। विविध विद्वानों के अनुसार नयी कविता भारतीय स्वतंत्रता के उपरांत लिखी गयी वे कविताएँ हैं जो भारतीय समाज के अनुभवों को, नवीन भावाभिव्यक्ति को नवीन काव्योपदानों के आधार पर अभिव्यक्त करते हैं। नयी कविता सामान्य जीवन की जिजीविषा, उसकी आशा-आकांक्षा और उसके जीवन का चित्र अभिव्यक्त करती है।

1.4 नयी कविता:आंदोलनात्मक रूप:

नयी कविता का उद्‌भव और विकास 'नयी कविता' 1954 के प्रकाशन से माना जाता है जो इलाहाबद से निकलती थी और संपादन का कार्य जगदीश गुप्त एवं रामस्वरूप चतुर्वेदी कर रहे थे। कुछ आलोचक नयी कविता को प्रयोगवाद की ही अगली कड़ी मानते हैं। 'प्रयोगवाद' नाम के अनौचित्य को ध्यान में रखकर उसके लिए नयी कविता नाम का प्रचार किया गया।"[41] अज्ञेय के नेतृत्व में संपादित तार सप्तक में हम नयी भावधारा विषय वस्तु की अभिव्यक्ति देती है। कोई भी काव्यधारा अथवा आंदोलन आकस्मिक रूप से उदित नहीं होता है। उसकी पीठिका में कुछ तत्व अवश्य रहते हैं। 'नयी कविता' पत्रिका ने नयी कविता आंदोलन का सैद्धांतिक और काव्यपक्ष का निर्माण और प्रचार किया। इसे हमें नई कविता आंदोलन की आधार पत्रिका मानना ही होगा। नयी कविता का प्रचलन तथा इसका इस युग में आंदोलनात्मक रूप इसी पत्रिका के माध्यम से हुआ। इस पत्रिका के प्रकाशन संपादन के संदर्भ में रामस्वरूप चतुर्वेदी लिखते हैं-"नयी कविता युग का संबंध

---

[39] नयी कविता और सामाजिक चेतना, आलोचना, अप्रैल 1966, सं.वाजपेयी नंददुलारे-पृ.50-51

[40] नयी कविता उद्‌भव और विकास-प्राक्कथन से

[41] आधुनिक हिंदी काव्य में प्रवृत्तिमूलक दार्शनिकता-सुशीला गुप्त-पृ.471

नयी कविता पत्रिका से है जो इलाहाबाद में आरंभ हुई। इसके प्रकाशन का संक्षिप्त वृत्त इस प्रकार है- 'आलोचना' त्रैमासिक के संपादक मंडल धर्मवीर भारती, रघुवंश, ब्रजेश्वर शर्मा, विजयदेवनारायण साही, की एक बैठक में जो भारती के इलहाबाद स्थित आवास पर आयोजित थी, उसके प्रकाशक ओमप्रकाश भी आए हुए थे। वहाँ यह निर्णय हुआ कि इलाहाबाद के युवा लेखकों के सहकारी प्रकाशन 'कविता प्रकाशन' की ओर से 'नयी कविता' शीर्षक एक अर्द्धवार्षिक पत्रिका का प्रकाशन किया जाए। संपादन का दायित्व जगदीश गुप्त और रामस्वरूप चतुर्वेदी को दिया गया। व्यवस्था और वितरण का जिम्मा राजकमल प्रकाशन की ओर से होना स्थिर हुआ। सारी योजना व्यवस्था के स्तर पर आकस्मिक थी पर रचनात्मक स्तर पर उतनी आकस्मिक नहीं। पिछले कुछ समय से नयी कविता की चर्चा-परिचर्चा एक काव्य आंदोलन के रूप में इलाहाबाद में और बाहर भी चल रही थी। यह प्रकाशन योजना सहज स्वाभाविक थी।"[42] अतः रामस्वरूप चतुर्वेदी के अनुसार नयी कविता का 'आंदोलन' और नयी कविता की 'नवीन प्रवृत्ति' आकस्मिक नहीं है। उनके अनुसार नयी कविता आंदोलन की चर्चा उस युग में चल रही थी। अतः उसी का स्वाभाविक विकास 'नई कविता' का प्रकाशन है। उनके अनुसार नई कविता को आंदोलनात्मक रूप देने में उस युग की अनेक लेखक संस्थाओं का और पत्रिकाओं का योगदान था। इस संदर्भ में नई कविता की उत्स भूमि की ओर इंगित करते हुए लिखते हैं-"1953 की फरवरी में नये लेखकों की संस्था परिमल की ओर से नयी कविता विषयक एक गोष्ठी का इलाहाबाद विश्वविद्यालय के 'ओरियंटल हॉल' में आयोजन हुआ। भारत भूषण अग्रवाल, जगदीश गुप्त और रामस्वरूप चतुर्वेदी ने नयी कविता के विविध पक्षों पर उसमें पर्चे पढ़े और फिर शाम की बैठक में काव्य-पाठ था शंभुनाथ सिंह की अध्यक्षता में। ... मार्च 1953 के 'नए पत्ते' में उक्त गोष्ठी की एक संक्षिप्त सूचना प्रकाशित हुई, और काव्य पाठ को लेकर एक पत्र ब्रजेश्वर शर्मा का छापा 'नई कविता'-श्रोता के दृष्टिकोण से। भारतभूषण अग्रवाल द्वारा पठित निबंध 'नई कविता में रूप-विधान और वस्तु तत्व' भी इसी अंक में छापा। रामस्वरूप चतुर्वेदी का गोष्ठी में पठित निबंध

[42] हिंदी साहित्य और संवेदना का विकासः रामस्वरूप चतुर्वेदी-पृ.233

'नयी कविता में मुक्त छंद' कल्पना पत्रिका के अगस्त 53 अंक में प्रकाशित हुआ।"[43] अतः हमें ज्ञात होता है कि 'नयी कविता' में साहित्यिक नव्यता पर काफी विचार-विमर्श हुआ और इन विचारों को प्रकाशित करने में पत्रिका 'नये पत्ते' का 'कल्पना' मूल में थी।

नयी कविता के परिप्रेय को रेखांकित करते हुए प्रो.सुवास कुमार लिखते हैं-"ऐतिहासिक दृष्टि से देखें तो विदेशों में 1950 के आसपास जो 'न्यू पोएट्री' आंदोलन चला था उसी के तर्क पर हिंदी में भी यह नाम, तत्कालीन कविता में विषयवस्तु और शिल्प की नवीनता के कारण और प्रयोगवादी काव्य से इसका अंतर दिखाने के लिए अनूदित कर चलाया गया। मगर तथ्य कुछ और भी कहने हैं। इलाहाबाद से प्रकाशित 'नई कविता' के द्वारा यह नाम अच्छा-खासा प्रचारित हुआ। किंतु इसके बावजूद 'नई कविता' आंदोलन के अंतर्गत खुले आम प्रवृत्तियों को भी प्रश्रय दिया गया। हिंदी कविता में पचास का दशक ऐसा था जबकि 'प्रयोगवाद' और 'नई कविता' के फर्क को बहुत कुछ नज़र-अंदाज़ कर दिया गया। साथ ही यह भी मार्के की बात है कि नयी कविता प्रगतिशीलता की परंपरा का स्वाभाविक विकास ठहरती है।"[44] इस तथ्य के माध्यम से हम यह कह सकते हैं कि नयी कविता और प्रयोगवाद के फर्क को नज़रअंदाज़ कर दिया गया तथा नई कविता प्रगतिशीलता की स्वाभाविक विकासधारा है। नई कविता का कविता के आंदोलनात्मक रूपों में महत्वपूर्ण स्थान है। इस युग में बहुत सारे कविता आंदोलन चले जिनका निर्देश जगदीश जी अपने 'नयी कविताःकिसिम किसिम की कविता'[45] में देते हैं। अतः इन कविता आंदोलन तथा आंदोलनात्मक कविताओं की पार्श्वभूमि होते हुए भी नयी कविता ने अपना साहित्य में महत्वपूर्ण स्थान बनाया। इसे हम नयी कविता आंदोलन की महत्वपूर्ण उपलब्धि के रूप में देख सकते हैं। नयी कविता आंदोलन को प्रयोगवाद से भिन्न मानते हुए तथा 'नवलेखन' की परंपरा में नयी कविता के विकास को रेखांकित करते हुए रामस्वरूप चतुर्वेदी लिखते हैं-"प्रयोगवाद तो मानो नवलेखन की मात्र भूमिका थी। जैसा नाम ही स्पष्ट है, उसकी प्रकृति में बहुत कुछ अस्थिरता के तत्व थे उसके तत्वावधान में नवीन प्रयोग

---

[43] हिंदी साहित्य और संवेदना का विकासःरामस्वरूप चतुर्वेदी-पृ.233
[44] आधुनिक हिंदी कविता-प्रो.सुवास कुमार-पृ.227-228
[45] नयी कविताःस्वरूप और समस्याएँ, जगदीश गुप्त-पृ.176

किये गये जिनमें से कुछ सफल निष्कर्षों की सुदृढ़ भूमि पर नवलेखन की प्रतिष्ठा हुई। इस दृश्टि से प्रयोगवाद को नवलेखन की पूर्व पीठिका ही समझना चाहिए।"[46]

नयी कविता के आंदोलनात्मक रूप पर विचार करते हुए हम कह सकते हैं कि सन् 1953 से ही हिंदी काव्य जगत में नयी कविता के संदर्भ में विचार विमर्श शुरू हुआ और 'आलोचना' पत्रिका के संपादक मंडल में 'नई कविता' शीर्षक अर्द्धवार्षिक पत्रिका के प्रकाशन का निर्णय हुआ और संपादन का दायित्व जगदीश गुप्त और रामस्वरूप चतुर्वेदी को दिया गया। इसके पूर्व 1953 में नये लेखकों की संख्या 'परिमल' के द्वारा विचार विनिमय किया गया तथा 'नये पत्ते' पत्रिका में इस संदर्भ में आलोचना भी छापी गई। 'नई कविता' पत्रिका का प्रकाशन 1954 में लघुपत्रिका के क्रम में हुआ तथा 1954 से 1967 तक इस पत्रिका के आठ अंक प्रकाशित हुए तथा इस में 'विशुद्ध काव्य भूमि की नवीनता'[47] पर जोर दिया गाय। इस पत्रिका ने काव्यजगत में कविता की नवीनता को प्रधानता प्रदान की। इसकी यह पक्षधर तथा आधार पत्रिका थी। इसी के माध्यम से ही हिंदी जगत में कविता के संबंध में 'नई कविता' रूपी आंदोलन चला जिसके आधार पर अनेक कविता आंदोलन तथा अकविता युयुत्सावादी कविता आदि का प्रचलन हुआ किंतु नई कविता ने अपने 'विशुद्ध काव्यभूमि की नवीनता' के आधार पर हिंदी साहित्य में नवीन कविता, नया परिप्रेक्ष्य प्रदान किया।

1.5 नयी कविता की प्रवृत्तियाँ तथा विशेषताएँ:

नयी कविता की प्रवृत्तियाँ :

आधुनिक हिंदी कविता के विकास के सोपानों में नयी कविता का महत्वपूर्ण स्थान है। आधुनिक हिंदी साहित्य में स्वाधीनता प्राप्ति के आसपास की नई काव्य-चेतना को व्यापक अर्थों और संदर्भों में प्रयोगवाद और नयी कविता के नाम से संबोधित किया गया है। यह काव्य आंदोलन अनेक तरह की विचारधाराओं, जीवन मूल्यों, सामाजिक-राजनीतिक आघातों के सामाजिक यथार्थ से उत्पन्न हुआ। यह काव्य आंदोलन रचना-प्रक्रियाओं की विभिन्न शैलियों को अपने में अभिन्न रूप से आत्मसात

---

[46] हिंदी नवलेखन, रामस्वरूप चतुर्वेदी-पृ.14

[47] नयी कविता : खंड-1, सैद्धांतिक पक्ष, सं.जगदीश गुप्त-फैंप से

करता हुआ रचनात्मक विकास की अनेक दिशाओं में विकसित होता रहा। स्वाधीनता प्राप्ति के बाद देश में नव-निर्माण और ब्रिटिश साम्राज्यवाद की दासता की जंजीरों से मुक्त होने का उल्लास था। किंतु इस उल्लास के भीतर एक घनीभूत पीड़ा भी व्याप्त थी कि राजनीतिक स्वतंत्रता के आने पर भी देश-सामाजिक-आर्थिक रूप से साम्राज्यवादी चंगुल से मुक्त होगा अथवा नहीं। भारत के सामने जो विश्व था वह द्वितीय विश्वयुद्ध की मार से घायल, क्षत-विक्षत, भयावह आकृतियों वाला विश्व था जिस पर शीत युद्ध के बादल घिर रहे थे। इस विष से हम अलग नहीं रह सकते हैं। सभी का अनुभव था कि द्वितीय विश्वयुद्ध की भयंकर विभीषिकाओं ने अपने प्रभाव-दबाव से विश्व भर में एक पुराने संसार को नष्ट कर दिया है। परिस्थिति इस प्रकार हो गई कि पुराने मूल्यों और मान्यताओं पर तो प्रश्न-चिन्ह लगा दिया गा था उन्हें इस रूप में बदलाव की तीव्र प्रक्रिया से गुजरना पड़ा कि उन्हें मूल रूप में पहचानना कठिन हो गया था।

नयी कविता आंदोलन हिंदी साहित्य में भिन्न भावबोध की नवीन कविता का आंदोलन है जो समस्त साहित्य में एक नई उपस्थिति दर्ज करता है। प्रयोगवाद और नयी कविता, सामान्य और विशिष्ट, दोनों अर्थों में अपने से पहले की कविता से विद्रोह करती कविता है। छायावाद और प्रगतिवाद की बहुत-सी मान्यताएँ और कसौटियाँ या तो अमान्य घोषित कर दी गई या फिर उन्हें संशोधन और परिष्कार के साथ आत्मसात कर लिया गया। यह परिवर्तन इतनी प्रबल गति से घटित हुई कि कविता की प्रेरणाभूमि, उपकरण, विचारधारा, लक्ष्य और अन्तर्दृष्टि को लेकर अभिव्यंजना के माध्यमों-भाषा, बिंब, प्रतीक, मिथक, भंगिमा, लय, छंद और शैली में परिवर्तन आया और कविता के उद्देश्य और आधारों में भी एक क्रांतिकारी हलचल उपस्थित हुई। कविता का उद्देश्य आनंद या मुग्ध कर लेना मात्र नहीं रहा-कविता का उद्देश्य हो गया आदमी की संपूर्णता में अपने समय और समाज के यथार्थ से साक्षात्कार। नई प्रश्नाकुलता और चुनौतियों के कारण परंपरा और आधुनिकता के प्रति रवैया, नया प्रस्तावित हुआ। नई बौद्धिकता का संदर्भ विचारधारात्मक संघर्ष और प्रतिबद्धता का प्रश्न, राजनीति और धर्म के बदलते रिश्ते, व्यक्ति स्वातंत्र्य, व्यवस्था-विरोध और अस्वीकार के साहस के रूप में सामने आया।

ऐतिहासिक दृष्टि से विचार करने पर यह तथ्य साफ उभरकर सामने आ जाता है कि सन् 1950 तक प्रयोग की एकांतिक वृत्ति के प्रति आकर्षण कम हो गया। कविता अब चमत्कारवादी-रूपवादी बंधनों को तोड़कर पूरे जीवन के सामने लाने का संघर्ष करने लगी तो इसके लिए एक नए नाम की जरूरत महसूस की गई। सर्वप्रथम इसे अज्ञेय जी ने इस काव्य-प्रवृत्ति को 'नयी कविता'[48] नाम देने का प्रस्ताव किया। योगवश यह नाम चल निकला और नई प्रवृत्तियों के लिए रूढ़ हो गया।

प्रगतिवाद और नई कविता एक ओर तो द्वितीय विश्व युद्ध की भयावह चेतना से दूसरी ओर स्वाधीनता प्राप्ति के बाद के परिवेश से प्रभावित और आंदोलित रही है। अस्तित्ववाद-आधुनिकतावाद मार्क्सवाद और गाँधी लोहियावाद के विचारों ने इन रचनाकारों में एक ऐसी अंतर्दृष्टि उत्पन्न की है जो जीवन-जगत के गतिशील और जटिल यथार्थ को नए कोणों से अभिव्यक्ति देती है।

मनोविश्लेषण और अस्तित्ववादी विचारधारा के प्रभाव दबाव ने मानव की निराशा-पराजय-मृत्युबोध को रचना में ढाला है। मध्यवर्ग की आशा-आकांक्षाओं ने काव्य-सृजन में शहरीकरण नगरीकरण से उत्पन्न समस्याओं के साथ संस्कृति तथा परंपरा के भीतर से निकली आधुनिकता-बोध की प्रक्रिया और व्यक्ति की आत्मनिर्वासन की पीड़ा को तीव्र किया। पुराने मूल्यों के मोह-भंग ने इस कविता में राजनीति और व्यवस्था के मानव द्रोही चरित्र को व्यंग्य-वक्रोक्ति, विसंगति और विडंबना की काव्य भाषा में इस ढंग से उजागर किया है कि पूरे परिवेश की समझ पैदा होती है। इस काव्यधारा की प्रमुख विशेषताओं या प्रवृत्तियों को इस प्रकार निरूपित किया जा सकता है-

1) <u>नया भावबोध नयी अभिरुचि</u> :

नयी कविता का नामकरण संज्ञापद 'नयी कविता' इससे यह अभिव्यक्त होता है कि यह कविता नए भावबोध विषयवस्तु, काव्य शिल्प पर आधारित है। नई कविता की अभिरुचि नए के अन्वेषण, इसकी अभिव्यक्ति और इसके सत्यापन की है। नया कवि अपनी प्रकृति-परिवेश आदि से ग्रहीत भावबोधों को नए ढंग से अभिव्यक्त करता है। कविता के विषय में पुरानी अवधारणा में बदलाव आ गया और नयी कविता काव्य संबंधी समस्त अवधारणाओं को नएपन से अभिव्यक्त

---

[48] आज का भारतीय साहित्य, अज्ञेय-पृ.403

करती है। रसादि की प्राचीन अवधारणाओं में बदलाव आ गया। इसकी अवधारणा आनंद पर आधारित नहीं वही वस्तु रूप का यथार्थ अंकन, युगीन बोध की अभिव्यक्ति को महत्वपूर्ण माना गया। नई कविता का कवि अपने काव्य का रोमानी काव्य-शिल्प नहीं चुनता बल्कि यथार्थ पर अधारित भोगे हुए जीवन का यथार्थ सत्य नई काव्यभाषा, रूप, उपमान, छंद अलंकारों के माध्यम से अभिव्यक्त करता है। नई कविता के कवि अजित कुमार अपनी कविता 'कवियों का विद्रोह' में लिखते हैं-

"चाँदनी चंदन सदृशः

हम क्यों लिखें?

मुख हमें कमलों सरीखें क्यों दिखें?

हम लिखेंगेः

चांदनी उस रुपये सी है कि जिसमें

चमक है पर खनक गायब है।

हम कहेंगे जोर सेः

मुँह घर-अजायब है।"[49]

अतः कवि की मनोवृत्ति यहाँ स्पष्ट होती है कि वह काव्य संबंधी पुरानी परिपाटी की अवधारणा से विद्रोह कर मुक्त होकर नयी भाव-भूमि के आधार पर अपनी अभिव्यक्ति देना चाहता है। कवि अज्ञेय का मत है-

"ये उपमान मैले हो गए हैं

देवता इन प्रतीकों के कर गए हैं कूच।"[50]

नई कविता की रचनाओं ने काव्य से संबंधित पुरानी अवधारणा से सहमति व्यक्त करते हुए नए काव्य चिंतन की प्रवृत्ति को खुलकर बढ़ावा दिया। अज्ञेय का कथन है कि "युग परिवर्तन के साथ हमारे रागात्मक संबंध बदल गए हैं। जीवन जगत को देखने की दृष्टि के बदलाव ने राग बोध को

---

[49] जहाँ पर बेतुके, अनमील, जिंदा और मुर्दा भाव रहते हैं।

[50] कवियों का विद्रोहःअग्नि कुमार, नयी कविता-अंक 1

परिवर्तित कर दिया है। आज की कविता मूलतः अपने को अपनी अनुभूति से पृथक करने का प्रयत्न है अपने ही भावों के निर्वैयक्तिकरण की चेष्टा। कविता आत्माभिव्यक्ति ही नहीं आत्म से पलायन है।"[51] रोमांटिक भावबोध के विरोध से अपनी गैर-रोमांटिक दृष्टि का समर्थन अज्ञेय ने किया। जगदीश गुप्त ने कहा कि "कविता सहज आंतरिक अनुशासन से मुक्त वह अनुभूतिजन्य सघन लयात्मक शब्दार्थ है, जिसमें सह अनुभूति उत्पन्न करने की यथेष्ट क्षमता निहित रहती है।"[52] अनुभूति की जटिलता और भाव-संप्रेषण की समस्या को नयी कविता के सभी कवियों ने बार-बार उठाया। केदारनाथ सिंह ने कविता को एक विचार-एक अनुभूतिपरक दृश्य और इन सबका कलात्मक संगठन मानकर बिंब-सिद्धांत का संकेत दिया। विजय देवनारायण साही ने काव्य संवेदना की बदली हुई प्रवृत्ति के कारण का संकेत देकर कहा कि नयी कविता की बहसों में यह मान्यता अंतर्भूत रही है कि न सिर्फ कविता का कलेवर बदला बल्कि गहरे स्तर पर काव्यानुभूति की बनावट में ही अंतर आ गया।"[53]

सारांशतः हम कह सकते हैं कि नयी कविता का कथ्य और शिल्प नए भावबोध पर आधारित है वह पुरानी मान्यताओं को बुदलकर अपनी अनुभूति के आधार पर नयी अभिव्यक्ति प्रदान करती है। नए कवियों ने अपनी काव्य वस्तु-कथ्य-शिल्प उपमान छंद आदि तो नवीन रूप से ग्रहण कर इसे अभिव्यक्त किया। विषय वस्तु में सामान्य मनुष्य और जनसाधारण का रूप उदात्त के बदले लघु मानव ने ले लिया।

2) लघु मानव की अवधारणा तथा नए मनुष्य की प्रतिष्ठापना :

नयी कविता बदले हुए युगबोध और परिस्थितियों की कविता है। कविता का विषय चरित्र उदात्त की अवधारणा पर आधारित नहीं बल्कि लघु मानव की अवधारणा पर आधारित है। यह बात कई कोणों से उठाकर कही गई है कि 'नयी कविता' लघुमानव के परिवेश की कविता है। इसलिए यह प्रश्न भी उठा है कि लघु मानव कौन है? किस विचारधारा की सोच से उपजा है? क्या यह

---

[51] आज का भारतीय साहित्य, अज्ञेय-पृ.405
[52] नयी कविता : स्वरूप और समस्याएँ, जगदीश गुप्त-पृ.116
[53] शमशेर के काव्यानुभूति की बुनावट, साही-पृ.102

व्यक्तिवाचक मानव है? अथवा अहंग्रस्त-आत्मलीन, समाज-विमुख कुंठाग्रस्त-वर्जनापीड़ित मानव है? अथवा यह कोई और है। महाकाव्यों का उदात्त नायक-आदर्श नायक कहाँ गायब हो गया है? आदि पर बहसे हुईं। इस संदर्भ में लक्ष्मीकांत वर्मा ने 'नए प्रतिमानःपुराने निकष' पुस्तक में प्रथम बार लघु मानव को "सहज मानव कहकर चर्चा के केंद्र में रखा।"[54] फिर विजयदेव नारायण साही जी ने "लघु मानव के बहाने हिंदी कविता पर एक बहस"[55] शीर्षक निबंध में लघु मानव को 'सहज मानव' या 'महत् के स्थान पर लघु की स्थापना'[56] का नयी कविता में समर्थन किया। जगदीश गुप्त के अनुसार "पहले अपने को लघु कहना, फिर लघुता की महानता प्रदर्शित करना, प्रकारांतर से अपने को महान कहना है।"[57] अतः लघु मानव की अवधारणा इस साधारण जन से है, जो साधारण होकर भी विशिष्ट है।

ग.मा.मुक्तिबोध ने इस संदर्भ में लिखा है कि "आधुनिक भाव-बोध वाले सिद्धांत में, जन साधारण के स्पीडन-अनुभवों, उग्र विक्षोभों और मूल उद्वेगों को बायकाट किया गया।"[58]

स्वयं अज्ञेय की कविता में लघु मानव स्रष्टा है-

"पर हारता नहीं, न मरता है,
पीड़ित श्रमरत मानव,
भविजित दुर्जेय मानव
कमकर, श्रमकर, शिल्पी, सृष्टा
उसकी मैं कथा हूँ।"[59]

---

[54] नए प्रतिमानःपुराने निकष, लक्ष्मीकांत वर्मा
[55] नयी कविता (सैद्धांतिक पक्ष) खंड 1, सं.जगदीश गुप्त-पृ.183
[56] नयी कविता (सैद्धांतिक पक्ष) खंड 1, सं.जगदीश गुप्त-पृ.184, 185
[57] नयी कविता:स्वरूप और संभावनाएँ, जगदीश गुप्त-पृ.28
[58] नयी कविता का आत्मसंघर्ष तथा अन्य निबंध, ग.मा.मुक्तिबोध-पृ.
[59] मैं वहाँ हूँ, अज्ञेय

3) काव्य की अर्थभूमि का विस्तार और व्यक्ति स्वातंत्र्य पर बल :

छायावादी काव्य ने अर्थ का संकोच कर दिया था और प्रगतिवादी काव्य विचार को कार्मूले की तरह आरोपित करने के कारण समग्र जीवन जगत की चिंताओं से हटकर एकांगी हो गया था। पूरी स्थिति को समझने के बाद प्रयोगवाद तथा नयी कविता ने समग्र मानव को सृजन के केंद्र में स्थापित किया। नयी कविता के कवियों के लिए न कोई विषय वर्जित है-न कोई विषय अछूत। वे जीवन से संबंधित सभी विषयों पर अपनी अभिव्यक्ति देते हैं। उनके लिए प्रत्येक विषय काव्य का विषय है। भली के अंधेरे कोने में खड़े छोटे पौधे का सौंदर्य भी कवि को आकृष्ट करता है। सुंदर और कुरूप, पूरा जीवन नयी कविता में काव्य विषय, काव्य वस्तु बना है। हर विषय को वस्तु बनाकर इन कवियों ने काव्य सृजन किया है। फलतः अर्थ भूमि का विस्तार इनकी एक विशिष्ट काव्य-प्रवृत्ति रही है।

नयी कविता ने व्यक्ति स्वातंत्र्य की चर्चा भी बार-बार की और कहा कि हम मानव की स्वातंत्र्य के पक्षधर है। मध्यवर्ग की स्वतंत्रता के नाम पर व्यक्ति की आस्थाओं-अनास्थाओं की सजग चर्चा और अभिव्यक्ति की गई। अकेला पीड़ित मानव तथा समूह समाज में पीड़ित व्यक्ति की स्वतंत्रता पर अधिक बल दिया गया। अज्ञेय के नेतृत्व में कवियों ने व्यक्ति स्वतांत्र्य पर बल दिया। इनका मन था कि स्वाधीन मानव ही स्वाधीन चिंतन कर सकता है। किसी तरह की पराधीनता का शिकार होकर मानव अपने व्यक्तित्व का निर्माण नहीं कर सकता।

इन कवियों की काव्याभिव्यक्ति समाज में व्यक्ति की स्वतंत्रता पर बल देती है। इनका कहना है कि व्यक्ति समाज का अंग है किंतु समाज में उसकी एक अलग सत्ता है-जैसे नदी में द्वीप[60] की। समाज से वे पोषित होने के विचार को वह मानते हैं साथ ही यह चाहते हैं कि समाज की समस्त विचारधारा उन पर हावी न हो।

सारांशतः नयी कविता काव्य की अर्थभूमि का विस्तार व्यापक रूप से करती है। उनके लिए काव्य का कोई निश्चित विषय और मानदंड नहीं है। संसार की समस्त चित्र काव्य विषय बन सकती है जिसे नया कवि अपनी अभिव्यक्ति संवेदना में पकड़ सकता है। नयी कविता कविता संबंधी अवधारणा

[60] नदी के द्वीप, अज्ञेय

का विस्तार करती है तथा इस कवि की कविता अपने युगीन वातावरण में पलते हुए संघर्षरत मानव की आवाज़ है जो इसके स्वतंत्रता की पक्षधर है।

4) स्वाधीनता प्राप्ति के मोहभंग की स्थिति :

भारतीय भूखंड में 'भारतीय स्वतंत्रता संग्राम' अपना महत्वपूर्ण स्थान रखता है। सदियों की दासता की कड़ियों को तोड़ता हुआ भारत आज़ाद हुआ और अपने भविष्य की मंगल, उज्वल कामना से जन साधारण वर्ग आशातीत था। किंतु स्थिति कुछ अलग ही हो गई। साधारण वर्ग के सपने टूटने लगे। स्वाधीनता प्राप्ति के बाद का उल्लास थोड़ा-सा समय बीतते ही निराशा की काली चादर में लिपटने लगा। नेहरू-युग ने जनता की आशा-आकांक्षाओं को जलाकर राख कर दिया। अमीर और गरीब के बीच खाई बहती ही गई तथा विदेशी पराधीनता का संकट गहराने लगा। पूरा देश एक ऐसी उथल-पुथल से गुजरा कि जागरूक और संवेदनशील रचनाकार 'मोहभंग' की पीड़ा से कराहने लगा। विश्व स्तर पर साम्राज्यवादी-पूंजीवाद के शीतयुद्ध की छाया, अंतिम प्रविधिक विकास और स्थापित व्यवस्था के बढ़ते हुए विराट, संवेदनशील , अमानवीय तंत्रों की स्वार्थपरता के कारण सर्वग्राही मानव विनाश का खतरा, हर स्तर पर झूठ फरेब, आडंबर-पाखंड और भ्रष्टाचार से भारतीय लोकतंत्र चरमराने लगा। राजनीति का स्तर इतना गिर गया कि मानव द्रोही हो गई और व्यवस्था के बीच मानव अकेला महसूस करने लगा। इस स्थिति की प्रबल व्यवस्था विरोधी अभिव्यक्ति नयी कविता में विद्यमान है। और इसका मूल कारण सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और राजनीति आदि के मूल में है। पीड़ा-पराजय, निराशाबोध, आक्रोश, अकेलापन, अकुलाहट, अंधेय यंत्रना, विसंगति विडंबना, हूक और हाय का वातावरण केवल अस्तित्ववाद की देन नहीं बल्कि इसके मूल कारण तद्‌युगीन सामाजिक परिवेश से उपजी है।मोहभंग से उपजे तनाव की अभिव्यक्ति है। धर्मवीर भारती का 'अंधा युग' रघुवीर सहाय कृत आत्महत्या के विरुद्ध सर्वेश्वर की गर्म हवाएँ, मुक्तिबोध की चांद का मुँह टेढा है, अंधेरे में आदि कविताओं में इस मनोस्थिति का व्यापक चित्रण दिखाई देता है।

सारांशतः नई कविता अपने युगीन जीवनानुभवों के अभिव्यक्त की कविता है और अपने बीच समस्त युग का अनुभव ग्रहित कर उसे अभिव्यक्त करती है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद की स्थिति

आशा-आकांक्षाओं के साथ मोहभंग की स्थिति की अभिव्यक्ति नई कविता की महत्वपूर्ण विशेषता है। इस संदर्भ की विशेष अभिव्यक्ति मुक्तिबोध के काव्य में दिखाई देती है-

"अभिव्यक्ति के खतरे उठाने ही होंगे,
तोड़ने ही होंगे गढ़ और मठ सब
तब नहीं दिखाई देगा।"[61]

5) <u>प्रकृति सौंदर्य पर नई दृष्टि तथा मिथकीय प्रयोग</u> :

नई कविता में प्रकृति का नया रूप अभिव्यक्त हुआ है। नए कवियों ने प्रकृति सौंदर्य के प्रति अपना विशेष अनुराग व्यक्त किया है। लेकिन इन सभी कवियों का प्रकृति प्रेम छायावादी कवियों से भिन्न है। छायावादी कवि प्रकृति में एक विराट सत्ता का संकेत पाता था और मानसिक स्वतंत्रता की अभिव्यक्ति में भी प्रकृति का पूरा उपयोग करता था। प्रयोगवाद और नयी कविता के काल में कविवर जीवन-जगत की स्थिति-परिस्थिति के तनाव-संघर्ष, औद्योगिक समाज के आरंभ की टूटन, नेहरू युग की निराशा से लचक, मोहभंग इसकी चेतना को डसता था। इसी तनाव को कम करने के लिए वह प्रकृति के पास जाता है। मानव द्वारा प्रकृति के विनाश की चिंता उसने बार-बार अभिव्यक्त किया है। भवानी प्रसार मिश्र, सर्वेश्वर सक्सेना, गिरिजाकुमार माथुर, धर्मवीर भारती, नरेश मेहता, कुंवर नारायण आदि सभी कवि प्रकृति को सामाजिक अंतर्दर्शन के रूप में लेते हैं। सन्नाटा, सतपुड़ा के जंगल, पी के कटे बौन आदि ने विन्ध्य प्रकृति की महिमा को अनेक नए प्रतीकों बिंबों में वाणी दी है। इन कवियों ने जीवन के राग-विराग, आस्था-अनास्था को अभिव्यक्ति देने के लिए प्रकृति का सहारा लिया है। इस सौंदर्य दृष्टि में किसी भी प्रकार की बाह्य दृष्टि आरोपित नहीं होती। एक कलाकार की तटस्थ दृष्टि से वे इस वस्तु को उसकी समग्रता और सूक्ष्मता के साथ देखने का प्रयत्न करते हैं। सौंदर्य बोध की परंपरागत वस्तुओं के स्थान पर इन्होंने उपेक्षित विषयों को स्वीकार किया। महिमा मंडित और काल्पनिक सौंदर्य बोध की अपेक्षा यथार्थ सौंदर्य बोध को नए कवियों ने सार्थक अभिव्यक्ति दी।

---

[61] अंधेरे में, मुक्तिबोध

नई कविता की दृष्टि में इतिहास भी महत्वपूर्ण है और वह इतिहास को स्वीकार करते हुए ऐतिहासिक मिथकों का प्रयोग कर अपनी बदली हुई अभिव्यक्ति प्रदान कर उसमें नई चेतना को खोज लेते हैं। अतः नई कविता में व्यापक रूप से मिथकीय प्रयोग मिलते हैं। चांद का मुँह टेढ़ा है, ब्रह्मराक्षस, लकड़ी का रावन, अंधायुग, आत्मजयी, कनुप्रिया, संशय की एक रात आदि में मिथकीय प्रयोग के माध्यम से नवीन बदली हुई परिस्थिति, युगबोध और सामाजिक जीवन की वैचारिक अभिव्यक्ति मिलती है। अतः मिथकों का प्रयोग कर पारंपरिक अवधारणा से विरोध कर नई वैचारिक अभिव्यक्ति प्रदान करने का कार्य नई कविता ने किया है। नई कविता की यह एक महत्वपूर्ण विशेषता है-बदली हुई नवीन सौंदर्यानुभूति तथा मिथकों का प्रयोग।

6) <u>काव्य रूपों की विविधता</u> :

नई कविता का नयापन उसकी वस्तु के साथ-साथ काव्य रूपों की विविधता में भी विद्यमान है। इन कवियों ने सभी प्रचलित काव्य-रूपों में सुधार किया तथा सर्वथा नूतन काव्य रूपों का खुलकर प्रयोग किया। पुराने प्रबंध काव्य के अखंड कथात्मकता और अखंड रसात्मकता के रूढ़ ढाँचे को तोड़कर नवीन प्रबंध चेतना को विकसित किया। धर्मवीर भारती का अंधायुग और कुंवर नारायण की आत्मजयी तथा संशय की एक रात इस संदर्भ में उल्लेखनीय है। कथ्य का उपयोग विचार-विशेष के केंद्र को आलोकित करने के लिए किया गया और प्रभाव की दृष्टि से रस की अवधारणा को दूर रखा गया। इसी रूपक में प्रबंध, लघु, चरित्र, काव्य के माध्यम से 'लंबी कविताओं' का सृजन किया गया जिसमें मुक्तिबोध का ब्रह्मराक्षस, अंधेरे में तथा आत्महत्या के विरुद्ध, असाध्यवीणा, कुआनो नदी उल्लेखनीय है। इस दौर के सभी कवियों ने प्रायः लंबी कविताओं का सृजन किया और काव्य ही संक्षिप्त रूप में भी कविता की जैसे सांप, सोन मछली आदि। नई कविता में छोटी से छोटी और लंबी से लंबी कविता विद्यमान है। अतः इस में अर्थ को सूत्रात्मक पद्धति से संजोया गया और फिल्म की रील की भांति चित्रात्मक पद्धति को अपनाया गया। इस तरह की कविता में कम-से-कम शब्दों में अर्थ की सार्थकता भर दी गई। शमशेर, अज्ञेय, भवानी प्रसाद, रघुवीर सहाय आदि ने जापानी काव्य रूप-हायकू, अंग्रेज़ी की 'ड्रेमेटिक पोएट्री' तथा गाँव में मौजूद लोकगीत सदृश्य कजली, लावणी, आल्हा के काव्य रूपों को नए सांचे में ढाला। काव्य रूपों का नया प्रयोग नई कविता की अपनी एक

विशेष शक्ति है। फलतः गजल, नवगीत, काव्यनाटक के नए रूप नयी कविता की सर्जनात्मकता को नए आयाम प्रदान करते हैं।

7) <u>काव्य भाषा, बिंब और प्रतीकों का नयापन</u> :

नई कविता की विशिष्ट प्रवृत्ति मूल रूप से काव्य भाषा, बिंब और प्रतीकों के नयेपन में निहित है। निराला व पंत ने काव्यभाषा के परितर्वन की घोषणा छायावादी कालखंड में ही की थी और प्रगति प्रयोग काल भी इसी भाषा परिवर्तन पर अग्रसर रहा। नया कवि अपनी अभिव्यक्ति के लिए नई भाषा और बिंब प्रतीकों को विकसित करता है जो अपनी काव्य परंपरा में नवीन प्रतीत होते हैं अथवा इनका अर्थ परिवर्तित है। आधुनिक विज्ञान युग ने मानव की मानसिकता पर गहरा प्रभाव डाला और नयी कविता का रचनाकार भी इसी भाषिक अभिव्यक्ति के आधार पर सरल, बोधगम्य, बोलचाल की भाषा जो साधारण व्यक्ति को सहज संप्रेषित हो सके, उसका प्रयोग अपने काव्य लेखन में किया। नया कवि भाषा को अपनी अभिव्यक्ति का साधन मानता है और शब्दों के माध्यम से नये अर्थ संकेतों की अभिव्यक्ति करता है। यंत्र युगीन सभ्यता के कारण अपनी संवेदना को 'योजनांत टैंक' सायरन की आवाज, रेडियो की छाया आदि का प्रयोग कविता में हुआ और क्रायडीय विचारधारा के आधार पर मानव की लिविडो का अभिव्यक्तिकरण यौन परिकल्पनाओं के माध्यम से हुआ जो स्त्री शरीर के 'दरोजों, कपोल, नाभी, ओंठ, जंघाओं के माध्यम से अभिव्यक्त हुआ और अपनी यथार्थ संवेदना की अभिव्यक्ति का आधार माना गया। वैविध्यमय योजना नयी कविता की अपनी विशिष्टता है। अतः नयी कविता बिंबधर्मिता वैविध्यमय है जिसमें अनेक रूपों के बिंब दिखाई देते हैं। बिंब और प्रतीक नई कविता की शैली का अभिन्न अंग है। प्रतीकों के संदर्भ में इन कवियों ने साधारण से लेकर अति कथ्य वस्तुओं की परिकल्पना की है जिसमें साधारण मनुष्य से लेकर उदात्त चरित्र भी विद्यमान है। अज्ञेय ने इस संदर्भ में पहले ही कहा है, ये उपमान मैले हो गए हैं।

देवता इन प्रतीकों के कर गए हैं कूच।"[62]

---

[62] कलकी बाजरे की, अज्ञेय

अतः इस संदर्भ में नये कवियों का कथन है कि पुराने प्रतीकों के माध्यम से नवीन भावबोधों की अभिव्यक्ति नहीं हो सकती। इस संदर्भ में मिथकों के माध्यम से पुराने प्रतीकों को नई अवधारणा में गढ़ा गया। जो नए अर्थ और उद्देश्य को प्रतिपादित करते हैं। नई कविता में कवियों ने अपनी संवेदनात्मक अभिव्यक्ति के लिए बिंबों और प्रतीकों का प्रयोग अधिक किया है जिसमें उनके अर्थ की प्रकृति नवीन भावबोध को अभिव्यक्त करती है।

8) <u>शिल्पगत विशिष्टता, छंद और नए अर्थ की लय</u> :

नई कविता का शिल्प अपनी नवीनता के कारण उल्लेखित है। नई कविता का काव्य-शिल्प पुरानी काव्य धारणा से मुक्त है तथा इसमें नवीन काव्योपकरणों का उपयोग किया गया है। तार सप्तक की भूमिका में अज्ञेय ने यह स्पष्ट किया था कि उलझी हुई तथा नवीन भावबोध की युगीन अभिव्यक्ति को परंपरागत भाषा, प्रतीक, उपमान आदि के माध्यम से अभिव्यक्त करना कठिन एवं असंभव है। काव्य की संरचना में कविता 'छंद के रजत पाश से पूर्णतः मुक्त है और अर्थ की संप्रेषणीयता के आधार पर वाक्य संरचना आधारित है। वाक्यों, कथनों को कहीं-कहीं पूर्ण तो कहीं आधे असंपूर्ण अभिव्यक्ति के रूप में लिखा गया है। शब्द प्रयोग के संदर्भ में कोई विशिष्ट सिद्धांत नहीं बल्कि इसमें भी संप्रेषणीयता के आधार पर शब्द चयन और शब्द गठन किया गया और अभिव्यक्ति की संप्रेषणीयता के लिए विज्ञान, भूगोल, इतिहास, मनोविज्ञान, नृतत्वशास्त्र, धर्म, दर्शन, ग्रामीण भाषा-बोली के शब्दों का प्रयोग भरपूर किया गया।

नयी कविता छंद शास्त्र के विरोध की कविता है अतः छंद के बंधन को पूर्णतः निरस्तन कर मुक्त तथा गद्य रूप काव्य लिखा गया जिससे कहीं कहीं संप्रेषण और भाव के साधारणीकरण में दुरूहता निर्माण होती है। साथ ही शब्दों के अभिधेय अर्थ को छोड़ लक्षणा और व्यंजना शक्ति को महत्वपूर्ण माना गया। भाषा को व्यंग्य के रूप में स्वीकृत कर उसे पैनी धार दी गई अतः उपहासिक प्रतीकों का प्रयोग किया गया। भाषाई दृष्टिकोण से नयी कविता में खड़ी बोली का ही प्रयोग हुआ है किंतु अभिव्यक्ति के आधार पर योजित शब्दों के कारण भाषा में दुरूहता निर्माण हो गई कारण बिंब धर्मी एवं प्रतीकात्मक प्रयोग के कारण वह साधारण व्यक्ति के पहुँच से बाहर थी। नया कवि अभिजात भाषा और छंद की निंदा करता है।

शब्दों के अर्थ की लय के संदर्भ में विचार विमर्श करते हुए जगदीश गुप्त मराठी विचारक अरविंद मारुळकर का साक्ष्य देते हुए लिखते हैं-"शब्द लय काल सापेक्ष है और लय में अमूर्त स्वयंभूत और स्वतंत्र शाकी होती है और साथ ही संभरन शक्ति भी।"[63]

अतः गुप्त जी के अनुसार नयी कविता के अर्थ की लय विविधमयी है और वह अपने युग और काल के साथ संबंध बनाती हुई है। जगदीश गुप्त जी ने 'अर्थलय' का और गिरिजा कुमार ने 'नाद सौंदर्य' का जो सिद्धांत नयी कविता में प्रतिपादित किया है वह मुक्त छंद की 'लय-ध्वनि' का सौंदर्यबोध ही है। अतः सारांश रूप से नई कविता के संदर्भ में अर्थ लय शिल्प का महत्वपूर्ण पक्ष है और नए कवियों ने इसका इतना प्रचुर रूप में प्रयोग किया। और अर्थलय तथा मुक्त छंद नयी कविता का पर्याय ही हो गया।

निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि नई कविता अपने युगीन-नवीन भावबोध की कविता है और इस कविता के सभी तत्वों में नवीनता विद्यमान है जो उपर्युक्त विशेष प्रवृत्तियों के विवेचन से स्पष्ट होता है।

* * *

---

[63] नयी कविताः स्वरूप और संभावनाएँ, जगदीश गुप्त-पृ.69

द्वितीय अध्याय

मराठी नव कविता:एक परिचय

द्वितीय अध्याय

मराठी नव कविता : एक परिचय

2.1 आधुनिक मराठी कविता के इतिहास का संक्षिप्त परिचय

2.2.1 आधुनिक मराठी साहित्य इतिहास ःकाल विभाजन

2.2.2 आधुनिक मराठी कविता-प्रथम कालखंड-1818-1875

2.2.3 आधुनिक मराठी कविता-द्वितीय कालखंड-1876-1886

2.2.4 आधुनिक मराठी कविता-तृतीय कालखंड-1886-1905 (पूर्वार्द्ध)

2.2.5 आधुनिक मराठी कविता-तृतीय कालखंड-1905-1920 (उत्तरार्ध)

2.2.6 मराठी कविता में रोमाँटिसिज़म का कालसंदर्भ

2.2.7 आधुनिक मराठी कविता चतुर्थ कालखंड-1920-1940

2.2 आधुनिक मराठी साहित्य के इतिहास में 'नव कविता' का स्थान

¢×÷¸ú¡¸ ‚š¡¸¸¡¸
Ÿ¸£¸“ú ›¸¨¸ ˆÅ¢¨¸÷¸¸ À ‡ˆÅ
œ¸¢£□¸¡¸

प्रस्तावना

भाषा मानव को अन्य प्राणियों के अलग स्थान प्रदान करती है। भाषा मानव के विचार, चिंतन और अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम है, जिसके अभाव में मानव सृष्टि मात्र में स्थित अपनी भिन्न सत्ता खो देगा। भाषा और साहित्य का अन्योन्याश्रित संबंध है। भाषा के माध्यम से व्यक्ति, चिंतन

करता है और इस चिंतन की, अभिव्यक्ति साहित्य के माध्यम से करता है। इसी प्रक्रिया को आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने 'जनता की चित्तवृत्ति'[64] कहा है।

भारत एक बहुभाषी संस्कृति का देश है। भारतीय भूखंड पर विविध भाषाएँ बोली जाती हैं और उनका साहित्य भी सुगठित रूप से विद्यमान है। भाषा के इतिहास के संदर्भ में 'अपभृंष युगीन' महाराष्ट्रीय अपभृंष से मराठी भाषा विकसित हुई जो 'महाराष्ट्र' प्रदेश की मुख्य भाषा है। साहित्य की अवधारणा के अनुसार इस प्रदेश की चित्तवृत्ति का प्रतिबिंब मराठी साहित्य में अंकित हुआ है।

2.1 आधुनिक मराठी कविता के इतिहास का संक्षिप्त परिचय

मराठी भाषा का उद्‌भव और विकास विभिन्न विद्वानों के मन से सन् 1190 में हुआ है। यहीं से मराठी का भाषिक रूप दिखाई देता है। मराठी भाषा की उत्पत्ति के आधारों के रूप में अनेक शिलालेख, ताम्रपत्र और लिखित ग्रंथ माने जाते हैं। मराठी भाषा के अनेक विद्वान मराठी भाषा का उद्‌भव सन् 1190 में मुकुंदराज लिखित 'विवेकसिंधु' से मानते हैं, जो मराठी साहित्य की प्रथम रचना के रूप में सर्वमान्य है।[65] मराठी साहित्य की धारा इस युग से प्रवाहित होती है और इस साहित्य ने अत्यन्त मौलिक रचनाओं से अपनी यात्रा शुरू की जिसका अध्ययन-विवेचन एक अत्यन्त अभिरुचि का विषय बन सकता है।

प्रस्तुत विवेचन का मूल उद्देश्य मराठी साहित्य में नव कविता का परिप्रेक्ष्य में आधुनिक मराठी साहित्य का परिचय प्राप्त करना है जिसके आधार पर हम 'मराठी नव कविता' का साहित्यिक परंपरा के आधार पर मूल्यांकन करते हुए उसका युगीन साहित्य में योगदान अथवा स्थान निर्धारित कर सकें। विषय व्याप्ति की संभावना को ध्यान में रखते हुए यहाँ हम मराठी की आधुनिक कविता का परिचय लेंगे।

2.2.1 आधुनिक मराठी साहित्य इतिहास:काल विभाजन

---

[64] हिंदी साहित्य का इतिहास (कालविभाग) आ.रामचंद्र शुक्ल

[65] प्रादेशिक भाषा और साहित्येतिहास : डॉ.सूर्यनारायण रणसुभे-पृ.3

भाषा और साहित्य के इतिहास लेखन में अध्ययन की सुविधा, स्पष्टता और वस्तुनिष्ठता तथा युगीन परिवेश में साहित्य का विवेचन करने के लिए कालविभाजन की प्रक्रिया को अपनाया जाता है। काल और साहित्य की अवधारणा अत्यन्त गतिशील होती है। इसका एकीकृत अध्ययन अत्यन्त कठिन और दुरूह कार्य है। इसलिए भाषा और साहित्येतिहासकारों ने विभाजन की शैली अपनाई। काल विभाजन और नामकरण के विविध आधार हैं। आधुनिक मराठी कविता का परिचय लेने से पूर्व हम इसके पूर्व की साहित्य परंपरा पर दृष्टिपात करें।

मराठी साहित्य का कालविभाजन प्रमुखतः तद्‌युगीन प्रचलित शासनकाल के आधार पर किया गया है, यथा-

1) यादव कालीन मराठी भाषा-1100-1350

2) बहामनीकालीन मराठी भाषा-1360-1600

3) शिवकालीन मराठी भाषा-1600-1700

4) पेशवेकालीन मराठी भाषा-1700-1850

5) अंग्रेज़कालीन मराठी भाषा-1850-1947[66]

6) स्वातंत्र्योत्तर मराठी भाषा-1947-अद्‌यतन[67]

उपर्युक्त काल विभाजन और नामकरण के संदर्भ में डॉ.सूर्यनारायण रणसुभे जी लिखते हैं- "धर्म और संस्कृति पर जिनका आधिपत्य होता था, उनकी भाषा कभी मानक मानी जाती थी। आज अर्थ सत्ता जिनके पास है, उनकी भाषा को मानक माना जाता है, भाषा और सत्ता का संबंध भी गहरा होता है।"[68] स्पष्ट है कि उपर्युक्त काल विभाजन का आधार युगीन राजनेता अथवा शासन काल है और इस युग में लिखित साहित्य का विवेचन इतिहास ग्रंथों में किया गया है। साधारणतः युगीन कालखंडों के संदर्भ में मराठी और हिंदी की साहित्य प्रवृत्तियों में बहुत समानता है, केवल अंतर इतना है कि "प्रारंभ के दो कालों में मराठी प्रतिभा प्रमुखतः धार्मिक और दार्शनिक रचनाओं में ही

---

[66] भारतीय साहित्य-मराठी-कुसुमावती देशपांडे, सं.डॉ.नगेंद्र-पृ.246-247
[67] प्रादेशिक भाषा और साहित्येतिहास, डॉ.सूर्यनारायण रणसुभे-पृ.9-13
[68] प्रादेशिक भाषा और साहित्येतिहास, डॉ.सूर्यनारायण रणसुभे-पृ.8

निरत रही।"[69] और हिंदी में प्रारंभिक रूप में दिखाई देनेवाली वीरगाथात्मक प्रवृत्ति 'शिवकालीन मराठी भाषा' में दिखाई देती है।

साधारणतः 'भारतीय साहित्य'[70] का अवलोकन करने पर हम पाते हैं कि भारतीय भूखंड की साहित्यिक प्रवृत्तियाँ युगीन कालखंडों में लगभग समान है। मराठी साहित्य भी इसका अपवाद नहीं है क्योंकि समस्त भारतीय भूखंड की युगीन राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक और धार्मिक चेतना सम-समान रही। युगीन जनता की चित्तवृत्ति साहित्य में प्रतिक्रिया स्वरूप अभिव्यक्त और अंकित हुई है। 'स्वातंत्र्योत्तर मराठी भाषा काल' के अंतर्गत मराठी के सुधि आलोचक निशिकांत ठकार ने आधुनिक कविता को अध्ययन की सुविधा के लिए पांच कालखंडों में विभाजित किया है। उनके अनुसार नवकविता पांचवें कालखंड की कविता है। अतः हम यहाँ इसी आधार पर आधुनिक मराठी कविता का विवेचन करेंगे-

2.2.2 आधुनिक मराठी कविता:प्रथम कालखंड-1818-1875

मराठी साहित्य में आधुनिकता की शुरुआत सन् 1818 से माना जाता है।[71] फिर भी विविध विद्वानों के अनुसार इस युग में आधुनिकता की प्रवृत्ति स्पष्ट रूप से नहीं दिखाई देती है। इसे आधुनिकता के उदय की पार्शभूमि में देखते हुए अनेक विद्वानों ने सन् 1874 से आधुनिकता का मराठी साहित्य में स्पष्ट आरंभ माना है। "श्री श.श्री जोग सन् 1885 से कवि केशवसुन के आविर्भाव से आधुनिकता का मराठी साहित्य में आरंभ मानते हैं।"[72] डॉ.सूर्यनारायण रणसुभे जी के अनुसार "आधुनिक मराठी काव्य साहित्य का आरंभ सन् 1885 से माना जाता है। क्योंकि काव्य के भीतर नवीन दृष्टिकोण की एक निश्चित परंपरा यहीं से मिलने लगती है। वैसे यह काल गद्य-साहित्य का है।

---

[69] भारतीय साहित्यःकुसुमावती देशपांडे, सं.नगेंद्र-पृ.247
[70] भारतीय साहित्य, सं.डॉ.नगेंद्र
[71] आधुनिक मराठी वाङ्मयाचा इतिहास, अ.ना.देशपांडे-खंड-1-पृ.1
[72] प्रदक्षिणा, रा.श्री.जोग, खंड-1-पृ.5

"[73] सन् 1875 से 1885 के युग के मराठी साहित्य को संक्रमन काल का साहित्य कहा जाता है। जहाँ साहित्य में परंपराबद्धता और आधुनिकता की प्रवृत्तियाँ दिखाई देती हैं। इसे रा.श्री. जोग 'क्रांतिपूर्णकाल' से अभिहित करते हैं। इस युग का विभाजन इस प्रकार किया गया है-

पंत परंपरा का काव्य-इस युग की मराठी काव्य परंपरा में पांडित्य और दर्शन का प्रभाव अधिक था। अतः इसे 'पंत' काव्य कहा गया तथा इसका आधार यह भी है कि इस युग के प्रमुख कवियों में मोरोपंत, वामन पंडित आदि थे। इनकी कविता में पांडित्य अधिक था और भक्ति भावना कम थी।

पंत काव्य परंपरा के काव्य की विषय वस्तु का मूल भक्ति है। किंतु भक्ति का विवेचन अत्यन्त दुरूह और पांडित्यपूर्ण भाषा में किया गया है जो जनसामान्य के लिए बोधगम्य नहीं है। विवेचन में विविध छंदों, अलंकारों का प्रयोग किया गया है जिसकी तुलना हम हिंदी के रीतिकालीन साहित्य से कर सकते हैं।

संत काव्य परंपरा-मराठी साहित्य की विशिष्ट प्रवृत्ति संत काव्य की परंपरा है। व्यापक रूप से संत साहित्य का लेखन हुआ है जिसका आधार सामाजिक-जीवन और व्यापक मानव मूल्य है। मराठी में ज्ञानेश्वर, नामदेव, तुकाराम आदि संतों का प्रभाव व्यापक रूप से लंबे समय तक मराठी साहित्य पर दिखाई देता है। इसी प्रभाव परंपरा के आधार पर विठोबा दप्तरकार, नारायण खांडेकर, परशुराम गोडबोले आदि कवि संत विचारधारा पर काव्य सृजन कर रहे थे। किंतु पूर्ववर्ती साहित्य की मौलिकता का अभाव इनकी कविता में दिखाई देता है। पूर्व की परंपरा का अनुकरण ही इस काव्य में हो रहा था।

शाहिरी काव्य-'शाहिरी' काव्य परंपरा मराठी साहित्य की उल्लेखनीय प्रवृत्ति है। 'शाहिरी' काव्य से तात्पर्य है 'श्रृंगार और वीर रस से बनी कविता'। इस प्रकार की कविता लिखनेवालों को शाहिर कहा जाता ह और यह गेय कविता है, जिसे शाहिर अपनी शैली में गाकर प्रस्तुत करता है। शाहिरी काव्य परंपरा मराठी में जनमानस में लोकप्रिय है। इस युग के होनाजी बाळ,

---

[73] प्रादेशिक भाषा और साहित्येतिहास, डॉ.सूर्यनारायण रणसुभे-पृ.15

सगनभाऊ, परशुराम, प्रभाकर, अनंत फंदी आदि उल्लेखनीय शाहिर कवि हैं। इस काव्य की विषयवस्तु की तुलना करते हुए डॉ.रणसुभे जी लिखते हैं-"यह काव्य परंपरा हिंदी के रीति काव्य के निकट पड़ती है, जिसमें आधुनिकता का अभाव है।"[74]

आधुनिक मराठी कविता की पृष्ठभूमि में इन तीन काव्य परंपराओं को देख सकते हैं। इस युग में एक ओर यह परंपराबद्ध काव्यधाराएँ शुरू थीं और दूसरी ओर अंग्रेज़ी साम्राज्यवाद और शासन के कारण समाज में नवीन दृष्टिकोणों का आर्विभाव हुआ और सामाजिक, राजनीतिक दृष्टिकोणों में परिवर्तन सुधार के लिए अनेक आंदोलनों का प्रणयन हो चुका था।

सन् 1818 ई. में पुणे में अंग्रेज़ों की सत्ता स्थापित हुई और अंग्रेज़ी शासन व्यवस्था का विस्तार धीरे-धीरे महाराष्ट्र में होता गया। इस प्रक्रिया के अंतर्गत अंग्रेज़ी शिक्षा-दीक्षा का प्रभाव मराठी जनमानस पर हुआ और वह अपनी सामाजिक-राजनीतिक परिस्थितियों के प्रति सजग होकर नवीन विचारधारा के प्रति उन्मुख होकर सामाजिक सुधार पर ध्यान देने लगा। महात्मा फुले, गोपाल गणेश अगरकर, लोकहितवादी, म.गो.रानडे, विष्णुशास्त्री चिपलुनकर, लोकमान्य तिलक आदि ने अपने लेखन से समाज सुधार की भावना को प्रेरित किया। मराठी के आधुनिकतावादी विचारक महात्मा फुले ने सामाजिक विषमताओं को दूर करने का प्रयत्न किया और स्त्री शिक्षा पर बल देते हुए सन् 1842 में प्रथम स्त्री शिक्षा के उद्देश्य से पुणे में लड़कियों के लिए पहला स्कूल खोला। इस युग में पुरोगामी विचारधारा वाले अनेक समाज सुधारक सामाजिक वर्ण भेद, जातिवाद, कर्मकांड आदि को ठुकराकर नवीन विचारधारा के आधार पर मानव को मानवीय आधार पर प्रतिष्ठित करने की कोशिश कर रहे थे। सामाजिक स्थिति में सुधार तथा हिंदू धर्म की पाखंडी रूढ़िवादिता से मुक्ति का प्रयत्न इस युग में विशिष्ट रहा।

सारांशतः आधुनिक मराठी कविता का यह प्रथम कालखंड अपनी प्राचीन परिपाटि की धारणा को लेकर विकसित हुआ और युगीन प्रभाव तथा अंग्रेज़ी शिक्षा दीक्षा और आधुनिक मानवतावादी विचारधारा के आधार पर सामाजिक सुधार तथा धार्मिक वर्णभेद जातिवाद से मुक्त होने की

---

[74] प्रादेशकि भाषा और साहित्येतिहास, डॉ.सूर्यनारायण रणसुभे-पृ.15-16

विचारधारा से प्रेरित थी। इस युग में महाराष्ट्र के फूले, तिलक, रानडे, लोकहितवादी आगरकर आदि ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई और कविता में भी इन्हीं नवीन विचारों की अभिव्यक्ति होने लगी। कविता-पंत-संत शाहिर काव्य परंपरा से संबंध रखती हुई धीरे-धीरे विकसित हुई है। इस काल विशेष पर विचार करते हुए श्री निशिकांत ठकार लिखते हैं-"अर्वाचीन मराठी काव्य के आरंभ युगीन काव्य में परंपरा से चली आ रही संत काव्य शाहिरी काव्य तथा पांडिती काव्य परंपराओं का प्रभाव क्षीण होता गया। पांडिती काव्य ने भाषांतर के आधार पर अपना अस्तित्व बनाए रखा किंतु स्वतंत्र काव्य रचनाओं तथा अंग्रेज़ी काव्यानुवाद से नवयुग का सृजन हो रहा था।"[75] इस कालखंड के बाद मराठी साहित्य में आधुनिक विचारों से ओतप्रोत साहित्यधारा स्पष्ट रूप से दिखाई देती है।

2.2.3 आधुनिक मराठी कविता-द्वितीय कालखंड-1876-1886

भारत में अंग्रेज़ी साम्राज्य के विस्तार के साथ औद्योगिक क्रांति हुई और ज्ञान-विज्ञान का प्रसार हुआ और आधुनिक शिक्षा पद्धति इसका मूल कारण था। अनुवाद और रूपांतरण की काव्य पद्धतियाँ इस युग में अधिक प्रचलित हुईं। अतः मराठी में यूरोपीय लेखकों की रचनाओं का अनुवाद और रूपांतरण होने लगा और संस्कृत से प्रभावित पांडित्यपूर्ण रचनाओं का मोह धीरे-धीरे लुप्त होने के कारण इस युग की कविता पांडित्य विहीन और सरल बोधगम्य बनी। कवि ‘कीर्तिकर’ ने टेनिसन की ‘द प्रिन्सेस’ का रूपांतरण किया और अनेक कवियों ने अनुवाद और अनुकरण से काव्य सृजन किया। ‘वि.मो.महाजन’ ने वर्डस्वर्थ, कीट्स, शैली, कॉलरिज आदि की कविताओं का अनुवाद किया। ओ.वा.कानिटकर विष्णुदास भावे आदि ने संगीतात्मक प्रभाव की कविता लिखी जो लोकसामान्य को मोहित करती थी। इसी युग में किर्लोस्कर, देवल आदि ने नाटयगीत लिखे इस युग में संगीत काव्य की धारा प्रचलित रही।

युगीन परिस्थितियों के अनुरूप कविता में भी परिवर्तन होने लगा और कविता का विषय अलौकिकता, पांडित्यपूर्णता को छोड़कर सामान्य जनभाषा में सामान्य एवं दैनंदिन जीवन की

---

[75] मराठी कविता:स्वरूप आणि विवेचन, प्रो.निशिकांत ठकार-पृ.221

समस्याओं पर केंद्रित होने लगा। इस काल को मराठी साहित्य में 'युगसंक्रमण' का काल कहा गया। इसी युग की कविता के संदर्भ में नवीन प्रयोगात्मक पद्धति प्रचलित रही। पुराणी काव्य पद्धतियों के गुणों से मोह टूटने लगा तथा नवीन विषय, सामाजिक परिस्थितियों का चित्रण आदि के रूप में परिवर्तन होता रहा। कविता अपने पारंपरिक रूप का त्याग कर नवीन धारा की ओर अग्रसर होने लगी।

2.2.4 आधुनिक मराठी कविता-तृतीय कालखंड-1886-1905 (पूर्वार्द्ध)

सन् 1886 से 1920 के कालखंड को मराठी साहित्य के इतिहास में 'क्रांतिकाल' कहा गया है।[76] इस युग के प्रधान कवि 'केशवसुन' (कृष्णजी केशव दामले) थे जिन्होंने मराठी कविता में नवीन विचार, विषय, भाव तथा अभिव्यक्ति के उपादानों में नया प्रयोग किया। कविता की लेखन पद्धति में अमूलाग्र परिवर्तन करने का श्रेय इनको ही दिया जाता है। केशवसुत के काव्य का विवेचन कर आलोचकों ने उन्हें आधुनिक मराठी कविता का जनक कहा है। केशवसुत ने काव्यलेखन की पारंपरिक पद्धतियों को अपनाते हुए नवीन भाषा, भाव-बोध की कविताएँ लिखीं जिनमें सामाजिक चेतना, प्रेम का आदर्श और व्यापक विश्वबंधुत्व रहस्यवाद आदि विशेषताएँ दिखाई देती हैं। इसके पूर्व की परंपरा संस्कृत निष्ठ भाषा तथा शास्त्रीय आधार पर थी। इसे तोड़कर केशवसुन ने कविता को सामाजिक एवं सामान्य जनता के विषय से जोड़ा। मराठी कविता में सामान्य समाज जीवन को अभिव्यक्त करने का प्रथम श्रेय केशवसुन को दिया जाता है। इस युग में कविता कपोल कल्पना को त्याग कर यथार्थ जीवन की अभिव्यक्ति बनी। तीव्र सामाजिकता इनके काव्य की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता है। इनकी 'तुतारी' (बिगुल) नवाशिपाई (नया सिपाही) आदि चर्चित कविताएँ हैं जो नई भावना अभिव्यक्त करती हैं। बिगुल के माध्यम से कवि कहते हैं-

"मुझे एक ऐसा बिगुल ला दो,
जिससे मैं सारे वातावरण को जागृत कर दूँ।"[77] (केशवसुत)

---

[76] मराठी कविता ःस्वरूप आणि विवेचन, प्रो.निशिकांत ठकार-पृ.223

[77] प्रादेशिक भाषा और साहित्येतिहास, डॉ.सूर्यनारायण रणसुभे-पृ.19

‘नया सिपाही’ नामक कविता में वे जाति, धर्म आदि सभी बंधनों को लांघकर मनुष्य को केवल मनुष्य के रूप में स्थापित करना चाहते हैं। इनकी संपूर्ण कविताओं में अन्याय, अत्याचार, गुलामी के प्रति विद्रोह तथा नवीन धारणाओं की स्वीकृति का भाव अभिव्यक्त हुआ है। इस युग की तुलना हिंदी से करते हुए डॉ.रणसुभे जी लिखते हैं-"हिंदी में निराला की कविताओं में इतनी प्रखरता तथा तेजाश्रिता मिलती है। परंतु निराला का काल केशवसुत के करीब 35 साल बाद आता है। अर्थात् जहाँ तक कविता के भीतर आधुनिकता का प्रश्न है, मराठी कविता हिंदी की अपेक्षा कहीं आगे है। अंत्यजाच्या मूलाचा पहिला प्रश्न (अछूत अंत्यज के बालक का पाहिला प्रश्न) ‘मजुरावर उपासमारीची पाठी’ (मजदूर पर भुखमरी का संकट) आदि कविताओं में रूढ़िग्रस्त चातुवर्थ व्यवस्था तथा आर्थिक प्रश्नों पर कठोर प्रहार किए गए हैं। केशवसुत के पास निश्चित सामाजिक दृष्टि थी। मराठी काव्य साहित्य के अंग में इस प्रकार की सामाजिक चेतना एकदम नई चीज़ थी। केशवसुत ने ही मराठी कविता को सामाजिकता से जोड़ा है। प्रगतिशीलता के सारे लक्षण इनकी कविताओं में प्राप्त होते हैं। इस सामाजिक दृष्टि का सुनिश्चित विकास मराठी काव्य में हुआ तथा कविता के लिए नए विषय क्षेत्र उपलब्ध हुए।"[78]

इस कथन के आलोक में हमें इस युग की कविता का विषयवस्तुगत परिप्रेक्ष्य और कवि केशवसुत के काव्य का महत्व समझ में आ सकता है। इस युग के कवियों ने केशवसुत की विचारधारा को अपनाते हुए सामाजिक चेतना के आधार पर रचनाएँ कीं जिनमें प्रगतिशीलता के तत्व विद्यमान थे। इस युग के कवियों ने सामाजिक चेतना, प्रेम का उदात्त रूप, सामाजिक चेतना की रहस्यवादी कविता, अनुवाद पद्धति, काव्य के विविध रूपों का उपयोग कर अपनी काव्याभिव्यक्ति दी। इस युग में कवि केशवसुत ने अंग्रेज़ी Sonnet का ‘सुनित’ शब्द देकर इस प्रकार की काव्य शैली का प्रचलन किया। कवि केशवसुत के काव्यक्रांति की विवेचना करते हुए कुसुमावती देशपांडे जी लिखती हैं- "केशवसुत ने 1885 में लिखना प्रारंभ कर दिया था और उस समय उनकी शैली वही थी जो उसके पूर्ववर्ती पंडित कवियों की थी। पर उन्होंने शीघ्र ही परंपरागत काव्य के रूप की श्रंखलाएँ तोड़ डालीं।

---

[78] प्रादेशिक भाषा और साहित्येतिहास, डॉ.सूर्यनारायण रणसुभे-पृ.19

... गहन अनुभूतियाँ और काव्य-व्यंजना मराठी काव्य में पहले कभी इस प्रकार परस्पर घुल मिलकर एकान्वित नहीं हुई थी। उनकी 'पुष्प के प्रति' विषयक कविता, रात्री भ्रमण में सितार की मधुर ध्वनि विषयक कविता और 'हरपलें श्रेय' जैसी आदर्शवादी कविताओं में शक्ति-तत्व और सार्वभौमता, कोमलता और मर्मभेदिता का सुंदर सामंजस्य है। उन्होंने काव्य में सच्चे समाजवाद और प्रगतिवाद का मार्ग अपनाया।"[79]

साधारणतः इस विवेचन के आधार पर हम कह सकते हैं कि मराठी कविता में विविध स्तरों पर नवीनता का आरोप करनेवाली कविता इस युग में आरंभ हुई और केशवसुत इस युग के प्रमुख एवं प्रेरणादायी सृजनात्मकता के आधार रहे। मराठी कविता में पहली बार अपनी 'पंडित काव्य' परंपरा को छोड़कर नवीन विषयों को काव्य की विषयवस्तु के रूप में इसी युग में समाहित किया गया। अतः यह युग मराठी कविता का क्रांतियुग कहा गया जो समुचित है।

इस युग के प्रमुख कवि केशवसुत हैं तथा इनके समकालीन कवि के रूप में रेव्हरंड नारायण वामन टिळक, विं.दा.करंदीकर 'विनायक', काशीनाथ हरिमोडक, माधवानुज, दत्तात्रय कोंडो घाटे दत्त आदि कवि हैं जो नवीन विचारधारा तथा नवीन साहित्यिक दृष्टि से काव्य लेखन कर रहे थे।

2.2.5 आधुनिक मराठी कविता-तृतीय कालखंड-1905-1920 (उत्तरार्द्ध)

"सन् 1905 से 1920 का कालखंड मराठी काव्य के तृतीय कालखंड का उत्तरार्द्ध माना जाता है। इस युग के प्रमुख कवियों में गोविंदागृज, रेंदाळकर, बालकवि, रहाळकर, नागेश और कवयित्री लक्ष्मीबाई टिळक प्रमुख हैं।"[80]

इस युग के कवियों में गोविंदाग्रज तथा बालकवी उल्लेखनीय रचनाकार हैं। इन्होंने कवि केशवसुत की विचारधारात्मक काव्यपरंपरा का विकास किया तथा प्रकृति और समाज के माध्यम से कविता को नई दिशा प्रदान की। 'गडकरी' केशवसुत की परंपरा का निर्वहन करते हैं। उनके काव्य में भावुकता, वैयक्तिकता, समाजवादी प्रगतिशीलता के तत्व दिखाई देते हैं। इनकी नाट्य रचनाएँ

---

[79] भारतीय साहित्य, सं.नगेंद्र, 'मराठी'-पृ.284
[80] मराठी कविता, स्वरूप आणि विवेचन, निशिकांत ठकार-पृ.245

विशेष रूप से लोकप्रिय हुईं जिनका विषय लोकशिक्षण और सामाजिक समस्याओं का चित्रण था। नवीन विचारधारा के साथ आलंकारिक शैली में उन्होंने महत्वपूर्ण कविताएँ लिखीं।

बालकवि इस युग के प्रकृतिवादी कवि तथा प्रगीतिकार हैं। उनके प्राकृतिक चित्रण की शैली में अद्‌भुत सौंदर्य भरा हुआ है। उनकी कविता में प्रकृति और पुष्प का प्रेम भाव, पुष्पवाटिका का मनोहर दृश्य, नर्तन करती हुई नदियाँ, कलरव के झरने, गुंजन करते हुए भ्रमर आदि की छवियाँ दिखाई देती हैं। रचना में आलंकारिकता के साथ नादमधुरता इनके काव्य की विशेष प्रवृत्ति है।

इस युग की कविताओं में कहीं परंपरा का मोह और त्याग की भावना दिखाई देती है। कवि केशवसुत की कविता के आधार पर ही कविता में भाव भाषा छंद विषयवस्तु और विचारों का निर्वहन हुआ। सामाजिक विषमता के चित्रण के साथ इस युग का कवि प्रकृति के रम्य वातावरण में रममान हो जाता है, 'बालकवि' की निसर्गपर कविताएँ इसकी साक्ष्य हैं। इस युग में कवि केशवसुत की विचारधारा का निर्वहन हुआ और नवीन विचारों के साथ कविता अपना विकास करती रही।

2.2.6 मराठी कविता में रोमाँटिसिज़्म का कालसंदर्भ

मराठी कविता में वैश्विक स्तर पर चल रहे रोमाँटिसिज़्म का उदय क्रांति समान ही था। वह जिस काल में राजकीय, सामाजिक परिस्थितियों से उदीयमान हुआ। वह परिस्थिति किसके लिए अनुकूल थी। इस संदर्भ में 'निशिकांत ठकार' जी का कथन महत्वपूर्ण है। वे लिखते हैं कि-"जीवन के सभी क्षेत्रों में होनेवाले उद्‌बोधन की चेतना से कविगणों का आक्षिप्त रहना संभव नहीं था। काव्य केवल समाज दृश्य का यथावत प्रतिबिंब नहीं वह जीवन का भाष्य है।"[81] तथा अंग्रेज़ी राजसत्ता के साथ अंग्रेज़ी साहित्य का प्रभाव मराठी साहित्य पर हुआ। इसलिए इस कविता को 'अंग्रेज़ी कविता का मराठी अवतार कहा जाता है।'[82] इस युग के कवियों ने अपनी संवेदनशीलता के साथ मन की स्वच्छंदधारा को कविता के माध्यम से साहित्य में प्रवाहित किया। सुनित रचना, गुढ़गुंजन, प्रवृत्ति सामाजिक संदर्भ प्रकृति विषयक नवीन दृष्टिकोण आदि का प्रभाव साहित्य में था। जो कि अंग्रेज़ी

---

[81] मराठी कविताः स्वरूप आणि विवेचन, निशिकांत ठकार-पृ.229
[82] मराठी कविताः स्वरूप आणि विवेचन, निशिकांत ठकार-पृ.227

साहित्य की स्वच्छंदधारा से परिचित होने का परिणाम हुआ। केशवसुत ने मराठी कविता का युगारंभ किया और प्रेमविषयक कविता लिखी। इस संदर्भ में टीका टिप्पणी करते हुए रा.श्री.जोग ने लिखा कि-"प्रीतिविषयक कविता केशवसुत ने उसे अंग्रेज़ी कविता का मराठी अवतार बनाने के लिए ही लिखी यह स्पष्ट है। फिर भी रोमाँटिसिज़्म की भावोत्कटता उनकी कविता में दिखाई नहीं देती।"[83] 'प्रीति-आणि तू', 'फार दिवसांनी भेंट', 'मधुर वाला', 'सृष्टि आणि कवि', 'रंग-ढंग', 'पुष्पाश्रृत', 'फुलपाखरु' आदि इसके उदाहरण हैं। इसी प्रकार कविता में मिथकों का प्रयोग प्रथम केशवसुत ने ही किया। केशवसुत के समकालीन काशीनाथ हरि मोढ़क, कविदत्त आदि प्रमुख थे। जिन्होंने अपनी विविधांगी प्रतिभा से नवचेतना का काव्य लिखकर मराठी कविता की श्रीवृद्धि की।

1905 से 1920 के कालखंड को मराठी कविता के तृतीय कालखंड का उत्तरार्द्ध कहा जाता है। इस युग के प्रमुख कवियों में गोविंदाग्रज, रेदाळकर, बालकवि, राहळकर, कवि नागेश और लक्ष्मीबाई टिळक आदि उल्लेखनीय हैं। कवि गोविंदाग्रज (राम गणेश गडकरी) व्यंग्यकार 'बालकराम और नाटककार' गडकरी के रूप में मराठी साहित्य में उल्लेखनीय स्थान है। इन्होंने 'वाग्वैजयंती' के माध्यम से आत्मशोधक और आत्मदर्शन पर चिंतन की अभिव्यक्ति की। इनकी कविता में असाधारण भाषा प्रभुत्व दिव्य कल्पना विलास, रमणीय पदलालित्य, अद्‌भुत नादमाधुर्य उपरोक्त तिडंवन व्यंग्य आदि दिखायी देता है। इनकी कविता में चिंतातुर जंतु, एक समस्या फुटकी तपेली, मुरली, प्रेम का पहिला शाहिर, प्रेम कवि, प्रेम, प्रेमाखातर, प्रेम पाठ, प्रेमाची प्रामाणीकता, पहिले चुंवन, गुलाबी कोडं आदि कविताएँ विशेष उल्लेखनीय हैं। जिसमें कवि ने अपनी आत्मानुभूति के आधार पर सामाजिक चेतना, सामाजिक समरसता तथा प्रेम और श्रृंगार आदि की अभिव्यक्ति की है। बालकवि ने प्रकृति के माध्यम से अपनी संवदेनशील काव्यानुभूति का परिचय दिया है। अपनी कविता में प्रकृति के विविधांगी दृष्टिकोण से अनेक चित्र खींचे हैं। उनकी कविता में प्रकृति बालिका प्रेयसी, नवयुवती, माता और वृद्धा के रूप में अभिव्यक्त हुई है। प्रकृति को बालिका और प्रेयसी मानकर 'फुलराणी' धर्मवीर, तारकाचे गाणे, मुढ़मालती, थडव्यातील रमणी, मोहिनी, दौलत राषांची,

---

[83] मराठी कविता : स्वरूप आणि विवेचन, निशिकांत ठकार-पृ.234

मंजुळा, चाफेकळी आदि कविताएँ लिखीं। जिनका मराठी साहित्य में विशेष सम्मान है। प्रकृति प्रेम, स्वच्छंदता, रहस्यात्मकता, मरणोत्कंठा, स्वप्न प्रवृत्ति, अतिमानवीय प्रभाव, रंग-नाद सौंदर्य, आत्मनिष्ठा तथा व्यक्तिवाद, कल्पना विलास, दुर्लभता की भावना आदि बालकवि के कविता की विशेषताएँ हैं। बालकवि ने अपनी अधिकतर कविताएँ प्रकृति को आधार बनाकर बालकों के लिए लिखीं। अतः वह मराठी साहित्य में अत्यन्त लोकप्रिय हुईं। 1907 में महाराष्ट्र कवि सम्मेलन के अध्यक्ष 'कीर्तिकर' ने उन्हें 'बालकवि' के नाम से सम्मानित किया तब वे केवल अठारह वर्ष के थे।[84]

रेंदाळकर

केशवसुत की परंपरा को विकसित करनेवालों में रेंदाळकर का नाम उल्लेखनीय है। इन्होंने अपनी कविताओं के माध्यम से समाज सुधारना, स्वच्छंद प्रेमभाव सृष्टिगीत ध्येयवाद, विश्व कुटुंबकत्व, रहस्यवाद आदि भावों को अभिव्यक्त किया है तथा इन्होंने अंग्रेज़ी, संस्कृत, बंगाली कविताओं का मराठी में सफल अनुवाद किया। रेंदाळकर ने 'पुष्पांजली' के माध्यम से अपनी पूर्ववर्ती कवियों की विचारधारा को आगे विकसित किया। इनकी कविताओं में भी सामाजिकता, वैयक्तिकता, रहस्यवाद, प्रकृति चित्रण आदि प्रवृत्तियाँ दिखायी देती हैं।

लक्ष्मीबाई टिळक

लक्ष्मीबाई टिळक इस काल की एकमात्र उल्लेखनीय कवयित्री हैं। कवि रेव्हरन्ड वामन नारायण टिळक की पत्नी होने के कारण इन्हें काव्य सृजन की प्रेरणा मिली इन्होंने अनेक विषयों पर सुबोध कविताएँ लिखीं। फिर भी इनकी कविताओं में घर संसार, ममतामयी वात्सल्य, हास्य विनोद आदि का स्थान प्रमुख है। उनका 'घरगुती घागर' काव्य संकलन इन्हीं घर संसार की वात्सल्यमयी भावनाओं से ओतप्रोत है।

2.2.7 आधुनिक मराठी कविता : चतुर्थ कालखंड-1920-1940

काल, समाज और साहित्य की धारा निरंतर प्रवाहित होती रहती है और इन तीनों का संबंध अन्योन्याश्रित होता है। 1920 के आसपास बालकवि, गोविंदाग्रज, रे.टिळक आदि कवियों का निधन

---

[84] मराठी कविताःस्वरूप आणि विवेचन, निशिकांत ठकार-पृ.253

हुआ। इन महानुभावों की मृत्यु से साहित्य सृजन में उदासीनता निर्मित हुई। फिर भी काल समाज और साहित्य की गति निरंतर अबाधित प्रवाहित होती है। उसी प्रकार मराठी काव्य साहित्य की धारा अग्रसर होती रही। पाश्चात्य शिक्षा-दीक्षा के कारण भारतीय समाज में एक नई चेतना का आविष्कार हुआ। जिससे एक शिक्षित वर्ग निर्मित हुआ।

शिक्षा की सुलभता के कारण वह आंग्ल तथा यूरोपीय देशों से, उनकी विचारधारा से, तथा सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, 'साहित्यिक' विचारधाराओं से परिचित और प्रभावित हुआ। साहित्य के क्षेत्र में बहुत सारे तत्व अंग्रेज़ी साहित्य से प्रभावित हैं। अनेक विचारधाराओं की तरह अंग्रेज़ी साहित्य के स्वच्छंदतावाद-रोमांटिसिज़म का प्रभाव भारतीय साहित्य पर पड़ा। कोई भी साहित्यकार अपने युगीन विचारधाराओं से अप्रभावित नहीं रहता। कहीं न कहीं युगीन विचारधारा, वैचारिक आंदोलन उसके बोध को प्रभावित करते रहते हैं। उसी प्रकार अंग्रेज़ी के स्वच्छंदतावाद का प्रभाव भारतीय साहित्य पर हुआ। जिससे मराठी साहित्य भी प्रभावित है। विचारकों के अनुसार मराठी का 'रविकिरण मंडल' और हिंदी 'छायावाद' के काव्यांदोलन की पृष्ठभूमि में कहीं न कहीं इस अंग्रेज़ी स्वच्छंदतावाद का प्रभाव है। 'निशिकांत ठकार' के अनुसार अर्वाचीन मराठी कविता अंग्रेज़ी कविता का मराठी अवतार हैं।"[85]

अर्वाचीन मराठी कविता के तीसरे कालखंड 1920 से 1945 को 'रविकिरण मंडल' नाम से अभिहित किया गया।[86] सन् 1920 के अक्तूबर में 'महाराष्ट्र शारदामंदिर' साहित्य प्रेमियों की संस्था बनी और इसका प्रत्यक्ष कार्य 1921 के जून में शुरू हुआ। इस संस्था की अनौपचारिक बैठक में साहित्य चर्चा होती थी, और प्रकट सभाओं में व्याख्यान स्मृतिदिन आदि कार्यक्रम एक दो वर्ष यह कार्यक्रम नोखले-शारदा मंदिर के सचिव नियुक्त हुए और मनोरमा बाई रानाडे 1922 में कवि यशवंत और द.ल. माधव पटवर्धन, दिवाकर आदि सदस्य ने माडखोलकर भी इसके सदस्य बने।[87]

---

[85] मराठी कविता:स्वरूप आणि विवेचन, निशिकांत ठकार-पृ.227
[86] प्रदक्षिणा भाग-1, सं.रा.श्री जोग-पृ.20
[87] रविकिरण मंडल गौरविका, सं.कुमुदिनी, घारपूरे-पृ.3

अतः इस प्रकार महाराष्ट्र शारदामंदिर की बैठक में साहित्यिक चर्चा के संदर्भ में रविकिरण मंडल की स्थापना हुई। इस संदर्भ में कवि माडखोलकर लिखते हैं-"मंडल की पहली पुस्तक 'किरण' दि.9 सितंबर, 1923 को प्रसिद्ध हुई। यह सच है किंतु 'किरण' के प्रकाशन वर्ष के पूर्व की 1921 की जुलाई में जिस दिन प्रो.श्री.बा.रानडे के घर गिरीश, यशवंत, माधव ज्युलियन और मैं छः लोग एकत्र हुए थे उसी दिन निश्चित रूप में मंडल की स्थापना हुई थी।"[88]

अतः रविकिरण मंडल के कवि साहित्य विचार चर्चा कर अपने-अपने अनुभवों के आधार पर काव्य रचना करते थे और इनकी प्रथम पुस्तक 'किरण' 1923 सभी साहित्य पाठकों में अत्यन्त लोकप्रिय हुई। किंतु इसके साथ ही इस कविता का विरोध भी किया गया। इस संदर्भ में कुमुदिनी घारपूरे लिखती हैं कि-"किंतु उससे भी अधिक विलक्षण बात यह है कि पहले ही पदन्यास ने साहित्य क्षेत्र में हंगामा मचा दिया। रविकिरण मंडल की पहली कृति पर ही उसकी कड़ी आलोचना की गई। 'विविध ज्ञान विस्तार' में सुप्रसिद्ध समीक्षक कै.बा.अ.भिडे जी ने 'किरण' में प्रकाशित कविताओं पर आरोप लगाया। श्री भिडे जी का विरोध कवियों की प्रेम दृष्टि और उसकी व्यापक लोकप्रियता से था। प्रेम का चित्रण इन कवियों ने अधिक रंगीन किया था। विशेषतः माधव पटवर्धन की 'कौमार्यास्मित' यशवंत की 'शीलवती सुंदरी', गिरीश की 'क्षण मिला' (क्षण भेटला) आदि कविताओं पर विशेष आरोप था।"[89] इन पर 'रावबाजीचा काळ' हे जागवणार अर्थात् 'बाजीराव मस्तानी' का युग फिर से यह लाएँगे।"[90] इस प्रकार की रविकिरण मंडल के कविता की समाज संस्कृति विरोधी कविता के रूप में कड़ी आलोचना की गई।

रविकिरण मंडल का प्रथम प्रकाशन 9 सितंबर 1923 को 'किरण' प्रातिनिधिक काव्य संकलन रहा। इस संकलन के प्रकाशन के बाद 'मंडल' की चर्चा साहित्यिक समाज में शुरू हुइ। यह संकलन मंडल की कीर्ति और अपकीर्ति का कारण बना।[91]

---

[88] रविकिरण मंडल गौरविका, सं.कुमुदिनी, घारपूरे-पृ.12-13
[89] रविकिरण मंडल गौरविका, सं.कुमुदिनी घारपूरे-पृ.13-14
[90] रविकिरण मंडल गौरविका, सं.कुमुदिनी घारपूरे-पृ.14
[91] साहित्यातील संप्रदाय, रा.शं.वाळिंबे-पृ.238

इस संदर्भ में विविधांगी दृष्टिकोणों से मंडल की कविता की चर्चा हुई और उसके पक्ष-विपक्ष में अनेक आलोचनाएँ की गईं। इस संदर्भ में मराठी के प्रसिद्ध आलोचक रा.शं.वाळिंबे लिखते हैं- "उदारमनस्क और व्यापक सहानुभूति के लोगों में 'नवीन काव्य प्रतिभा' के लोग ऐसी धारणा बनी तो कुछ विपक्ष के लोगों को और दूर दृष्टिकोणों को लगा 'नए तमाशा करनेवाले कौन आ गए।"[92]

बा.अ.भिडे 'किरण' संकलन पर अपना विचार प्रस्तुत करते हुए लिखते हैं-"किंतु इस श्रृंगारिक कविता का भयंकरत्व काव्य प्रतिभा की दीप्ति से दुगुना हुआ है। 19 वीं सदी के आरंभ के समय रावबाजी की चैनबजी में उद्भावित अनंतफंदी, परशुराम, होबाजी बाळा, प्रभाकर इत्यादि वागीश्वरों की सुधारित आवृत्ति 20 वीं सदी में फिर से निर्माण होने की संभावना दिख रही थी। कल के भविष्य में लावणी के उदय का यह 'अरुण किरण' है ऐसा कहना पड़ेगा।[93]

'रविकिरण मंडल' की अर्वाचीन कविता का पूर्ण संबंध प्राचीन मराठी 'प्रेम मस्ती और श्रृंगार' की कविता से जोड़ा गया और उसी का अगला कदम-कहकर उसका विरोध एवं अस्वीकार किया गया। रविकिरण मंडल की कविता का मुख्य रूप स्वतंत्रता था किंतु श्री वाळिंबे के अनुसार- केशवसुत का 'मानवधर्म' और 'रविकिरण मंडल' को इष्ट था यह दूरान्वय से भी नहीं कहना चाहिए- 'तुतारी', 'नवा शिपाई', 'स्फूर्ति' (केशवसुत) आदि कविताओं के समान काव्य लेखन 'रविकिरण मंडल' के किसी भी सदस्य को संभव नहीं हुआ। समाज के विरोधी विचारों की अभिव्यक्ति की ओर सामाजिक मन का संकुचन हुआ, ऐसा प्रतीत होता है।"[94]

रविकिरण मंडल की कविता का स्वरूप सांधिथ था। अतः समान विचार के व्यक्ति अपनी काव्य रचना कर एक ही संकलन में प्रकाशित करते थे। भाषा के संदर्भ में भी इन कवियों का रुझान नवीन था। अतः इनके काव्य में विषय संदर्भानुसार भाषा का प्रयोग हुआ है। संस्कृत, लोकभाषा मराठी, फारसी, उर्दू आदि शब्दों का प्रयोग हुआ। इन कवियों की भाषा के संदर्भ में डॉ.अक्षयकुमार काळे लिखते हैं-"माधवराव पटवर्धन की काव्य शैली संस्कृत समास प्रचुर शब्दों से और फारसी

---

[92] साहित्यातील संप्रदाय, रा.शं.वाळिंबे-पृ.238
[93] ज्ञान विस्तार, दिसंबर 1923-पृ.135
[94] साहित्यातील संप्रदाय, रा.शं.वाळिंबे-पृ.243

शब्दों से बेजोड़ बनी। उसकी स्वाभाविक कोमलता कुछ कविताओं में समाप्त हुई-सी दिखाई देती है। पद्यरचना की सरलता के लिए दीर्घ, विषम और क्लिष्ट समास योजना वे करते थे। अनुप्रासों को जोड़ने के लिए आत्मनिष्ठा की वे बेकदरी से बलि दे देते हैं। कुछ स्थानों पर संस्कृत, फारसी शब्दों के मोह में आकर उन्हें अपनी कविता में लाने का असमर्थ प्रयत्न करते हैं। ऐसे स्थानों पर रसिक मन की निराशा होती है।[95] इस प्रकार की कविता रचना को श्री रा.श्री.जोग 'विषम रचना' कहते हैं।[96]

रविकिरण मंडल के कवि अपनी विचारधारा की और अपनी कविता की काव्यमसीक्षा भी करते रहे। उन्होंने अपनी कविता का विरोध देखकर अपनी विचार दृष्टि प्रतिपादित की। रविकिरणमंडल की विचारदृष्टि और कविता दृष्टि 'किरण', 'काव्यविचार','वृत्त मनोरमा', उषा 'मधु-माधव शलाका', 'प्रभा' आदि ग्रंथों के माध्यम से प्रतिपादित किया।[97] सारांश रूप से हम कह सकते हैं कि किसी भी नई विचारधारा अथवा दृष्टि का आगमन होता है तब प्रस्थापित विचारधारा अथवा दृटि से उसकी भिडंत होती है और विरोध संघर्ष निर्माण होता है वैसा ही 'रविकिरण मंडल' की कविता के साथ विरोध हुआ उस पर अनेक आरोप किए गए जैसे हिंदी में छायावाद का विरोध मराठी साहित्य में 'रविकिरणमंडल' का उतना ही विरोध और समर्थन हुआ। 'रविकिरणमंडल' का मूल्यांकन करते हुए श्री अक्षय कुमार काळे लिखते हैं-"1920 के आसपास महत्वपूर्ण कवियों का निधन हुआ, उर्वरित कवियों के काव्य लेखन का जोश समाप्त हो चुका था। ऐसे समय आधुनिक मराठी काव्य में अभाव का निर्माण हुआ, यह 'काव्यप्रतिभा का अभाव' यशस्वी रूप से भरने का कार्य 'रविकिरणमंडल' ने किया।[98] इस प्रकार मंडल के काव्य का मूल्यांकन करते हुए उसके विरोधी समीक्षक रा.श्री.जोग भी रविकिरण मंडल के महत्व का लोहा मानते हुए लिखते हैं-"मंडल की स्थापना के बाद पहले दस-बारह साल में मंडल ने जो साहित्य सेवा की उसे गत सौ वर्षों में कोई सानी नहीं मिलता।"[99]

---

[95] अर्वाचीन मराठी काव्यदर्शन, डॉ.अक्षर कुमार काळे-पृ.191
[96] अर्वाचीन मराठी काव्य, रा.श्री.जोग-पृ.187
[97] रविकिरण मंडळ गौरविका, सं.कुमुदिनी घारपूरे-पृ.15-16
[98] अर्वाचीन मराठी काव्य, रा.श्री.जोग-पृ.177
[99] अर्वाचीन मराठी काव्य, रा.श्री.जोग-पृ.173

रविकिरण मंडल की कविता का एक विशिष्ट साहित्यिक और सामाजिक दृष्टिकोण था वह साहित्य के माध्यम से समाज में चेतना निर्मित करना चाहते थे। अतः आधुनिक विचारों की कविता अनुगामी थी। अतः विशेष रूप से कविता का यह कालखंड मराठी कविता में अपना महत्वपूर्ण स्थान रखता है। इसे 'परंपरा विरोधी' और 'श्रृंगारिक परंपरा' की अनुगामी और प्रणय की स्वच्छंद अभिव्यक्ति का महाराष्ट्रीय सनातन संस्कृति के विरोध की कविता कहा गया। इसके साथ ही इसे नवीन 'आधुनिक चेतना की कविता', 'आत्माभिव्यक्ति का मौलिक आविष्कार' तथा 'साहित्य के नूतन पृष्ठ, सोपान' आदि के रूप में गौरवान्वित किया गया। इससे संबंधित विरोध और समर्थन की दृष्टि अलग-अलग है और अधिकतर इस कविता को मौलिक कविता ही कहा गया।

रविकिरणमंडल का नामकरण

मराठी काव्य साहित्य के इतिहास में 'रविकिरणमंडल' सन् 1920-1935 तक चले काव्यांदोलन का साहित्यिक और ऐतिहासिक महत्व है। इस कालखंड की कविता अपने कथ्य, अंतर्वस्तु, काव्योपमान अलंकार, बिंब एवं प्रतीक विधानों में अपना अलग स्थान रखती है। इस युग की साहित्यिक परिस्थितियों के आधार पर कहा जाता है कि मराठी कविता का पक्ष अत्यन्त क्षीण हो गया था। इस क्षीण धारा को नवीनता की ओर अग्रसर करने का कार्य 'रविकिरणमंडल' की कविता ने किया।

'रविकिरण मंडल' सन् 1920 से 1935 तक के कालखंड में चला काव्यांदोलन है। इस आंदोलन का नामकरण के संबंध में विविधमत हैं। श्री सूर्यनारायण रणसुभे इस संदर्भ में लिखते हैं- "केशवसुत, गोविंदाग्रज, तांबे, चंद्रशेखर आदि कवियों ने कविता को एक सामाजिक दृष्टि दी थी। परिणामतः इस समय के शिक्षित नवयुवकों में कविता के प्रति एक सहज आकर्षण पैदा हुआ। कविता करना, उसे सुनाना तथा उस पर चर्चा करना इस उद्देश्य से अनेक काव्य-मंडल, इस समय महाराष्ट्र में स्थापित हुए धुलिया का 'काव्य कौमुदी मंडल', दादर का 'गोविंदाग्रज मंडल', पुणे का

‘शारदामंडल’ इनमें प्रमुख हैं। परंतु इन मंडलों में ऐतिहासिक कार्य रहा पुणे के रविकिरण मंडल का।"[100]

इससे हम समझ सकते हैं कि काव्य विषयक चर्चा करनेवाले नवयुवकों की मंडली का नाम ‘रविकिरणमंडल’ था जो आगे-आगे प्रचलित हुआ। वह इसी संदर्भ में आगे लिखते हैं-"1920 से 1923 ई. के समय महाराष्ट्र के अन्य भागों से पुणे में पढ़ाई के लिए आए हुए नवयुवक काव्य चर्चा के लिए प्रत्येक रविवार को एक स्थान पर एकत्र होते थे। परंपराबद्ध मराठी कविता, केशवसुती संप्रदाय तथा अन्य कवि इन कवियों की सीमाएँ आदि विषयों पर चर्चा होने लगी। सन् 1923 में इन्होंने इसका नामकरण रखा ‘रविकिरणमंडल’। महाराष्ट्र शारदा मंदिर की संस्थांतर्गत गोष्ठियों में ‘रविकिरणमंडल’ की स्थापना हुई और आगे इनकी चर्चाओं में काव्य रचना हुई और इसका प्रकाशन सन् 1923 में ‘किरण’ संकलन से हुआ। इस संदर्भ में कुमुदिनी घारपुरे लिखती हैं-"किरण का प्रकाशक कौन होगा यह प्रश्न उपस्थित होने के बाद व्यक्ति की अपेक्षा संस्था का नाम आगे आया। इस संस्था का ‘रविवार से’ अर्थात् SUNDAY TEA CLUB नाम से संदर्भ आया और पुस्तक के मूल उद्देश्य से यहाँ मेल मिला और SUNDAY TEA CLUB की बैठक का दिन रविवार और उसकी स्मृति के रूप में ‘किरण’ से ‘रविकिरणमंडल’ यह नामकरण किया गया।"[101]

शिक्षित नवयुवक रविवार को कहीं चर्चा गोष्ठी आयोजित करते थे और उसमें चायपान होता था। इसका नामकरण SUNDAY TEA CLUB के रूप से किया गया और इनकी कविता का प्रतिनिधि संग्रह ‘किरण’ प्रकाशित होने जा रहा था। अतः इसका संबंध ‘रविवार’ की चर्चा और चायपान से था। रविवार की स्मृति के रूप में ‘रवि’ और ‘किरण’ संकलन के आधार पर रवि+किरण ‘रविकिरणमंडल’ नामकरण किया गया। मंडल के नामकरण के संदर्भ में श्री शेलार लिखते हैं- "प्रथमतः (कवियों की) बैठकों को SUNDAY TEA CLUB नाम दिया गया। इन बैठकों में

---

[100] प्रादेशिक भाषा और साहित्येतिहास, डॉ.सूर्यनारायण रणसूभे-पृ.34

[101] कवि गिरीश शं.के.कानेटकर एक चिकित्सक अभ्यास-शां.कृ.शेलार (शोध प्रबंध)-पृ.5

काव्य विषयक चर्चा होने लगी। रविवार की बैठकों में आत्मीयता के रिश्ते बुनने लगे। इसमें से ही सप्ताह का 'रविवार' और उनकी स्मृतियों की किरणें इस रूप में रविकिरण मंडल नाम दिया गया।[102]

'मराठी का आधुनिक साहित्येतिहास' ग्रंथ में प्रो.गो.भी.देशपांडे लिखते हैं-"सन् 1920 के पश्चात् महाराष्ट्र में कई कविमंडलों के उदयास्त हुए जिनमें पुणे के रविकिरण मंडल का विशिष्ट स्थान है। पुणे में अध्ययन तथा व्यवसाय के हेतु से रहनेवाले कवि एवं कवयित्रियाँ रविवार को चायपान के लिए एकत्रित होकर काव्यचर्चा करने लगे। इस साप्ताहिक बैठक का विकास 1923 में रविकिरण मंडल के रूप में हुआ।"[103]

रा.श्री.जोग रविकिरण मंडल के संदर्भ में लिखते हैं-"पुणे में वाङ्मय प्रेमी लोगों की श्री शारदामंदिर नामक एक संस्था साहित्य विषयक विचार कार्य कर रही थी, उसमें कई कवि थे। उनमें से कुछ लोगों ने 'रविकिरण मंडल' नामक अपना अलग-अलग गुट बना लिया उसी का नाम आगे प्रचलित हुआ।"[104]

सारांश रूप से हम कह सकते हैं कि सन् 1920 से 35 तक की मराठी साहित्य की काव्यधारा को 'रविकिरण मंडल' के नाम से अभिहित किया गया।

महाराष्ट्र में शिक्षा और व्यवसाय का केंद्र पुणे था। शिक्षित नवयुवक शिक्षा और व्यवसाय के लिए एकत्रित हुए और आपसी परिचय तथा काव्य प्रियता के कारण मित्रता हुई और छुट्टी के दिन रविवार को बैठक लगाकर 'चायपान' के साथ काव्यचर्चा होती रही। इसी का रूपांतरण आगे SUNDAY TEA CLUB में हुआ। अतः SUNDAY TEA CLUB एक साहित्य चर्चा और कविता लेखन, वाचन, गायन की एक आत्मीय बैठक थी और जब इन्हीं कवियों के प्रतिनिधि काव्य संकलन के प्रकाशन का समय आया और संकलन का शीर्षक रविवार की बैठक और उसमें नवीन विचार विमर्श की कविता के आधार पर 'किरण' नामकरण किया गया। 'किरण' इन कवियों की नवीन अनुभूति और संवेदनाओं का नवकिरण था और 'रविवार' की चर्चा के आधार पर आगे इस

---

[102] कवि गिरीश शं.के.कानेटकर एक चिकित्सक अभ्यास-शां.कृ.शेलार (शोध प्रबंध)-पृ.5
[103] मराठी का आधुनिक साहित्य इतिहास, प्रो.गो.भी.देशपांडे-पृ.407
[104] प्रदक्षिणा खंड-2, सं.रा.श्री.जोग-पृ.22

संस्था, अर्थात् मंडली का नाम साहित्य में रविकिरण मंडल के रूप में हुआ। मराठी साहित्य में यह सामूहिक, सांघिक रूप की कविता अपने विविध संवेदनात्मक, रूपात्मक अभिव्यक्ति के संदर्भ में अत्यन्त लोकप्रिय हुई। मराठी कविता साहित्य में इस आंदोलन का कार्य अत्यन्त मौलिक एवं महत्वपूर्ण माना जाता है।

रविकिरणमंडल के प्रमुख कवियों में माधव ज्यूलियन गिरीश, यशवंत, अनिल आदि प्रमुख थे। तथा साथ ही श्री बा. रानडे, मनोरमाबाई रानडे आदि ने विपुल काव्य लेखन किया। कवि माधव ज्यूलियन ने विरहतरंग, सुधारक, द्राक्षकन्या, गज्जलांजली, स्वप्नरंजन, टूटे हुए दीप, नकुल त्लंकार, मधुलहरी आदि संकलनों के माध्यम से अपनी काव्य प्रतिभा का परिचय दिया। प्रेम, प्रणय और जीवन का संबंध तथा उन्माद आदि इनके काव्य की विशेषता हैं। कवि गिरीश रविकिरण मंडल के दूसरे प्रमुख कवि हैं। इन्होंने काव्य में विविध प्रयोग किये तथा काव्य के विविध रूपों का प्रनयन कर कविता लिखी जिनमें खंडकाव्य, प्रबंधकाव्य, स्फूटकाव्य आदि प्रमुख है। संसार, अभागा कमल, कला, आमराई, अनिकेत, कांचन गंगा, मानसमेध आदि महत्वपूर्ण काव्य संकलन हैं जिनमें प्रकृति चित्रण के साथ-साथ प्रेम और विरह का मनोहारी चित्रण किया गया है। कवि यशवंत ने मित्र प्रेम, रहस्य, यशवंती, पिनारंकार, इंदूकला, यशोधन, भावमंथन, जयमंगला, यशोगान, काव्यकिरोट, यशोनिधी आदि काव्य संकलनों के माध्यम से अपनी काव्य प्रतिभा का परिचय दिया। इनकी कविताओं में प्रकृति चित्रण के साथ प्रेम विरह दुखानुभूति की संवेदनात्मक अभिव्यक्ति है। इनकी कविता का पटल विषय वैविध्यमयी दिखायी देता है। मंडल के अन्य कवियों में श्री बा.रानडे तथा मनोरमाबाई का स्थान महत्वपूर्ण है। इन दोनों कवियों ने अपनी अनुभूति के आधार पर जीवन के अनुभवों पर काव्य रचना की। मंडल के अन्य सदस्य कवियों में वि.द.घाटे, द.ल.गोखले, गं.त्र्यं.माडखोलकर, दिवाकर आदि ने भी काव्य रचना की।

सारांशतः कह सकते हैं कि रविकिरण मंडल आधुनिक मराठी काव्यधारा की एक महत्वपूर्ण काव्यधारा है। जिसमें प्रकृतिप्रेम, मानवता, विरह, प्रणय के विविधांगी चित्र खींचे गये। जो कि अपनी पूर्ववर्ती परंपरा से बिल्कुल भिन्न थे। अतः इस संदर्भ में रविकिरण मंडल आधुनिक मराठी काव्य साहित्य में अपना महत्वपूर्ण स्थान रखता है। साधारणतः रविकिरण मंडल की तुलना हिंदी में

छायावाद से की जाती है। रविकिरण मंडल और छायावाद की तुलना करते हुए डॉ.सूर्यनारायण रणसूभे जी ने लिखा है-"मंडल के काव्य की तुलना हिंदी के साथ करने की इच्छा होती है। परंतु दुर्भाग्य से इस प्रकार की तुलना के लिए हिंदी में ऐसी कोई विशिष्ट काव्य प्रवृत्ति इस काल में अथवा बाद के काल में नहीं मिलती। काल के अनुसार विचार करें तो हिंदी में छायावाद का जोर था, परंतु छायावाद तो सूक्ष्म का संकेत है तथा रहस्यवादिता के साथ जुड़ गया है। मंडल का काव्य स्थूल तथा सामान्य अनुभूतियों का है।"[105]

2.2 आधुनिक मराठी साहित्य के इतिहास में 'नव कविता' का स्थान

सन् 1945 के आसपास निर्मित मराठी कविता आर्वाचीन मराठी कविता के इतिहास में अपने उदय विकास स्वरूप एवं विशेषता के संदर्भ में अपना अलग स्थान रखती है। वह अपनी शक्ति अपनी काव्य परंपरा और वर्तमान समकालीन युग की परिस्थितियों से ग्रहण करती है तथा अपनी ऐतिहासिक पार्श्वभूमि में नवीनता का चित्र अंकित करती है।

"आधुनिक मराठी साहित्य की काव्यधाराओं का सर्वाधिक विवादास्पद कालखंड नवकविता का है। यह विवाद नवकविता का जन्म विकास, नामकरण, नवकविता के प्रणेता, कौन? आदि के संदर्भ में हुआ।"[106] इस वाद-विवाद और आलोचना के कारण नवकविता की सीमारेखा, नवकविता की नवीनता, नवकवि कौन? आदि के संदर्भ में संभ्रम की स्थिति उत्पन्न करती है। अतः साहित्य में इस कविता का स्थान निर्धारित करने के लिए, युगीन परिस्थितिजन्य मानसिकता तथा जिस वैचारिक साहित्य प्रवाह से इसका जन्म हुआ आदि पर विचार करना अत्यन्त आवश्यक है।

द्वितीय महायुद्ध का प्रभाव विश्वस्तर पर दिखाई देता है। अतः इस भीषण युद्ध के बाद विश्व कुटुंब की सामाजिक, राजनीतिक स्थिति में परिवर्तन आया जो कि मूल्यहीनता से प्रेरित रहा और सामाजिक जनजीवन विघटित हुआ। कवियों ने अपनी संवेदना से इस नवीन परिस्थितिजन्य भावावेश को अपनी कविता में अभिव्यक्त किया।

---

[105] प्रादेशिक भाषा और साहित्येतिहास, डॉ.सूर्यनारायण रणसूभे-पृ.38

[106] आर्वाचीन मराठी काव्य दर्शन-अक्षयकुमार काळे-पृ.385

मराठी नव कविता का जन्म द्वितीय महायुद्ध के आसपास हुआ। विश्वमानव समुदाय पर इसका व्यापक प्रभाव पड़ा। साथ ही मार्क्स, फ्राइड, अल्बर्ट आईन्स्टाईन के विचारों, संशोधनों का प्रभाव व्यापक रूप से हुआ, साथ ही राजनीतिक गतिविधियों का मानव मन पर प्रभाव पड़ा जिसकी अभिव्यक्ति नव कविता में हुई।"[107]

मराठी नवकविता पर पाश्चात्य काव्यांदोलन (New poetry) का प्रभाव दिखाई देता है। इस युग के नवकवि उच्च विद्या विभूषित तथा पाश्चात्य साहित्यधारा से परिचित थे। तथा अपनी वैश्विक युगीन परिस्थितियों के आधार पर उन्होंने काव्य रचना की। नवकविता दो महायुद्धों के बीच विशेषतः द्वितीय महायुद्ध के आसपास लिखी हुई कविता है। जो महायुद्धों के उपरांत उत्पन्न भीषण मानसिकता की अभिव्यक्ति करती है। भारतीय साहित्य पर आधुनिकतावादी विचारधारा का प्रभाव बहुत व्यापक रहा। "आधुनिकतावाद ने पारंपरिक सामाजिक-नैतिक मूल्य कला व्यवहार और सभी मानवीय पांरपरिक जीवन आधारों को आघात पहुँचाया है। जिसके कारण सामाजिक मानसिकता में परिवर्तन आ गया है।"[108] आधुनिकतावादी विचारधारा के कारण भारतीय सामाजिक सांस्कृतिक दार्शनिक चिंतन के प्रति नवीन दृष्टिकोण से देखा जाने लगा। और इन्हीं नवीन विचारों के आलोक में उसे परखा जाने लगा। आधुनिक मराठी कविता आधुनिकता के दर्शन से प्रभावित है जो कि आधुनिक विज्ञानवाद के वैज्ञानिक दृष्टिकोण के आधार पर अपनी अभिव्यक्ति प्रकट करती है। आधुनिक मराठी कविता की पार्श्वभूमि में औद्योगिक विकास, वैज्ञानिकता से प्रेरित आधुनिकतावाद की महत्वपूर्ण भूमिका है। विज्ञाननिष्ठा और यंत्रोपासना नवयुग का महत्वपूर्ण लक्षण है। तकनीकी विकास, यातायात साधनों का विकास, औद्योगिक विकास, नगरीकरण आदि में इस नवयुग की उज्वल दिशा दिखायी देती है। दूसरी ओर अस्थिरता, अश्रद्धा, व्यक्तित्वादिता, असामाजिकता, वैचारिक विरोध, अकेलापन आदि इसीसे निर्मित हैं। यह संदर्भ मानवीय जनजीवन के अंग बन गए और साहित्य में इसकी अभिव्यक्ति हुई। इससे साहित्य में मूर्ति भंजन की प्रवृत्ति आरंभ हुई। द्वितीय महायुद्ध के विध्वस्त के बाद

---

[107] आर्वाचीन मराठी काव्य दर्शन-अक्षय कुमार काळे-पृ.386

[108] स्वातंत्र्योत्तर मराठी कविता-1945-60, सं.वसंत पाटणकर-प्रस्तावना-XVIII

स्वातंत्र्योत्तर काल का भारतीय जनमानस स्वप्न भंग, निराशा, वैफल्यभाव आदि से ग्रसित हो गया। प्राचीन साहित्य को परमार्थ विचार का आधार था। किंतु अर्वाचीन साहित्य की द्वारका अनेक मूल्यों पर आधारित है।"[109]

वैश्विक स्तर के अनेक विचारों से साहित्यकार प्रभावित हुए और उन्हें लगने लगा कि वर्तमान मानसिकता को अभिव्यक्त करने के लिए भाव, भाषा, छंद काव्योपमान आदि में परिवर्तन करना होगा। इस संदर्भ में कवि अनिल का कथन है-"अगर काव्य की प्रगति करनी है तो जिस प्रकार का काव्य आज का है उसे अगले सोपान पर ले आना होगा। अनेक अस्वाभाविक बंधनों से मुक्त कर उसमें जीवन तथा मुक्तता का नवचैतन्य डालना होगा। काव्य विचार और काव्य शब्द सृष्टि में नवीन प्रयोग करने होंगे। इस काव्य का वहन करने के लिए मुक्तछंद उपयुक्त है। काव्य क्षेत्र उदासिन हो गया। काव्य के नवयुग की शुरूआत नहीं होती। इसका कारण है मुक्तछंद का स्वीकार न करना।"[110] सारांशतः कह सकते हैं कि सामाजिक सांस्कृतिक परिवर्तन के कारण साहित्य में भी परिवर्तन आने लगा। "1945 के आसपास साहित्य में नवीन धारा नवीन परंपराओं का निर्माण करने का प्रयत्न किया जाने लगा।"[111] "आधुनिक मराठी कविता की नई दिशाओं की खोज़ करने वाली युयुत्सू वृत्ती गोविंदाग्रज, बालकवि की मृत्यु के बाद नहीं रही। साधारणतः 1935-45 का कालखंड साहित्य के संदर्भ में त्रस मान युग कहा जाता है।"[112] परिस्थितियों के परिवर्तन के साथ-साथ मानसिकता में परिवर्तन आने लगा। और यथार्थ जीवन बोध के आधार पर साहित्य सृजन का विचार विकसित हुआ। वसंत पाटणकर के अनुसार वैश्विक स्तर का सामाजिक व्यक्तिगत वास्तविकता अधिकतम परिवर्तित हो रही थी। परंपरागत जीवन की स्थिति बिगाढ़नेवाली संभ्रम तनाव निर्माण करने वाली परिस्थिति उत्पन्न हुई। इन परिस्थितियों ने मानवतावादी दृष्टिकोण पर अंकुश लगाया। इन्हीं

---

[109] आधुनिक मराठी कविताःकाही रूपे-काही रंग-गो.म.कुलकर्णी-पृ.95
[110] भग्नमुर्ती-अनिल-पृ.110-111
[111] स्वातंत्र्योत्तर मराठी कविता-1945-60, सं.वसंत पाटणकर-प्रस्तावना
[112] स्वातंत्र्योत्तर मराठी कविता-पृ. XVI, सं.वसंत पाटणकर-प्रस्तावना

परिस्थितियों ने नवकविता को जन्म दिया।"[113] "अनेक मराठी कवियों पर आधुनिकतावाद का अलग-अलग संस्कार हुआ। यह संस्कार किसी एक कालखंड में हुआ। यह महत्वपूर्ण है और इसीसे 'नवकविता' नाम से एक प्रभावी प्रवाह का निर्माण हुआ।"[114]

सारांशतः कह सकते हैं कि अर्वाचीन मराठी कविता का 'नवकविता' प्रवाह नवकविता आंदोलन आधुनिक विचारों, परिस्थितियों से प्रभावित है जो कि अपने परंपरागत प्रवाह से पूर्णतः भिन्न नवीन दृष्टिकोणों से युक्त है। आधुनिक मराठी कविता में नव कविता वह एक प्रथम सोपान है जो वैश्विक स्तर के विविध विचारों की अभिव्यक्ति, सामान्य जनमानस की चेतना उसके तनाव विभ्रम, आशा, आकांक्षा, उसके जीवन की बदहाली आदि को यथार्थ रूप से अभिव्यक्त करती है। और साहित्य को मानव जीवन से जोड़ते हुए उसके संवेदना का पूरा अंकन कर मानव को एक नवीन संवेदना से जोड़ती है। परंपरागत विचारधारा का त्याग कर नवीन विचार प्रवाह को साहित्य में लाने का कार्य नवकविता आंदोलन ने किया। इस संदर्भ में इस काव्यांदोलन का महत्वपूर्ण स्थान है।

मराठी साहित्य को प्रथमतः आधुनिकतावादी पाश्चात्य विचारधारा से जोड़ने का कार्य नवकविता आंदोलन ने किया। यूरोपीय विचारधारा के दर्शन को नवकविता ने साहित्य के माध्यम से अभिव्यक्त किया। युगीन विचारधारा के आधार पर साम्यवादी तथा मार्क्सवादी विचारधारा का प्रणयन हुआ। मुक्तिबोध, मर्ढेकर और नारायण सुर्वे की कविता इसका प्रत्यक्ष उदाहरण है, साथ ही अस्तित्ववादी, मनोविश्लेषणवादी विचारधारा का प्रभाव इस कविता में दिखाई देता है। इस संदर्भ में गो.म.कुलकर्णी लिखते हैं-"नवसाहित्यिकों ने अस्तित्ववादी दर्शन को स्वीकार किया। यह कहने से बेहतर है कि यह दर्शन उनकी संवेदना के करीब का दर्शन है।"[115] नव कविता का विवेच्य विषय अधिकतः महानगरीय जीवन है। अतः साहित्य की परंपरा में महानगरीय विफलता के यथार्थ को

---

[113] स्वातंत्र्योत्तर मराठी कविता-पृ.XIX, सं.वसंत पाटणकर-प्रस्तावना
[114] स्वातंत्र्योत्तर मराठी कविता-पृ.XIX, सं.वसंत पाटणेकर-प्रसावना
[115] आधुनिक मराठी कविता, काही रूपे, काही रंग, गो.म.कुलकर्णी-पृ.99

नवकविता ने अभिव्यक्त किया। अस्तित्व की संवेदना अधिकतर महानगरीय जीवन से है। इस अस्तित्वनिष्ठा को एक ओर से अस्तित्ववाद तथा दूसरी ओर नवमानसशास्त्र ने आधार दिया।"[116]

नव कविता अपनी अभिव्यक्ति के आधार पर अत्यन्त यथार्थपरक थी। अपनी अभिव्यक्ति के लिए नवकवियों ने भाषा का विविध संदर्भों में प्रयोग किया। भाषा का बोझिलपन इनके काव्य में दिखाई देने लगा। आलोचकों ने इसकी कड़ी निंदा की। "महानगरीय संवेदना के आधार पर कहा गया कि यह केवल मध्यवर्गीय कविता है। आशय और अभिव्यक्ति के स्तर पर यही दिखाई देता है।"[117]

आधुनिक मराठी कविता महायुद्धकालीन परिस्थिति से उत्पन्न विदारक स्थितियों का चित्रण करती है। युगीन वर्तमान का यथार्थ के धरातल पर सटीक अंकन करने का श्रेय नवकविता को जाता है। इस युग में महायुद्ध और वर्तमान युगीन त्रासदी के कारण मानवीयता का ऱ्हास हुआ और "निर्विकार रूप से जीने वालों का नया वर्ग निर्माण हुआ। ऐसे दिखायी देता है कि संपूर्ण मानवीय मन की जड़ता को अभिव्यक्त करने के लिए मर्ढेकर और नवकविता का जन्म हुआ।"[118] कविता अपनी विषय वस्तु के आधार पर पारिवारिक जीवन से दूर हो गयी-"कविता पारिवारिक जीवन तथा सामाजिक संवेदना का भाव व्यक्त नहीं कर रही थी।"[119] स्वातंत्र्योत्तर मराठी कविता के नवकविता आंदोलन ने युगीन मानवीय जीवन की आपाधापी का चित्रण किया। उसके संपूर्ण मानवीय जीजिविषा की विडंबना का चित्र इस युग की कविता में अंकित किया गया है। सारांशतः हिंदी और मराठी नवकविता आंदोलन का कालखंड लगभग समान है। और दोनों भाषा-भाषी समाज के प्रश्न समान दिखाई देते हैं। इसकी अभिव्यक्ति के लिए दोनों भाषा साहित्य में अभिव्यक्ति के नये उपादान खोजे गये। जिसका परिणाम नवकविता है।

अभिव्यक्ति के संदर्भ में मराठी नवकविता ने भाषिक उपादानों का नवीन संदर्भों में प्रयोग किया। नवकवियों का कहना है कि पारंपरिक भाषाभिदान नवीन भावबोध को अभिव्यक्त करने के लिए

---

[116] आधुनिक मराठी कविता, काही रूपे, काही रंग, गो.म.कुलकर्णी-पृ.103
[117] प्रदक्षिणा, काव्य-रा.श्री.जोग-पृ.39
[118] स्वातंत्र्योत्तर मराठी कविता, दत्तात्रय पुंडे-पृ.18
[119] नवी मळवाट, शरतचंद्र मुक्तिबोध-पृ.11

असमर्थ है। कविता के विषय-वस्तु और रूप के संदर्भ में विविध प्रयोग किये गये। इस आधार पर शरतचंद्र, मुक्तिबोध के अनुसार इस काव्य की मुख्य विशेषता प्रयोगवादिता है।"[120] कविता की भाषा के संदर्भ में विविध प्रयोग किये गये। और अभिव्यक्ति के लिए "मुक्त छंद का प्रयोग स्वाभाविक रूप से किया गया।"[121] कविता में प्रयोगवाद का आरंभ मर्ढेकर, पु.शि.रेगे ने किया। इन दोनों ने-'मेलार्मे' की तरह अपने स्वयं की स्वतंत्र भाषा का निर्माण किया। "शब्दों और शब्द संहिता के नादरूपात्मक शक्ति का प्रयोग कर अपनी अपूर्व काव्याभिव्यक्ति।"[122] इस कारण कविता ने अमूर्त स्वरूप धारण कर लिया। इस युग की कविता का महत्वपूर्ण लक्षण सौंदर्यवादिता है। और यह सौंदर्यवादिता परंपरागत सौंदर्य तत्व से भिन्न है। सौंदर्य को व्यापक और नवीन रूप से देखा गया। यह नवकविता का महत्वपूर्ण योगदान रहा। इन कवियों ने भाव गीतों का प्रणयन किया जो कि पारंपरिक भाव गीतों से भिन्न है। नव कविता ने भाषा का गरिमामयी तत्सम प्रयोग न करके सामान्य बोली भाषा का प्रयोग किया। जो कृत्रिम न रहकर सामान्य बोली भाषा के समानता थी। नवकविता के रचनातंत्र पर विचार करते हुए श्री गो.म.कुलकर्णी लिखते हैं-"कविता दैनंदिन भाषा के नाद, ताल, लय के आधार पर प्रवाहित होने लगी। कविता में विराम, प्रश्नचिह्न, बर्तुल आदि का प्रयोग अधिकतः होने लगा। और काव्य में प्रतिमाओं का, (Image) का प्रयोग नवीन संदर्भों के अभिव्यक्ति के लिए होने लगा। नवकविता के रचना तंत्र ने मराठी कविता के स्वरूप को पूर्णतः बदल दिया।"[123]

सारांशतः कह सकते हैं कि आधुनिक मराठी कविता का स्थान अपने विविध संदर्भों में महत्वपूर्ण है। नवकविता ने प्रथमतः कविता को कल्पना के कानन से उठाकर उसे यथार्थ की भावभूमि पर खड़ा कर दिया। और नवीन विचारों काव्य रूपों आधुनिक मानव की संवेदना को कविता के माध्यम से अभिव्यक्ति दी। कविता में भाव भाषा, छंदों का, अभिव्यक्ति के उपादानों का नवीन संदर्भों में प्रयोग

---

[120] नवी मळवाट, शरतचंद्र मुक्तिबोध-पृ.12
[121] कविता विसाव्या शतकाची-सं.शांताशेळके-पृ.34
[122] निवडक मराठी समीक्षा-सं.गो.मा.पवार, म.द.हातकणंगलेकर
[123] आधुनिक मराठी कविताःकाही रूपे, काही रंग-गो.म.कुलकर्णी-पृ.106

कर साहित्य में एक महत्वपूर्ण योगदान दिया। नव कविता ने मराठी साहित्य में नवीन विचारधारा का प्रवर्तन करने की महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

* * *

तृतीय अध्याय

हिंदी नई कविता:एक परिचय

तृतीय अध्याय

हिंदी नई कविता:एक परिचय

3.1 आधुनिक हिंदी कविता के इतिहास का संक्षिप्त परिचय

- 3.1.1 भारतेंदु युग
- 3.1.2 द्विवेदी युग
- 3.1.3 छायावाद
- 3.1.4 प्रगतिवाद
- 3.1.5 प्रयोगवाद

3.2 आधुनिक हिंदी कविता के इतिहास में 'नई कविता' का स्थान

तृतीय अध्याय

हिंदी नई कविता:एक परिचय

3.1 आधुनिक हिंदी कविता के इतिहास का संक्षिप्त परिचय

3.1.1 भारतेंदु युग

भारतेंदु ने अपने साहित्यिक रचना का सूत्रपात सन् 1868 ई. से आरंभ किया और 21 काव्य ग्रंथ, 48 प्रबंध-काव्य तथा कई मुक्तक रचनाएँ प्रस्तुत कर हिंदी साहित्य की श्रीवृद्धि की, और कविवचन सुधा, हरिश्चंद्र मैगज़ीन और बाल बोधिनी आदि पत्र चलाकर अन्य तद्युगीन रचनाकारों को साहित्य क्षेत्र में नवीनता का समावेश करने के लिए प्रोत्साहन दिया। भारतेंदु युगीन साहित्य से हिंदी साहित्य में आधुनिकता का उदय माना जाता है। हिंदी साहित्य मध्यकालीन जड़ता का त्याग, ईश्वर की जगह मानव को, आस्था की जगह तर्क को, परलौकिकता की जगह इहलौकिकता आदि वैचारिक दृष्टिकोण को केंद्र में रखती है तथा कोरी भौतिकता का निषेध करती है। ऐसी कौन सी परिस्थितियाँ थीं जिनके कारण साहित्य में इन नवीन आधुनिकता का समावेश हुआ, इनका ऐतिहासिक-सामाजिक आधार क्या है? यह जान लेना अत्यन्त आवश्यक है।

सन् 1757 के प्लासी के युद्ध के बाद बंगाल को कब्जे में लेने के पश्चात् भारत में पूँजीवादी व्यवस्था कायम करने के लिए अंगरेजों ने अपनी लुटेरी व्यापार नीति को बढ़ाने के लिए रेल, यातायात, डाक, पक्की सड़कें, तार आदि सेवाएँ आरंभ कर दी। स्पष्ट है यह सुविधाएँ भारतीयों के लिए नहीं थी बल्कि अपने पाँव भारत में मज़बूत करने के अंग्रेज़ों के साधन थे किंतु इससे भारतीय सामाजिक व्यवस्था, धर्म व्यवस्था, अर्थ व्यवस्था में गहरा परिवर्तन हुआ।

मध्ययुगीन धर्म क्षेत्र में जहाँ अंधश्रद्धाओं का बोलबाला था वहीं इन वैज्ञानिक उपकरणों तथा उनके साथ आई नई विचारधाराओं ने भारतीय धर्म-विचारों को पुनः परीक्षण करने के लिए बाध्य किया। फलतः भारत में आर्य समाज, ब्रह्म समाज, प्रार्थन समाज जैसी संस्थाओं ने यह गुरुत्तर कार्य करने का जिम्मा अपने सिर लिया। इसके पीछे उद्देश्य मिशनरियों से स्वधर्म की रक्षा का था। अंग्रेज़ों की इलहौकिक एवं वैज्ञानिक दृष्टि का प्रभाव तथा मोहनराय, ज्योतिबा फुले, गोविंद रानडे आदि सुधारकों की दृष्टि का समाज व्यवस्था पर गहरा प्रभाव पड़ा। यूरोप से आयी पुनर्जागरण की प्रवृत्ति

ने नयी बुद्धिवादी दृष्टि से पुराने सामाजिक मूल्यों की व्याख्या प्रस्तुत की तथा त्याज्य परंपरा को त्यागने का अह्वान समाज से किया जिससे इस काल में महत्वपूर्ण सामाजिक हलचल हुई। जिसकी स्पष्ट छाप भारतेंदु युगीन साहित्य पर परिलक्षित होती है। राजनीतिक क्षेत्र में सारे अधिकार अंगरेज़ों के अधीन जा चुके थे तथा सभी क्षेत्रों में शोषण की नति तथा साम्राज्यवाद का बोलबाला था। अतः 1857 में देश के कई भागों में महत्वपूर्ण राजाओं ने जनता को इकट्ठा कर क्रांति कर दी किंतु इसको अनेक कारणों से सफलता प्राप्त न हो सकी। 'ईस्ट इंडिया कंपनी' से भारत का शासन छीन लिया गया किंतु आर्थिक शोषण में कोई परिवर्तन नहीं हुआ। पहले की तरह ही गाँव का आर्थिक ढाँचा अंग्रेज़ों द्वारा खत्म किया जा चुका था। व्हिक्टोरिया रानी द्वारा दिये गए आश्वासन आज के राजनीतिज्ञों की तरह कागजों पर ही रह गए तथा शोषण चक्र जारी रहा। जैसा कि डॉ.नामवर सिंह ने लिखा है-"विविध राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक घटनाएँ मानव व्यक्ति के मन पर जो सम्मिलित प्रभाव डालती हैं, कविता उसकी भावात्मक प्रतिक्रिया है।"[124] ठीक उसी प्रकार इन तमाम परिस्थितियों का सम्मिलित प्रभाव भारतेंदु युगीन कविता पर पड़ा। साहित्य के रीतिकालीन वातावरण से निकाल कर जीवन से उसे जोड़ने वाले 'भारतेंदु हरिश्चंद्र' का सर्वाधिक प्रभाव इस युग के साहित्य पर रहा। "इस कारण इस काल की किसी भी विधा के अध्ययन का अर्थ है-भारतेंदु के साहित्य का अध्ययन। ... इसी कारण उनकी साहित्यिक विशेषताएँ ही इस युग की साहित्यिक विशेषताएँ हैं।"[125]

भारतेंदु हरिश्चंद्रः

हिंदी साहित्य में आधुनिक युग के प्रवर्तक कहे जानेवाले भारतेंदु ने अपने 21 काव्य ग्रंथों द्वारा हिंदी साहित्य की श्रीवृद्धि की तथा 'कविवचन सुधा' (1868), 'हरिश्चंद्र मैगझीन' (1873) जैसी पत्रिकाओं द्वारा पूरे युग को अपने व्यक्तितत्व से संचालित किया। प्रायः सभी विधाओं में भारतेंदु ने

---

[124] छायावाद, नामवर सिंह-पृ.71

[125] आधुनिक हिंदी साहित्य का इतिहास, सूर्यनारायण रणसुभे-पृ.23

अपना योगदान दिया है। प्रेम सरोवर, प्रेम-मालिका, वर्षा-विनोद, विनय प्रेम पचासा आदि उल्लेखनीय कृतियाँ हैं। 'भारतेंदु ग्रंथावली' के प्रथम भाग में उनकी सभी काव्य कृतियाँ संकलित हैं। जहाँ काव्य में ब्रजभाषा का उपयोग भारतेंदु की सीमा है वहीं प्राचीनता एवं आधुनिकता, राजभक्ति एवं राष्ट्रभक्ति, दास्यभाव की भक्ति, नवीन विषय क्षेत्र में प्रवेश आदि भाव क्षेत्रों में प्रयोग कर संपूर्ण युग को अपनी प्रतिभा से प्रभावित किया। यही समन्वय भावना इस युग की आवश्यकता थी। डॉ.रामविलास शर्मा जी भारतेंदु को प्रथम जनवादी लेखक होने का सम्मान देते हैं जो कि साहित्य और जीवन में संबंध स्थापित करने के कारण अत्यन्त उचित है। भारतेंदु युगीन रचनाकारों में निम्नलिखित रचनाकार उल्लेखनीय हैं।

<u>प्रतापनारायण मिश्र</u>ः

भारतेंदु से प्रभावित होनेवाले तथा इस युग के आधुनिक साहित्य के निर्माताओं की बृहत्त्रयी में प्रताप नारायण मिश्र एक महत्वपूर्ण रचनाकार हैं। 1883 में मिश्रीजी ने 'ब्राह्मण' नामक पत्रिका निकाली जिसमें उनकी सभी विधाओं की पचास से अधिक कृतियाँ प्रकाशित हुईं। इनके काव्य में विषय वैविध्य दृष्टिगोचर होता है। किंतु "भक्ति और प्रेम की तुलना में समसामयिक देश दशा और राजनीतिक चेतना का वर्णन उन्होंने अधिक मनोयोग से किया।"[126] इसका प्रमाण इनके 'हिंदी-हिंदु-हिंदुस्तान' नारे में दिखाई देता है। हास्य-व्यंग्यात्मक काव्य मिश्र जी की निजी विशेषता है जो उन्हें विशेष ख्याति दिलाती है। उनके समकालीन बाल मुकुंद गुप्त जी ने लिखा है-हिंदी गद्य और पद्य लिखने में हरिश्चंद्र जैसे तेज़ तीखे और बेधड़क थे प्रतापनारायण मिश्र भी वैसे ही थे। 39 वर्ष हिंदी साहित्य की सेवा कर आरंभिक दौर में अपनी प्रतिभा और श्रम से हिंदी साहित्य को एक मुकाम देने में मिश्र जी का महत्वपूर्ण योगदान है।

<u>बालकृष्ण भट्ट</u>ः

---

[126] हिंदी साहित्य का इतिहास, डॉ.नागेंद्र-पृ.464

भट्ट जी निबंधकार, समीक्षक और नाटककार थे। डॉ.रामविलास शर्मा के अनुसार-"भट्ट जी हिंदी आलोचना के जन्मदाता हैं।"[127] नूतन ब्रह्मचारी, सौ अजान एक सुजान उपन्यासों के अतिरिक्त चार अपूर्ण उपन्यास भी भट्ट जी ने लिखे हैं। इनके किरतार्जुनीय, वेणीसंहार, शिशुपाल वध आदि तेरह नाटक उपलब्ध हैं। निबंधों में भट्ट जी को विशेष ख्याति प्राप्त हुई। उसमें भी विचारात्मक निबंधों के योगदान के लिए इन्हें 'हिंदी का एडिसन'[128] कहा जाता है। हिंदी प्रदीप (1877) पत्र के द्वारा इन्होंने भारतेंदु की परंपरा को आगे बढ़ाने का सफल प्रयास किया है। श्री देवीसिंह अवस्थी के अनुसार-"कुल मिलाकर भट्ट जी आधुनिक हिंदी साहित्य के निर्माताओं में श्रेष्ठ स्थान के अधिकारी हैं। हिंदी के लिए व्यक्तिगत रूप से उनसे अधिक त्याग करनेवाला साहित्यकार हमें संपूर्ण इतिहास में कठिणता से मिलेगा।"[129] खड़ी बोली को आरंभिक दौर में साहित्योपयोगी एवं संपन्न बनाने में भट्ट जी का योगदान महत्वपूर्ण है। इनकी भाषा एवं शैली के संबंध में शुक्ल जी के अनुसार-"इनकी शैली में निरालापन झलकता है।"[130]

बदरीनारायण चौधरी 'प्रेमघन' : (1855-1922 ई.)

साहित्य क्षेत्र में भारतेंदु को अपना आदर्श माननेवालों में प्रेमघन जी भी आते हैं। इन्होंने 'आनंद कादंबिनी' तथा 'नागरी नीरद' पत्रों का संपादन किया। इनके माध्यम से समीक्षा की नींव को मज़बूत करने का कार्य हुआ। 'जीर्ण जनपद', 'आनंद अरुणोदय', 'हार्दिक हर्षादर्श', 'मयंक-महिमा', वर्षा बिंदु जो 'प्रेमघन सर्वस्व' में संकलित है। प्रायः सभी भारतेंदु युगीन प्रवृत्तियाँ इनमें दिखाई देती हैं। "देश की दुरावस्था के कारणों और देशोन्नति के उपायों का जितना वर्णन उन्होंने किया है, उतना भारतेंदु की कविताओं में नहीं मिलता। इस संदर्भ में नयी-से-नयी घटना को वे कविता का विषय बना लेते थे।"[131] प्रेमघन ने ब्रजभाषा में काव्य लिखा है किंतु हिंदी की उपेक्षा नहीं की है। वे कविता में भाव-गति के कायल थे, न तो उन्हें भाषा के शुद्ध प्रयोग की चिंता थी और न वे यति भंग

---

[127] आधुनिक हिंदी साहित्य का इतिहास, अमरप्रसाद जायसवाल-पृ.25
[128] हिंदी साहित्य का इतिहास, आ.रामचंद्र शुक्ल-पृ.335
[129] आलोचना का द्वंद्व, अवस्थी देवी शंकर
[130] हिंदी साहित्य का इतिहास, आ.रामचंद्र शुक्ल-पृ.335
[131] हिंदी साहित्य का इतिहास, सं.नगेंद्र-पृ.463

से विचलित होते थे। छंदोबद्ध रचनाओं के अतिरिक्त उन्होंने लोकसंगीत की 'कजली' और 'लावनी' शैलियों में भी सरस कविताएँ लिखी हैं।"[132] जीर्ण जनपद में ग्रामीण जीवन का यथार्थ चित्रण मिलता है।

राधा चरण गोस्वामी

देशभक्ति पर रचनाओं में राधाचरण गोस्वामी जी का नाम उल्लेखनीय है। भ्रमरगीत, विधवा विलाप, लावनी आदि 36 ग्रंथों की रचना इन्होंने की है।

राधाकृष्ण दास :

भारतेंदु के समकालीन राधाकृष्ण दास जी ने भक्ति, श्रृंगार के साथ सामाजिक-राजनीतिक चेतना को अपने काव्य में विशेष स्थान दिया है। 'भारत बारहमासा' और 'देश-दशा' समसामयिक देश की परिस्थिति के संदर्भ में उनकी उल्लेखनीय कविताएँ हैं। इनके "प्रेम निरूपण में रीतिकालीन और भक्तिकाल की वर्णन परंपराओं का समान प्रभाव पड़ा है।"[133]

'राधाकृष्ण ग्रंथावली' में इनकी कविताएँ संकलित हैं। ब्रजभाषा की कविताओं में मधुरता और खड़ी बोली की रचनाओं में प्रासादिकता उनकी सहज प्रवृत्ति रही है।"[134]

भारतेंदु युगीन काव्य की प्रमुख प्रवृत्तियाँ

भारतेंदु युगीन कवियों का परिचय, कृतित्व तथा पृथक-पृथक रूप से उनके काव्य की विशेषताएँ/प्रवृत्तियाँ देखने के पश्चात् समग्र रूप में भारतेंदु युग जिसकी समय सीमा 1850 से 1900 ई. मानी गई-इस युग की प्रवृत्तियाँ निम्न रूप से देखी जा सकती हैं।

1) राष्ट्रीयता :

---

[132] हिंदी साहित्य का इतिहास, सं.नगेंद्र-पृ.463
[133] हिंदी साहित्य का इतिहास, सं.नगेंद्र-पृ.465
[134] हिंदी साहित्य का इतिहास, सं.नगेंद्र-पृ.465

मध्यकाल में भी राष्ट्रीयता से युक्त काव्य लिखा गया। किंतु वह राष्ट्रीयता राजा विशेष के राष्ट्र तक सीमित थी। तब देश का अर्थ विशिष्ट होता था किंतु भारतेंदु कालीन राष्ट्रीयता का स्वरूप अधिक व्यापक था। भारत को एक देश के रूप में देखने की भावना यहाँ पर निहित है।

2) <u>राष्ट्रभक्ति तथा राजभक्ति</u>ः

भारतेंदु युगीन काव्य में जहाँ व्हिक्टोरिया को 'चीरजीवो' कहा गया है वहीं 'पैथन विदेश चली जात' और 'रोवहु सब मिली भारत भाई' की भी गूंज सुनाई देती है। इसका कारण तत्कालीन परिस्थितियाँ रही हैं। अंग्रेजों ने जो सुधार स्वार्थवश भारत में किये थे उसके फलस्वरूप यह राजभक्ति का स्वर दिखाई देता है, जो लाक्षणिक अधिक है।

3) <u>सामाजिक चेतना</u>ः

भारतेंदु युग की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि साहित्य को रीतिकालीन दरबारी वातावरण के पंक से निकालकर उसे जन सामान्य के समान चिंतन का विषय बनाया गया। विभिन्न सुधारवादी नेताओं, आंदोलनों, पाश्चात्य ज्ञान विज्ञान के प्रभावस्वरूप साहित्य में समाज को प्रतिबिंबित किया जाने लगा तथा साहित्य अब राज प्रशस्ति का नहीं बाल विधवा की विपत्ति सुनकर 'करेजों कसकने' लगा। इन कविताओं में गहरी सामाजिक संवेदनशीलता है। देश की आर्थिक विपन्नावस्था, सामाजिक दुराचार, स्त्रियों की स्थिति, विदेशीपन आदि विषय इस काल के काव्य में सर्वत्र छाए रहे। इसका प्रमाण भारतेंदु, प्रतापनारायण मिश्र, प्रेमघन आदि के काव्य में मिलता है।

4) <u>श्रृंगारिकता</u>ः

यह भी भारतेंदु युग की एक महत्वपूर्ण प्रवृत्ति रही है। इसके अंतर्गत राधा-कृष्ण के चित्र ही अधिक दिये गए हैं। "भारतेंदु ने प्रेम सरोवर, प्रेम-माधुरी, प्रेम-तरंग, प्रेम-फुलवारी आदि में भक्ति-श्रृंगार और विशुद्ध श्रृंगार दोनों का समावेश किया है। प्रेमघन की 'युगल मंगल स्त्रोत' तथा 'वर्षा बिंदु' इसी प्रकार की रचनाएँ हैं।"[135] प्रतापनारायण मिश्र ने श्रृंगारिकता से अपने आपको अलग रखा

---

[135] हिंदी साहित्य का इतिहास, सं.नगेंद्र-पृ.460

किंतु अन्य सभी कवि परंपराबद्ध प्रवृत्ति की ओर उन्मुख रहे। श्रृंगारिकता की परंपराबद्ध प्रवृत्ति भी इस काल में मिलती है।

3.1.2 द्विवेदी युग (1903-1918)

आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के सरस्वती के प्रकाशन भार संभालने से लेकर 1918 तक के समय को द्विवेदी युग की संज्ञा दी जाती है। इस युग की पृष्ठभूमि अत्यन्त वैचारिक, सुधारवादी तथा बौद्धिक है। इस युग में भारतेंदु युग में स्थापित 'ब्रह्म समाज', 'आर्य समाज', 'थिओसाफिकल सोसायटी' और 'राष्ट्रीय कांग्रेस' की क्रियाशीलता का सीधे जीवन पर प्रभाव पड़ना आरंभ हुआ। इन संस्थाओं के प्रभावस्वरूप पाश्चात्य संस्कृति की प्रतिक्रियास्वरूप देश में बुद्धिवाद, वैज्ञानिकता, समानता, सहिष्णुता, न्यायप्रियता, मानवतावादी दृष्टिकोण जैसे लोकान्मुखी दृष्टि का विकास हुआ। इन सभी का प्रत्यक्ष प्रभाव इस युग के साहित्य पर पड़ा और विषय वैविध्य में इसकी परिणति हुई और 'पहाड़ से लेकर चींटी तक' पर साहित्य लिखा जाने लगा।

इस काल में असहयोग एवं स्वदेशी आंदोलन के नेताओं ने अतीत से प्रेरणा स्रोत चुनकर तथा स्वदेशी संस्कृति के पुनरुत्थान की ओर ध्यान दिया। स्त्री को विशेष स्थान राष्ट्रीय आंदोलन में प्राप्त हुआ था। इन सभी के प्रभावस्वरूप राष्ट्रीयता, देशभक्ति, पौराणिक-ऐतिहासिक चरित्रों के कार्य को विषय बनाकर साहित्य लिखा गया। भारतेंदु युग में जो द्वंद्वात्मक छवि अंग्रेजों की थी अब पूर्णतः स्पष्ट होने के कारण राजभक्ति का पूर्णतः लोप हो गया। भक्ति में भी बौद्धिकता तथा मानवतावादी दृष्टि का पुट दिखाई देता है। देशभक्ति, तद्-संबंधी आंदोलनों तथा सुधारवादी नेताओं के आंदोलनों के कारण कुछ आदर्श उभरकर आये जिसका प्रत्यक्ष प्रभाव द्विवेदी युगीन काव्य पर दिखाई देता है।

इन सभी कारणों से चाहे प्रचारात्मक तौर पर सही द्विवेदी युगीन साहित्य अत्यन्त उच्च भाव भूमि पर समाजोन्मुखी है। व समाज के हर पक्ष की चिंता करता है। समाज में जो नवजागरणवादी चेतना का प्रवेश हुआ था और सुधारवाद, बौद्धिकता, पाश्चात्य ज्ञान-विज्ञान का प्रभाव इन सभी की आलोचना द्विवेदी युगीन साहित्य प्रस्तुत करता है।

द्विवेदी कालीन प्रमुख कवि

<u>मैथिलीशरण गुप्त</u>: (1886-1964 ई.)

आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी से अत्यन्त प्रभावित होकर काव्य में 'उचित उपदेश का मर्म होना चाहिए' माननेवाले कविवर मैथिलीशरण गुप्त को आधुनिक हिंदी साहित्य के प्रतिनिधि कवि एवं राष्ट्रकवि के रूप में जाना जाता है। 'रंग में भंग' (1909) के बाद इनकी 'भारत भारती' (1912) ने स्वतंत्रता आंदोलन में नयी जान भर दी थी। 'यशोधरा', 'साकेत', 'जयद्रथ वध', 'प्लासी की युद्ध', 'किसान', 'पंचवटी', 'द्वापर' आदि कृतियों के द्वारा साहित्य में उपेक्षित वर्ग को केंद्र में लाने का कार्य गुप्त जी ने किया है। इन्होंने अपनी रचनाओं में "अपने सांस्कृतिक परंपरा में आस्था रखने पर भी युगधर्म की कभी उपेक्षा नहीं की।"[136] इसलिए उनकी सभी रचनाएँ राष्ट्रीयता से ओतप्रोत हैं। गुप्त जी नारी हृदय के सटीक चित्रकार माने जाते हैं। इसके परिणामस्वरूप उनके 'उर्मिला', 'हिड़ीवा' तथा 'यशोधरा' संबंधी महाकाव्य हैं जिसमें संवेदनशीलता का प्रमाण मिलता है। हिंदी क्षेत्र में जातीय गौरव को जागृत करने में गुप्त जी का योगदान महत्वपूर्ण है।

नाथूराम शर्मा शंकरः (1859-1932 ई.)

नाथूराम शर्मा शंकर जी को भारतेंदु युग तथा द्विवेदी युग की कड़ी माना जा सकता है। इनके आरंभिक काव्य में भारतेंदु युगीन प्रवृत्तियाँ तो उत्तरवर्ती काव्य में द्विवेदी युगीन प्रवृत्तियाँ परिलक्षित होती हैं। ये पहले उर्दू में काव्य रचना करते थे बाद में आर्यसमाज तथा महावीर जी के संपर्क में आने के बाद हिंदी में रचना करने लगे। 'अनुराग रत्न' तथा 'शंकर सरोज' काव्य संग्रह तथा 'गर्भरण्डा रहस्य' यह प्रबंध काव्य इनकी जीवितावस्था में प्रकाशित हो चुके थे। इनकी संपूर्ण कविताओं का संग्रह 'शंकर सर्वस्व' नाम से प्रकाशित किया गया है। "देश प्रेम, स्वदेशी प्रयोग, समाज सुधार, हिंदी अनुराग तथा विधवाओं और अछूतों का दारुण दुःख इनकी कविता के प्रमुख विषय हैं। सामाजिक कुरतियों, आडंबरों, अंधविश्वासों, बाल विवाह आदि पर इन्होंने बड़े तीखे व्यंग्य किये हैं।"[137]

श्रीधर पाठकः

---

[136] हिंदी साहित्य का इतिहास, सं.नगेंद्र-पृ.500

[137] हिंदी साहित्य का इतिहास, सं.नगेंद्र-पृ.495

आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के 'सरस्वती' का संपादन संभालने से पूर्व इन्होंने खड़ी बोली में कविता कर तथा प्रकृति चित्रण के संदर्भ में रूढ़ि का परित्याग कर स्वतंत्र एवं मनोहारी रूप में प्रकृति चित्रण कर श्रीधर पाठक ने अपनी स्वच्छंद प्रवृत्ति का परिचय दिया है। भारतेंदु युग के भांति भारतोत्थान, भारत-प्रशंसा आदि देशभक्तिपूर्ण कविताएँ लिखीं तो 'जार्ज वंदना' जैसा राजभक्ति पर काव्य भी लिखे हैं। 'बाल विधवा' में विधवाओं की दशा का चित्रण कर सामाजिक चिंतन को भी अपने-आप में जोड़कर रखा है। प्रकृति चित्रण में समकालीनों से इन्हें विशेष सफलता प्राप्त हुई है। 'कश्मीर सुषमा', 'देहरादून' (1915), 'वनाष्टक', 'भारत गीत' (1928) इनकी उल्लेखनीय कृतियाँ हैं।

<u>अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध'</u> : (1865-1947 ई.)

खड़ी बोली हिंदी के प्रथम महाकाव्य 'प्रियप्रवास' के रचयिता हरिऔध जी ने इसके अतिरिक्त वैदेही वनवास, चुभते चौपदे, चौखे चौपदे आदि रचनाएँ भी की हैं। खड़ी बोली में विविध छंदों का प्रयोग, विविध शैलियों का प्रयोग तथा उसमें महाकाव्योचित गुण भरने का कार्य हरिऔध जी ने किया है।

<u>रामनरेश त्रिपाठी</u> : (1889-1962 ई.)

एक ओर प्रकृति चित्रण में श्रीधर पाठक जैसी स्वच्छंदता और दूसरी ओर मैथिलीशरण गुप्त जैसी राष्ट्रीय भावना रामनरेश त्रिपाठी के काव्य में दृष्टिगोचर होती है। मिलन, पथिक, मानसी और स्वप्न इन काव्य संग्रहों में देश प्रेम और व्यक्तिगत प्रेम के द्वंद्व में देशप्रेम को महत्व देने की बात कही गई है। इनके प्रकृति चित्रण में स्वाभाविकता झलकती है, चित्रण में अतिशयोक्ति नहीं है।

<u>रायदेवीप्रसाद 'पूर्ण'</u> : (1868-1915 ई.)

पूर्ण जी एक ओर ब्रज में परंपराबद्ध श्रृंगारादि विषयों पर काव्य रचना कर रहे थे तो खड़ी बोली में देशभक्तिपूर्ण रचनाएँ लिख रहे थे। 'स्वदेशी कुण्डल' (1910) में इनकी देशभक्ति से ओत-प्रोत 52 कुण्डलियाँ संग्रहीत हैं। मृत्युंजय, रावण विरोध तथ वसंत वियोग इनकी महत्वपूर्ण काव्य कृतियाँ हैं। 'धराधरधावण' नाम से इन्होंने कालिदास के 'मेघदूत' का अत्यन्त सरस पद्यबद्ध अनुवाद किया है।

द्विवेदी युगीन काव्य की प्रमुख प्रवृत्तियाँः

द्विवेदी युगीन साहित्य अत्यन्त समाजोन्मुखी साहित्य है किंतु वह व्यक्ति भी पूर्णतः उपेक्षा नहीं करता। इस युग के तमाम साहित्यकारों को आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने खड़ी बोली में काव्य रचना के लिए प्रेरित करते हुए साहित्य को गति प्रदान की। उनका व्यक्तित्व पूर्णतः इस काल के काव्य-साहित्य को एक नयी चेतना तथा नई दृष्टि प्रदान करनेवाला सिद्ध हुआ। उनके अविस्मरणीय व्यक्तितत्व के कारण 1900 से 1920 तक-(जब तक द्विवेदी जी 'सरस्वती' का संपादन करते रहे) के युग को 'द्विवेदी युग' का नामाभिधान दिया जाता है।

इसकाल की तमाम परिस्थितियों-राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक तथा अन्य के प्रति यह साहित्य एक चेतन तथा जागरूक लेखकों की संवेदना और बौद्धिकता के समानुपातिक मिश्रण का वहन करता है। इस युग के साहित्य की प्रवृत्तियों के माध्यम से साहित्य का समाज के प्रति दायित्व निर्वाहन को देखा जा सकता है। इस युग की प्रवृत्तियाँ निम्न प्रकार से हैं-

1) **साहित्य के उद्देश्य पर बल**-एक सर्वव्याप्त भ्रांति है कि मार्क्सवादी विचारधारा साहित्य को सोद्देश्य मानती हैं तथा साहित्य के प्रति उसका दृष्टिकोण उपयोगितावादी है किंतु हिंदी साहित्य में यह प्रवृत्ति हमें पहली बार द्विवेदीयुगीन साहित्य में दिखाई देती है। द्विवेदी युगीन रचनाकार साहित्य को मात्र मनोरंजन की वस्तु ही नहीं मानते थे बल्कि, मैथिलीशरण गुप्त जी के शब्दों में-

"केवल मनोरंजन न कवि का कार्य होना चाहिए।
उसमें उचित उपदेश का भी मर्म होना चाहिए।" (मैथिलीशरण गुप्त)

अतः इस युग में साहित्य लेखन के उद्देश्य पर बल दिया गया।

2) **आधुनिकता तथा बौद्धिकता**-इस युग के साहित्यकार पाश्चात्य आधुनिकतावाद तथा तद्जनित बौद्धिकता से प्रभावित अवश्य है किंतु आक्रांत नहीं है, उनकी जड़े अपनी ज़मीन में ही हैं। यही कारण है कि इस युग के कवियों ने अपनी प्राचीन शास्त्रीय संस्कृति की बौद्धिक व्याख्या कर, ईश्वर को मानव रूप में प्रतिष्ठित किया। मैथिलीशरण गुप्त के यहाँ 'राम' अवतारी पुरुष नहीं वरन् आदर्श मानव हैं। 'प्रियप्रवास' में 'कृष्ण' ब्रह्म नहीं और न ही राधा

वियोगिनी अतः वे आदर्श समाज सुधारक और नेता हैं। इसी बौद्धिकता के आलोक में ये कवि अपनी संस्कृति-परंपरा का गहन मंथन करते हैं तथा उसे गौरव की दृष्टि से देखते हैं। एक तरफ़ रूढ़ियों का त्याग है तो दूसरी तरफ़ न्यायोचित परंपरा के प्रति आदर भाव तभी कवि कह उठता है-

"संदेश यहाँ मैं नहीं स्वर्ग का लाया
मैं भूतल को ही स्वर्ग बनाने आया।" (मैथिलीशरण गुप्त)

यही इहलौकिक चिंता कवि को अपनी परिस्थितियों से लड़ने तथा अपनी गलतियों को परिष्कार करने, उस पर मनन-चिंतन करने का साहस देती है-

"हम कौन थे,क्या हो गए हैं और क्या होंगे अभी।
आओ विचारें आज मिलकर ये समस्याएँ सभी।।"

मैथिली शरण गुप्त (‘भारत भारती’)

3) विषय वैविध्य

वैसे तो हिंदी कविता रीतिकाल के राजदरबारों की अट्टालिकाओं को पार करते ही विषय की भूमि पर मुक्त हो गई थी किंतु द्विवेदी युग के आने तक उसमें और श्रीवृद्धि हुई। आचार्य द्विवेदी जी का मत था कि ‘संसार के हर वस्तु पर कविता हो सकती है।’ इस कारण इस काल की कविता में विषय का विस्तार करते हुए ‘चींटी से लेकर हाथी पर्यंत, भिक्षुक से लेकर राजार्यंत’ तथा अन्य कई विषयों तक फैला है। सामाजिक समस्याएँ, तद्विषयक चिंताएँ, प्रकृति चित्रण, देशभक्ति, समकालीन बौद्धिक विमर्श आदि इस काव्य में स्थान पा सके हैं।

4) राष्ट्रीयता की अवधारणा-इस समय तक अंग्रेज़ों की शोषण नीति तथा सच्चा स्वरूप देशवासियों के आगे स्पष्ट हो चुका था। उनके प्रति भारतेंदु युगीन कविता जैसी द्वंद्वात्मक परिस्थिति द्विवेदीकालीन कविता में नहीं है। अब राष्ट्रीयता की सांस्कृतिक व्याख्या होने लगी। इस काल की कविता में देश की वर्तमान दीनता पर करुणा व्यक्त हुई तो दूसरी ओर अतीत के गौरवगान की सफल चेष्टा भी की गई है। राष्ट्रीयता में संप्रदायगत संकीर्णता नहीं तो व्यापक

देशप्रेम व्यक्त हुआ है। इसमें एकता के स्वर के साथ समकालीन 'लोकमान्य तिलक' के गरम दल का प्रभाव नाथूराम शर्मा शंकर की इन पंक्तियों में दिखाई देता है-

"देशभक्त वीरों मरने से नेक नहीं डरना होगा।
प्राणों का बलिदान देश की वेदी पर करना होगा।।"

(नाथुराम शर्मा 'शंकर')

5) **समाजोन्मुखता**-इस युग के कवियों की दृष्टि समाज के सभी अंगों पर पड़ी। यही कारण है कि उसकी अंतर्वस्तु समाज के प्रत्येक तबके से आती है। समाज के संक्रमण कालीन परिस्थितियों के प्रति इस युग के कवि अत्यन्त सचेत हैं। वे समाज की सर्वांगीन उन्नति चाहते हैं। श्रीधर पाठक ने विधवाओं की दीन दशा का अत्यन्त करुणामयी चित्र अंकित किया है। अयोध्यासिंह उपाध्याय ने अछूतोद्धार, सामाजिक कुरीतियाँ और कुटिलता आदि पर व्यंग्य कविताएँ लिखी हैं। 'गोपाल सिंह' तथा 'नाथूराम शर्मा शंकर' की कविताओं में दहेज प्रथा के विरुद्ध घृण्य भाव व्यक्त हुआ है। नारी शिक्षा तथा विधवा विवाह का प्रबल समर्थन इनकी कविताओं में मिलता है। साकेत, यशोधरा आदि इस युग की अद्वितीय कृतियाँ हैं।

6) **प्रकृति चित्रण**-द्विवेदी कालीन कवियों ने प्रकृति का बड़े मनोयोग से वर्णन किया है और उनके प्रकृति चित्रण में प्रकृति के विभिन्न पक्ष दिखाई देते हैं। स्वतंत्र रूप में प्रकृति पहली बार कविता का विषय बनीं। यह चित्रण संवेदनात्मक एवं चित्रात्मक होते हुए भी एकांगी इस दृष्टि से है कि प्रकृति चित्रण केवल प्रकृति का ही है उसमें मनुष्य की उपस्थिति नहीं है तो केवल प्रकृति के बिंब ही हैं। केदारनाथ सिंह की कविता 'एक पीली शाम' की तरह शायद ही कोई संश्लिष्ट प्रकृति का बिंब इस काव्य में देखने को मिले, या फिर महादेवी और पंत की तरह। वस्तुतः इस काल के कवियों का प्रकृति-चित्रण न तो प्रकृति के रहस्यों का उद्घाटन कर सका न मानवता को प्रकृति का कोई संदेश ही प्रदान कर सका उसके लिए छायावाद तक की प्रतीक्षा करनी पड़ी। एक उदाहरण 'प्रियप्रवास' के आरंभ के छंद का लिया जा सकता है जिसका आभास हमें मिल सकता है-

"दिवस का अवसान समीप था, गगन था कुछ लोहित हो चला।

तरु शिखा पर भी अब राजती, कमालिनी कुल वल्लभ की प्रभा।।

- हरिऔध (प्रिय प्रवास)

7) **नारी के प्रति दृष्टिकोण**-द्विवेदीकालीन कवियों में आधुनिक बोध की वस्तुनिष्ठता के कारण नारी के प्रति प्रगतिशील दृष्टि दिखाई देती है। वे एक ओर नारी की स्थिति पर द्रवित होते हुए लिखते हैं-

"अबला जीवन हाय तुम्हारी यही कहानी।

आंचल में है दूध और आँखों में पानी।।" (मैथिलीशरण गुप्त)

तो दूसरी ओर वे नारी के प्रति सम्मान भाव भी प्रकट करते हुए लिखते हैं-

नर जाति की जननी तथा सुखशांति की स्रोतास्विनी।

हा दैव! नारी जाति की यहाँ कैसी है दुर्गति।।"

उर्मिला, हिडिंबा, कैकेयी, यशोधरा जैसे इतिहास के थपेड़ों ने जिन नारी उच्चादर्श तथा त्यागमयी नारी पात्रों को हाशिये पर छोड़ दिया था, उन्हें द्विवेदीयुगीन कवियों ने केंद्र में लाकर अपने काव्य में नायिका का स्थान प्रदान किया। उनका चित्रण युगीन संदर्भों में महत्वपूर्ण है, तथा अपने युग की नारी के त्रासदीय कष्टों के आलोक में लिखित 'साकेत' की उर्मिला केवल एक पौराणिक पात्र मात्र नहीं अपितु तत्कालीन नारी चरित्र की विशेषताओं से युक्त नारी है। महात्मा बुद्ध की पत्नी 'यशोधरा' का यह कहना-

"सिद्धि हेतु गए स्वामी, यह गौरव की बात

पर चोरी-चोरी गए यही बड़ा व्याघात।" - मैथिलीशरण गुप्त (यशोधरा)

अपने युगीन सारी स्त्रियों की व्यथा का विशेषीकृत बखान है।

8) **अनुवाद कार्य**-द्विवेदी युग में खड़ी बोली के प्रयोग का आंरभ तो हुआ किंतु खड़ी बोली का साहित्य उतना समुन्नत न हो पाया था। आचार्य द्विवेदी का उद्देश्य हिंदी भाषा और साहित्य को समृद्ध बनाना था। अतः उनके प्रोत्साहनस्वरूप इस काल में देशी और विदेशी भाषाओं की रचनाओं का खड़ी बोली हिंदी में अनुवाद किया गया। श्रीधर पाठक ने गोल्डस्मिथ के हरमिट का

अनुवाद किया। शेक्सपियर और लॉगफोलो का अनुवाद भी इसी समय हुआ। इस अनुवाद के कार्य से हिंदी साहित्य में व्यापकता आयी।

9) काव्य रूपों में अनेकता

इस युग में प्रबंध काव्य, खंड काव्य और प्रगीत का प्रयोग हुआ। मुक्तक के स्थान पर महाकाव्य, आख्यान काव्य, प्रेमाख्यान काव्य, गीति काव्य और स्फुट गीतों से युक्त काव्य ग्रंथों का निर्माण होने लगा। गीतों में लाक्षणिक व्यंजना और अप्रस्तुत योजना का प्रयोग किया गया।

10) छंद प्रयोग-इन कवियों ने हिंदी, संस्कृत और उर्दू के छंदों का सफल और सुंदर प्रयोग किया है। आवश्यकतानुसार 'संस्कृत' वर्णवृत्तों से प्रभावित होकर अतुकांत और छंद युक्त कविता भी लिखी। श्रीधर पाठक ने 'लावणी' और उर्दू के 'बहरों' का सफ़लतापूर्वक प्रयोग किया है। सनेही और लाला भगवानदीन ने उर्दू छंदों का सराहनीय प्रयोग किया है। द्विवेदीजी, गुप्त, हरिऔध, रायदेवीप्रसाद पूर्ण आदि रचनाकारों ने संस्कृत छंदों का सफलतापूर्वक प्रयोग किया है। इस युग में ब्रजभाषा को तो त्याग दिया गया किंतु उसके छंदों को अपना लिया गया है। वस्तुतः इस काल के कवियों को छंद निर्माण की कोई चिंता नहीं। वे तो भाषा संस्कार में लगे थे। छंदों के परिष्कार का कार्य इस युग में हुआ।

11) काव्यभाषा के रूप में खड़ी बोली की प्रतिष्ठा-जैसा कि भारतेंदु युग के प्रसंग में कहा गया है वहाँ गद्य के लिए खड़ी बोली तथा पद्य के लिए ब्रजभाषा का प्रयोग होता था। किंतु द्विवेदी युग ने यह भाषायी द्वैत समाप्त कर गद्य-पद्य दोनों के लिए खड़ी बोली का अबाध प्रयोग आरंभ किया। आचार्य द्विवेदी जी ने अन्य भाषा पढ़े-लिखे लोगों को हिंदी में साहित्य रचना का प्रोत्साहन दिया। भाषा में स्वच्छंदता परिपक्वता और प्रौढ़ता का समावेश होने का कारण द्विवेदी जी का व्याकरण सम्मत भाषा का प्रयोग करने का आग्रह ही है। खड़ी बोली का यह परिष्कार करनेवालों में आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी जी के साथ बाबू श्यामसुंदर दास, पंडित गौरी दत्त, अयोध्याप्रसाद खत्री आदि का नाम चिर स्मरणीय रहेगा।

12) इतिवृत्तात्मकता-इतिवृत्तात्मकता का बहुत बड़ा कारण इस कविता का श्रृंगार रसवर्णन से सर्वथा मुक्त होना माना जा सकता है। आचार्य द्विवेदी की आदर्शवादिता साहित्यिकता, संयम के प्रभावस्वरूप इस कविता में श्रृंगार वर्णन का अभाव है। संभवतः इसी का परिणाम कविता में इतिवृत्तात्मकता है। इतिवृत्तात्मकता के फलस्वरूप उसमें लाक्षणिकता, चित्रमय भावना और प्रकृति गुण बहुत कम रह गए। इस समय द्विवेदी युगीन कवियों के आगे दो शैलियाँ थीं-बंगाल की कोमलकांत पदावली और दूसरी मराठी की वर्णनप्रधान इतिवृत्तात्मक शैली। द्विवेदी जी के साहित्यिक संसार के अनुरूप दूसरी स्वीकृत और व्यवहृत हुई। कविता में गद्याभास का समावेश हुआ और फलस्वरूप वह शुष्कता से युक्त हो गई। अनुभूति की तीव्रता में गहराई न आ पाने का कारण बहुत कुछ यही शैली है। इसी की प्रतिक्रिया छायावाद में हुई ऐसा अधिकांश विद्वानों का मानना था।

3.1.3 छायावाद (1918-1936)

छायावादी काव्यधारा का कालखंड सन् 1920 ई. से 1936 माना गया है। इस समय में भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन की तथा राष्ट्रीय कांग्रेस की बागडोर गांधीजी के हाथों में थी। अंग्रेज़ों की शोषण नीति के विरुद्ध, पूँजीवाद और साम्राज्यवाद के विरुद्ध सामान्य-जन तक पहुँचने में गाँधी जी को अनेक बार असफल होना पड़ा। स्वदेशी तथा असहयोग आंदोलनों को अनेक कष्टों के पश्चात सफलता प्राप्त हुई। किंतु साम्राज्यवादियों की शोषण नीति बढ़ती जा रही थी। समाज-मूल्यों के प्रति यह संक्रांति काल रहा है। एक ओर परंपरागत मूल्यों की अधुनातन उपयोगितावादी दृष्टि से पुनर्मून्यांकन तथा यूरोपीय प्रभाव से नये मूल्यों की निर्मिति किंतु इनमें स्वीकार-अस्वीकार का द्वंद्व परंपरावादियों तथा पाश्चात्य शिक्षा प्राप्त तथाकथित विद्वानों में देखा गया है।

धर्म का रूप स्थित तो था किंतु नवजागरणवादी चेतना में उसका पुनर्व्याख्यान प्रस्तुत कर उसे बौद्धिक आधार पर प्रस्तुत किया गया था। किंतु अब अन्य धर्मों के साथ दूसरे धर्म का संघर्ष राजनीति स्तर पर था। धार्मिक गुटबाजी ने राष्ट्रीय नेताओं को भी बाँट दिया। धर्म और राजनीतिक का समन्वय पतन का कारण ही बना है और इस बार भी राष्ट्रीय आंदोलन में भारतीयों की शक्ति बँट गई और हर

धर्म के अपने नेता उभरकर सामने आये तथा इन नेताओं ने राष्ट्रीय हित के बजाए विशिष्ट वर्ग तक अपने कार्य को सीमित कर दिया।

सामान्य जन पर अंग्रेज़ी शासन के शोषण का प्रभाव पड़ रहा था। जिसमें किसान, मज़दूर तथा कारीगर प्रमुख थे। भारत में भी पूँजीपति वर्ग का निर्माण (शोषक वर्ग) इस युग में हुआ। फलतः जनता आर्थिक स्तर पर दुहरे शोषण चक्र में पिसने लगी।

छायावाद के प्रमुख कवि

जयशंकर प्रसाद

जयशंकर प्रसाद छायावाद के आधारस्तंभों में से एक माने जाते हैं। प्रायः सभी छायावादी प्रवृत्तियाँ प्रसाद जी के काव्य में पायी जाती हैं। किंतु उनमें राष्ट्रीय भावना, नवोत्थानवादी चेतना तथा अतीत के प्रति मोह प्रबल है। उर्वशी, वनमिलन, प्रेमराज्य, अयोध्या का उद्धार, शोकोच्छवास, वभ्रुवाहन, कानन कुसुम, प्रेम पथिक, करुणालय, महाराणा का महत्व, झरना, आँसू, लहर, कामायनी आदि प्रसाद की काव्य कृतियाँ हैं। 'कामायनी' महाकाव्य में प्रसाद मनु, श्रद्धा एवं इड़ा के माध्यम से आधुनिक मानव की व्याख्या प्रस्तुत करते हैं। कामायनी में अनेक आधुनिक विचारधाराओं तथा शैव दर्शन का प्रभाव दिखाई देता है।

छायावाद की दार्शनिक पीठिका देने का कार्य प्रसाद ने किया है। वे कवि के साथ नाटककार, उपन्यासकार तथा छायावाद के पक्षधर आलोचक भी रहे हैं। उनके नाटकों में भी उनके काव्यत्व की स्पष्ट छाप दिखाई देती है। संस्कृति तथा इतिहास के वे गहन अध्येता और शोधकर्ता थे। ब्रजभाषा से खड़ी बोली की ओर मुड़कर उसमें कोमल भावों को अभिव्यक्त करने तथा उसे संस्कृत शब्दावली से युक्त कर विकसित करने में प्रसाद का मौलिक योगदान है। 'कामायनी' महाकाव्य प्रसाद की हिंदी साहित्य को महान देन है।

सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला'

छायावादी कवियों में 'निराला' विद्रोही कवि के रूप में जाने जाते हैं। मुक्त छंद के प्रथम प्रयोक्ता के रूप में उन्हें जाना जाता है। निराला की दीर्घ कविताओं तुलसीदास, सरोज स्मृति, राम की शक्ति पूजा, कुकुरमुत्ता में तत्कालीन यथार्थवादी सामाजिक, राष्ट्रीय तथा धार्मिक परिस्थितियों का

चित्रण तथा उसके प्रति आक्रोश व्यक्त हुआ है। प्रकृति तथा सूक्ष्म भावों के साथ 'पैशोलो की प्रतिध्वनि', जागो फिर एक बार जैसे ओजप्रधान काव्य रचना भी निराला ने किये हैं। विषय एवं शिल्प को लेकर छायावादियों में सबसे ज्यादा प्रयोग निराला ने ही की है। विषयानुरूप भाषा चयन के कारण संस्कृतनिष्ठ से लेकर बोलचाल की भाषा तक का समावेश इनके काव्य में हुआ है। अनामिका (1923), परीमल (1980), गीतिका (1936) छायावादी कृतियाँ हैं। छायावाद के पतन के पश्चात भी प्रगतिवादी तथा काव्य धारा में भी निराला ने अपना योगदान दिया है। प्रसंगवश आगे उनकी संबंधित रचनाओं का उल्लेख किया जाएगा। छायावादी काव्य दृष्टि के विपरीत यथार्थ चित्रण के लिए निराला छायावादियों में अधिक महत्वपूर्ण है। युगबोध तथा मानवतावादी दृष्टि उनके काव्य की सबसे बड़ी विशेषता है।

सुमित्रानंदन पंत (1900-1986)

सुमित्रानंदन पंत प्रकृति के आगे 'वाल जाल' की उपेक्षा करने के कारण तथा प्रकृति के अनेक बिंबात्मक चित्र अपने काव्य में खिंचकर अपनी कोमल अनुभूति के प्रकाशन का माध्यम बनाने के कारण कोमल अनुभूतियों तथा प्रवृत्ति के कवि कहलाये। पंत की उच्छ्वास, ग्रंथि, वीणा, पल्लव, गुन्जण, छायावादी रचनाएँ हैं। पल्लव की भूमिका द्वारा पंत ने छायावाद को वैचारिक आधार भूमि प्रदान की, इस भूमिका को छायावाद का 'मेनिफेस्टो' कहा जाता है।

पंत प्रकृति एवं सौंदर्य के कवि के रूप में विख्यात हैं। रहस्यमयता, प्रकृति का मानवीकरण, अत्यधिक कल्पनाशीलता, वेदना और निराशा इन छायावादी प्रवृत्तियों का यथेष्ठ पोषण पंत ने किया है। "छायावादी काव्य को अधिक सरस, सूक्ष्म, सौंदर्यबोध से युक्त, प्रकृति एवं सौंदर्य से मंडित करने का श्रेय पंत को है।"[138] युग के साथ पंत ने छायावाद का युगांत घोषित किया। युगांत छायावादी काव्य का अंतिम संकलन माना जाता है। प्रगतिवाद की 'युगवाणी' देनेवाले प्रथम कवि पंत हैं।

महादेवी वर्मा (1907-1987 ई.)

---

[138] आधुनिक हिंदी साहित्य का इतिहास, डॉ.सूर्यनारायण रणसुभे-पृ.63

छायावादी कवयित्री महादेवी वर्मा वेदना और पीड़ा की कवयित्री हैं। इसलिए उन्हें आधुनिक 'मीरा' कहा गया है। छायावाद की रहस्यवादी तथा दुःख और पीड़ा, अत्यन्त वैयक्तिकता की अभिव्यक्ति प्रधान रूप से महादेवी के काव्य में हुई है। तत्कालीन सभी स्त्रियों के दुःख तथा उपेक्षितता की अभिव्यक्ति हम महादेवी के काव्य में देख सकते हैं। वे दुःख और वेदना में ही जीना चाहती 'मिलन का नाम मत ले सखी' कहती है। भावनात्मक रहस्यवाद का चरमोत्कर्ष महादेवी के काव्य में देखा जा सकता है। डॉ.नामवर सिंह के अनुसार-"महादेवी ने प्राचीन सीमाओं के प्रति अपना जो असंतोष व्यक्त किया है ओर उसके साथ ही किसी उन्मुक्त तथा असीम आकाश में उड़ने की आकांक्षा प्रकट की, वह इसी रहस्यात्मकता के साथ। प्रतीक रहस्यात्मक हैं, भाषा अस्पष्ट है-फिर भी उनसे जो कुछ भी व्यंजित होता है, वह वास्तविक है। रूप विधान आध्यात्मिक है, किंतु विषय वस्तु सामाजिक है।"[139]

अतः स्पष्टतः कल्पना, वेदना, रहस्यानुभूति तथा वैयक्तिकता के होते हुए भी महादेवी के काव्य में रूढ़ियों के प्रति आक्रोश तथा समाज-विशेषतः स्त्री मन का, तथा उसकी वेदना का सूक्ष्म चित्रण हुआ है।

छायावाद की अवधारणा:अर्थ एवं परिभाषाएँ

"छायावाद का आरंभ सामान्यतः 1920 ई. से माना जाता है। तत्कालीन पत्र-पत्रिकाओं से पता चलता है कि 1920 तक 'छायावाद' संज्ञा का प्रचलन हो चुका था।"[140] ... "मुकुटधर पाण्डेय जी ने 1920 की जुलाई, सितंबर, नवंबर और दिसंबर के श्रीशारदा (जबलपुर) पत्रिका में क्रमशः 'हिंदी में छायावाद', 'छायावाद क्या है' तथा शेष दो 'हिंदी में छायावाद नाम से लेखमाला' लिखकर छायावाद का स्वरूप स्पष्ट करने का प्रयास किया था।"[141]

छायावाद की सबसे पहली परिभाषा देने का प्रयास आचार्य रामचंद्र शुक्ल जी ने किया था। उन्होंने छायावाद को यूरोपीय आध्यात्मिक प्रतीकवाद का बंगला के माध्यम से हिंदी में अनुकरण मानते

[139] छायावाद, नामवर सिंह-पृ.29
[140] छायावाद, नामवर सिंह-पृ.11
[141] छायावाद, नामवर सिंह-पृ.11

हुए अप्रस्तुत विधान रहस्यवाद और विशिष्ट काव्या शैली माना है। जिसे आगे के आलोचकों ने छायावाद को केवल काव्य शैली मानने से इंकार कर दिया तथा रहस्यवाद छायावाद की प्रवृत्ति के रूप में सामने आता है। छायावाद के पर्याय रूप में नहीं। रही बात बंगला के अनुकरण की तो, अब यह सिद्ध हो चुका है कि बंगला काव्य में 'छायावाद' शब्द कभी प्रचलन में था ही नहीं।

जयशंकर प्रसाद जी ने 'काव्य कला तथा अन्य निबंध' में छायावाद शब्द तथा छायावाद की विशेषताओं पर अधिक स्पष्ट प्रकाश डाला है। वे छायावाद को वेदना के आधार पर स्वानुभूतिमयी अभिव्यक्ति[142] मानते हैं। प्रसाद ध्वन्यात्मकता, लाक्षणिकता, सौंदर्यमय, प्रतीक विधान तथा उपचार वक्रता के साथ स्वानुभूति की विवृत्ति छायावाद की विशेषताएँ मानते हैं। "ये सारी विशेषताएँ आधुनिक नई कविताओं में भी प्राप्त होती हैं।"[143]

डॉ.नगेंद्र ने छायावाद की परिभाषा सूत्र रूप में दी है-"छायावाद स्थूल के प्रति सूक्ष्म का विद्रोह है।"[144] साहित्येतिहास किसी भी स्वच्छंदतावादी सिद्धांतों का विरोध करनेवाली काव्यधारा को परिभाषित करता है। यह परिभाषा द्विवेदी युगीन तथा छायावादी काव्यधारा के तुलनात्मक अध्ययन द्वारा प्रस्तुत की गई है। द्विवेदी युगीन, इतिवृत्तात्मकता, अभिधामूलकता में स्थूलता आई थी। इसके विपरीत छायावाद में लाक्षणिक वक्रता तथा संगीतात्मकता है जो भावों और विषय को अधिक सूक्ष्मता से प्रकट करती है। अतः यह परिभाषा छायावाद के अधिक निकट है। पं.नंददुलारे वाजपेयी रहस्यवाद और छायावाद में अंतर मानते हैं। उनके अनुसार "छायावाद मानव तथा प्रकृति के सूक्ष्म किंतु व्यक्त सौंदर्य में आध्यात्मिक छाया का भाव ही छायावाद है। रहस्यवाद और छायावाद में अंतर है। छायावाद व्यक्त सौंदर्य दृष्टि से संबंध रखता है और रहस्यवाद समष्टि सौंदर्य दृष्टि है।"[145] वाजपेयी जी छायावाद की मुख्य प्रेरणा धार्मिक न मानकर सांस्कृतिक तथा मानवीय मानते हैं। छायावाद को सांस्कृतिक आंदोलन मानकर उस पर से धार्मिक आवरण तथा फैन्टासमारा का आवरण

---

[142] काव्यकला तथा अन्य निबंध, जयशंकर प्रसाद-पृ.49
[143] आधुनिक हिंदी साहित्य का इतिहास, सूर्यनारायण रणसुभे-पृ.49
[144] हिंदी साहित्य का इतिहास, सं.नगेंद्र
[145] नयी कविता, नंददुलारे वाजपेयी

रहस्यवाद का पर्याय न मानकर नंददुलारे जी ने छायावाद को अधिक व्यापक बनाया है। इसी को अधिक स्पष्ट करते हुए डॉ.नामवर सिंह लिखते हैं-"छायावाद उस राष्ट्रीय जागरण की काव्यात्मक अभिव्यक्ति है जो एक ओर पुरानी रूढ़ियों से मुक्ति चाहता था तो दूसरी ओर विदेशी पराधीनता से।"[146] इस प्रकार पलायनवाद संबंधी छायावाद पर लगाये आरोप से मुक्त करते हुए नामवर जी ने छायावाद को अधिक व्यापक अर्थ में ग्रहण किया है।

अंत में डॉ.हजारी प्रसाद द्विवेदी के शब्दों में-"छायावाद शब्द केवल चल पड़ने के जोर से ही स्वीकारणीय हो सका है, नहीं तो इस श्रेणी की कविता की प्रकृति को प्रकट करने में यह शब्द एकदम असमर्थ है।"[147]

छायावाद की प्रमुख प्रवृत्तियाँ

सौंदर्य भावना

छायावादी कविता अपने सौंदर्य के लिए विशेष उल्लेखनीय है। अतः सौंदर्य भावना छायावादी कविता की महत्वपूर्ण विशेषता है। आलोचकों के अनुसार सौंदर्य भावना छायावाद की महत्वपूर्ण विशेषता है। छायावादी कवि प्रकृति के सौंदर्य का चित्रण अपनी संवेदना के आधार पर करते थे। प्रकृति सौंदर्य के विविधांगी रूपों का चित्रण कविता में हुआ है। वैसे तो सौंदर्य शाश्वत प्रवृत्ति है किंतु इसका स्वरूप छायावाद के पूर्ववर्ती कविता से भिन्न है। श्रृंगारकालीन कविता में सौंदर्य बोध अधिकांशतः बाह्य और शरीरगत था। छायावाद में सूक्ष्म सौंदर्य सत्ता का विस्तार हुआ और प्रकृति के नाना रूपों में सौंदर्य दर्शन की प्रवृत्ति उत्पन्न हुई और आत्मिक सौंदर्य बोध को अधिक महत्व मिला। द्विवेदी युग में श्रृंगार कालीन सौंदर्यबोध में अश्लीलता की झलक पाकर एवं बुद्धिवादी विचारधारा के कारण हृदयत्व का अभाव हो गया था जिसे छायावादी कवियों ने अपनी सौंदर्यवादी कविता से पूर्ण किया।

---

[146] छायावादःनामवर सिंह-पृ.15

[147] हिंदी साहित्य की भूमिका, हजारी प्रसाद द्विवेदी-पृ.125

व्यक्तिवाद की प्रधानता-"छायावाद व्यक्तिवादी कविता है, जिसका आरंभ व्यक्ति के महत्व को स्वीकार करने और करवाने से हुआ है। किंतु उसका पर्यवसान व्यक्ति और संसार की स्थायी शत्रुता में हुआ।"[148] आधुनिक कविता ने बीसवीं शताब्दी में प्रवेश किया, पहले जो स्पष्ट विशेषता दिखाई देती है वह वैयक्तिकता। छायावादी कविता ने भी मध्ययुगीन जीवन की संकुचितता तथा अतिशय सामाजिकता के विरुद्ध बहिष्कार कर दिया। पहली बार जीवन की स्वतंत्र घटनाओं का वर्णन काव्य का विषय बना। आत्मकथा छायावादियों का विषय तथा 'मैं' उसकी शैली हो गई ओर जैसा कि महादेवी वर्मा ने कहा-"आज का रचनाकार अपनी साँस का इतिहास लिखना चाहता है।" अपनी दुर्बलताएँ भी कवि ने खोलकर रख दी तथा पंत ने उच्छवास और ग्रंथि में प्रणयानुभूति की स्वतंत्र अभिव्यक्ति की है। निराला की 'सरोज स्मृति' (1935) और 'वनबेला' (1937) में वैयक्तिकता स्पष्ट दिखाई देती है। महादेवी वर्मा ने लिखा है कि "इस व्यक्ति प्रधान युग में व्यक्तिगत सुख-दुःख अपनी अभिव्यक्ति के लिए आकुल थे, अतः छायावाद युग का काव्य स्वानुभूतिप्रधान होने के कारण वैयक्तिक उल्लास का सफल माध्यम बन सका।"[149] इस व्यक्तित्वादिता में वास्तव में अपने व्यक्तित्व की तलाश छायावादी कर रहा था, कामायनी में लिखा है- "बन गुहा कुञ्ज मरु अंचल में हूँ खोज रहा अपना विकास।"

किंतु समाज में व्यक्ति चेतना की उतनी उदारता नहीं आई थी कि-वह सहजता से वैयक्तिक स्वातंत्र्य को स्वीकार कर लेता। अतः निराशा और वेदना की भावना का उत्पन्न होना स्वाभाविक था। "ले चल मेरे नाविक भुलावा देकर धीरे-धीरे।" (प्रसाद) इसे कई आलोचकों ने इसे पलयानवाद कहा है।

राष्ट्रीयता की भावना

वास्तव में हमारा स्वातंत्र्य आंदोलन दोहरा संघर्ष था-एक तो सामंती मर्यादा के विरुद्ध संघर्ष और दूसरा सीधा संघर्ष अंग्रेज़ी साम्राज्यवाद के विरुद्ध। छायावाद का व्यक्तिवाद स्वातंत्र्य एवं सामंती

---

[148] आधुनिक साहित्य की प्रवृत्तियाँ, डॉ.नामवर सिंह-पृ.16

[149] आधुनिक साहित्य की प्रवृत्तियाँ, डॉ.नामवर सिंह-पृ.18 (पूर्वोद्धृत)

मर्यादाओं के विरुद्ध बहुत बड़ा विद्रोह था। इतना ही नहीं राजनीतिक और आर्थिक रूप से यही व्यक्ति स्वातंत्र्य शोषित कृषकों का पक्ष लेकर 'विप्लव के बादलों' को आह्वान करता है। सामंती रूढ़ियों के विरुद्ध जाकर नारी को श्रद्धेय बनाता है, नवीन नैतिक मूल्यों की स्थापना करने का प्रयास करता है। भारत भूमि को समर्पित यह प्रसाद का गीत राष्ट्रीयता से ओतप्रोत है-

"अरुण यह मधुमय यह देश हमारा
जहाँ पहुंच अनजान क्षितिज को मिलता एक सहारा।" (चंद्रगुप्त-प्रसाद)

उसी प्रकार प्रसाद के काव्य में जागरण की अभिव्यक्ति इस प्रकार हुई है-

"हिमाद्रि तुंग श्रृंग से प्रबुद्ध शुद्ध भारती
स्वयं प्रभा समुज्जवल स्वतंत्रता पुकारती।" ('चंद्रगुप्त'-प्रसाद)

इस प्रकार छायावादियों की राष्ट्रीयता दोहरा संघर्ष करती है। यहाँ इसलिए शायद सीधी अभिव्यक्ति नहीं सूक्ष्म विद्रोह है।

नारी चेतना-छायावाद ने तमाम सामंती रूढ़ियों के प्रति एक विद्रोह भरी गुर्राहट पैदा की। नारी के प्रति वह न अतिशय आदर्शवादी, न अतिशय वासनात्मक दृष्टि रखता है। नारी वहाँ प्रेमानुभूति का, गरिमा का तथा स्वाधीनता का विषय है। नारी के मांसल सौंदर्य के अलावा वहाँ गहन मानसिक सौंदर्य भी है, उसमें एक सुकुमारता है-

"तुम्हारे छूने में था प्राण
संग में पावन गंगास्नान।
...   .
... देवी माँ सहचरि प्राण।" (पंत)

के रूप में दिखाई देती हैं।

कामायनी में श्रद्धा का रूपवर्णन छायावादी नारी चेतना का प्रतिनिधित्व माना जा सकता है। नारी चित्रण में वासना का अभाव है और हृदय की कोमल वृत्तियों की कल्पना है। छायावादी कवियों

की नारी भावना पर टिप्पणी करते हुए नामवर सिंह लिखते हैं-"कुल मिलाकर छायावाद में नारी के प्रेयसी रूप की ही प्रधानता दिखाई पड़ती है, माँ बहिन और कन्या के रूप दबे रह गए।"[150]

रहस्य भावना-काव्य में रहस्यवाद एक प्रकार से परोक्ष की जिज्ञासा है, एक अनुभूति है। बहुत समय तक रहस्यवाद और छायावाद में अद्वैत माना गया। शुक्लजी ने इसे 'भारतीय काव्य परंपरा से बाहर की वस्तु' बतलाई तो प्रसाद ने 'छायावाद और रहस्यवाद' निबंध में भारतीय।

छायावादी कवियों की रहस्य भावना के पीछे प्रायः एक सामाजिक बंधन कार्यरत दिखाई देता है। सामाजिक बंधन प्रेम की सीधी अभिव्यक्ति नहीं करने देते। अतः इन कवियों में अस्पष्टता का बड़ा स्थान है और इसे छायावादियों ने प्रतीकों के माध्यम से व्यक्त किया है। 'स्वप्न' अथवा 'मिलन' के प्रतीक इसी भावना से महादेवी के काव्य में आये हैं। 'वीणा' के कवि पंत की यह शिशु सुलभ सरलता कि-

"प्रथम रश्मि का आना रंगिणि
तूने कैसे पहचाना?"

या

"न जाने नक्षत्रों से कौन
निमंत्रण देता मुझको मौन"

कहना इसी रहस्यदर्शिता की अभिव्यक्ति है। इस रहस्य भावना में कभी 'असीम' से मिलने का सुख तो कभी तड़प भी है। कभी वह 'तम के परदे में' आता है तो कभी 'शशि मुख पर घूँघट डाले'। किंतु धीरे-धीरे यही अस्पष्टता इन कवियों की सीमा हो गई जिनका इन्हें मोह हो गया। अतः कविता में पलायन की प्रवृत्ति ने जोर पकड़ा।

वेदना की स्वानुभूतिमयी अभिव्यक्ति-छायावादी कवियों की वैयक्तिकता तथा विद्रोही भावना तो स्पष्ट है किंतु यह विद्रोही भावना अत्यन्त वैयक्तिक धरातल पर थी। उसे समाज के आगे पथ-पथ पर निराशा ही हाथ लगी। अतः यही निराशा की भावना वेदना रूप में काव्य में अभिव्यक्त हुई।

---

[150] आधुनिक साहित्य की प्रवृत्तियाँ, नामवर सिंह-पृ.69

वेदना प्रायः करुणा, तो कहीं निराशा की भावना में व्यक्त हुई है। इसका सबल उदाहरण निराला की कविता (लंबी कविता) सरोज स्मृति है या निराला के राम भी हैं। जो कहते हैं-

"हाय जीवन सदा ही पाता आया विरोध
धिक् साधन किया जिसके लिए सदा ही शोध।।"

(राम की शक्तिपूजा-निराला)

किंतु इस निराशा में भी निराला की आस्तिक दृष्टि प्रकाश खोज लेती है। किंतु इससे महादेवी की वेदना भिन्न है। प्रसाद की वेदनानुभूति में भौतिक दुःख का धुँधलापन नहीं है न अन्य छायावादियों के काव्य में कुछ समय तो वेदना ही छायावाद काव्य का विकल्प मानी गयी थी।

प्रकृति चित्रण-'आचार्य शुक्ल' ने तमाम छायावादियों में पंत को छायावाद का प्रथम कवि मानते हुए उनके प्रकृति चित्रण को काफ़ी सराहा था। काफ़ी समय तक छायावाद को केवल प्रकृति काव्य ही माना गया। 'मुकुटधर पाण्डेय' ने भी प्रकृति चित्रण को छायावाद माना था। अतः छायावादी प्रकृति चित्रण पूर्व की भाँति ब्यौरा मात्र नहीं है। वहाँ मानव की उपस्थिति भी है और प्रकृति की भी। वास्तव में प्रकृति चित्रण के मूल में छायावादियों की जिज्ञासा तथा वेदनानुभूति काम कर रही थी जो एकमात्र शरणस्थली बच गई थी। छायावादी प्रकृति चित्रण पूर्व की अपेक्षा अधिक संश्लिष्ट है- "मेघमय
आसमान से उतर रही है

संध्या सुंदरी परी सी
धीरे-धीरे-धीरे।" - निराला (संध्या सुंदरी)

छायावाद में नारी और प्रकृति का संश्लिष्ट चित्र प्रायः हर कवि ने उतारा है। वहाँ प्रकृति में मानव का आरोपण बराबर होता आया है।

शिल्पगत विशेषताएँ

काव्य रूप

छायावाद गीतप्रधान काव्यधारा है। संगीत और कविता का ऐसा ऐक्य संभवतः ही कहीं मिला जैसा निराला और महादेवी के काव्य में हुआ है। गीतात्मकता होने का एक प्रमुख कारण कवियों का

भावात्मक होना है। महादेवी ने अधिकांशतः गीत लिखे। 'कामायनी' एकमात्र महाकाव्य है। निराला की लंबी कविताएँ छायावादी की स्रोतस्विनी हैं।

भाषा

द्विवेदीयुगीन काव्य इतिवृत्तात्मकता का वारिस था जो वैयक्तिक स्वानुभूतिमयी अभिव्यक्ति तथा सूक्ष्म सौंदर्य भावना दोनों को अभिव्यक्त करने में अक्षम था। परंतु छायावादी कल्पना के पंख पाते ही भाषा आकाश में विचरण करने लगी। छायावाद में ब्रजभाषा के अनेक शब्द स्वीकार किये गये। साथ ही अंग्रेज़ी से अनेक शब्दों का अनुवाद स्वीकारा गया। छायावादी कवियों का भाषा के लिए संघर्ष पंत के 'पल्लव' की भूमिका से स्पष्ट हो जाता है। अभूतपूर्व शब्द मैत्री छायावादी कविता में दिखाई देती है। पंत ने प्रायः असंयुक्त वर्णवाले, छोटे तथा हल्के चुने हैं वहीं निराला में समासयुक्त पदावली, विविध जाति और ध्वनि वाले शब्दों में भी अनुप्रासमय संगीत उत्पन्न किया गया है। प्रसाद का शब्द चयन अधिक प्रगाढ, मधुमय और नादानुकृतिमय है। निराला में शब्द चयन की विविधता अंत तक बनी रही। नामवर जी के अनुसार-"भावों का क्षेत्र सीमित होने के कारण छायावाद का शब्दकोश काफी सीमित है।"[151] छायावादी कविता में भाषातिरेक के कारण शब्द क्रम गड़बड़ा गया है। 'है' तथा 'था' आदि सहायक क्रियाओं का जानबूझ कर प्रयोग टाला गया है। इस क्रम में भाषा वाक्यों की श्रृंखला सी दिखाई पड़ती है-

"तरुवर के छायानुवाद सी
उपमा सी, भावुकता सी
अविदित भावाकुल भाषा सी।"

छंद

छायावादी कविता ने सर्वप्रथम इसी क्षेत्र में अपना विद्रोह दर्ज किया। छायावादी कवियों की पहली स्थापना थी कि "कविता की भी मुक्ति होती है... छंदों से बंधन से मुक्त होना कविता की मुक्ति

[151] आधुनिक साहित्य की प्रवृत्तियाँ, नामवर सिंह-पृ.49

कहलाती है।"[152] छंद प्रकृति का मौलिक आधार 'भावालय' होता है। उन्होंने अनुभव किया कि छंदों के साँचे की तरह भावों को मोड़ना भावों के प्रति अन्याय है। अतः उन्होंने छंदों के रजतपाश को तोड़ा, भावलय के अनुसार छंद लय और भाव प्रवाह के अनुसार चरणों का आकार परिवर्तित किया। अतः छंदोविधान में भावानुकूलता से मुक्त छंद का आविर्भाव हुआ और निराला इसके प्रवृत्तक रहे। छोटे भावों के लिए लोकगीतों का सहारा लिया गया, निराला द्वारा जूही की कली प्रथम मुक्त छंद में खुली। इस प्रकार नई कविता को छायावाद का सबसे प्रमुख प्रदेय लययुक्त मुक्त छंद है।

विशेषण विपयर्य

केवल अपनी पूर्ववर्ती द्विवेदी युगीन काव्यधारा से ही नहीं अपितु छायावादी कविता अलंकारों की दृष्टि से अद्वितीय है। छायावाद के विरोधी माने जानेवाले आचार्य शुक्ल जी ने भी स्वीकार किया था कि छायावादी कवियों ने लाक्षणिक साहस सबसे अधिक दिखाया। उनके अनुसार-"अभ्यंतर प्रभाव-साम्य के आधार पर लाक्षणिक और व्यंजनात्मक पद्धति का प्रचुर-विकास छायावाद की काव्यशैली की असली विशेषता है।"[153] स्वाभाविक शीतलता के लिए 'चाँदनी का स्वभाव में वास' तथा 'विचारों में बच्चों का साँस' नवीन उपमाओं का सूचक है।

छायावादी कविता ने इस क्षेत्र में विशेषणों के प्रयोग में अद्‌भुत चमत्कार पैदा किया। एक छोटे से वाक्य में कई सारी बातें कह दी गई हैं। 'तुतला भय', तुमुल तम, नील झंकार, मूर्च्छित आतप, तुतल उपक्रम, गंध-गुंजित जैसे विशेषण प्रयोग छायावादी कविता में अनेक हैं।

चित्रात्मकता

छायावादी कविता की चित्रात्मक भाषा की प्रायः सराहना सर्वत्र हुई है। पंत ने 'काव्य के लिए चित्रभाषा की आवश्यकता' पर ज़ोर दिया 'जिसकी लालिमा भीतर न समा सकने के कारण बाहर फूट पड़े।' वस्तुतः यह छायावाद की सबसे बड़ी विशेषता और परवर्ती काव्य की सबसे महत्वपूर्ण प्रदेय है। बड़े ही मनोहर तथा विशाल शब्द चित्र छायावाद में खिंच गए हैं-

---

[152] पल्लव, पंत (भूमिका से)

[153] हिंदी साहित्य का इतिहास, रामचंद्र शुक्ल-पृ.59

"अवनि-अंबर की रूपहली सीप में

अरल मोती-सा जलधी जब काँपता।" (कामायणी-प्रसाद)

प्रलय का जैसा चित्र कामायनी में है वैसा अन्यत्र दुर्लभ है। अतः छायावादी काव्यधारा में एक चित्रशाला, काव्यचित्र दिखाई देते हैं।

वस्तुतः छायावादी भावधारा की सक्षम अभिव्यक्ति सबसे अधिक कविता में हुई परंतु यह तद्‌युगीन सभी विधाओं में प्रतिफलित हुई व्यापक जीवन दृष्टि थी। महादेवी के 'अतीत के चलचित्र' निराला के तीनों उपन्यास, पंत की कहानियाँ तथा प्रसाद के निबंध इससे अछूते नहीं हैं। प्रसाद के नाटकों में कार्नेलिया हो या ध्रुवस्वामिनी प्रायः छायावादी नारी है जो अर्धेक कल्पना, अर्धेक नारी ही है।[154] महादेवी विशेषतः तथा अन्य आलोचकों के निबंधों-आलोचकों पर भी इसका प्रभाव परिलक्षित किया जा सकता है।

छायावाद का ऐतिहासिक प्रदेय रामविलास शर्मा के शब्दों में यह है कि-"द्विवेदी युग की वैष्णवी श्रद्धा और सशंक नैतिकता के बदले पहले-पहल अविश्वास और मानवीय प्रेम और श्रृंगार के स्वर सुनाई पड़ते हैं, नैतिकता के विरोध ने उच्छृंखलता का रूप नहीं लिया..."[155]

3.1.4 **प्रगतिवाद** (1936-1943)

आधुनिक कविता के इतिहास में 'प्रगतिवादी काव्य' की संज्ञा उस काव्य को दी गई है जो छायावाद के समाप्ति काल में 1936 ई. के आसपास से सामाजिक चेतना से निर्मित होना आरंभ हुआ। "इसके शब्दार्थ से इसके स्वरूप को समझने में भ्रांति होती रही है। इसलिए यही समझना चाहिए कि यह नाम उस काव्यधारा का है जो मार्क्सवादी दर्शन के आलोक में सामाजिक चेतना और भावबोध को अपना लक्ष्य बनाकर चली। प्रगतिवाद के उद्‌भव और विकास में राष्ट्रीय और

---

[154] छायावाद, सं.नामवर सिंह-पृ.55

[155] आधुनिक साहित्य की प्रवृत्तियाँ, नामवर सिंह-पृ.37 से उद्धृत

अंतर्राष्ट्रीय परिस्थितियाँ सहायक हुई साथ ही छायावाद की जीवन-शून्य होती हुई व्यक्तिवादी वायवी काव्यधारा की प्रतिक्रिया भी उसमें निहित थी।"[156]

मार्क्स की विचारधारा ने वैश्विक स्वरूप ग्रहण कर लिया और इससे केवल राजनीतिक क्षेत्र ही प्रभावित नहीं हुआ बल्कि अन्य सभी क्षेत्र भी इससे प्रभावित हुए, साहित्य और सामाजिक जगत में इस विचारधारा का स्वागत हुआ है और इस विचारधारा के सिद्धांतों से समाज और साहित्य क्षेत्र प्रभावित होकर अपनी गतिविधियों में आगे चलने लगा। मार्क्स के सभी सिद्धांतों का प्रभाव इस युग के साहित्य पर और साहित्य की सभी विधाओं में दिखाई देता है। अतः इस विचारधारा के प्रभाव से आधुनिक हिंदी साहित्य ने भी प्रभाव ग्रहण कर साहित्यिक अभिव्यक्ति की। मार्क्स के दर्शन पर आधारित साहित्य को हिंदी में प्रगतिवादी साहित्य की संज्ञा दी गई। इस संदर्भ में नामवर सिंह लिखते हैं-"छायावाद के गर्भ से सन् 1930 के आसपास नवीन सामाजिक चेतना से युक्त जिस साहित्य धारा का जन्म हुआ उसे सन् 1936 में प्रगतिशील साहित्य अथवा प्रगतिवाद की संज्ञा दी गई।"[157]

इसी संदर्भ में वे आगे लिखते हैं-"प्रगतिशील साहित्य अंग्रेज़ी के 'प्रोग्रेसिव लिटरेचर' का हिंदी अनुवाद है। अंग्रेज़ी साहित्य में इस शब्द का प्रचार 1935 के आसपास विशेष रूप से हुआ। जब ई.एम.फास्टर के सभापातित्व में पेरिस में 'प्रोग्रेसिव राइटर्स असोसिएशन' नामक अंतर्राष्ट्रीय संस्था का प्रथम अधिवेशन हुआ। हिंदुस्तान में दूसरे साल डॉ.मुल्कराज आनंद और सन्जाद जाहिर के उद्योग में जब उस संस्था की शाखा खुली और प्रेमचंद की अध्यक्षता में उसका प्रथम अधिवेशन हुआ तो यहाँ प्रोग्रेसिव लिटरेचर अथवा प्रगतिशील साहित्य का प्रचार हो गया। कालक्रम अथवा प्रकारांतर से यही प्रगतिवाद हो गया।"[158] प्रगतिवादी साहित्य आंदोलन ने नवीन दर्शन के आधार पर साहित्य संवेदना की अभिव्यक्ति की जो कि परंपरा से अलग एवं साहित्य प्रवृत्तियों से नवीन था। प्रगतिवादी साहित्य-प्रबल सामाजिक चेतना के आविष्कार का साहित्य है, जिसमें सामान्य जन-जीवन को केंद्र में रखा गया। यह साहित्य, साहित्यिक धारा में मार्क्स के राजनीतिक सिद्धांतों का प्रणयन

---

[156] हिंदी साहित्य का इतिहास, डॉ.नगेंद्र-पृ.622
[157] आधुनिक साहित्य की प्रवृत्तियाँ, नामवर सिंह-पृ.59
[158] आधुनिक साहित्य की प्रवृत्तियाँ, नामवर सिंह-पृ.60

करता है और वर्गभेद, मूल्य सिद्धांत, सर्वहारा शोषक वर्ग का चित्रण करते हुए अग्रसर होता है। साहित्य की इस धारा ने कविता, उपन्यास, कहानी, निबंध, आलोचना आदि पर प्रभाव डाला और एक लहर समान यह धारा हिंदी साहित्य में अपना प्रभाव जमाती रही।

प्रगतिवादी आंदोलन साहित्य के माध्यम से समाज के उपेक्षित सर्वहारा समाज का चित्रण यथार्थ धरातल पर करके इसकी संपूर्ण संवेदना का अंकन किया। "प्रगतिशील साहित्य की सबसे बड़ी उपलब्धि यह है कि उसने मुख्यतः किसानों मजदूरों और कुछ निम्न-मध्यवर्ग के पढ़े-लिखे युवकों से नवीन भावनाओं वाले कवि तथा लेखक निकाले।"[159] प्रगतिवादी साहित्य सामान्य जन जीवन को केंद्र में रखता है। इसने समाज की विभिन्न परिस्थितियों का चित्रण किया जिसमें सर्वहारा वर्ग प्रमुख है। साथ ही शासन और पूँजीपतियों का विरोध किया। साधारणतः प्रगतिवादी साहित्य अपनी युगीन साहित्य धारा का महत्वपूर्ण साहित्य है जो "सामाजिक यथार्थ की अभिव्यक्ति को ही रचना का उद्देश्य मानता है।"[160] इस साहित्य की प्रमुख प्रवृत्तियों पर निम्न बिंदुओं के माध्यम से विचार किया जाता है।

प्रगतिवाद की प्रमुख प्रवृत्तियाँ

यथार्थवादी जीवन दृष्टि

छायावाद ने जो कल्पना की उड़ानें भरी उससे साहित्य और समाज में एक विभेद निर्माण हो गया। इसका विरोध कविता में प्रगतिवाद ने सामाजिक यथार्थवादी दृष्टि से किया तथा कविता को कल्पना के वाल-बाल से जीवन के कठोर यथार्थ पर उतारा। इसी कारण प्रगतिवादी कविता में ग्रामांचल, कृषक, मज़दूर आदि के चित्र अधिक मात्रा में दिखाई देते हैं। प्रकृति भी कल्पनादृष्टि से अछूती ही है। यहीं से जीवन की वास्तविकता कविता में प्रतिफलित हुई है। अत्यन्त कल्पना का विरोध तो प्रगतिवाद ने किया किंतु उसके यथार्थवाद में भी आगे चलकर परिस्थितियों से सरलीकरण समाविष्ट हो गया जो अपने आप में परिस्थितियों का अविकल अनुवाद बनकर रह गया।

---

[159] आधुनिक साहित्य की प्रवृत्तियाँ, नामवर सिंह-पृ.70
[160] हिंदी साहित्य का इतिहास, सं.डॉ.नगेंद्र-पृ.623

बौद्धिकता और व्यंग्य

प्रगतिवाद ने कल्पना प्रधानता के साथ अतिशय भावुकता का भी विरोध किया। वस्तुतः द्विवेदी युग से ही काव्य में बौद्धिकता का समावेश हो चुका था किंतु प्रगतिवादी कवि इस बौद्धिक दृष्टि को सीधे युग जीवन की समस्याओं से जोड़ता है। यहीं से वह परंपरा का मूल्यांकन जैसी सजग दृष्टि अपनाकर जर्जर रूढ़ियों पर प्रहार करता है जो नितांत बौद्धिकता का परिचय देती है। इस बौद्धिकता के मूल में उसकी करुण दृष्टि है जो व्यंग्य को जन्म देती है।

"भूखा है कुछ पैसे पा, गुन गुना खड़ा हो जाता वह पर
पिछले पैरों के बल उठ जैसे चल रहा कोई जानवर।"

निराला के 'कुकुरमुत्ता' में तथा 'नये पत्ते' में बड़े तीव्र व्यंग्य किये गये हैं। नागार्जुन तो व्यंग्य में माहिर थे।

"कागज़ की आज़ादी मिलती
ले लो दो दो आने में।" (नागार्जुन)

प्रगतिवादी कवियों के व्यंग्य के शिकार प्रायः प्रशासनिक, पुलीस, अफसर और मुख्यतः नेता है। नागार्जुन, केदारनाथ अग्रवाल में यह प्रवृत्ति अधिक दिखाई देती है।

राष्ट्रीय चेतना

प्रगतिवाद का प्रादुर्भाव साहित्य में आर्थिक और राजनीतिक आंदोलन के रूप में हुआ। छायावाद तत्कालीन राष्ट्रीय आंदोलन को कुछ मात्रा में तो आभिव्यक्त कर सका पर उसकी वैयक्तिकता में किसानों-मज़दूरों को स्थान न मिल पाया। इसी के फ़लस्वरूप राष्ट्रीयता की पूर्ण अभिव्यक्ति वह अंग्रेज़ी साम्राज्यवाद का विरोध ही था जनांदोलन का समर्थन और उसे बल देने की बात कर दोनों छोरों पर प्रगतिवाद खूबी से डँटा रहा। प्रगतिवादियों को देश की सुंदरता ही नहीं आकर्षित करती बल्कि वे उसे मानवोचित सुविधा के आलोक में देखते हैं। भारतेंदु से शुरू हुई

राष्ट्रीयता प्रगतिवाद में आकर अपना पूर्ण रूप लेती है, उसमें बौद्धिकता का भी समावेश होता है और समझदारी का भी-

"जहाँ न भरता पेट व देश कैसा भी हो महानरक है।" (नागार्जुन)

इस प्रकार कहने की हिम्मत प्रगतिवादियों ने की। उनकी राष्ट्रीयता हर मोर्चे पर होते हुए भी देश के प्रति अंधश्रद्धा मात्र नहीं है।

राजनीतिक सजगता

छायावाद के समय से चला आता बीस-पैंतीस वर्ष का सांस्कृतिक जागरण अब राजनीति केंद्रित हो गया। "छायावाद इस सदी के सांस्कृतिक पुनर्जागरण की उपज था तो प्रगतिवाद राजनीतिक नवजागरण की।"[161] इसका कारण सामान्य लोगों का राजनीति में तथा सामान्य जीवन में राजनीति का प्रवेश हो सकता था। अब तक जो राजनीति बड़े लोगों की चीज़ थी अब वह सामान्य जन की भी चीज़ हो गई। अतः प्रगतिवादी कविता में इसका जोरदार वर्णन हुआ है। लेकिन इससे एक एकांगिता आयी कि-"केवल राजनीति व्यक्ति की साहित्य के लिए विशेष सामग्री नहीं दे सकती।"[162] किंतु राजनीति का साहित्य में तब हुआ जो आज तक यथावत है। अब उसे अत्यन्त व्यापकता मिल चुकी है जिसकी चरम परिणति मंगलेश डबराल, कुमार विकल, एकांत श्रीवास्तव तथा धूमिल एवं आगे आनेवाले विशेष कवि रघुवीर सहाय में अत्यन्त सजगता से दिखाई देती है।

वर्गीय दृष्टिकोण

अधिकांश प्रगतिवादी कवियों ने मार्क्सवाद में श्रद्धा दिखाई थी। मार्क्सवाद की पकी-पकाई खिचड़ी को वे अपनी ठोस विचारधारा के रूप में स्वीकार करते थे तथा साहित्य में उसका प्रतिफलन देखने के इच्छुक थे। इसी के चलते उनके काव्य में मार्क्सवादी विचारधारा के प्रति प्रतिबद्धता का स्वर सुनाई देता है जो सिद्धांतों का अविकल, शुष्क अनुवाद मात्र है। मुक्तिबोध भी आरंभ में कविता में नारेबाजी से न बच सके और कह उठे-

---

[161] हिंदी साहित्य की प्रवृत्तियाँ, नामवर सिंह-पृ.64
[162] हिंदी साहित्य की प्रवृत्तियाँ, नामवर सिंह-पृ.65

"लाल क्रांति की लड़नेवाली
मज़दूर सेना आप
उनको
उनके स्त्री-पुरुषों को
मेरा लाल सलाम।" (मुक्तिबोध)

शोषकों के प्रति घृणा

उपरोल्लेखित प्रवृत्ति का तथा शोषकों के प्रति घृणा भाव का अंतर्संबंध दिखाई देता है। प्रगतिवादी साहित्य में शोषक आक्रोश के केंद्र में हमार्क्सवादी दृष्टि के अनुसार शोषक-पूँजीपतियों के सर्वनाश ही से मज़दूर, कृषकों तथा अब तक के पीड़ित लोगों का राज्य हो सकता है। अतः शोषकों के प्रति तद्युगीन जीवन में जो आग भभकती थी उसका प्रतिफलन प्रगतिवादी काव्य में हुआ है। इस युग का चित्र दिनकर की कविता में इस प्रकार अंकित है-

"श्वानों को मिलता दूध दही भूखे बालक अकुलाते हैं
माँ की छाती से लिपट ठिठुर जाड़े की रात बिताते हैं।
युवतियों के लज्जावसन बेच ब्याज चुकाए जाते हैं।
तब मालिक तेल फूलेलों पर पानी सा द्रव्य बहाते हैं।" -दिनकर

श्रम का सौंदर्यशास्त्र

शोषितों की स्थिति दिखाने के क्रम में प्रगतिवादी कवियों ने उनकी शक्ति का भी चित्रण किया है। वह उनकी शक्ति श्रम के रूप में सामने आयी है। इसी कारण श्रम करते कृषक, मजदूर तथा अन्य निम्नवर्गीय लोगों का बहुतायत से चित्रण प्रगतिवादी कवियों में हुआ है जिनमें मानवीय संवेदनाओं का सहज समावेश हुआ है। "मिलकर वे दो प्राणी
दे रहे हैं खेत में पानी।" (त्रिलोचन)

इस प्रकार के चित्रण के द्वारा प्रगतिवादी काव्य ने कविता में नया प्रतिमान स्थापित किया। जहाँ शोषक प्रायः संघर्षरत है जिसे शुक्ल जी ने साधनावस्था कहा है और इसी अवस्था को केदारनाथ अग्रवाल यों प्रस्तुत करते हैं-

"मैंने उसको जब जब देखा लोहा देखा

लोहे जैसे तपते देखा, गलते देखा, ढलते देखा।।"

(केदारनाथ अग्रवाल)

या फिर इस संघर्षरत जीवन को कवि प्रकृति के माध्यम से यों व्यक्त करते हैं- "तेज धार का कर्मठ पानी

चट्टानों के ऊपर चढ़कर

मार रहा है घूँसे कसकर

तोड़ रहा है तट चट्टानी।" (केदारनाथ अग्रवाल-श्रम का सूरज)

क्रांति एवं सामाजिक परिवर्तन की भावना

प्रगतिवाद ने प्राचीन का परिवर्तन कर नवीन युगोपयोगी बनाने की प्रेरणा दी है। इस प्रेरणा को मार्क्सवाद का आधार होने के कारण उनके सामाजिक परिवर्तन में क्रांति की भावना का अनायास समावेश हो उठा है। उन्होंने परिवर्तन में परिवर्द्धन की नहीं तो बदलाव की आवश्यकता पर बल दिया। इसलिए उनमें परंपरा को नष्ट कर नये की स्थापना की भावना है-

"कवि कुछ ऐसी तान सुनाओ जिससे उथल-पुथल मच जावे।

एक हिलोर इधर से आवे एक हिलोर उधर से आवे।।" (नवीन)

इन्होंने पुरानी रूढ़ियों, परंपराओं और मान्यताओं के प्रति पूर्णतः असंतोष व्यक्त करते हुए लिखा है-

"गा कोकिला परसा पावक कण

नष्ट-भ्रष्ट हो जीर्ण पुरातन

ध्वंस-भ्रंश जग के जड़ बंधन।" (पंत)

विश्व दृष्टि

मार्क्सवाद एक वैश्विक दृष्टि के रूप में विकसित किया गया सिद्धांत है। वहाँ 'वसुधैव कुटुंबकम' की अवधारणा राष्ट्रीयता से बढ़कर मानी गई। इस विश्व दृष्टि के कारण वे केवल विश्व

को शोषक और शोषित वर्ग के रूप में ही देखते हैं जिनमें से शोषक को वे मिटा देना चाहते हैं। इस कारण समकालीन तमाम वैश्विक घटनाओं पर प्रगतिवादियों ने कविता लिखी। उन्हें नागासाकी-हिरोशिमा पर की गयी बमबारी भी कचोटती है और गांधी की मृत्यु भी-

"बापू मरे अनाथ हो गई भारत माता
अब क्या होगा अब क्या होगा?" (पंत)

प्रगतिवादियों में राष्ट्रीयता-अंतर्राष्ट्रीयता की भावना का कनक-कुंडल मिश्रण हुआ है। कहीं भी वे एक दूसरे को हानि नहीं पहुँचाते।

नारी के प्रति दृष्टिकोण

छायावादी नारी इस जगत् की कम कल्पना की सृजना अधिक थी, वह अमूर्त सी थी। प्रगतिवादियों ने नारी को शोषितों के खेमे में रखा तथा उसके स्वतंत्र अस्तित्व की माँग की। पंत जी ने अपने आधुनिक कवि की भूमिका में लिखा है-"सामंत युग के स्त्री-पुरुष सदाचार का दृष्टिकोण अब अत्यन्त संकुचित लगता है। उसका नैतिक मानदंड स्त्री की शरीरयष्टि रहा है।"[163] रामेश्वर शुक्ल अंचल ने 'आज मरण की ओढ में वेश्या को मानव की पशुवासना का जीवंत प्रतीक माना है-

"माता बनी दूध भर आया, किंतु न भरता पापी पेट
जननी बनकर भी पशुओं के आगे नग्न सकेंगी लेट।"
(रामेश्वर शुक्ल, अंचल)

अतः असहाय स्त्री की पीड़ा को इन कवियों ने आवाज़ दी।

प्रेम का सामाजिक स्वरूप

छायावादियों का प्रेम अत्यन्त वैयक्तिक था वहीं प्रगतिवादियों के प्रेम में सामाजिक दृष्टि का समावेश हो गया। प्रगतिवाद में प्रेम कविताओं का अभाव आरंभ में खलने लगा था किंतु धीरे-धीरे

[163] आधुनिक कवि-पंत-पृ.29

उनके सामाजिक प्रेम का रूप स्पष्ट हो गया जो एक व्यापक दृष्टि कही जा सकती है। साहित्य एवं साहित्यकार का दायित्व निर्वहन प्रेम का स्वरूप इस प्रकार अभिव्यक्त हुआ है-

"मुझे जगत् जीवन का प्रेमी
बना रहा है प्यार तुम्हारा।"

ग्रामांचल का चित्रण

त्रिलोचन, केदारनाथ अग्रवाल, नागार्जुन आदि की कविता में ग्रामांचल के अधिकतर चित्रण दिखाई देते हैं। आचार्य शुक्ल ने जैसा कहा था कि-प्रगतिवादियों का देश प्रेम, प्रकृति प्रेम के माध्यम से व्यक्त हुआ है। तथा अपनी 'धरती' के माध्यम से-

"देख रहा हूँ विश्व को आज मैं ग्रामीण नयन से
सोच रहा हूँ जटिल जगत् जीवन पर जन मन से।" (पंत-ग्राम्या)

त्रिलोचन नागार्जुन में ऐसे अनेक चित्र उपलब्ध हैं जो हमें अपने गाँव के लग सकते हैं अर्थात् "सबके भावना का समान विषय हो सकते हैं।"

"याद आता मुझे अपना वह 'तरउनी' ग्राम
याद आती लीचियाँ औ' आम
याद आते मिथिला के रुचिर भू-भाग
याद आते धान
... याद आते कमल, कुमुदिनी और तालमखान
याद आते सस्यश्यामल जनपदों के
-रूप-गुण-अनुसार ही रक्खे गए वे नाम।" (नागार्जुन)

नागार्जुन की मैथिली में लिखी गई तथा इसी प्रकार त्रिलोचन के काव्य में अपने 'धरती' की सौंधी महक है।

शिल्प पक्ष

प्रगतिवादी कवि, कविता को जनसाधारण की वस्तु मानकर चले थे। इसलिए वे अत्यन्त कलावादिता तथा वक्रता के विरोधी थे। कल्पना का बहिष्कार तथा ठोस यथार्थ का परिष्कार इस

कविता में दिखाई देता है। इसी के अनुरूप प्रगतिवादियों ने भाषा का चयन किया है। प्रायः उन्होंने भाषा को बोलचाल के अधिक पास रखने की कोशिश की है। बोलचाल की भाषा का अत्यन्त सुंदर चित्रण इन कविताओं में हुआ है। बलभद्र दीक्षित, बंशिधर पंडा, मुकुल, रमई काका आदि ने अपनी क्षेत्रीय बोलियों में काव्य रचना की। अतः प्रगतिवादियों का ध्येय भाषा को सरल, सुबोध एवं भावाभिव्यंजक बनाना था। छायावाद ने खड़ी बोली से कर्कशता दूर कर माधुर्य लाया तो प्रगतिवाद ने उसे ठोस यथार्थ का वहन करने की क्षमता प्रदान की। भाषा प्रायः भावानुकूल है बोली मिश्रित अधिक है-

"मेरे आँगन में
दो छोटे से लड़के आ जाते हैं हमेशा
जंगे तन, गदबदे, साँवले, सहज छबीले
मिट्टी के मटमैले पुतले-पर फुर्तीले।"

सहजता एवं सरलता की आड़ में प्रायः प्रगतिवादियों ने बहुत समय तक रूप की अवहेलना ही की है। प्रायः मुक्तिबोध को छोड़कर प्रगतिवादियों में रूप का वह निखार न आ पाया जो छायावादी काव्य में था। अतः उनका रूप पक्ष कमजोर पड़ गया। छंदों में लयबद्धता का अभाव गद्याभास पैदा करता है। गति भी प्रायः कई जगहों पर टूट जाती है। अलंकार जरूर साधारण जीवन से लेने के कारण मौलिक है। उपमाएँ प्रायः निजरी हुई हैं। बिंब भी सारे उत्कृष्ट बन पड़े हैं। प्रतीकों का बहिष्कार किया गया है। काव्यरूप में प्रायः प्रबंधात्मकता का पूर्णतः अभाव रहा है।

3.1.5 प्रयोगवाद

मानव जीवन गतिशील है और साहित्य में उसकी गतिशीलता के चित्र को देखा जा सकता है। हिंदी साहित्य की धाराओं का अध्ययन करते हुए यह काफी स्पष्ट होता है कि मानव की गतिशीलता के साथ ही साहित्य में भी गतिशील परिवर्तन होते आए हैं। प्रगतिशील अथवा प्रगतिवादी काव्यधारा की परिणति धीरे-धीरे प्रयोगवादी काव्य में हुई है। अतः साहित्य क्रमगत सोपानों से आगे बढ़ता है। हिंदी में प्रयोगवादी काव्यधारा का प्रणयन अज्ञेय द्वारा संपादित 'तारसप्तक' श्रृंखला से हुआ है जो

निरंतर 'तार सप्तक' (1943), दूसरा सप्तक (1951) एवं तीसरा सप्तक (1959) चौथा सप्तक (1978) नाम से प्रकाशित है। प्रयोगवाद पर विचार करते हुए 'रामदरश मिश्र' लिखते हैं- "प्रयोगवाद नाम उन कविताओं के लिए रूढ़ हो गया है, जो कुछ नए बोधों, संवेदनाओं तथा उन्हें प्रेषित करनेवाले शिल्पगत चमत्कारों को लेकर शुरू-शुरू में 'तार सप्तक' के माध्यम से सन् 1943 में प्रकाशन-जगत में आयी और जो प्रगतिशील कविताओं के साथ विकसित होती गई तथा जिनका पर्यवसान नयी कविता में हो गया।"[164]

प्रयोगवाद का आरंभ तार सप्तक से माना जाता है, जिसमें कवियों ने प्रयोगशील, प्रयोग आदि शब्दों का उल्लेख किया है। इन कवियों के 'प्रयोग' एवं 'प्रयोगशील' शब्दों पर समकालीन आलोचकों ने करारा व्यंग्य किया है और इस पर कई टिप्पणियाँ हुई। प्रयोगवादी कवि अपनी कविताओं के साथ अपना मंतव्य भी प्रस्तुत करते रहे। अतः अज्ञेय ने 'प्रयोग' संबंधी अपनी धारणा स्पष्ट करते हुए लिखा है-"प्रयोग अपने आप में इष्ट नहीं है, वह साधन है, और दोहरा साधन है। क्योंकि एक तो वह इस सत्य को जानने का साधन है, जिसे कवि प्रेषित करता है। दूसरे वह इस प्रेषण की क्रिया को और उसके साधनों को जानने का साधन है, अर्थात् प्रयोग द्वारा कवि अपने सत्य को अधिक अच्छी तरह जान सकता है। वस्तु और शिल्प दोनों के क्षेत्र में प्रयोग फलप्रद होता है।"[165]

कवि अपनी रचना शैली शिल्प वस्तु से सत्य को जानने के साधन रूप में प्रयोग शब्द का उपयोग करते रहें किंतु इस संदर्भ में सामान्य पाठक वर्ग में कई भ्रांतियाँ फैलीं। साधारणतः प्रगतिवादी कविता से बीज ग्रहण कर यह कविता विकसित हुई और आगे चलकर अपना वैविध्य इसने दिखाया। इस संदर्भ में मुक्तिबोध का कथन उल्लेखनीय है-"किसी जमाने में प्रयोगवादी कविता प्रगतिवाद के अधिक निकट थी। किंतु प्रगतिवादियों ने उसकी खूब उपेक्षा की।"[166] इस प्रकार प्रयोगवादी काव्य, काव्य वस्तु और शिल्प के संदर्भ में नवीन अभिव्यक्ति देने वाली हिंदी की महत्वपूर्ण काव्यधारा है।

---

164 हिंदी साहित्य का इतिहास, सं.नगेंद्र-पृ.627
165 दूसरा सप्तक, अज्ञेय-भूमिका
166 समीक्षा की समस्याएँ, मुक्तिबोध-पृ.

प्रयोगवादी काव्यधारा के स्वरूप और उसकी विशेषताओं पर विचार करते हुए बच्चन सिंह ने लिखा है-"प्रयोगवाद का मूलाधार वैयक्तिकता या व्यक्तिवाद है। छायावादी वैयक्तिकता से यह इस अर्थ में भिन्न है कि पहले में भावुकता का प्राधान्य था तो दूसरे में बौद्धिकता का। यह मुख्यतः शहरी जीवन की जटिलता से संबद्ध है। इसमें यथार्थवाद नहीं यथार्थ का अमूर्तन मिलता है। आश्चर्य है कि हिंदी के मार्क्सवादी आलोचक कविता में ही यथार्थवाद खोजने लगे जबकि इसकी गुंजाइश कविता में सबसे कम होती है। प्रगतिवादी निश्चितताओं के विरुद्ध इसमें संदेह शंका व्यर्थता आदि प्रमुख बन जाते हैं। इसकी चौथी विशेषता है भाषा शैली का वैचित्र्य। इसकी प्रगतिवादी शैली स्थिर नहीं होती। शैली की स्थिरता आधुनिकता और प्रयोगवाद के विरुद्ध है। फंतासी स्वप्न, बिंब, अन्यापदेशिकता (एलेगरी) इसी भाषिक बुनावट के अनिवार्य अंग हैं।"[167] उपर्युक्त कथन से हम प्रयोगवाद के स्वरूप और उसकी प्रवृत्तियों को समझ सकते हैं। कई आलोचकों का मानना है कि प्रयोगवादी काव्य ही नयी कविता का रूप धारण करती है। इस संदर्भ में टिप्पणी करते हुए 'बच्चन सिंह' ने लिखा है-"दूसरा सप्तक (1951) के प्रकाशन के साथ प्रयोगवाद नयी कविता में रूपांतरित हो जाता है। नयी कविता नाम भी अज्ञेय का दिया हुआ है। सन् 1952 में पटना रेडियो से इन्होंने उसकी घोषणा की थी।"[168] इसी संदर्भ में 'नयी कविता' को परिभाषित करते हुए 'रामदरश मिश्र' लिखते हैं-"नयी कविता नाम स्वतंत्रता के बाद लिखी गई उन कविताओं को रूढ़ हो गया, जो अपनी वस्तु छवि और रूप छवि दोनों में पूर्ववर्ती प्रगतिवाद और प्रयोगवाद का विकास होकर भी विशिष्ट है।"[169] इससे स्पष्ट है कि प्रयोगवाद का अगला रूप नयी कविता है और दोनों आंदोलनों के कवि लगभग समान हैं, इन कवियों ने ही दोनों आंदोलनों में अपनी साहित्यिक अभिव्यक्ति दी। दोनों काव्यधाराओं की विषय-वस्तु संबंधी धारणाएँ, काव्यप्रवृत्तियाँ और अभिव्यक्ति की भंगिमा समान रूप से दिखाई देती है।

सारांशतः आधुनिक हिंदी काव्यधारा के इतिहास पर दृष्टिपात करने से हमें ज्ञात होता है कि आधुनिक हिंदी कविता की शुरुआत भारतेंदु युगीन कविता से होती है। जिसमें राष्ट्रीयता,

---

[167] हिंदी साहित्य का दूसरा इतिहास, बच्चन सिंह-पृ.421
[168] हिंदी साहित्य का दूसरा इतिहास, बच्चन सिंह-पृ.423
[169] हिंदी साहित्य का इतिहास, सं.डॉ.नगेंद्र-पृ.629

सामाजिकता, युगीन बोध आदि प्रवृत्तियाँ मिलती हैं और अपने युग को जीवन की यथार्थवत्ता की पहचान कराती हुई नवजागरण की चेतना का संचार करती है। द्विवेदी युगीन कविता अपनी अंतर्वस्तु में पुनर्जागरण का भाव लिए हुए आगे बढ़ती है और इसमें भी राष्ट्रीयता, सामाजिकता, मानवता की चेतना आदि प्रवृत्तियाँ दिखाई देती हैं और भाषा के प्रयोग पर बल देते हुए आगे बढ़ती है। छायावादी कविता आधुनिक हिंदी कविता का स्वर्णयुग है जिसमें अज्ञात प्रियतम के प्रति अभिव्यक्ति के साथ अनेक नवीन एवं उदात्त भावनाओं का रूप दिखाई देता है। साथ ही विपुल काव्य लेखन इसी युग में हुआ। आधुनिक दर्शन से प्रभावित कवियों की मार्क्सवादी चेतना की अभिव्यक्ति हमें प्रगतिवादी काव्यांदोलन में दिखाई देती है जिसमें जीवन के यथार्थ अभिव्यक्ति के साथ सर्वहारा समाज का चित्रण अंकित है। प्रयोगवादी काव्य अपनी विषय वस्तु और शिल्प विधान में नवीन खोज करते हुए अग्रसर होकर नयी कविता के रूप में रूपायित होती है। अतः आधुनिक हिंदी कविता के यह पांच सोपान अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं जिसमें कविता ने साहित्य और समाज के सरोकारों का संबंध स्थापित करते हुए युग चित्र प्रस्तुत किया है।

3.2 आधुनिक हिंदी कविता के इतिहास में 'नई कविता' का स्थान

आधुनिक हिंदी कविता के इतिहास में 'नई कविता' अपनी पूर्ववर्ती और परवर्ती साहित्यधारा में अपना महत्वपूर्ण स्थान रखती है। नई कविता अपनी विचारधारा, उदय, विकास और पूर्ववर्ती साहित्य से प्रभाव ग्रहण कर अपनी नई विचारधारात्मक विकासयात्रा में आगे बढ़ती है और अपनी विशिष्ट संज्ञा रूप 'नयी कविता' से वह अपनी युगीन साहित्य से अलग विचारधारा अभिव्यक्ति देते हुए प्रवाहित होती है। साथ ही इस धारा के प्रभाव स्वरूप परवर्ती साहित्य में अनेक विचारधारात्मक आंदोलनों का विकास होता है। नई कविता अपने नाम स्वरूप ही एक अलग साहित्यिक अवदान प्रतिपादित करती है।

साहित्य की धारा अनवरत रूप से विकसित एवं प्रवाहित होती रहती है और वह अपने युगबोध, युगीन विचारों की श्रृंखला को अपने भीतर समाहित करते हुए युगीन संवेदना, विचार को अभिव्यक्त करती है। नई कविता अपने उदय, प्रणेता, विकास के सोपान, विचारधारा, प्रवृत्तियों की दृष्टि से आधुनिक हिंदी कविता में अपना अन्य काव्यांदोलनों से अलग स्थान रखती है।

नई कविता की अर्थ, अवधारणा, उदय, प्रणेता आदि के बारे में विस्तृत विवेचन प्रथम अध्याय में किया गया है। अतः यहाँ हम नई कविता का 'आधुनिक हिंदी कविता में स्थान' का विवेचन करेंगे। साधारणतः 1945 से 1960 के युग में लिखे गए साहित्य को नवलेखन युग का साहित्य कह सकते हैं। 1936 'प्रगतिशील लेखक संघ' के अधिवेषण से नए प्रवृत्तियों और अभिव्यक्तियों के साहित्य की नींव रखी गई और प्रेमचंद इस आंदोलन के महत्वपूर्ण नेता थे।

हिंदी साहित्य में नवलेखन का आरंभ रामस्वरूप चतुर्वेदी 'न्यु राइटिंग' से मानते हैं। उनके अनुसार-"हिंदी साहित्य के इस संदर्भ में नवलेखन आधुनिकता का एक रचनात्मक दृष्टिोण लेकर प्रविष्ठ तथा प्रतिष्ठित होता है... हिंदी नवलेखन की साहित्यिक पृष्ठभूमि का संदर्भ तब तक अधूरा रहेगा जब तक अंग्रेज़ी तथा युरोपियन नवलेखन की रूपरेखा नहीं समझ ली जाती।"[170] इस कथन के आलोक में विचार करने पर हम कह सकते हैं कि नयी कविता आंग्ल, युरोपिय, नवलेखन के विचार से प्रभावित हिंदी साहित्य में साहित्यिक विचारधारा का परिवर्तन है। कोई भी साहित्य अपने युगीन विचारों के साथ सामंजस्य बनाते हुए 'ग्रहण और त्याग' करते हुए आगे प्रवाहित होती है। वह उसकी जीवंतता का प्रमाण है, अतः साधारण रूप से विविध मंतव्यों पर विचार करने से हम समझ सकते हैं कि हिंदी नवलेखन की परंपरा पाश्चात्य साहित्यधारा के नवीन विचारों से प्रभावित है और यह प्रभाव भी ग्रहनता के रूप में मौलिक है। इसी संदर्भ में वे आगे लिखते हैं-"नयी कविता हिंदी नवलेखन का प्रवेश द्वार रही है। वास्तविकता तो यह है कि हिंदी नवलेखन के मौलिक तत्व अब भी नयी कविता में ही सबसे अधिक द्रष्टव्य हैं। प्रयोगवाद प्रमुखतः कविता का आंदोलन था जो बाद में 'नयी कविता' में परिणत हो गया। और फिर नयी कविता के प्रवाह ने धीरे-धीरे नवलेखन का रूप धारण कर लिया। "[171]

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर यह स्पष्ट है कि आधुनिक हिंदी कविता के विविध मोड़ पर कविता अपनी साहित्यिक नवीन दृष्टि पर बल देती है और यह दृष्टि, विचारधारा नवलेखन में

---

[170] हिंदी नवलेखन, रामस्वरूप चतुर्वेदी-पृ.17-18
[171] हिंदी नवलेखन, रामस्वरूप चतुर्वेदी-पृ.40

परिणत होती है और इस अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम नयी कविता के रूप में उभर आता है। आधुनिक हिंदी कविता के इतिहास पर विचार करने से हम पाते हैं कि नयी कविता आधुनिक नवलेखन का प्रमुख आधार और अभिव्यक्ति का माध्यम है।

आधुनिक हिंदी कविता पर विचार करते हुए हमें ज्ञात होता है कि 'नयी कविता' एक ऐसा काव्यांदोलन है जो प्रथमतः एक अलग प्रयोगवादी विचारधारा से आरंभ होकर उसकी परिणति नवीन काव्यांदोलन के रूप में हुई। ऐतिहासिक क्रम विकासक्रम की दृष्टि से हिंदी नवलेखन का घनिष्ठ संबंध प्रगतिवाद तथा प्रयोगवाद से रहा है।"[172] इस संदर्भ में नयी कविता, प्रयोगवाद को ध्यान में रखकर बच्चन सिंह लिखते हैं-"दूसरा सप्तक (1951) के प्रकाशन के साथ ही प्रयोगवाद की रूपवादी रुझान के विरुद्ध कथ्य और रूप में संतुलन स्थापित करने की दृष्टि से कविता को नयी कविता नाम दिया गया। 'तीसरा सप्तक' की रचनाओं को उसके संपादक अज्ञेय ने नयी कविता ही कहा। वास्तविकता यह है कि प्रयोगवाद ही संतुलन की खोज में 'नयी कविता' हो जाता है। दूसरे शब्दों में प्रयोगवादी कविता का स्वाभाविक विकास नयी कविता है। छठा दशक नयी कविता का दशक है।"[173] सुधीश पचौरी नयी कविता संबंधी विवेचन करते हुए इसकी काल सीमा 1940 से मानते हैं। उनके अनुसार- "परवर्ती नयी कविता संबंधी अध्ययनों ने भी ऐसा माना है कि सन् 1940 के आसपास नयी कविता के स्फुट बीज पड़े।"[174] रामस्वरूप चतुर्वेदी नयी कविता का आरंभ नयी कविता (1954) से मानते हैं। "[175]

इन कथनों के आलोक में हम समझ सकते हैं कि नयी कविता के आरंभ के संबंध में विविध विद्वानों के विविध मत-प्रवाह हैं तथा नयी कविता के स्वरूप पर भी विवाद की स्थिति है। अतः अध्ययनोपरांत ज्ञात होता है कि हिंदी कविता के इतिहास में नयी कविता का काल नवीन विचारधारा का काल था और एक व्यापक कालखंड के विचार-विमर्श का परिणाम नयी कविता है। हिंदी साहित्य

---

[172] हिंदी नवलेखन, रामस्वरूप चतुर्वेदी-पृ.30

[173] आधुनिक हिंदी आलोचना के बीज शब्द-बच्चन सिंह-पृ.52

[174] नयी कविता का वैचारिक आधार, सुधीश पचौरी-पृ.11

[175] हिंदी साहित्य और संवेदना का इतिहास, रामस्वरूप चतुर्वेदी-पृ.234

में व्यापक, नवीन विचारधाराओं का सूत्रपात करने का श्रेय नयी कविता को है जिसने केवल वैचारिक धरातल पर ही नहीं साहित्यिक मानदंडों के आधार पर नवीनता का सूत्रपात किया और साहित्य को नए पथ पर अग्रसर किया। इस संदर्भ में इसकी पृष्ठभूमि भी महत्वपूर्ण थी। नयी कविता के संदर्भ में जवरीमल पारख का निम्न कथन सटीक लगता है-"द्वितीय विश्वयुद्धोत्तर अंतर्राष्ट्रीय और स्वातंत्र्योत्तर राष्ट्रीय परिदृश्य से अभिन्न रूप से संपृक्त 'नयी कविता' आंदोलन अपने लगभग पंद्रह वर्षों के काल में विभिन्न विचारधाराओं, जीवन मूल्यों, सामाजिक यथार्थ के विभिन्न रूपों और काव्य की विभिन्न शैलियों को अपने में समेटता हुआ विकसित होता रहा। स्वतंत्र भारत का यह काल अत्यन्त महत्वपूर्ण है। देश राजनीतिक आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक सभी क्षेत्रों में एक नए युग में प्रवेश कर रहा था। दासता की जंजीरों से मुक्त होने का गहरा अनुभव एक ओर था तो दूसरी ओर नवनिर्माण के स्वप्न भी आँखों में संजो रखे थे।"[176] हिंदी साहित्य के इतिहास में नवकविता का आरंभिक अवदान इससे स्पष्ट होता है। नयी कविता आधुनिक युग के नवीन वैचारिक आंदोलन का प्रतिफलन थी जो समाज से साहित्य की ओर एक नई जीवन दृष्टि के रूप में विकसित हुई। नयी कविता की रचना के समय जिन बौद्धिक विचारों का नया उन्मेश हुआ उनमें सहानुभूति, लघु मानव की कल्पना, काव्य में अर्थ लय की व्याप्ति, विश्व मानव का स्वरूप, वैयक्तिकता और सामाजिकता का समन्वय आदि आते हैं। सह अनुभूति पर जगदीश गुप्त ने विस्तार से विचार किया है। ऋषि-दृष्टि की तटस्थता पर बल देकर उन्होंने नयी कविता को एक ऐसी विधा माना है "जो प्रज्ञा को विचलित किए बिना विवेक को जागृत अवस्था में भावक को यथार्थ अनुभूति के तल तक पहुँचा देने की क्षमता रखती हो। यही विद्या काव्य शास्त्रोक्त 'रसानुभूति' से नयी कविता की भावानुभूति को मूलतः पृथक् कर देती है। रसानुभूति के समकक्ष इसे सहअनुभूति की संज्ञा दी जा सकती है।"[177]

नयी कविता अपने युगबोध के साथ-साथ अपनी अन्तर्वस्तु में साहित्यिक कला पक्ष को भी केंद्र में रखते हुए अग्रसर होती है। नयी कविता पर पाश्चात्य प्रभाव रहा और कवि नवीन

---

[176] नयी कविता का वैचारिक परिप्रेक्ष्य, जवरीमल्ल पारख-पृ.

[177] नयी कविता ःस्वरूप और समस्याएँ, जगदीश गुप्त-94

विचारधाराओं से प्रभावित होकर अपनी अभिव्यक्ति देते रहे। इस संदर्भ में नयी कविता की विचारधारा पर दृष्टिपात करते हुए 'जवरीमल्ल पारख' लिखते हैं-"नयी कविता के व्यक्तिवादी रचनाकारों के चिंतन पर अस्तित्ववाद का भी व्यापक प्रभाव रहा। औद्योगीकरण और मशीनीकरण का विरोध, विज्ञान के प्रति संदेह, जनता को भीड़ समझना, क्षणिक अनुभूति पर बल देना, मानव की लघुता को महिमामंडित करना, सास्कृतिक संकट का राग अलापना, अस्तित्ववादी प्रभाव के सूचक थे। इसी संदर्भ में नयी कवितावादियों पर आधुनिकता के प्रभाव को देखा जाना चाहिए। आधुनिकतावाद एक ओर मध्ययुगीन जीवन-मूल्यों के विरोध में स्वस्थ पूंजीवादी मूल्यों की स्थापना का प्रयास था तो दूसरी ओर यह वैज्ञानिक दृष्टि औद्योगिक सभ्यता व जनचेतना के विरोध द्वारा यथास्थिति का पक्षधर भी था।"[178] इस संदर्भ में रामवचन राय का कथन द्रष्टव्य है-"नयी कविता पर औद्योगीकरण का काफी प्रभाव पड़ा। बल्कि नई कविता का जो परिवेश है, वह औद्योगिक सभ्यता से ही उत्पन्न हुआ है। मनुष्य का जीवन दिनों-दिन यांत्रिक और तनावपूर्ण होता जा रहा है। जिंदगी की रेल-पेल और भागदौड़ में ह्दय की कोमल वृत्तियाँ कुंठित होती जा रही हैं नई कविता में इस यांत्रिक जीवन की खुलकर अभिव्यक्ति हुई है।"[179] आधुनिकता की विचारधारा से प्रभावित नई कविता अपने स्वरूप में यथार्थवादी और वर्तमान अभिव्यक्ति को प्रधानता देती है। नयी कविता की भावधारा पर विचार करते हुए 'शिवदान सिंह' का मंतव्य है कि-"पिछले कुछ समय से नई कविता के समर्थन में एक नया तर्क दिया जाने लगा है, वह यह है कि नवीन कविता, वादों के आग्रह को छोड़कर मानवीय स्तर पर आ रही है। समर्थकों ने इसे काव्य में नये मानवतावाद का नाम दिया है। साहित्य में मानवतावाद और मानवतावाद के अर्थ को द्योतन करने वाले दो शब्द प्रचलित हैं। मानवतावाद का पर्याय ह्युमेनीटेलिझम है जिसमें इब्सन आदि परिगणित होते हैं, जिन्होंने मनुष्य की संपूर्ण वृत्तियों का-उसकी संपूर्ण शक्ति और दुर्बलता का निस्संग चित्रण किया है।"[180] नयी कविता की कथ्य भंगिमा पर विचार करते हुए 'प्रभाकर' लिखते हैं-'नयी कविता की यह अत्यन्त महत्वपूर्ण विशेषता है कि

---

[178] नयी कविता का वैचारिक परिप्रेक्ष्य, जवरीमल्ल पारख-पृ.VII

[179] नई कविता उद्भव और विकासः रामवचन राय-पृ.57

[180] हिंदी साहित्य, बीसवीं शताब्दी, शिवदान सिंह चौहान-पृ.220

इस धारा में कथ्य का वैविध्य हिंदी की अन्य किसी भी काव्यधारा की तुलना में सबसे अधिक है। यह कवियों के आंतरिक वैविध्य और सृजनान्वेषण का प्रमाण है कि नये कवि ने कथ्य के नए नए क्षेत्रों और अनेकानेक रंग स्पर्शों से, अपने काव्य जगत को सदा ताजा और पुलकित बनाए रखा। अगर किसी युग में कथ्य के स्तर पर एक-सा पन दिखाई दे तो मानना चाहिए कि या तो कवियों के रिश्ते किसी साहित्य या साहित्येतर अनुशासन से है या उनमें छद्म अनुकृति पनप रही है अथवा अपने परिवेश और अंतर्जगत से उनका संबंध गड़बड़ाए हुए है या वे कोई काष्ट या संप्रदाय का निर्माण करना चाहते हैं। सौभाग्यवश नए कवियों के साथ सामान्यतया ऐसी दुर्घटनाएँ नहीं घटी। तार सप्तक में ही उनकी रुचियों, काव्य प्रवृत्तियों, शिल्प विधानों और सर्जनात्मक विकल्पों के बारे में खासा वैविध्य देखा गया था, जो निरंतर बढ़ता रहा। यही कारण है कि नयी कविता के बीत जाने के बाद भी इसका कोई बड़ा कवि अप्रासंगिक नहीं हुआ।"[181] इस विवेचन से स्पष्ट है कि नयी कविता अपनी युगीन काव्यधारा से समरस काव्यधारा है और वह परंपरा का अवदान ग्रहण करते हुए अपनी नवीन अभिव्यक्ति देती है। और वह अभिव्यक्ति विविधांगी दृष्टिकोण से भिन्न होते हुए भी अपनी विचारधारा से सभी को समाहित करती चलती है। नयी कविता का विषय वैविध्य व्यापक है और हिंदी कविता को इस विषय वैविध्य से जोड़ने का कार्य नयी कविता के माध्यम से हुआ। वह व्यापक मानवतावाद को आधार बनाकर चलती है। इसीलिए लघुमानव के साथ तथा उसके जीवनानुभव के साथ संयुक्त है। अतः नयी कविता का इस संदर्भ में महत्वपूर्ण योगदान है कि उसने कविता को विविध विषयों से जोड़ा।

नयी कविता को साधारण मानव की आस्था-अनास्था का चित्र कहा जाता है। नयी कविता ने अपनी विषय वस्तु को साधारण जन जीवन से लेकर महानगरों के वैविध्यमयी जीवन से जोड़ा। इसमें मानव की संपूर्ण शक्ति और आस्था विश्वास को संजोने की कोशिश की गई। नयी कविता की विचार दृष्टि पर ‘देवी शंकर अवस्थी’ का मंतव्य महत्वपूर्ण है। उनके अनुसार "नयी कविता में केवल आस्था ओर साहस, विश्वास और संकल्प ही होते तो मुझे वह अधिक अपूर्ण लगती। उसमें अनास्था

---

[181] मधुमति, सं.दयाकृष्ण विजय, वर्ष 16, अंक 10, अक्तू 1977

भी है और शंकाकुलता भी। बात केवल शक्ति की है। शक्तिपूर्ण अनास्था काव्य के लिए अनुपेक्षणीय है।"[182]

नयी कविता की पृष्ठभूमि पर विचार करते हुए अनेक विद्वान इस बात पर सहमत हैं कि नयी कविता द्वितीय महायुद्ध से उत्पन्न विध्वंस और स्वतंत्रता आंदोलन से मोहभंग की स्थिति में पलते हुए मानव-हृदय को अभिव्यक्त करती है और इस स्थिति को अभिव्यक्त करने के लिए वह विविध उपमान, अलंकरण, बिंब एवं प्रतीकों का नवीन भावबोध के आधार पर चयन करती है। उसकी अभिव्यक्ति प्रणाली एवं विषय वस्तु में लघु-से-लघुतम चीज़ भी महत्वपूर्ण है। और इन चीज़ों को देखने का साहित्यिक दृष्टिकोण भी नवीन विचार दर्शनों से प्रभावित है। नयी कविता आधुनिक हिंदी कविता के इतिहास की वह प्रथम धारा है जिसने महानता को देखते हुए लघुता का प्रतिपादन, गुनगान और उसकी महिमा को अभिव्यक्त किया। नयी कविता की यह भावधारा व्यापक और मानवतावादी धरातल पर निर्भर लगती है। नयी कविता और समस्त कविता के इतिहास पर टिप्पणी करते हुए 'रामस्वरूप चतुर्वेदी' लिखते हैं-"नयी कविता में मनुष्य और उसके समग्र अनुभव को पकड़ने का यत्न हुआ है। यों मनुष्य को उसकी संपूर्णता में देखने और समझने की प्रतिज्ञा हर नए वैचारिक और रचना-आंदोलन ने की है। 15 वीं शती के युरोपीय पुनर्जागरण से लेकर 20 वीं शती की हिंदी छायावादी कविता तक पुनर्जागरण का प्रधान बल समग्र मनुष्य (होल मैन) की धारणा पर था, और आधुनिक हिंदी कवि भी कहता है कि जाति वर्ण संस्कृति समाज से 'मूल व्यक्ति' को फिर से चाल कर निकाला जाए...।[183] "नयी कविता संपूर्ण जीवन की कविता है, केवल महिमाशाली अंशों तक वह अपने को सीमित नहीं रखती।"[184] नयी कविता की व्यापकता पर बल देते हुए मुक्तिबोध लिखते हैं- "नयी कविता के विभिन्न कवियों की अपनी-अपनी विशेष शैलियाँ है। इन शैलियों का विकास अनवरत है। नयी कविता में स्वयं कई भावधाराएँ हैं, एक भावधारा नहीं।"[185]

---

[182] आलोचना का द्वंद्व, देवीशंकर अवस्थी-पृ.26

[183] हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास, रामस्वरूप चतुर्वेदी-पृ.234

[184] हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास, रामस्वरूप चतुर्वेदी-पृ.236

[185] नई कविता का आत्मसंघर्ष तथा अन्य निबंध, ग.मा.मुक्तिबोध-पृ.10

सारांशतः नयी कविता अपने पूर्ववर्ती कविताओं से विचार, भाव दृष्टि, अभिव्यक्ति प्रणाली भाषा के आधार पर भिन्न है। और यह भिन्नता युगीन परिस्थितियों से परिचालित है। नई कविता की भाषा का मुहावरा अभिव्यक्ति के लिए आसान था। अतः साधारण जन भाषा का चुनाव किया गया जिसमें कहीं कहीं गद्यप्रायता, सपाट बयानी दिखाई देती है। "नई कविता में आंतरिक लयवत्ता का अभाव आत्यंतिक हो गया।"[186] नई कविता अपने युगीन बोध के आधार पर मानव के हृदय की संचित अनुभूतियों को अभिव्यक्त कर रही थी और इस अभिव्यक्ति के रूप नवीन थे। हिंदी कविता को नवीन अधुनातन दर्शन एवं भावभूमि को जोड़ने का कार्य नयी कविता आंदोलन ने किया जिसमें मानव एवं लघु मानव के समस्त पीड़ा भाव को अभिव्यक्ति दी गई जिसमें कुंठा, संत्रास, विडंबना आदि समस्त रूप विद्यमान हैं। नई कविता का दौर इसलिए भी महत्वपूर्ण है कि साहित्यालोचन के मानदंड नवीन भावधारा के आधार पर निर्माण किए गए काव्य समीक्षा के आधार पर नई कविता के आक्षेप, आरोप-प्रत्यारोप से व्यापक रूप से विचार विमर्श किया गया जो हिंदी आलोचना के लिए महत्वपूर्ण उपलब्धि रही। हिंदी कविता के ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में नयी कविता में अधिक विचार मंथन हुआ जिससे नवीन दर्शनों से साहित्यिक अभिव्यक्ति हुई। नयी कविता ने आधुनिक जीवन के समग्र रूपों के बृहत्तर संदर्भ में व्यक्ति के विवेकपूर्ण अस्तित्व को पूरी प्रतिष्ठा देते हुए, परंपरा की मिटती अर्थवत्ता को अस्वीकार करते हुए एक अन्वेषी का दृष्टिकोण लेकर कविता के शिल्प और वस्तु दोनों क्षेत्रों में महत्वपूर्ण उपलब्धियों को हासिल किया। जिसका आधुनिक कविता के अन्य कालखड एवं आंदोलनों में अभाव रहा। नयी कविता पर विचार करते हुए 'विश्वनाथ त्रिपाठी' लिखते हैं-"नयी कविता में सभी वादों से मुक्ति और लघुमानव के महत्व की प्रतिष्ठा की गई है। इस प्रवृत्ति से यह अवश्य हुआ कि व्यक्ति की सामान्य मनस्थितियों को अभिव्यक्त करने वाली कुछ ऐसी कविताएँ लिखी गईं जो सचमुच नई थी। नई कविता के कवि मध्यवर्गीय व्यक्ति के मन की जटिलताओं को अधिक अपनाने से प्रकट करते हैं।"[187] अतः स्पष्ट है कि वाद हीन और लघु मानव पर दृष्टि केंद्रित

---

[186] नई कविता : सीमाएँ और संभावनाएँ, गिरिजा कुमार माथुर-पृ.25
[187] हिंदी साहित्य का इतिहास, विश्वनाथ त्रिपाठी-पृ.125

कविता इससे पहले किसी काव्यांदोलन में इतने व्यापक फलक पर नहीं लिखी गई। इस साहित्यिक अवदान का श्रेय नयी कविता को ही है। नयी कविता का हिंदी साहित्य में स्थान केंद्रित करने के लिए अंतिमतः जगदीश गुप्त का यह कथन महत्वपूर्ण है जिससे नयी कविता की शक्ति का परिचय होता है-"भारत वर्ष में नई चेतना की अवधारणा कैसे हो, नया युग कैसे लाया जाए, नयी कविता इस समस्याग्रस्त चितन और तदनुप्रेरित संवेदनाका संवहन करती है। नयी कविता मूलतः मानवतावादी है, क्योंकि मानव जीवन को सार्थकता न प्रदान करने वाले तत्वों पर व्यंग्य प्रहार करना वह अपना मनुष्य कर्तव्य समझती है। मनुष्य के सहज अनुभव के प्रति इसका ग्रहण भाव है, तथा युग की जटिलताओं के प्रति दायित्वभाव। उपेक्षा या तिरस्कार केवल उन के प्रति है जो जीवन को पुरानी या नयी रूढ़ियों में बाँध देना चाहते हैं। जीवन के निजी स्वरूप में एक स्वाभाविक शक्ति रहती है जो बाह्य कृत्रिमता के नीचे दब जाती है। कवि, कलाकार इसको निरंतर मुक्त करता चलता है, तथा इसके मूल चारुत्व पर मुग्ध होना इसका सहज धर्म है। नया कवि तो विशेषतः अंतरंग जगत तक पहुँच कर इसके सत्यों का निजी संवेदन के साथ उद्घाटन करता रहा है।"[188]

* * *

[188] नयी कविताःस्वरूप और समस्याएँ-पृ.38, 39

चतुर्थ अध्याय

नई कविता के प्रमुख कवि एवं उनकी काव्य विषयक मान्यताएँ

चतुर्थ अध्याय

नई कविता के प्रमुख कवि एवं उनकी काव्य विषयक मान्यताएँ

4.1 सच्चिदानंद हीरानंद वात्सायण-‘अज्ञेय’

4.2 गजानन माधव मुक्तिबोध

4.3 गिरिजा कुमार माथुर

4.4 धर्मवीर भारती

4.5 सर्वेश्वर दयाल सक्सेना

4.6 भवानी प्रसाद मिश्र

4.7 शमशेर बहादुर सिंह

4.8 प्रभाकर माचवे

4.9 केदारनाथ सिंह

4.10 सुमन राजे

चतुर्थ अध्याय

नई कविता के प्रमुख कवि एवं उनकी काव्य विषयक मान्यताएँ

साहित्य आत्माभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम है, साहित्य के माध्यम मासेकर व्यक्ति अपनी आत्मानुभूति, संवेदना को अभिव्यक्ति देता है। व्यक्ति समाज में केवल इकाई न होकर उसी का एक सचेत रूप है और अपनी वैचारिक, मानसिक, भावनात्मक प्रतिक्रिया के मंथन का साररूप साहित्य के माध्यम से अभिव्यक्त करता है। इस अभिव्यक्ति पर देश, काल और वातावरण का प्रभाव होता है। देश काल और वातावरण से उसकी वैचारिक क्रिया-प्रतिक्रिया होती है। इस क्रिया-प्रतिक्रिया में वह प्रभाव ग्रहण करता है और प्रभावित भी करता है। युगानुरूप समाज संस्कृति एवं व्यक्ति की विचारधारा में परिवर्तन होता है और इस परिवर्तन की चेतना के आधार से उसकी वैचारिक मानसिक स्थिति और अभिव्यक्ति की भंगिमा में भी परिवर्तन आता है। शायद इसी प्रक्रिया को आधार मानकर रामचंद्र शुक्ल जी ने कहा कि "प्रत्येक देश का साहित्य वहाँ की जनता की चित्तवृत्ति का संचित प्रतिबिंब होता है, तब यह निश्चित है कि जनता की चित्तवृत्ति के परिवर्तन के साथ-साथ साहित्य के स्वरूप में भी परिवर्तन होता चला जाता है।"[189] इस कथन के आलोक में स्पष्ट है कि हिंदी साहित्य की धारा इसी चित्तवृत्ति के परिवर्तन का दिग्दर्शन करती है। आधुनिक युग की गतिशील विचारधारा ने मानव के वैचारिक आयामों को व्यापक बनाया और इस के परिणामस्वरूप मानव की वैचारिक स्थितियाँ बदलती गई और उसकी अभिव्यक्ति हम साहित्य में देख सकते हैं। आधुनिक हिंदी साहित्य की काव्यधारा का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि यह काव्यधारा गतिशील और परिवर्तन की

---

[189] हिंदी साहित्य का इतिहास, काल विभाग, रामचंद्र शुक्ल-पृ.21

अनुगामिनी है। भारतेंदु युग से लेकर प्रयोगवाद तथा नई कविता तक कविता की वस्तु और रूप तथा वैचारिक आधारों में अनेक परिवर्तन हुए हैं। मानव मन की वैचारिक गतिशीलता इसमें दिखाई देती है। इसी परिवर्तन का प्रतिबिंब कविता में दिखाई देता है।

रचना और रचनाकार का संबंध अत्यन्त महत्वपूर्ण होता है, रचनाकार अपनी वैचारिक स्थिति और संवेदना को रचना में अभिव्यक्त करता है। यह स्थिति सृजनात्मक साहित्य में अनिवार्य रूप से दिखाई देती है। अतः रचना और रचनाकार का संबंध अन्योन्याश्रित है। आधुनिक हिंदी काव्यधारा पर दृष्टिपात करने से भी यही बात अधिक पुष्ट होती है। भारतेंदु युगीन सामाजिक परिस्थितियाँ, समाज सुधार, राष्ट्रीयता की थी। यही भावतत्व समाजसुधारक, साहित्यकारों में था। उनकी रचनाओं में भी इसी की अभिव्यक्ति हुई। यही भाव युगानुरूप वैचारिक परिवर्तन के साथ द्विवेदी युग, छायावाद, प्रगतिवाद, प्रयोगवाद एवं नयी कविता में दिखाई देता है। प्रयोगवाद तथा नई कविता की युगीन परिस्थितियाँ तथा राजनीतिक, सामाजिक, साहित्यिक विचारधारा का प्रभाव रचनाकारों की विचारधारा पर पड़ा और उसी परिवर्तित विचारधारा के आधार पर उन्होंने नई अभिव्यक्तियाँ दीं। रचना और रचनाकार के अंतःसंबंधों को ध्यान में रखते हुए हम नई कविता के प्रमुख चर्चित कवियों का परिचय लेंगे।

4.1 सच्चिदानंद हीरानंद वात्सायण-'अज्ञेय'

अज्ञेय का जन्म 7 मार्च 1911 ई. को कुसपा (कुशीनगर) के पुरातत्त्व खुदाई शिविर में हुआ। पिताश्री हीरानंद शास्त्री प्रसिद्ध पुराविद थे जिनके स्थानांतरण के कारण अज्ञेय का बचपन अव्यवस्थित रहा और लखनऊ, श्रीनगर, जम्मू, नालंदा उटकमंड आदि स्थानों में बीता। अज्ञेय की शिक्षा स्कूल के स्थान पर घर से आरंभ हुई जहाँ संस्कृत, फारसी, अंग्रेज़ी पढ़ाने का प्रबंध किया गया। लालेर के फॉरमन कॉलेज से बी.ए. करने के पश्चात् सन् 1929 में अज्ञेय ने एम.ए.अंग्रेज़ी में प्रवेश लिया। इन दिनों तक वे हिंदुस्तान-सोशलिस्ट रिपब्लिक आर्मी के प्रमुख सदस्यों आज़ाद, भगवतीचरण बोहरा और सुखदेव से परिचित हो चुके थे और उनका क्रांतिकारी आंदोलन की ओर सम्मान बढ़ता जा रहा था। इसी सिलसिले में 15 नवंबर 1930 को इन्हें कैद कर लिया गया और थोड़े बहुत अंतराल के होते हुए भी सन् 1934 तक जेलों में रहे। जेल जीवन यातनाप्रद होते हुए भी

अज्ञेय के लिए इस दृष्टि से हितकारी रहा कि इन्होंने इस अवधि में अनेक विषयों के ग्रंथों का पारायण करते हुए स्वयं भी कहानी, कविता और उपन्यास लिखने का श्रीगणेश किया।

वैयक्तिक दृष्टि से अज्ञेय का जीवन विफल ही कहा जाएगा। सन् 1940 में इनका सिविल पद्धति से प्रथम विवाह हुआ था और सन् 1956 में दूसरा। किंतु यायावरी प्रवृत्ति के कारण अज्ञेय को दोनों में से कोई भी पत्नी अपने आकर्षणपाश में निबद्ध नहीं कर सकी। "सन् 1943 में सेना में भरती हुए और कोहिमा-फ्रंट पर नियुक्त किए गए। 'नदी के द्वीप' के भुवनमोहन के युद्ध संबंधी विवरणों पर इस प्रत्यक्ष अनुभव का प्रमाण है।"[190]

सन् 1955 में अज्ञेय प्रथम बार युनेस्को गए और बाद में तो वे किसी-न-किसी पाश्चात्य अथवा पूर्वी देश की यात्रा पर जाते रहे-सन् 1957 में जापान और फिलिपीन गए-तो सन् 1961 से 1964 तक अमरीका में कैलिफोनिया विश्वविद्यालय में भारतीय संस्कृति और साहित्य के अध्यापक रहे। सन् 1966 में अज्ञेय ने रूमानिया, युगोस्लाविया, रूस और मंगोलिया की यात्राएँ की थी।

बहुमुखी प्रतिभा के धनी अज्ञेय ने संपादन के क्षेत्र में कीर्तिमान स्थापित किए हैं। सन् 1943 में 'तार सप्तक' के रूप ग.मा.मुक्तिबोध, गिरिजाकुमार माथुर, नेमिचंद्र जैन, रामविलास शर्मा, प्रभाकर माचवे और भारतभूषण अग्रवाल की चुनी हुई कविताएँ हिंदी जगत् के सम्मुख प्रस्तुत की और प्रयोगवादी काव्यांदोलन के पुरोधा कहलाए। सन् 1951 में 'दूसरा सप्तक' और सन् 1959 में 'तीसरा सप्तक' के माध्यम से 14 अन्य कवियों की रचनाओं का संपादन करने के साथ-साथ वे 'प्रतीक', 'पाटल' और 'दिनमान' नामक पत्रिकाओं के कुशल संपादक के रूप में ख्याति अर्जित कर चुके थे।

रचना संसार

अज्ञेय हिंदी साहित्य के चर्चित रचनाकार रहे हैं, विविध साहित्यिक विधाओं में वैचारिक सृजनात्मक लेखन कर उन्होंने हिंदी साहित्य की विपुल श्री वृद्धि की है। अज्ञेय के साहित्यिक लेखन

---

[190] नयी कविता के प्रतिनिधि कवि, डॉ.राजपाल शर्मा

पर आधुनिक विचारधाराओं का प्रभाव दिखाई देता है। साथ ही वह भारतीय संस्कृति और सभ्यता से अपना संपृक्ती भाव रखता है। अज्ञेय की प्रकाशित चर्चित रचनाओं का विवरण निम्नलिखित है-

कविता

भग्नदूत (1933), चिंता (1942), इत्यलम (1946), हरी घास पर क्षण भर (1949), बावरा अहेरी (1954), इंद्रधनु रौंदे हुए ये (1957), अरी ओ करुणा प्रभामय (1959), आँगन के पार द्वार (1961), पूर्वा (1965), सुनहले शैवाल (1965), कितनी नावों में कितनी बार (1967), क्योंकि मैं उसे जातना हूँ (1969), सागर मुद्रा (1970), पहले मैं सन्नाटा बुनता हूँ (1973), महावृक्ष के नीचे (1977), नदी की बाँक पर छाया (1982), प्रिज़न डेज ॲन्ड अदर पोयम्स (अंग्रेज़ी में) (1946)

नाटक

उत्तर प्रियदर्शी (1967)

कहानियाँ

विपथगा (1937), परंपरा (1944), कोठरी की बात (1945), शरणार्थी (1948), जयदोल (1951), ये तेरे प्रतिरूप (1961), अमर वल्लरी तथा अन्य कहानियाँ (1954), कड़ियाँ और अन्य कहानियाँ (1957), अछूते फूल और अन्य कहानियाँ (1960), जिज्ञासा और अन्य कहानियाँ (1965), छोड़ा हुआ रास्ता (संपूर्ण कहानियाँ-भाग-1) (1975), लौटती पगडंडियाँ (संपूर्ण कहानियाँ भाग-2) (1975)

उपन्यास

शेखरः एक जीवनी, प्रथम भाग-1941-लश्विस

शेखरः एक जीवनी, द्वितीय भाग 1944

नदी के द्वीप 1952

अपने-अपने अजनबी-1961

यात्रा वृत्तांत-अरे यायावार रहेगा याद (1953)

एक बुंद सहसा उछली (1960)

निबंध संकलन

त्रिशंकु (1945), सबरंग (1946), आत्मनेपद (1960), हिंदी साहित्यःएक आधुनिक परिदृश्य (1967), सबरंग और कुछ राग (1969), आलवाल (1971), लिखि कागद कोरे (1972), भवंती (1972), अंतरा (1975), अद्‌यतन (1977), जोग लिखी (1977), संवत्सर (1978), स्रोत और सेतु (1978), शाश्वती (1979), व्यक्ति और व्यवस्था (1979), अपरोक्ष (1979), युगसंधियों पर (1981), धार और किनारे (1982), कहाँ है द्वारका (1982), आत्मपरक (1983), छाया का जंगल (1984), केंद्र और परिधि (1984), सर्जना और संदर्भ (1985)

संपादित ग्रंथ

आधुनिक हिंदी साहित्य (1942), तार सप्तक (1943), दूसरा सप्तक (1943), तीसरा सप्तक (1959), चौथा सप्तक (1978), पुष्करिणी संपूर्ण (1959), पुष्करिणी भाग-2 (कविता संग्रह) (1953), नेहरू अभिनंदन ग्रंथ (संयुक्त रूप से) 1951, नये एकांकी (1952), हिंदी की प्रतिनिधि कहानियाँ (1952), रूपांबरा (1960) आदि।

काव्य विषयक मान्यताएँ

अज्ञेय हिंदी साहित्य के बहुचर्चित विविधांगी आयामों पर विधागत लेखन करनेवाले कहानी, उपन्यास निबंधकार तथा कवि हैं। अज्ञेय की प्रतिभा की पहचान उनके साहित्य से मिलती है। अज्ञेय का काव्य हिंदी साहित्य का एक महत्त्वपूर्ण अवदान है। प्रयोगवादी काव्य परंपरा की सप्तक परंपरा से अज्ञेय बहुचर्चित हुए तथा उन पर अनेक आलोचना तथा आरोप-प्रत्यारोप हुए। अज्ञेय की काव्य विषयक मान्यताएँ आधुनिकता और भारतीय सांस्कृतिक परंपरा से युक्त है। उनके काव्य विषयक योगदान को रेखांकित करते हुए डॉ.संतोष कुमार तिवारी लिखते हैं-"अज्ञेय को चाहे हम नयी कविता का शीर्ष कवि कहें या नई कविता का पुरोधा या हिंदी कविता का किरीटी तरु कहें उनके ऐतिहासिक मूल्य और असाधारण प्रतिभासंपन्न साहित्यिक व्यक्तित्त्व को नकार नहीं सकते। नई कविता के प्रवर्तक होने के दावे तो 'सप्तक' के कई कवि करते हैं, किंतु नई कविता की जय यात्रा की अगुआई

अज्ञेय के हाथों ही हुई है, इसे हिंदी साहित्य का इतिहास झुठला नहीं सकता। उनके गहन अनुभव और पारदर्शी चिंतन ने उन्हें स्वस्थ जीवनदृष्टि और काव्य दर्शन प्रदान किया है।"[191] इस मूल्यांकित मंतव्य के आलोक में हम कह सकते हैं कि अज्ञेय का व्यक्तितत्त्व और कृतित्त्व हिंदी साहित्य में अपना महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। अज्ञेय ने प्रयोगवादी काव्यधारा से कविता का नया आंदोलन चलाया और परंपरावादी काव्य कला विषयक मान्यताओं को ठुकरा कर घोषणा की कि-"ये उपमान मैले हो गये हैं देवता इन प्रतीकों के कर गए हैं कुच कभी बासन अधिक घिसने से मुल्लमा छूट जाता है।"[192]

आधुनिक परिस्थितियों के भीतर मानव की मानसिकता परिस्थितियों के आधार पर बदलती गई है, उसे अभिव्यक्त करने के लिए पुरानी काव्य परंपरा, उपमा, बिंब, प्रतीक अधूरे हैं। यहाँ अज्ञेय की काव्य विषयक मान्यता स्पष्ट है कि मानव जीवन की परिवर्तनगामी गतिशीलता को रेखांकित करने के लिए नवीन उपमान, प्रतीक एवं बिंबों की आवश्यकता है। अज्ञेय की आत्मान्वेषी नवीनता इसे प्रेरित और अनुभव से अभिव्यक्त करती है। कवि, अज्ञेय अपनी काव्य विषयक मान्यता प्रयोगवाद के संबंध में अनेक बार अभिव्यक्त कर चुके हैं। अतः साथ ही कविता के माध्यम से उनकी धारणा, मान्यताएँ अभिव्यक्त हुई हैं जो आधुनिक एवं परिवर्तन की अनुगामिनी हैं।

अज्ञेय में काव्य के प्रति एक अन्वेषी का दृष्टिकोण है। वे प्रयोगवाद और प्रयोगवादी कवियों के बारे में लिखते हैं-"हमें प्रयोगवादी कहना उतना सार्थक या निरर्थक है जितना हमें कवितावादी कहना।"[193] वे आगे लिखते हैं-"प्रयोग अपने आप में इष्ट नहीं है, वह साधन है। और दोहरा साधन है। क्योंकि एक तो वह उस सत्य को जानने का साधन है जिसे कवि प्रेषित करता है, दूसरे वह इस प्रेषण की क्रिया को और उसके साधनों को जानने का साधन है। अर्थात् प्रयोग द्वारा कवि अपने सत्य को अच्छी तरह जान सकता है। वस्तु और शिल्प दोनों के क्षेत्र में प्रयोग फलप्रद होता है।"[194] इससे अज्ञेय की मान्यता स्पष्ट है कि वे काव्य प्रयोग द्वारा सत्य को जानने का प्रयास कर रहे हैं। अर्थात्

---

191 नये कविः एक अध्ययन-1, संतोष कुमार तिवारी-पृ.19
192 कलगी बाजरे की, अज्ञेय
193 दूसरा सप्तक, अज्ञेय-पृ.
194 दूसरा सप्तक, अज्ञेय, भूमिका से

काव्य सत्य शोधन का साधन है। अज्ञेय सप्तक के कवियों की धारणा के विषय में स्पष्ट कहते हैं कि- "'तारसप्तक' में सात कवि संग्रहित हैं, सातों एक दूसरे से परिचित हैं-किंतु इससे यह परिणाम न निकाला जाए कि वे कविता के किसी एक 'स्कूल' के कवि हैं या कि साहित्य जगत के किसी गुट अथवा दल के सदस्य या समर्थक हैं। बल्कि उनके तो एकत्र होने का कारण ही यही है कि वे किसी एक स्कूल के नहीं हैं। किसी मंजिल पर पहुँचे हुए नहीं हैं, अभी रही हैं-राही नहीं, राहों के अन्वेषी। इनमें मतैक्य नहीं है, सभी महत्वपूर्ण विषयों पर उनकी राय अलग-अलग है।"[195] उपर्युक्त मंतव्य से हम अज्ञेय की काव्य विषयक प्रयोगवादी धारणाओं तथा कवि की अन्वेषी धारणा को समझ सकते हैं। अज्ञेय में काव्य के प्रति एक अन्वेषी का दृष्टिकोण है याने वे राहों के अन्वेषी के रूप में रचनाकार को प्रतिष्ठित करते हैं। उन्होंने कविता को प्रयोग का विषय माना है और सत्यान्वेषण ही उनका प्रमुख ध्येय है। अज्ञेय के अनुसार-"प्रयोग अपने आप में साध्य नहीं है बल्कि सत्य को जानने का और संप्रेषण की क्रिया को समझने का दुहरा साधन है। न तो वे शब्दों की मीनाकारी पर जोर देते हैं न जड़ाउ कविता पर वे शब्दों के साधारण अर्थ से बड़ा अर्थ शब्दों में भरना चाहते हैं। जीवन की जटिलता को व्यक्त करने के लिए अज्ञेय भाषा की संकुचित होती हुई सार्थकता की केंचुल को फाडकर उसमें नया, अधिक व्यापक, अधिक सारगर्भित अर्थ भरना चाहते हैं। शब्दों की अर्थवत्ता की सही पकड़ ही सामाजिक संदर्भों और ध्वनि, लय, छंद के प्रश्नों को हल करती है।"[196]

अज्ञेय यौन परिकल्पनाओं की दमित कुंठित परिस्थितियों को अमान्य करते हुए सौंदर्य चेतना में एक खुलापन चाहते हैं और सामाजिक वर्गगत वर्जनाओं को भी अस्वीकार करते हैं। जिससे हमारी तीव्रतर अनुभूतियाँ यथार्थ दर्शन के निकट हो कुंठाओं के नहीं। अज्ञेय ने शब्दों को नये संस्कार देने के लिए प्रतीकार्थ पर जोर दिया है क्योंकि इससे भाषा के अनिवार्य विकास के साथ शब्द की रागोत्तेजक शक्ति बढ़ती है। उक्ति वैचित्र्य और चमत्कार सृष्टि के लिए नहीं बल्कि जटिल और रहस्यात्मक

---

[195] तार सप्तक, अज्ञेय, विवृत्ति और पुनरावृत्ति-पृ.12
[196] नये कवि : एक अध्ययन, डॉ.संतोष कुमार तिवारी-पृ.21

अनुभूतियों को उजागर करने के लिए प्रतीकों के सांकेतिक अर्थ की जरूरत हैं क्योंकि वह सत्य के अन्वेषण का साधन है।

अज्ञेय लोकभाषा के मुहावरों को पूरा समर्थन देते हैं, क्योंकि लोकभाषा का प्रवाह सार्वजनिक मानस पर साधे बैठता है। और नए छंदों के प्रयोग को बल देता है। यहाँ यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि लोकभाषा का संबंध मात्र वर्तमान परिस्थितियों से ही नहीं वरन् अपनी सांस्कृतिक परंपरा से भी रहता है। और इसी प्रकार अज्ञेय प्रकारांतर से शिल्पगत प्रयोगों के माध्यम से भी विकसनशील सांस्कृतिक परंपरा से जुड़ने एवं उसके विकास का ही मंतव्य प्रकट करते हैं।"[197] 'व्यक्तित्व की खोज' या परिष्कार की बात अज्ञेय ने अपने काव्य सिद्धांतों में बहुलता से की है। उनमें एक ओर व्यक्ति की उसके पूरे अकेलेपन में गहन खोज है तो दूसरी ओर आत्मसाक्षात्कार की चेष्टा भी। "इस सिलसिले में यह महत्त्वपूर्ण है कि अज्ञेय की कविता में एक बुनियादी तनाव व्यक्ति की आत्यंतिकता, गरिमा और अद्वितीयता को प्रतिष्ठित और सुरक्षित करने की कोशिश और व्यक्ति के बृहत्तर से, जो कभी समाज और खासकर बाद की कविता में, समूचे मनुष्य का मनुष्येतर संसार है जोड़ने, समंजस करने की इच्छा, उम्मीद और जरूरत के बीच है।"[198] अज्ञेय की काव्य तथा काव्य-कला विषयक धारणाएँ नवीन थी इन्होंने काव्य छंद के संदर्भ में अपनी धारणा अभिव्यक्त करते हुए लिखा है-"छंद भाषा की ध्वनियों का संगठन या नियमन करता है। छंद के द्वारा हम साधारण बोलचाल के गद्य की लय को नियमित करते हैं। यानि स्वर मात्राओं के परस्पर संबंधों को सरलतर बना देते हैं, जो निहित रहता है उसे विहित कर देते हैं-या कर नहीं देते तो पहचाना जाने लायक कर देते हैं। छंद स्वरों को सहजतर कर देता है। भाषा की गति को धीमा करता है क्योंकि स्वरों की मात्रा बढ़ाता है। छंद शब्दों को मूर्त करता है, मुखर करता है, उनके ध्वन्याकार को आलोकित करता है। छंद काव्य भाषा की आँख है। भाषा अपने को केवल सुन कर भी काम चलाती रहती है; काव्य-भाषा अपने को

---

[197] अज्ञेय की काव्य तितीषा, नंदकिशोर आचार्य-पृ.25

[198] फिलहाल, अशोक वाजपेयी-पृ.76

देख भी लेती है।"[199] काव्य भाषा के संदर्भ में अज्ञेय अपने विचार लिखते हैं-"हर भाषा की अपनी गंध होती है। अगर धूप के धुएँ से गंधयुक्त भाषा मेरी साध्य नहीं है, लेकिन इसका अर्थ यह नहीं है कि मुझे बाजार की चटपटी या नाली की सड़ी गंध से गंधाती भाषा की खोज है या कि उसके प्रति मेरी स्वीकृति भी है। खुली हवा की भी एक गंध होती है-देहाती हवा की सोंधी या वनखंडी से आते हुए झोंके की तीखी महक और मैं नहीं मानूँगा कि शहर में केवल सीलन और घुटन ही होती है, जिससे केवल बहुत दिनों की दबी हुई सीलन से गंधाती हुई भाषा ही शहरी यथार्थवाद की भाषा हो सकती है। शहर में भी लकड़ी चिरती है, चीड़ देवदार की लकड़ी, जिसकी ताज़ा चिराई में पेड़ की अस्थी-मज्ज भी दिख जाती है और गंध से वातावरण मँज जाता है।"[200] कवि अज्ञेय नवीन काल-बोध और उसकी भाषा पर विचार करते हुए लिखते हैं-"नया काल बोध-काल से नए संबंध का बोध-लयः काल प्रत्यक्ष का एक प्रकार मात्र पर नहीं, तनाव पर आधारित लय-कालःतनाव की एक प्रणाली-आधुनिक काल न निर्भर न अवर्त न कसी हुई कमाई पर एक ओर से पड़ता हुआ बल.... पारंपरिक छंद के ढांचे में आधुनिक काल-बोध की अभिव्यकित की संभावना नहीं हो सकती थी। काल नया संबंध-एक नयी जीवन-दृष्टि, नया विश्वदर्शन"[201] प्रदान करता है।

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर स्पष्ट है कि कवि अज्ञेय का व्यक्तित्व बहुमुखी प्रतिभा संपन्न था। उनकी वैचारिक धारणाएँ परिवर्तन की अनुगामी तथा अभिव्यक्ति को प्राथमिकता देकर संवेदना की वास्तविक अभिव्यक्ति पर बल देती हैं। अतः नवीनता की चेतना उनमें थी तो उनके साहिय में विविधांगी आयामों से अभिव्यक्त हुई है। प्रयोगवाद से नई कविता का प्रवर्तन उन्होंने अपनी प्रतिभा और साहित्यिक सजगता से किया। नई कविताओं के इतिहास में वे इस धारा के प्रवर्तक और मार्गदर्शी के रूप में दिखाई देते हैं।

4.2 गजानन माधव मुक्तिबोध

[199] भवन्ती, अज्ञेय
[200] अंतरा, अज्ञेय
[201] भवन्ती-अज्ञेय

प्रगतिशील साहित्यधारा तथा नई कविता के प्रमुख चर्चित कवि ग.मा.मुक्तिबोध का हिंदी साहित्य तथा आधुनिक हिंदी काव्यधारा के इतिहास में उल्लेखनीय स्थान है। 'गजानन माधव मुक्तिबोध' का जन्म 13 नवंबर 1917 को मुरैना जिले के श्योपूर नामक कस्बे में हुआ था। गजानन के साथ पिता का नाम 'माधव' और वंश की पदवी 'मुक्तिबोध' जुड़ने पर गजानन माधव मुक्तिबोध कहलाए। पिता पुलिस-विभाग में इंस्पैक्टर थे। पिता के स्थानांतरणों का पुत्र की पढ़ाई पर दुष्प्रभाव पड़ा, यहाँ तक कि मिडिल क्लास की परीक्षा में असफल रहे। इस असफलता को वे अपने जीवन की प्रथम महत्वपूर्ण घटना मानते हैं। मुक्तिबोध का अध्ययन जैसे-तैसे जारी रहा और सन् 1938 में इन्होंने इंदौर के 'होलकर कॉलेज' से बी.ए. की परीक्षा पास की। सन् 1939 में उजैन के मॉडर्न स्कूल में अध्यापक बने। सन् 1943 में 'तार सप्तक' 'जीवन तथ्य' में लिखा है। "मालवे के एक औद्योगिक केंद्र में जिसमें बड़े शहरों के गुणों को छोड़कर उसकी सब विशेषताएँ हैं, यह बंदा रोज जिंदा रहता है। नियमानुकूल बारह बजे दोपहर स्कूल जाता है, लौटती बार अपने पैरों से अपनी सिगरेट पर ज्यादा भरोसा रखता हुआ घर की ओर चल पड़ता है। सांझ सात बजे पानवाले की दुकान पर नित्य मिलता है। उज्जैन के फ्रिगंज में कहीं भी इस व्यक्ति को मटरगश्ती करते हुए आप पा सकते हैं।"[202] अतः इस कथन से हम कवि के स्वभाव को जान सकते हैं। मुक्तिबोध ने 1935 में माधव कॉलेज में बी.ए. की पढ़ाई के दौरान लेखन की शुरुआत की। यहीं उनका संपर्क प्रभाकर माचवे, वीरेंद्र कुमार जैन और कर्मवीर के सहयोगी संपादक प्रभातचंद्र शर्मा से हुआ। "प्रारंभ में वे रमाशंकर शुक्ल, माखनलाल चतुर्वेदी और महादेवी वर्मा की काव्य शैली से काफी प्रभावित रहे। बाद में अपने हेडमास्टर विष्णु नारायण जोशी के प्रभाव में और पश्चिम के चिंतकों और दार्शनिकों का गहरा अध्ययन किया और 1939 में अपनी ज़िद पर शांता जी से प्रेम विवाह किया तथा 1953 में नागपुर विश्वविद्यालय से हिंदी विषय में एम.ए. किया।"[203]

---

[202] तार सप्तक, अज्ञेय, जीवन तथ्य-मुक्तिबोध-पृ.39

[203] जनकविः विजयबहादुर सिंह-पृ.243

कवि मुक्तिबोध भारत भूषण अग्रवाल और नेमिचंद्र जैन के आग्रह पर कलकत्ता गए किंतु नौकरी न मिलने पर हारकर 1946-47 में जबलपुर के हितकरिणी हाई स्कूल में अध्यापक का कार्य किया और रात में दैनिक जयहिंद के लिए कार्य किया। सन् 1948 में मुक्तिबोध जबलपुर से नागपुर गए और नागपुर रेडियो के समाचार विभाग में कार्य संभाला। यहीं नरेश मेहता, अनिल कुमार, जीवनलाल वर्मा आदि से मित्रता हुई तथा 'नया खून' में साहित्यिक लेखन किया। सर्वविदित है कि मुक्तिबोध का जीवन आर्थिक अभाव में रहा उनकी आर्थिक विफलता उनके निम्न कथन से झलकती है-"पिछले बीस वर्षों में न मालूम कितनी बातें घटित हुई हैं। वे सबके सामने हैं। मेरी अपनी जिंदगी जिन तंग गलियों में चक्कर काटती रही है उन्हें देखते हुए यही मानना पड़ता है कि साधारण श्रेणी में रहनेवाले हम लोगों को अस्तित्व संघर्ष के प्रयास में ही समाप्त होना है। मेरा अपना दीर्घ अनुभव बताता है कि व्यक्ति स्वातंत्र्य की वास्तविक स्थिति केवल उनके लिए है जो इस स्वातंत्र्य का प्रयोग करने के लिए सुस्पष्ट आर्थिक आधार रखते हों जिसमें कि वे परिवार सहित मानवोचित जीवन व्यतीत कर सकें और साथ ही व्यक्ति स्वातंत्र्य का ऐसा प्रयोग कर सकें जो विवेक पूर्ण हो, लक्ष्योन्मुख हो। अपने जीवन के आर्थिक आधार को दृढ़ और सुस्पष्ट करने के लिए व्यक्ति के व्यावसायीकरण का भी मार्ग सामने आता है। मेरे लेखें यह अत्यन्त अनुचित मार्ग है और कम-से-कम मैं उसे कभी स्वीकार नहीं कर पाया। लेकिन वह मार्ग तो सामने आता ही है और व्यावसायीकरण-व्यापारीकरण का दबाव तीव्रतर होता जाता है। सच तो यह है कि व्यक्ति की सच्ची आत्मपरीक्षा उसकी आध्यात्मिक शक्ति की परीक्षा का सबसे प्रधान समय। उसके इम्तेहान का सबसे नाजुक दौर यही आज का युग है।"[204]

उपर्युक्त कथन से हम मुक्तिबोध के नैतिक बल के आभास तथा उनकी सामाजिक, नैतिक प्रतिबद्धता से हम परिचित होते हैं। अपनी इन्हीं धारणाओं के कारण मुक्तिबोध आजीवन आर्थिक अभाव में रहे किंतु अपनी प्रतिभा का व्यावसायीकरण या व्यापारीकरण नहीं किया। निरंतर मानसिक संत्रास भोगते हुए मुक्तिोध की जीवनी-शक्ति परिक्षीण हो चुकी थी। कदाचित इसी कारण से 7

---

[204] तार सप्तक, सं.अज्ञेय-पुनश्च-पृ.75

फरवरी 1964 को उन पर पक्षाघात का आक्रमण हुआ। क्षय के साथ-साथ मस्तिष्क शोथ (मेनिजाईटिस) का रोग बढ़ता गया और 11 सितंबर 1964 को लंबी बीमारी के कारण दिल्ली के अस्पताल में मृत्यु हुई। अतः हिंदी साहित्य का प्रखर मानबिंदु का जीवन निर्गुण में विलीन हो गया।

<u>रचना संसार</u>

मुक्तिबोध हिंदी साहित्य की प्रगतिशील मार्क्सवादी साहित्य धारा के समर्थक एवं चर्चित रचनाकार हैं। उनकी वैचारिक प्रतिबद्धता मार्क्सवादी विचारधारा से है। उनके साहित्य का बीज भाव सर्वहारा तथा मध्य वर्ग के शोषण और उत्पीडन के विरुद्ध विद्रोह है। मुक्तिबोध ने अपने अल्प काल में विपुल मौलिक लेखन कर हिंदी साहित्य की कहानी, कविता, उपन्यास और आलोचना के क्षेत्र में अपना महत्वपूर्ण स्थान निर्माण किया, मुक्ति उनकी बोध की प्रकाशित रचनाएँ निम्न प्रकार से हैं-

<u>कविता</u>ः 'तार सप्तक', चांद का मुँह टेढ़ा है, भूरी भूरी खाल-धुल

<u>उपन्यास</u>ः विपात्र (1970)

<u>कहानी</u>ः 1) काठ का सपना (1967), 2) सतह से उठता आदमी (1971),

<u>आलोचना</u>ः 'कामायनी एक पुनर्विचार', 'भारत, इतिहास और संस्कृति', 'नई कविता का आत्मसंघर्ष तथा अन्य निबंध', 'नए साहित्य का सौंदर्य शास्त्र', 'समीक्षा की समस्याएँ एक साहित्यिक की डायरी', 'मुक्तिबोध रचनावली', 6 खंडों में रचना संपूर्ण रचनाओं का संकलन। (सं.नेमिचंद्र जैन)

<u>काव्य तथा साहित्य विषयक मान्यताएँ</u>

मुक्तिबोध का साहित्यिक लेखन विविध आयामी है, उन्होंने कविता, कहानी, उपन्यास और आलोचना के क्षेत्र में लेखन किया किंतु मुक्तिबोध कविता और आलोचना के क्षेत्र में सिद्धहस्त रहे। मुक्तिबोध को हिंदी पाठकगण कवि और आलोचक के रूप में जातने हैं। उनकी कविताएँ मार्क्सवादी वैचारिक चेतना से ओतप्रोत हैं और सर्वहारा तथा मध्यवर्ग के जीवन का दर्शन उनकी कविता में होता है। साहित्य के बारे में विचार करते हुए वे लिखते हैं-"अपने अस्तित्व के औचित्य के लिए साहित्य एक औचित्य समर्थन मात्र है। आखिर कुछ भ्रम जरूरी है और इसलिए उसे वास्तविक और गहन

होना चाहिए। अगर मेरे लिए साहित्य भ्रांति है तो मैं उसकी परवाह नहीं करता।"[205] मुक्तिबोध की साहित्यिक धारणाओं के बारे में डॉ.श्यामराव लिखते हैं-"मुक्तिबोध ने अपने साहित्य संबंधी सिद्धांतों का निर्माण मार्क्सवादी समीक्षा के आधार पर किया है। उन्होंने वास्तविक साहित्य और जीवन के अध्ययन विश्लेषण को आधार रूप में ग्रहण किया है। इसलिए उनके साहित्य सिद्धांतों में वैज्ञानिकता एवं वस्तुनिष्ठता है। वे सिद्धांत निर्माण के पहले जीवन पर दृष्टि डालते हैं और जीवन के ठोस अनुभवों के आधार पर साहित्य का अध्ययन, विश्लेषण और मूल्यांकन करने का आग्रह करते हैं। मार्क्सवादी दृष्टि से तादात्म्य होकर मुक्तिबोध ने जीवन को समस्त चिंतन के केंद्र में प्रस्थापित किया है। उनके अनुसार साहित्य की कसौटी के भीतर अनेक कसौटियाँ होती हैं।"[206] इस संदर्भ में मुक्तिबोध का मंतव्य है-"साहित्य को हमें विविध पक्षीय दृष्टियों से देखना आवश्यक है। और वस्तुतः साहित्य की कसौटी एक नहीं न अनेक हैं। अनेक अभद्य इकाइयाँ हैं। इसलिए यह कह देना कि साहित्य में प्रकट जीवन-मूल्य उसके साहित्यिक गुणों की कसौटी नहीं, मात्र एक अस्थाई कार्यकारी मान्यता के रूप में ही ग्रहण किया जाना चाहिए।"[207]

मुक्तिबोध के अनुसार साहित्य सामाजिक परिवेश तथा व्यक्ति-रचनाकार के अनुभवों का उत्पादन है, वह समाज की उपज है। उनके अनुसार "हम जिस समाज, संस्कृति, परंपरा, युग और ऐतिहासिक आवर्त में रह रहे हैं उन सब का प्रभाव हमारे हृदय का संस्कार करता है। हमारी आत्मा में जो कुछ है वह समाज प्रदत्त है-चाहे वह निष्कलुष अनिद्य सौंदर्य का आदर्श ही क्यों न हो। हमारा सामाजिक व्यक्तित्व हमारी आत्मा है। आत्मा का सारा सार-तत्व प्रकृत रूप से सामाजिक है।"[208] मुक्तिबोध साहित्य की सार्थकता उसके परिवेश के चित्रण में मानते हैं तथा युग और साहित्य के संबंध को रेखांकित करते हुए लिखते हैं-"प्रत्येक युग अपनी सामाजिक, ऐतिहासिक स्थिति की अनुभूत आवश्यकता के अनुसार साहित्य निर्माण करता है। युग ही साहित्यिक विषय का संकलन करता है, ये

---

[205] मुक्तिबोध, जीवन-संघर्ष बनाम काव्य संघर्ष, डॉ.श्याम राव-पृ.54
[206] मुक्तिबोध, जीवन-संघर्ष बनाम काव्य संघर्ष, डॉ.श्याम राव-पृ.54-55
[207] एक साहित्यिक की डायरी, मुक्तिबोध-पृ.123
[208] नई कविता का आत्मसंघर्ष तथा अन्य निबंध, मुक्तिबोध-पृ.57-58

विषय विभिन्न वर्गों की विभिन्न स्थितियों तथा विविध मानव संबंधों से निर्धारित होते हैं। ये विविध विषय अपने को अभिव्यक्त करने के लिए उस वर्ग के हृदय में आकुलाते रहते हैं, जो उस काल में साहित्यिक सांस्कृतिक क्षेत्र के भीतर निर्णायक रूप से प्रभावशाली हो उठते हैं।"[209] ... कोई भी लेखक अपने व्यक्तित्व से अपने ही इतिहास से अर्थात् अपने देशकाल से स्वतंत्र नहीं है।"[210] मुक्तिबोध साहित्य पर विचार करते हुए 'जनता का साहित्य-किसे कहते हैं' निबंध में साहित्य की परिभाषा इस प्रकार दी है-"जनता के साहित्य का अर्थ है, ऐसा साहित्य जो जनता को जीवन मूल्यों को, जनता के जीवनादर्शों को प्रतिष्ठापित करता हो उसे अपने मुक्तिपथ पर अग्रसर करता हो। इस मुक्ति पथ का अर्थ राजनीतिक मुक्ति से लेकर अज्ञान से मुक्ति तक है। अतः इसमें प्रत्येक प्रकार का साहित्य सम्मिलित है शर्त है कि वह सचमुच उसे मुक्ति पथ पर अग्रसर करे।"[211] मुक्तिबोध कला के तीन क्षण मानते हैं। कला क्या है, उस का स्वरूप और कला की रचना प्रक्रिया पर उन्होंने व्यापक विचार किया है। कला के संदर्भ में-मुक्तिबोध की धारणा है-"कला कृति स्वानुभूति जीवन की कल्पना द्वारा पुनर्रचना है यथार्थवादी शिल्प के अंतर्गत कलाकृति यथार्थ के अंतर्नियमों के अनुसार यथार्थ के बिंबों की क्रमिक रचना प्रस्तुत करती है।"[212]

साहित्य, कला के स्वरूप पर व्यापक विचार करते हुए मुक्तिबोध ने कविता के कथ्य और शिल्प पर भी व्यापक विचार किया है। काव्य वस्तु, कथ्य के साथ शिल्प के महत्व को कवि के नाते मुक्तिबोध ने गहराई से विचार-विमर्श किया। मुक्तिबोध की कविता के कथ्य और शिल्प के बारे में विचार करते हुए डॉ.श्याम राव लिखते हैं-"मुक्तिबोध के लिए कविता का प्रश्न जीवन के प्रश्न से जुड़ा हुआ है। इसलिए कविता उनके लिए मस्तिष्क का आवेश न होकर जीवन के जटिलतम विचारों और संवेदनाओं की अभिव्यक्ति का माध्यम थी। कविता और जीवन के यथार्थ को एक दूसरे के निकट लाने के लिए जिस जीवन दृष्टिकोण की आवश्यकता थी वह मुक्तिबोध को मार्क्सवाद से

---

[209] नए साहित्य का सौंदर्यशास्त्र, मुक्तिबोध-पृ.120, 121
[210] नए साहित्य का सौंदर्यशास्त्र, मुक्तिबोध-पृ.83
[211] मुक्तिबोध रचनावली भाग-5, सं.नेमिचंद्र जैन-पृ.60
[212] मुक्तिबोध रचनावली, सं.नेमिचंद्र जैन-पृ.217

मिला।"[213] मार्क्सवादी विचारधारा का प्रभाव उनके व्यक्तित्व पर था जो कि कृति में निश्चित ही झलकता हुआ दिखाई देता है।

मुक्तिबोध के अनुसार काव्य एब्स्ट्रेक्ट कला है। वे लिखते हैं "काव्य या साहित्य पर्याप्त अमूर्त एब्स्ट्रेक्ट कला है, उसकी मूर्तिमानता उसकी बुनियादी विलगीकरण क्रिया पर आधारित है। विलगीकरण क्रिया ही एब्स्ट्रेक्शन है।"[214] मुक्तिबोध की काव्यकला की फैंटसी के बारे में मान्यता है- "भाववादी कला में कल्पना वास्तविकता के यथार्थ बिंबों में न उलझकर उस वास्तविकता को मात्र प्रतीकों द्वारा समष्टि चित्रों और उपमा दृश्यों द्वारा सूचित भर कर देती है। फैंटसी के अंतर्गत भाव पक्ष प्रधान होकर विभाव पक्ष मात्र सूचित होता है, मात्र ध्वनित होता है अथवा केवल प्रतीकों में प्रकट होता है।"[215] उपर्युक्त विवेचन के आधार पर हम नई कविता के प्रतिनिधि कवि मुक्तिबोध के जीवन संघर्ष तथा काव्य विषयक मान्यताओं से परिचित होते हैं, उनकी काव्य विषयक मान्यताएँ अत्यन्त व्यापक एवं वैचारिक धरातल पर बनी है यह स्पष्ट होता है।

4.3 गिरिजा कुमार माथुर

श्री गिरिजा कुमार माथुर का तार सप्तक (1943) और छायावादोत्तर कवियों में महत्वपूर्ण स्थान है। इनका जन्म सन् 1918 में ग्वालियर राज्य के 'पछार' नामक कस्बे में हुआ था जो आजकल 'अशोकनगर' के नाम से मध्यप्रदेश का एक संपन्न व्यापारिक केंद्र है। माथुर के पिता अध्यापक थे। उनकी प्रारंभिक शिक्षा घर पर ही हुई। स्कूली पुस्तकों के साथ-साथ उपनिषद, हितोपदेश, 'सरस्वती' की फाइलें और कविता-कौमुदी आदि का अध्ययन किया क्योंकि ये ग्रंथ और पत्रिकाएँ उनके यहाँ उपलब्ध थीं। उनका प्रिय खेल लकड़ी से बनी रेलगाड़ी से खेलना था।

माथुर जी ने 1934 में राजकीय इंटर कॉलेज, झाँसी से हाई स्कूल की परीक्षा पास की। इस समय वे छोटी-छोटी कविताएँ भी लिखने लगे थे। कॉलेज में आयोजित गणेशोत्सव के अवसर पर

---

[213] मुक्तिबोध : जीवन संघर्ष बनाम काव्य संघर्ष, डॉ.श्याम राव-पृ.63
[214] नई कविता का आत्मसंघर्ष तथा अन्य निबंध, मुक्तिबोध-पृ.17
[215] कामायनी : एक पुनर्विचार, मुक्तिबोध-पृ.3

उन्होंने दो कवित्त सुनाए, जिनकी सराहना होने पर कविता की ओर उनके रुझान में अभिवृद्धि हुई। विद्यार्थी जीवन में राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त प्रिय कवि थे।

सन् 1937 में आयोजित कविता सम्मेलन में माथुर की कविता की बड़ी सराहना हुई। 'माखनलाल चतुर्वेदी' ने इनकी सराहना करते हुए कहा-"तुम इतनी अच्छी कविता लिखते हो कि अगर किसी भी बड़े कवि का नाम इनके साथ जोड़ दिया जाए तो पहचानना मुश्किल हो जाएगा कि रचना किसकी है।"[216] माथुर जी निरंतर अध्ययनरत रहे और आगे लखनऊ विश्वविद्यालय से अंग्रेज़ी विषय चुनकर एम.ए. किया और प्रेम में 'इन्वाल्व' हो गये जिसके विरह की कसक जीवन भर रही तथा उसकी अभिव्यक्ति काव्य में हुई।

सन् 1937 में माथुर ने 'बिखरी स्मृतियाँ' शीर्षक से एक लंबी प्रणय कविता लिखी थी उसके मूल में असफल प्रेम की कसक थी। इस कविता के अंशों को वे इधर-उधर प्रकाशित करते रहे। इस कालावधि में 'विजय महायुद्ध, सात सागर का महाविष' आदि कविताएँ लिखीं। अंग्रेज़ी विषय लेकर एम.ए. की परीक्षा उत्तीर्ण करने के कारण अध्ययन के लिए बहुत से अंग्रेज़ी के कवियों की कविताएँ थीं। इनके अध्ययन के दौरान उन पर गहन चिंतन और स्वतंत्र रूप में भी पाश्चात्य कवियों का गहन अध्ययन किया तथा उनसे प्रभावित होकर अपनी कविताओं में जो प्रयोग किए उनसे हिंदी कविता में आधुनिकता का प्रवेश स्वीकार किया जा सकता है।

श्री गिरिजाकुमार माथुर का प्रथम काव्य संकलन सन् 1941 में 'मंजीर' शीर्षक से प्रकाशित हुआ था। अतः इसके साथ ही अन्य काव्य संकलन और आलोचनात्मक रचनाएँ प्रकाशित होती रहीं। सन् 1950 में श्री माथुर की संयुक्त राष्ट्र संघ में हिंदी प्रसाराधिकारी के रूप में नियुक्ति हुई। वहाँ पर अनेक पाश्चात्य साहित्यकारों के संपर्क में आने के कारण उसका प्रभाव इनकी कविताओं में दृष्टिगोचर होता है। साथ ही श्री माथुर भारत सरकार के कई महत्वपूर्ण पदों पर कार्य करते रहे।

काव्य विषयक वक्तव्य और मान्यताएँ

---

[216] गिरिजा कुमार माथुर, सं.नगेंद्र-पृ.12

श्री गिरजाकुमार माथुर आधुनिक हिंदी काव्यधारा के छायावादोत्तर कविता के प्रमुख हस्ताक्षर तथा तार सप्तक के कवियों में संकलित महत्त्वपूर्ण कवि हैं। कवि माथुर ने अपने जीवनानुभव और अध्ययन चिंतन के आधार पर साहित्य लेखन किया है और उनकी कविताओं में आधुनिक काव्यधारा के सभी तत्त्व दिखाई देते हैं। कवि ने तारसप्तक, धूप के धान, शिलापंख चमकीले और 'नयी कविताःसीमाएँ और संभावनाएँ' में जो वक्तव्य और भूमिकाएँ लिखी हैं उससे माथुर की काव्यविषयक धारणाएँ, मान्यताएँ तथा साहित्य-दृष्टि उजागर होती है। "इन सूत्रों को नयी कविता की समस्याएँ और समाधान दिशाएँ कहा गया है। कवि संवेदन के सीमित और वर्गीकृत आधारों के स्थान पर सर्वथा अंतरंग एवं आत्मानुभूत प्रतिक्रियाओं को अधिक मूल्यवान मानते हुए उनके कलात्मक चित्रण पर विशेष जोर देता है।"[217]

माथुर नग्न यथार्थ के नाम पर गंदगी, भोंडापन और फूहडपन पसंद नहीं करते, वे पक्षधरता के हिमायती न होकर विरोधी प्रवृत्तियों में आधारभूत मूल्यों का उचित संतुलन देखना चाहते हैं। माथुर साहित्य को राजनीति का 'सांप्रदायिक अनुयायी' बनाना उचित नहीं मानते "क्योंकि जहाँ राजनीति पक्षधर मात्र होती है और अपने दल अथवा संप्रदाय के संकुचित स्वार्थों, आचार-विचारों, अनुशासन, नियमों और मतवादों की बाह्य प्रतिष्ठा में उलझी रहती है वहाँ साहित्य हमेशा-राजनीति की संकीर्ण सीमाओं से परे उसके बुनियादी सिद्धांतों तक जाता है और उसके मंगल तत्त्वों पर ही अपनी दृष्टि रखता है। ऐसे विभिन्न मौलिक तत्त्वों को लेकर वह एक गहरी और व्यापक मानवीयता की पीठिका पर उनका समन्वय करता है।"[218] यहाँ माथुर साहित्य की प्रकृत मानवीय संवेदनाओं पर बल देते हैं। गिरिजा कुमार माथुर काव्य की संवेदना और नई कविता की सौंदर्य चेतना पर विचार करते हुए कहते हैं कि-"नव काव्य ने सामान्यीकृत चेतना और वर्गीकृत संवेदना को बिल्कुल अस्वीकृत कर दिया। सौंदर्य की शास्त्र सम्मत व्याख्याओं के स्थान पर सौंदर्य-बोध को स्थिति-सापेक्ष अनुभूति के साथ जोड़ा, और बहुमुखी सभ्यता एवं कोमलता के बदले मार्मिकता, तन्मय

[217] नई कविता के प्रमुख हस्ताक्षर, डॉ.संतोष कुमार तिवारी-पृ.158
[218] धूप के धान, गिरिजा कुमार माथुर-पृ.3

स्पंदनशीलता तथा आंतरिक गुणवत्ता को अधिक महत्वपूर्ण स्थान दिया। इस प्रकार काव्यगत सौंदर्य तत्व को भाव स्तर पर ग्रहण किया गया और उसे मात्र 'सुंदरता' का पर्याय न समझकर असुंदर की मर्मानुभूति को भी सौंदर्य-बोध के अंतर्गत ही रखा गया। छंद के आरोप को भंग कर दिया गया तथा छंदमुक्त स्थिति में आंतरिक लयान्विति को भावना की सहज अकृत्रिम अभिव्यक्ति के लिए अधिक उपयुक्त माना गया।"[219]

गिरिजाकुमार माथुर आधुनिकता को नई वैचारिक मूल्य दृष्टि मानते हैं उनका इस संदर्भ में कहना है-"मैं आधुनिकता को केवल बाह्य प्रक्रिया नहीं मानता जैसा कि कुछ विचारक समझते हैं। आधुनिकता को मैं वैज्ञानिक प्रक्रिया से उद्भूत 'मूल्य दृष्टि मानता हूँ।' इसलिए आधुनिकता के बाह्य आरोप या उसकी अनुकृति को उतना ही दोषपूर्ण समझता हूँ जितना स्वीकृत रूढ़ियों का अनुकरण। अंततः कवि कर्म की सार्थकता इसी में है कि उसकी रचना में कथ्य की मौलिकता, अनुभूति का ताप और अनुभूति की सूक्ष्मता कितनी है-भले ही कविता नयी हो या पुरानी। और आधुनिकता इसी तथ्य पर निर्भर करती है कि कृतिकार में निरंतर वर्तमान की संसक्ति व संवेदना कितनी है और मूल्यगत स्तर पर भविष्य के रूपाकारों की वह किस मात्रा में पूर्वाभिव्यंजना कर सका है।"[220]

नयी कविता की अंतर्वस्तु और आधुनिकता के विविध पक्षों पर विचार करते हुए माथुर लिखते हैं-"नव काव्य में क्रमशः उदित आधुनिकता के कई पक्ष हैं। पहला महत्वपूर्ण पक्ष प्रणय का है, जो सेक्स-संबंधी नयी नैतिकता के संदर्भ में विकसित हुआ है। इसमें प्रणय की सूक्ष्म विकृतियों की मुक्त, अकुंठित व्यंजनाएँ हैं और इसी परिप्रेक्ष्य में सौंदर्य की अभिनव भूमिकाओं का उद्घाटन भी हुआ है। नारी अब विलास की वस्तु या सजावट की सामग्री नहीं है। वह मात्र शारीरिक सुख का माध्यम नहीं है, वरन् अंतः प्रेरणाओं का स्रोत भी है। ... दृष्टि के इस परिवर्तन से प्रणय की काव्यगत अभिव्यक्ति में अब वह पहले जैसी भावुकता नहीं रही और कल्पनाजन्य उहापोह भी नहीं है। प्रणय के संबंध में छायावादी परिवृत्त के कवियों के भाँति नया कवि झिझक या कैशोर झेंप का अनुभव नहीं

---

[219] तार सप्तक, पुनश्च-पृ.149

[220] तार सप्तक, पुनश्च-पृ.155-156

करता और न ग्लानि के भाव का। पिछले कवि नर-नारी के कोमल, अंतरंग प्रेमालापों को बहुत छिपाकर दूर-स्थित, वायवी संकेतों से व्यक्त किया करते थे मानो कोई अपराध कर रहे हों। नये कवि में यह अपराध-भावना बिलकुल नहीं है। उसने अधिक आश्वस्त, परिपक्व एवं मुक्त रूप से प्रणय के आस्वाद को व्यक्त किया है।"[221] इसी क्रम में वे आगे लिखते हैं-"प्रणय या सेक्स को यदि पूर्ण रूप से उधाड़कर नंगा कर दिया जाए तो जीवन के एक अत्यन्त प्रेरक तत्व की सूक्ष्म प्रतिक्रियाओं को ही हम भोथरा बना देंगे। इसका अर्थ यह होगा कि हम विस्मय और आदिम जीज्ञास को जीवन के एक महत्वपूर्ण क्षेत्र से निर्वासित कर रहे हैं, ऐसी स्थिति मानवीय व्यक्तित्व के लिए घातक सिद्ध हो सकती है। क्योंकि मौलिक आकर्षणों की परिसमाप्ति आदमी के प्रेरक तत्वों को ही बांझ बना देती है। "[222] उपर्युक्त मंतव्य से स्पष्ट है कि माथुर का कवि व्यक्तित्व प्रणय के संबंध में संतुलित और व्यापक विचार करता है। वे प्रणय चित्र तथा भाव को कविता में अभिव्यक्ति अनुचित नहीं मानते हैं बल्कि उसे प्रेरक तत्व मानते हैं। इसी के अनुरूप नयी कविता के अनेक कवियों ने अपनी अभिव्यक्ति के लिए व्यापक यौन प्रतीकों और बिंबों का प्रयोग किया है।

माथुर की काव्य दृष्टि और काव्य मान्यताएँ वैज्ञानिक जीवन दृष्टि पर आधारित हैं। उन्होंने अपना चिंतन पाश्चात्य साहित्य सिद्धांतों की वैचारिक परंपरा से विकसित किया है। अतः आधुनिकता के विवेचन का उनका दृष्टिकोण विविध आयामी है तथा वे काव्य की मूल वस्तु में अनुभूति और संवेदनात्मक अभिव्यक्ति पर बल देते हैं। उनकी प्रणय और यौन बिंब प्रतीकों की मान्यता स्पष्टतः फ्रायड के सिद्धांतों पर आधारित है। सारांश रूप से हम कह सकते हैं कि माथुर की मान्यताएँ आधुनिक नई कविता में दिखाई देती हैं। इससे नई कविता को बल मिला।

4.4 धर्मवीर भारती

हिंदी साहित्य में मिथकीय प्रयोग द्वारा नयी दृष्टि प्रदान करनेवाले रचनाकारों में श्री धर्मवीर भारती का महत्वपूर्ण योगदान है। धर्मवीर भारती का जन्म 25 दिसंबर 1926 को इलाहाबाद में हुआ।

---

[221] नयी कविता : सीमाएँ और संभावनाएँ, गिरिजाकुमार माथुर-पृ.9, 10
[222] नयी कविता : सीमाएँ और संभावनाएँ, गिरिजाकुमार माथुर-पृ.10

बच्चन इनका घरेलु संबोधन नाम और पारिवारिक तथा शैक्षणिक नाम वर्मा रहा। अपनी कवि सुलभ कल्पना और तत्कालीन राष्ट्रीय आंदोलन से प्रेरित होकर हाई स्कूल के दिनों में ही वर्मा के स्थान पर 'भारती' शब्द जोड़ना प्रारंभ कर दिया था। जो परवर्ती दौर में 'भारती' में रूपांतरित होकर साहित्य जगत् में 'धर्मवीर भारती' नाम से परिचित है। धर्मवीर भारती 'दूसरा सप्तक' में संकलित महत्वपूर्ण कवि हैं। भारती की शिक्षा दीक्षा इलाहाबाद में हुई। सन् 1947 में एम.ए. हिंदी में उत्तीर्ण हुए तथा इलाहाबाद विश्वविद्यालय की ओर से आपको सर्वाधिक अध्ययनशील विद्यार्थी होने के उपलक्ष्य में 'चिंतामणी घोष' नामक स्वर्णपदक देकर सम्मानित किया गया। इसी विश्वविद्यालय से आपने 'सिद्ध साहित्य' पर शोध कार्य करके डॉक्टरेट की उपाधि प्राप्त की और सन् 1959 तक प्राध्यापक के रूप में अध्यापन कार्य भी किया। तदनंतर 1960 से 'धर्मयुग' के संपादक के रूप में कार्यरत रहे।

दूसरा सप्तक में छपे परिचय के अनुसार भारती जी को दो चीजों की बेहर प्यास है एक तो नई-नई किताबों की और दूसरे अज्ञात दिशाओं की ओर जाती हुई लंबी निर्जन छायादार सड़कों की। "सुविधा मिलें तो जिंदगी भर धारती की परिक्रमा देता जाऊँ। मुक्त हँसी, ताजे फूल और देश विदेश के लोकगीत बहुत पसंद हैं।"[223]

आधुनिक कविता में मिथकीय संदर्भ लेकर नवीन भावबोधों की अभिव्यक्ति करनेवाले सशक्त कवियों में धर्मवीर भारती का नाम अग्रणी है, 'अंधा युग' के माध्यम से कवि ने व्यापक नवीन बोधों की अभिव्यक्ति की है। डॉ.धर्मवीर भारती हिंदी के ऐसे लेखक हैं जिन्होंने साहित्य की लगभग सभी विधाओं में लेखन किया है। भारती ने कविता, उपन्यास, कहानी, निबंध आदि के क्षेत्र में लेखन किया तथा वे धर्मयुग एवं आलोचना के सफल संपादक रहे। साथ ही 'परिमल', 'निकष' आदि के प्रकाशन में सहयोग दिया। भारती उन प्रयोगशील साहित्यकारों में से हैं जिन्होंने अपने लेखन से साहित्य को नई विधाओं से परिचित किया। इस संदर्भ में हिंदी साहित्य की 'नाट्यकाव्य' विधा के भारती प्रथम रचनाकार माने जाते हैं। अपनी महत्वाकांक्षा के अनुसार उन्होंने कई विदेशी यात्राएँ की। 1961 में भारती जी ने 'कॉमन वेल्थ रिलेशन' कमिटी के आमंत्रण पर प्रथम विदेश यात्रा पर युरोप का भ्रमण

---

[223] दूसरा सप्तक, सं.अज्ञेय, वक्तव्य, धर्मवीर भारती-पृ.

किया। 1964 में जर्मनी की यात्रा तथा 1966 में भारतीय दूतावास से इंडोनेशिया तथा थाईलैंड की यात्रा की। 1971 में बांग्लादेश की यात्रा की। श्री धर्मवीर भारती जी को उनकी साहित्य सेवा के लिए अनेक पुरस्कारों से सम्मानित किया गया। सन् 1972 में उनके साहित्यिक योगदान के लिए 'पद्मश्री' से भारत सरकार द्वारा पुरस्कृत किया गया। 1984 में पत्रकारिता के योगदान के लिए 'महाराणा मेवाड फाउंडेशन साहित्य पुरस्कार', 1988 में 'साहित्य अकादमी' द्वारा श्रेष्ठ नाटककार पुरस्कार और 1984 में 'व्यास सम्मान' से पुरस्कृत किया गया।"[224] भारती की मृत्यु सन् 1997 को दिल की बीमारी से हुई।

<u>रचना संसार</u>

श्री धर्मवीर भारती जी का लेखन व्यापक विचारों को प्रस्तुत करते हुए साहित्य को नई विचारधारा प्रदान करता है, उनका लेखन काव्य, कहानी, उपन्यास, नाट्य-काव्य, निबंध, यात्रा विवरण, रिपोतार्ज, एकांकी आदि विधाओं में विभक्त है-यथा-

<u>कविता</u>

1) ठण्डा लोहा (1952), सात गीत वर्ष (1959), कनुप्रिया (1959), सपना अभी भी (1993), आद्यंत (1999), मेरी वाणी गौरिक वसना (1999)

<u>नाट्य काव्य</u>

अंधायुग (1954)

<u>कहानी</u>

गुल की बन्नो (1954)

बंद गली का आखरी मकान (1969), मुर्दों का गाँव (1946)

स्वर्ग और पृथ्वी (1949), चांद और टूटे हुए लोग (1955)

---

[224] धर्मवीर भारती की साहित्य साधना, सं.पुष्पा भारती-पृ.746 से

उपन्यास

गुनाहों का देवता (1948), सूरज का सातवाँ घोड़ा (1952), साँस की कलम से (2000)

निबंध

ठेले पर हिमालय (1958), पश्यन्ती (1969), कहनी अन कहनी (1970), कुछ चेहरे कुछ चिंतन (1995), शब्दिता (1997)

रिपोर्ताज

युद्ध यात्रा (1972)

आलोचना

प्रगतिवाद एक समीक्षा (1949), मानव मूल्य और साहित्य (1960)

शोध

सिद्ध साहित्य

अनुवाद

ऑस्कर वार्डल्ड की कहानियाँ देशांतर (1946)

संपादन

संगम, आलोचना (सहयोगी)

हिंदी साहित्य कोश (सहयोगी)

धर्मयुग (प्रधान संपादक)

काव्य विषयक मान्यताएँ

धर्मवीर भारती का मूल वैचारिक लेखन कविता के माध्यम से शुरू हुआ। उनका रचना संसार विविधांगी विचारों, दृष्टिकोणों से भरा हुआ है उनके साहित्य का मूल भाव मानव मूल्य रहा। उनकी काव्य विषयक मान्यताएँ इसी भाव से अनुप्रेरित दिखाई देती हैं। कवि की समग्र चेतना अमानवीय बंधनों से मुक्ति का चिंतन प्रतिपादित करती है। रचना की सृजनशीलता पर तद्‌युगीन कविता और उसके सृजन पर विचार करते हुए भारती का मत है, कि-"कविता का मुख्य कार्य आज के युग में रूढ़

अर्थों में रसोद्रेक-मात्र न रहकर 'प्रभाव डालना' हो गया है।"[225] भारती की काव्य विषयक मान्यता के संदर्भ में विचार करते हुए संतोष कुमार तिवारी लिखते हैं-"भारती रचनाकार की स्वतंत्र सत्ता में विश्वास करते हैं, इस अर्थ में कि रचनाकार किसी राजनीति का पिछलग्गु नहीं होता।"[226] राजनीति उसके साहित्य को बोझिल बनाती है। इसका अर्थ यह नहीं होता कि कवि समकालीन राजनीति एवं प्रवृत्तियों से, समाज एवं युगीन परिस्थितियों से कटकर एक निस्संग, निरपेक्ष स्थिति में कविता का रूपगठन और विकास करता रहे।"[227] जाने-अनजाने वह राजनीति के बिंदुओं को स्पर्श करेगा ही। क्योंकि उसका सामाजिक दायित्व राजनीतिक गतिविधियों से संपृक्त है। अभिप्राय यह है कि राजनीति को साहित्य पर लादा न जाए।"[228] डॉ.भारती का मत यह है कि-"मानवीय विघटन को रोकने के लिए मनुष्य की आंतरिकता पर जोर देना होगा। सामाजिक चेतना का अर्थ मात्र वर्ग संघर्ष का चित्रण नहीं है। संकीर्ण और खंडित विभाजन मानव मूल्यों की सापेक्ष स्थिति को सार्थक अभिव्यक्ति नहीं दे सकते। सीधी-सादी बात यह है कि भारती कविता में किसी भी विषय को उठाए बिना नहीं रह पाता, बशर्ते जीवन और अनुभूति की आंतरिक लय से मेल खाता हो। लेकिन ऊपर से कुछ भी थोपना-लादना भारती प्रतिभा की पराजय मानता है और साहित्य की राजनीतिक गुलामी तो सरासर फासिज़्म दलगत राजनीति और अवसरवादी कलाबाजियों को भारती बाज़ारूपन समझता है और हिकारत की निगाह से देखता है।"[229]

धर्मवीर भारती ने कविता में आधुनिकता को फैशन के रूप में नहीं, एक दृष्टि के रूप में स्वीकार किया है। इसीलिए उनके काव्य में अनास्था और विघटन के बीच सृजन का स्वर उभरा है। भारती की आधुनिकता पर टिप्पणी करते हुए धनंजय वर्मा ने लिखा है-"भारती की आधुनिकता केवल सामयिकता नहीं है वह ऐसी जागरूकता और मानसिकता है जो अतीत, वर्तमान और भविष्य की

---

[225] दूसरा सप्तक, सं.अज्ञेय-पृ.66
[226] नये कवि एक अध्ययन, डॉ.संतोष कुमार तिवारी-पृ.143
[227] नये कवि एक अध्ययन, डॉ.संतोष कुमार तिवारी-पृ.143
[228] नये कवि : एक अध्ययन, डॉ.संतोष कुमार तिवारी-पृ.144
[229] तार सप्तक, सं.अज्ञेय-पृ.167

सापेक्षिकता की बोध से उत्पन्न होती है। वह खंड चेतना नहीं समग्र चेतना है।"[230] भारती ने अपने सृजन क्षणों को 'जाने-अनजाने स्वादों का सम्मिलित स्वाद' कहा है; वे साहित्य में जीवन के विविध अनुभवों के संश्लेषण को स्वीकारते हैं। मनुष्य यातनाओं और अकेलेपन के बीच भी अपने को पुनः रचने और संबंध सूत्रों को नए स्तर पर जोड़ने की कोशिश करता है। भारती के शब्दों में "हम जीना चाहते हैं और अस्तित्व में से अस्तित्व पाने के लिए अभिव्यक्त करना चाहते हैं, अपने को, और बिना संसार के हम अपने को अभिव्यक्त कैसे करेंगे। अतः हम किसी एक स्तर पर मूल्य और अर्थ देते हैं। हर चीज़ को और हर चीज़ के माध्यम से अपने को पाए हुए और पाकर खोए हुए संसार को किसी एक स्तर पर 'रचते' हैं। ऐसे स्तर पर जहाँ कुछ भी फिर कभी-धुंधला और अर्थहीन न पड़े।"[231] धर्मवीर भारती का मत है कि कविता कवि की अपनी अनुभूति है और वह अनुभूति संवेदना वह समाज से ग्रहण करता है उसमें जीवनानुभव और जीवन प्रक्रिया की बातें अनिवार्य रूप से आती है। उन्हीं के शब्दों में "अब समूची जीवन प्रक्रिया किसी न किसी रूप में रचना के क्षण से संबद्ध होती है। तो वे लोग जो अक्सर आरोप लगाते हैं कि अमुक कविता है तो मर्मस्पर्शी लेकिन जीवन से दूर है, वे कविता के बारे में कितना जानते हैं, यह कहना कठिन है। जो खरा काव्य है, उसकी रचना प्रक्रिया में, कितने ही अप्रत्यक्ष रूप में हो, किंतु जीवन प्रक्रिया अनिवार्य उलझी रहती है।"[232]

भारती के अनुसार कविता और जीवन प्रक्रिया, जीवनानुभवों का अनिवार्य संबंध है, कविता को वे जीवनानुभवों का प्रतिबिंब मानते हैं। कविता और जीवन के संबंध में उनकी मान्यता है कि कविता उनके लिए 'पीड़ा में संबल' और 'शांति की छाया और विश्वास' की आवाज़ है। उन्हीं के शब्दों में-"कविता के माध्यम से ही भारती आज की बेहद पिसती हुई संघर्षपूर्ण, कटु और कीचड़ में बिलबिलाती हुई जिंदगी में भी सुंदरतम अर्थ खोज पाने में समर्थ रहा है। कविता ने इसे अत्यधिक पीड़ा के क्षणों में विश्वास और दृढ़ता दी है। कविता भारती के लिए शांति की छाया और विश्वास की

---

[230] आस्वाद के धरातल, धनंजय वर्मा-पृ.26
[231] सात गीत वर्ष, धर्मवीर भारती-पृ.13
[232] सात गीत वर्ष, धर्मवीर भारती-पृ.13

आवाज़ रही है।"[233] डॉ.भारती अपनी काव्यानुभूति के विकास को रेखांकित करते हुए अपनी काव्य के विषय-वस्तु और रूप पर विचार करते हुए लिखते हैं। "किशोरावस्था के प्रणय, रूपासक्ति और आकुल निराशा से एक पावन आत्मसमर्पणमयी वैष्णव भावना और उसके माध्यम से अपने मन के अहम का शमन कर अपने बाहर की व्यापक सच्चाई को हृदयंगम करते हुए-संकीर्णताओं और कट्टरता से ऊपर एक जनवादी भावभूमि की खोज मेरी इस छंद यात्रा के प्रमुख मोड़ रहे हैं।"[234] सारांशतः उपर्युक्त विवेचन से धर्मवीर भारती की काव्य विषयक मान्यताएँ स्पष्ट होती हैं, वे कविता को विविधांगी और व्यापक दृष्टि से देखते हुए इसे जीवनानुभव का प्रतिबिंब मानने के पक्षधर हैं।

4.5 सर्वेश्वर दयाल सक्सेना

आधुनिक हिंदी कविता के इतिहास में सर्वेश्वर दयाल सक्सेना का महत्वपूर्ण स्थान है। सक्सेना अज्ञेय द्वारा संपादित 'तीसरा सप्तक' के कवि तथा नई कविता आंदोलन के प्रमुख कवि हैं। सक्सेना का जन्म एक आर्यसमाजी परिवार में 15 सितंबर 1927 को उत्तर प्रदेश के 'विकौरा' जिले के 'बरसी' नामक गाँव में हुआ। सर्वेश्वर जी के पिता का नाम 'विश्वेश्वर प्रसाद सिंह सक्सेना' और माता का नाम 'सौभाग्यवती' है। माताजी अध्यापिका थी और पिता व्यापार किया करते थे। माता की अल्पायु में ही मृत्यु होने के कारण पारिवारिक एवं मातृ सुख के अभाव में रहें अतः इनका बचपन पड़ोसियों के लाड-प्यार से विकसित हुआ। पारिवारिक स्थिति आर्थिक दृष्टि से विपन्न थी। इस अभाव की स्थिति से वे विकसित होते रहे। सर्वेश्वर मेधावी छात्र थे। अतः उनकी प्रारंभिक शिक्षा बस्ती के गवर्नमेंट स्कूल से हुई तथा नौंवी कक्षा में क्रांतिकारी कार्यों के लिए उनको स्कूल से निकाल दिया गया। उन्होंने वहीं के 'एंग्लो संस्कृत स्कूल' से 1942 में हाईस्कूल पास किया, किंतु घर की आर्थिक स्थिति को दृष्टि में रखकर उनके पिताजी ने उनके लिए बस्ती की कचहरी में नौकरी की बात कर ली थी, किंतु माँ की इच्छा और प्रोत्साहन था कि वे आगे पढ़ें, उनकी यह इच्छा भी पूरी हुई। वे 1944 में इंटर पास कर अपने मित्र महेंद्र प्रताप के साथ इलाहाबाद चले आए और 1946 में बी.ए.

---

[233] तार सप्तक, सं.अज्ञेय-पृ.165
[234] ठण्डा लोहा, धर्मवीर भारती-पृ.2

तथा 1949 में एम.ए. की उपाधि प्राप्त की। सर्वेश्वर का विवाह अपने माता-पिता की इच्छानुसार 'विमला' जी से हुआ। उनसे दो पुत्र हुए-विभा और शुभा। कुछ कारणवश उनकी पत्नी विमला की आकस्मिक मृत्यु हो गई किंतु सर्वेश्वर जी ने दोबारा विवाह करना अस्वीकार किया। अतः बच्चों को बुआ ने पाल-पोसकर बड़ा किया। पत्नी की मृत्यु के बाद उनके जीवन में निराशा आ गई और इसी निराशा को उन्होंने अपनी विभिन्न कविताओं में अभिव्यक्त किया है। सर्वेश्वर जी जीविकोपार्जन के लिए कुछ समय इलाहाबाद के ए.जी.आफिस में यू.डी.सी. के पद पर रहे और 1960 में आकाशवाणी लखनऊ में रहे तथा 1964 में दिनमान के उपसंपादक के रूप में नियुक्त हुए। 1982 में 'पराग' के संपादक के रूप में कार्य किया इसके अलावा कुछ समय तक मास्टर और क्लर्क की नौकरी इन्होंने की थी। सर्वेश्वर का जीवन सतत संघर्ष से पूर्ण रहा। इसी संघर्ष के साथ 23 सितंबर 1983 को इनकी मृत्यु हो गई।

<u>रचना संसार</u>

सर्वेश्वर हिंदी साहित्य जगत् में कवि, नाटककार के रूप में प्रख्यात हैं। अतः इन विधाओं के साथ ही उन्होंने कहानी, उपन्यास, रिपोर्ताज, बाल साहित्य आदि क्षेत्रों में लेखन किया। सर्वेश्वर का साहित्य विविध विधाओं में व्याप्त है। सर्वेश्वर के रचना संसार पर विचार करते हुए कृष्णदत्त पालीवाल ने लिखा है-"सर्वेश्वर के काव्य जीवन का आरंभ सन् 1949 ई. के आसपास होता है। कवि, नाटककार, कहानीकार, उपन्यासकार, बाल साहित्य के लेखक, प्रखर पत्रकार, यात्रा संस्मरणकार और कुछ पुस्तकों के संपादक सर्वेश्वर का व्यक्तित्व और कृतित्व बहुमुखी है।"[235] सर्वेश्वर की रचनाओं का विधागत परिचय निम्न रूप से है-

<u>कविता</u>

---

[235] सर्वेश्वरदयाल सक्सेना, कृष्णदत्त पालीवाल-पृ.23

काठ की घंटियाँ (1959), बाँस का फूल (1963), एक सूनी नाव (1966), गर्म हवाएँ (1969), कुआनो नदी (1973), जंगल का दर्द (1973), खुंटियों पर टंगे लोग (1982), (साहित्य अकादमी पुरस्कृत), कोई मेरे साथ चले (1985), मृत्योपरांत।

नाटक

लड़ाई (1970), बकरी (1974), कल भात आएगा (1978), गरीबी हटाओ (1979)

बालनाटक

लाख की नाक (1974), भों भों खों खों (1975), हाथ की पाँ (1976), अनाप शनाप (1978)

उपन्यास

सूने चौखटे (1974), सोया हुआ जल (1977)

कहानी संकलन

कच्ची सड़क (1978), अंधेरे पर अंधेरा (1980), बदलता हुआ कोण (1982)

बाल कविता

बतूता का जूता (1975), महंगु की टाई (1974), बिल्ली के बच्चे (1976)

यात्रा संस्मरण

कुछ रंग कुछ गंध (रूस यात्रा) 1976

निबंध

चरचे और चरखे (1986)

काव्य विषयक मान्यताएँ

सर्वेश्वर दयाल सक्सेना हिंदी 'तीसरा सप्तक' में संकलित कवि एवं नई कविता के महत्वपूर्ण कवि हैं। उनकी काव्य विषयक धारणाएँ एवं मान्यताएँ सप्तक में लिखित वक्तव्य से अभिव्यक्त होती है। तीसरा सप्तक में दिये हुए प्रथम परिच्छेद का सार है कि "जो सत्य है उसे चुपचाप अपनाए रहने भर से काम नहीं चलेगा। बल्कि जो असत्य है उसका विरोध करना पड़ेगा और मुँह खोलकर कहना

पड़ेगा कि वह गलत है।"[236] इससे स्पष्ट है कि सर्वेश्वर अभिव्यक्ति स्वातंत्र्य पर विशेष जोर देते हैं। सर्वेश्वर के संबंध में विचार करते हुए संतोष कुमार तिवारी लिखते हैं "'सर्वेश्वर' अभिव्यक्ति स्वातंत्र्य पर विशेष जोर देते हैं और यही वजह है कि वे संघर्षशील जनवादी रचनाकार के रूप में 'संकल्पों की मीनारें' खड़ी करते हुए कविता की संवेदना के गहनतम स्तर तक ले जाते हैं। सर्वेश्वर में व्यापक जीवन दर्शन है। वयस्क समझदारी है और ईमानदार अभिव्यक्ति है। उन्होंने साहित्यकार का अनुभव प्रवण, लोकजीवन अपनाया है।"[237] सर्वेश्वर ने कविता के वस्तु-रूप पर विचार करते हुए अपने वक्तव्य में स्पष्ट रूप से कहा है-"मैं विषयवस्तु को रूप विधान से अधिक महत्व देता हूँ और मानता हूँ कि संपूर्ण नई कविता ने रूप विधान से अधिक विषयवस्तु पर जोर दिया है। चाहे उसके कवियों ने जो भी कहा हो। रूप विधान का पूर्ण अनुशासन मानने पर यदि विषय की तीव्रता दबती है और उसका प्रभाव कम होता है तो मैं अनुशासन भंग करने के लिए तैयार हूँ क्योंकि मेरे निकट विषय की तीव्रता और पूर्ण प्रभाव रूप विधान से अधिक महत्वपूर्ण है। विषय वस्तु और रूपविधान दोनों के आश्चर्यजनक संतुलन के लिए निपुणता की आवश्यकता है।"[238]

सर्वेश्वर की काव्य विषयक धारणा व्यापक है। वे कविता को व्यापक दृष्टि से देखते हैं। उनकी मान्यता है कि-"संसार का कोई भी विषय कविता का विषय है और कवि की दृष्टि इतनी व्यापक होनी चाहिए कि वह उसे उस कोण से भी देख सके जहाँ से वह संवेदना को छूता हो; यह सत्य स्वीकार कर लिया जाता है कि भावनाओं की नई परतें खोलने के और संवेदना के गहनतम स्तरों को छूने के लिए कविता ने सदैव नए रूप विधान धारण किये हैं।"[239] उपर्युक्त मंतव्य से स्पष्ट होता है कि सर्वेश्वर कविता को व्यापक भावभूमि और विस्तृत विषय की दृष्टि से देखते हैं, और कवि की व्यापक संवेदनात्मक दृष्टिकोण की मांग करते हैं, भावना, अनुभूति की अभिव्यक्ति के लिए नए रूपविधान

---

[236] तीसरा सप्तक, सं.अज्ञेय-पृ.329
[237] नए कवि : एक अध्ययन, डॉ.संतोष कुमार तिवारी-पृ.199
[238] तीसरा सप्तक, सं.अज्ञेय-पृ.333
[239] तार सप्तक, सं.अज्ञेय-पृ.331

पर बल देते हैं। कविता की अनुभूति और शब्दविधान ढालने की असमर्थता व्यक्त करते हुए कवि लिखता है-

"आग मेरी धमनियों में जलती है।
पर शब्दों में नहीं ढल पाती।
मुझे एक चाकू दो
मैं अपनी रग काटकर दिखा सकता हूँ
कि कविता कहाँ है।"[240]

इन पंक्तियों से स्पष्ट है कि कवि कविता को अपनी आंतरिक संवेदनाओं की अभिव्यक्ति का साधन मानता है और उस अभिव्यक्ति के लिए शब्द और रूपविधान की असमर्थता प्रतिपादित करते हुए नए अभिव्यक्ति के रूपविधान की खोज करता है।

साहित्य की कलावादी और जनवादी दृष्टि तथा साहित्य और राजनीति पर विचार करते हुए सृजन के संबंध में सर्वेश्वर ने हिंदी साहित्य की दो साहित्य दृष्टियों की चर्चा की है-"एक कलावादी और दूसरी जनवादी सर्वेश्वर ने इन दृष्टियों को अधूरी और खंडित कहा है। क्योंकि "कलावादी चाहता है कि सम-सामयिक, सामाजिक राजनीतिक यथार्थ से कटकर प्रेम, प्रकृति अध्यात्मक जैसे शाश्वत विषयों पर ही लिखा जाए और जनवादी चाहते हैं कि इन शाश्वत विषयों को तिलांजली देकर केवल शोषण और जन समस्याओं पर ही लिखा जााए, वह भी उनके संगठन के चष्में देकर। अन्यथा जो आप लिखेगें वह आम आदमी से जुड़ा होकर भी जनसाहित्य नहीं होगा। लेखक पहले एक राजनीतिक संगठन का सदस्य हो फिर जनसाहित्य लिखे। सो जनवादी समीक्षक के पास कला दृष्टि नहीं है और कलावादी समीक्षक के पास जनवादी दृष्टि नहीं है। ... हम एक समग्र दृष्टि चाहते हैं अधूरी दृष्टि नहीं अपनाते, हम समग्रता में रचते हैं। न एक की तरह आंतरिक यात्रा को ही सब कुछ मान बैठते हैं, न दूसरे की तरह बाह्य यात्रा को ही। हमारी निजता भी समाज का हिस्सा है, समाज से ही

---

[240] कुआनो नदी, सर्वेश्वरदयाल सक्सेना-पृ.90

हमारी निजता की पहचान बनती है।"[241] स्पष्ट ही सर्वेश्वर साहित्य में कलावादी और जनवादी दृष्टि का संतुलन आवश्यक मानते हैं और इनके अनुसार रचना तभी स्वयंपूर्ण है जब इन दोनों दृष्टियों का संतुलन उसके सृजन में होगा। अतः साहित्य के दलगत अतिवादों को वे महत्व नहीं देते। वह रचना को समाज से निर्मित और समाज का अनिवार्य अंग मानते हैं। सर्वेश्वर की कला संबंधी धारणा है- "मूलतः कला का काम मनुष्य विरोधी स्थितियों के बीच संवेदना को मानवीय बनाना है।"[242] स्पष्ट है कि सर्वेश्वर साहित्य की मानवीयता पर अधिक बल देते हैं।

सर्वेश्वर काव्य की भाषा का विवेचन करते हुए भाषा और छंद लय के संबंध में लिखते हैं "गद्य की लय मेरे अपने पढ़ने की लय से अनुशासित है। छंद की लय से नहीं। विषय के अनुरूप ही इसका प्रयोग होता है। यों कहिए कि प्रयोग की विवशता होती है। यदि विषय की प्रभावोत्पादकता इससे बढ़ती है तो मैं इसका प्रयोग करता हूँ।"[243] काव्य की भाषा के संदर्भ में सर्वेश्वर की मान्यता उनके कथन से स्पष्ट होती है। उन्हीं के शब्दों में "साधारण बोलचाल की भाषा में जो कविताएँ नहीं लिखी जा सकती उन्हें मैं अभी नहीं लिख रहा हूँ। काव्य की भाषा जिस गहनतम अनुभूतियों की अभिव्यक्ति में साधारण बोलचाल की भाषा से अलग चली जाती है या जाने के लिए विवश है उसका सामना अभी मुझे नहीं करना पड़ा। उसकी अभिव्यक्ति साधारण बोलचाल की भाषा से हो जाती है। ... वास्तविक कविता वह होगी या वह, उसे तोलने के लिए जो भाषा की तराजु उठाएँगे, वे तब वैसी गलती करेंगे जैसे कुछ लोग छायावादी भाषा लिखकर बात आज कर रहे हैं।"[244] अतः सर्वेश्वर कविता की भाषा को अभिव्यक्ति संप्रेषण का साधन मानते हैं। वे छायावादी भाषा समान बिंब छायाभाषा निर्माण करने के पक्ष में नहीं है। अंततः कविता के कथ्य संबंधी उनकी मान्यता है "कवि के वक्तव्य और कविता के वक्तव्य में अंतर होता है। कविता अपना वक्तव्य स्वयं देती है, कवि की

[241] चरचे और चरखे, सर्वेश्वरदयाल सक्सेना-पृ.197-198
[242] चरचे और चरखे, सर्वेश्वरदयाल सक्सेना-पृ.192
[243] तीसरा सप्तक, सं.अज्ञेय-पृ.333
[244] तीसरा सप्तक, सं.अज्ञेय-पृ.334

वकालत उसके लिए जरूरी नहीं है। क्योंकि आगे भी यदि उसे रहना है तो अपना वक्तव्य स्वयं देना होगा, कवि सदैव साथ नहीं रहेगा। ऐसी कविता जो रक्षणीय हो, उसका न रहना ही अच्छा है।"[245]

सारांशतः उपर्युक्त विवेचन के आधार पर सर्वेश्वर की काव्य विषयक धारणाएँ एवं मान्यताएँ स्पष्ट होती हैं। उनके अनुसार कविता में कोई अतिवादी (कलावादी और जनवादी) दृष्टिकोण होकर उसमें संतुलन होना चाहिए। वे कविता को अभिव्यक्ति का प्रबल माध्यम मानते हैं। उनकी कविता के संबंध में धारणा निम्न है-

"आग मेरी धमनियों में जलती है
पर शब्दों में ढल नहीं पाती।"

4.6 भवानी प्रसाद मिश्र

दूसरा सप्तक में संकलित भवानी प्रसाद मिश्र हिंदी साहित्य की गांधीवादी विचारधारा के प्रमुख रचनाकार हैं। श्री भवानी प्रसाद मिश्र का जन्म 29 मार्च 1913 को टिगरिया नामक साधारण गाँव जिला हौशंगाबाद मध्यप्रदेश में एक साधारण किसान परिवार में हुआ। भवानी जी का बचपन खण्डवा, बैतुल और सुहागपूर में बीता एवं प्रायमरी शिक्षा सुहागपूर में हुई। हाई स्कूल की शिक्षा नरसिंहपूर एवं हौशंगाबाद में हुई। हाईस्कूल के उपरांत जबलपुर रार्बटसन कॉलेज में अध्ययन करते हुए हिंदी संस्कृत और अंग्रेज़ी विषयों को लेकर सन् 1935 को बी.ए. किया उसके बाद स्नातकोत्तर शिक्षा में उनकी दिलचस्पी नहीं रही। भवानी प्रसाद ने अपनी आयु के 14-15 साल से ही लिखना आरंभ कर दिया था। भवानी जी का गांधी के विचारों के प्रति आकर्षण रहा साथ ही गांधी विचारों से संबंधित पं.माखनलाल चतुर्वेदी, पं.बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी जैसे गाँधीवादी रचनाकारों से संपर्क रहा। सन् 1942 के भारत छोड़ो आंदोलन में भाग लिया तथा सन् 1945 तक जेल में रहे। जेल में विनोबा भावे, दादा धर्माधिकारी, काका कालेलकर, सत्यनारायण बजाज के साथ परिचय हुआ तथा सन् 1946 में महिला आश्रम, वर्धा में अध्यापन कार्य किया। भवानी

---

[245] तीसरा सप्तक, सं.अज्ञेय-पृ.334

प्रसाद जी पत्रकारिता के क्षेत्र से जुड़े रहे। 1949 में से हनुमान प्रसाद तिवारी के साथ मिलकर नागपुर से प्रकाशित 'विचार' साप्ताहिक का संपादन किया। सन् 1950-51 तक राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा में रहे। हैदराबाद आकर जुलाई 1952 से मई 1954 तक 'कल्पना' के संपादन में सहयोग दिया। बंबई आकाशवाणी से संबंधित रहे तथा 1957 में इनका दिल्ली आकाशवाणी में स्थानांतरण हुआ। भवानी प्रसाद मिश्र जी राष्ट्रीय आंदोलन और गांधी दर्शन से जुड़े रहे। भवानी जी प्रमुखतः कवि के रूप में हिंदी साहित्य में लोकप्रिय हैं। साथ ही इन्होंने अनुवाद और 'गाँधी वाङ्मय' का संपादन भी किया।

रचना संसार

भवानी प्रसाद मिश्र अज्ञेय द्वारा संपादित 'दूसरा सप्तक' के महत्वपूर्ण कवि हैं, इसके साथ इनके निम्न काव्य संकलन प्रकाशित हैं। यथा-गीत फरोश (1956), अंधेरी कविताएँ (1968), चकित है दुःख (1968), गांधी पंचशती (1969), बुनी हुई रस्सी (1971), खुशबू के शिलालेख (1973), व्यक्तिगत (1974), परिवर्तन जिए (1976), इदं न मम (1977), कालजयी (खंडकाव्य) (1978), त्रिकाल संध्या (1978), शरीर कविता फसले (1980), अनाम तुम न आते (1980) मानसरोवर दिन (1980), संप्रति (1982), नीली रेखा (1984), तूस की आग (1985)

काव्य विषयक मान्यताएँ

भवानी प्रसाद मिश्र हिंदी के चर्चित गांधीवादी कवि हैं। उनकी काव्य विषयक मान्यताएँ दूसरा सप्तक के वक्तव्य तथा उनकी कविताओं से स्पष्ट होती हैं। भवानी जी की कविता साधारण जनमानस की संवेदनाओं की तथा कवि के संवेदनात्मक अनुभवों को अभिव्यक्त करती है। अपनी रचना प्रक्रिया तथा अपने जीवन के बारे में बताते हुए कवि, जीवन और कविता के संबंध को रेखांकित करते हुए लिखते हैं-"छोटी सी जगह में रहता था, छोटी सी नदी नर्मदा के किनारे, छोटे से पहाड़ विंध्याचल के आंचल में छोटे-छोटे साधारण लोगों के बीच। एक दम घटना-विहीन, अविचित्र मेरे जीवन की कथा है। साधारण मध्यवित परिवार में पैदा हुआ, साधारण पढ़ा लिखा और काम जो भी किए वे भी

असाधारण से अछूते। मेरे आस-पास के तमाम लोगों की सी सुविधाएँ-असुविधाएँ मेरी थीं। मैं नहीं जानता किस बात को सुनाने लायक मान कर सुनाने लगूँ-खास कर जब उस सुनाने का मतलब यह माना जाएगा कि इस सब का मेरी कविता का गहरा संबंध है।"[246] उपर्युक्त कवि कथन से यह विदित होता है कि कवि अपनी काव्य रचना की रचना प्रक्रिया को अत्यन्त व्यापक और अपने जीवनानुभव से संबद्ध मानता है। वह यह नहीं जानता कि कौन-सी विशेष घटना उसकी काव्य की रचना प्रक्रिया में अंतर्निहित है, अतः वह जीवन की सभी घटनाओं को काव्य की प्रेरणा मानता है। कवि का सामाजिक परिवेश एवं व्यक्तित्त्व सादगी भरा तथा गांधी दर्शन से प्रभावित रहा। यही जीवन संदर्भ उनकी कविता में झलकता है। वे कविता में अलंकरण और अन्य उपकरण लाकर चमत्कार निर्माण नहीं करते बल्कि अपने अनुभवों को कविता की रूप-वस्तु में सरलता से अभिव्यक्त करते हैं। उनकी कविता की विषय वस्तु साधारण जनमानस से भरी हुई है। वह जनता, लोकवादी विचारधारा से तथा अहिंसावादी, परोपकार भावना को अभिव्यक्ति देती है।

भवानी प्रसाद मिश्र के काव्य पर विचार करते हुए संतोष कुमार तिवारी लिखते हैं-"कवि युगबोध और युगचेतना से असंपृक्त नहीं है। उसमें समसामयिकता के प्रति जागरूकता है, साथ ही शाश्वत जीवंत तत्त्वों का समाहार भी वह हमें तीखी किरणों से कुम्हलाना नहीं है, सूरज की रोशनी से आँखें मिलाकर नींद को प्रकाशमय जागृति में दबलना और अपनी बुद्धि को एक सुनिश्चित चिंतन और दिशा देती है। कवि में निःसंदेह युग चेतना के अनुरूप स्वस्थ प्रतिबद्धता और समष्टि चिंतन का प्रेरक भाव बिंदु भी।"[247] कवि भवानी प्रसाद मिश्र अनुभूति की सच्चाई और अभिव्यक्ति की इमानदारी पर बल देते हैं। उनके अनुसार कवि की पहली शर्त है कि 'वह मन की बात कहें'। इसका धरातल समाज से जुड़ा हुआ हो और भाषा भी सामाजिक बोलचाल की हो। भवानी प्रसाद मिश्र का स्पष्ट मत है कि कविता केवल सजावट नहीं है, कविता के लिए आवश्यक है कथ्य, शैली नहीं। कविता के कथ्य

---

[246] दूसरा सप्तक, सं.अज्ञेय-पृ.30

[247] नए कविः एक अध्ययन, संतोष कुमार तिवारी-पृ.50 भाग-4

और शैली के संबंध में उनका स्पष्ट मत है-"शैली कविता की प्रधान बात तो होती है, मगर आखिरकार वह किसी भीतरी चीज़ का बाहरी रूप है, सर्वाधिक प्रधान बात तो वह नहीं ही है।"[248]

कवि भवानी प्रसाद मिश्र अपनी काव्य रचना प्रक्रिया के प्रभाव ग्रहण की बात अस्वीकार करते हैं, उनका मानना है कि उनके पूर्ववर्ती और परवर्ती कवियों में किसी का प्रभाव उन पर नहीं है न ही भारतीय और न पाश्चात्य। भाषा के संदर्भ में उन पर प्रभाव वर्ड्स्वर्थ का है। उन्हीं के शब्दों में "अंग्रेज़ी कवियों में मैनें वर्ड्स्वर्थ पढ़ा था और ब्राउनिंग विस्तार से। बहुत अच्छे मुझे लगते थे दोनों। वड्स्वर्थ की एक बात मुझे पटी की कविता की भाषा यथासंभव बोलचाल के करीब हो। तत्कालीन हिंदी कविता इस खयाल के बिलकुल दूसरी सिरे पर थी। तो मैंने जाने अनजाने कविता की भाषा सहज रखी।"[249] भारतीय कवि के प्रभाव के संबंध में स्वयं कवि का मानना है कि उन पर बांग्ला कवि रवींद्रनाथ ठाकुर का प्रभाव है और उनका साहित्य पढ़ने के लिए उन्होंने बांग्ला सीखी। कुछ कविताओं पर अन्य कवियों से अधिक रवींद्रनाथ ठाकुर की छाप अधिक है।

कवि अपने अनुभवों की अभिव्यक्ति को प्राथमिकता देता है। वह अपने स्वानुभूत चेतना की अभिव्यक्ति मानने के पक्ष में है। उनके शब्दों में-"मैं भगवान की बात कम करता हूँ-जब करता हूँ तो रहस्य की तरह नहीं। क्योंकि इस सिलसिले में मेरे सामने जो कुछ साफ है वह खूब साफ है और जो साफ नहीं है उसकी बात करना दूसरों के लिए एक उलझन की संभावना पैदा करने जैसा है कदाचित् इसीलिए मैंने अपनी कविता में प्रायः नहीं लिखा है जो मेरी ठीक पकड़ में आ गया है। दूर की कौडी लाने की महत्वाकांक्षा भी मैंने कभी नहीं की।"[250]

भवानी जी की कविता पर विचार करने से उनकी यह बात अधिक स्पष्ट होती है। उनकी कविता प्रयत्नों ओर अद्भुत बातों से नहीं बनी है जिस भावना विचार पर उनकी दृढ़ दृष्टि और मान्यता है उसी को उन्होंने कविता के रूप में अभिव्यक्त किया। पाठक को उलझन में डालने वाली शब्द-बिंब रचना इनके काव्य में अनुपलब्ध है। 'दूर की कौडी' इनके काव्य में नहीं के समान है।

---

[248] बुनी हुई रस्सी, भवानी प्रसाद मिश्र-पृ.1 अपनी ओर से
[249] दूसरा सप्तक, सं.अज्ञेय-पृ.4
[250] दूसरा सप्तक, सं.अज्ञेय-पृ.5

भवानी प्रसाद मिश्र की मान्यता है कि कविता की विषय-वस्तु अत्यन्त व्यापक है और साधारण से लेकर अति-उच्च संवेदना काव्य का विषय है। किंतु उन्होंने साधारण भावभूमि को चुना। अपनी काव्य वस्तु के संबंध में वे लिखते हैं-"बहुत मामूली रोजमर्रा के सुख-दुःख मैंने इनमें कहे हैं जिनका एक शब्द भी किसी को समझाना नहीं पड़ता।"[251] अर्थात् वे बोधगम्यता को काव्य का मानदंड मानते हैं। वे आगे लिखते हैं-"शब्द टप-टप टपकते हैं फूल से, सही हो जाते हैं मेरी भूल से। बेशक 'भूल से' ही यह सब मेरे हाथों बन पड़ता है, क्योंकि कभी कोई दर्शन, वाद या जिसे टेकनिक कहते हैं मैंने नहीं सोचा। बहुत से खयाल अलबत्ता मेरे हैं, मगर मैं देखता हूँ कि ज्यादातर लोगों के खयाल भी तो वही है-वे भले ही उन खयालों के मुताबिक न करते हो।"[252] उपर्युक्त विवेचन से भवानी प्रसाद मिश्र जी की काव्य विषयक मान्यताएँ स्पष्ट होती है। वे कविता के विषय वस्तु को जनसाधारण की भावनाओं तथा संवेदनाओं से संपृक्त मानते हैं और अपने अनुभवों की प्रामाणिक प्राथमिक अभिव्यक्ति पर बल देते हैं। कविता की टेकनिक सहज साध्यता और सहज अनुभवों को मानते हैं। काव्य की भाषा पर उनका मेल वर्डस्वर्थ से बनाना है। अतः बोलचाल की सहज बोधगम्य भाषा कविता का उपकरण है।

सारांश रूप से उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि भवानी जी दूसरा सप्तक के सरल कवि हैं। उनकी काव्यानुभूति एवं साहित्यिक समझ सहज मानवीयता से विकसित है। उनका वैचारिक आधार सामाजिक स्थितियों से भरा और उन्हीं अभिव्यक्तियों को कविता मानता है।

4.7 शमशेर बहादुर सिंह

आधुनिक हिंदी कविता में शमशेर बहादुर सिंह का महत्वपूर्ण स्थान है। कवि शमशेर सिंह बहादुर का छायावादोत्तर तथा दूसरा सप्तक के कवियों में महत्वपूर्ण स्थान है तथा वे नई कविता के सशक्त रचनाकार हैं। शमशेर की कविताओं में आधुनिकता के विविध आयाम दिखाई देते हैं। उनकी काव्य विषयक मान्यताएँ दूसरा सप्तक तथा अन्य लेखन से स्पष्ट होती हैं। कवि की काव्य विषयक

---

[251] दूसरा सप्तक, सं.अज्ञेय-पृ.5
[252] दूसरा सप्तक, सं.अज्ञेय-पृ.5

मान्यताओं पर दृष्टिपात करने से पूर्व उनके जीवन के बारे में जान लेना आवश्यक है क्योंकि जीवन और सृजन का महत्वपूर्ण संबंध होता है।

कवि शमशेर का जन्म 13 जनवरी 1911 को देहरादून के एक जाट परिवार में हुआ। उनकी माता का नाम प्रभुदेई था, जिनका देहावसान शमशेर की नौं वर्ष की कोमल आयु में हुआ। शमशेर का विवाह सन् 1929 में धर्मदेवी जी से हुआ। सन् 1931 में इंटर तथा 1933 में बी.ए. की शिक्षा पूर्ण की। 1934 में बी.ए. आनर्स में अंग्रेज़ी विषय में प्रवेश लिया। किंतु पारिवारिक समस्याओं के कारण वे इसे पूर्ण नहीं कर पाए। सन् 1935 में छः वर्ष के छोटे से वैवाहिक जीवन को समाप्त कर उनकी पत्नी धर्मदेवी इहलोक की यात्रा समाप्त कर गई। पत्नी के दुःख को भुलाने के लिए व्यस्त रहे और पेंटींग आदि का अध्यापन किया। 1937 में हरिवंशराय बच्चन और पंत जी की प्रेरणा से फिर से एम.ए. अंग्रेज़ी में प्रवेश लिया और 1938 को एम.ए. पूर्वार्द्ध की परिक्षा पास की, किन्हीं कारणों से इसे भी पूर्ण नहीं कर पाए 1939 में उनके पिता तारीक सिंह का देहांत हो गया। 28 वर्ष की उम्र में उन्हें इन तीन आघातों को सहना पड़ा। अतः वे बिल्कुल अकेले पड़ गए। इसी वर्ष पंत के ‘रूपाभ’ में कार्यालय सहायक का कार्य संभाला। 1940 में बनारस से प्रकाशित होनेवाले ‘कहानी’ मासिक में त्रिलोचन के साथ संपादन सहयोग किया। इसी क्रम में वे जबलपुर गए। वहाँ शमशेर का संबंध कम्युनिस्ट पार्टी से बना तथा वे पार्टी में सक्रिय रहे। इसी दौरान इन्होंने 25 मई को सरस्वती प्रेस से ‘दो आब’ का प्रकाशन किया।

1944 में मुंबई आकर ‘इप्टा’ नामक संस्था से जुड़ गए। 1945 में पार्टी की क्युमन में रहते हुए ‘नया साहित्य’ का संपादन किया। इसी के साथ वे माया, दूसरा सप्तक आदि पत्रिकाओं से जुड़े रहे तथा अपने लेखन में सक्रिय रहें। 12 मई 1993 को अहमदाबाद में शमशेर का निधन हुआ।

<u>रचना संसार</u>

हिंदी साहित्य की काव्यधारा को शमशेर ने नवीन भावबोधों से जोड़ते हुए कविता की परंपरा को नया मोड़ दिया तथा अपने काव्य साहित्य की अमिट छाप छोड़ी। शमशेर की रचनाएँ निम्न प्रकार हैं-

कुछ कविताएँ (1959), कुछ और कविताएँ (1961), चूका भी नहीं हूँ मैं (1975), उदिता (1980), इतने पास अपने (1980), बात बोलेगी (1981), कल तुमसे होड है मेरी (1988)

काव्य विषयक मान्यताएँ

नयी कविता को नयी भावभंगिमा और नया दृष्टिकोण प्रदान करने वाले कवियों में शमशेर का महत्वपूर्ण स्थान है। अतः नई कविता में शमशेर की एक अलग 'इमेज' है। शमशेर की काव्य यात्रा छायावादोत्तर रोमेंटिक भावधारा से शुरू होकर प्रगतिवाद एवं प्रयोगवाद के घेरों को पार करती हुई नई कविता से जुड़ गई है। नए कवियों में संभवतः शमशेर जैसी विविधता अन्य कवियों में दिखाई नहीं देती। शमशेर युरोपीय रूपवाद और मार्क्सवादी साम्यवाद की विचारधारा से प्रेरित रहे। इनकी कविता में इस प्रभाव को देखा जा सकता है। शमशेर के रूपवादी शिल्प और मार्क्सवादी जीवन दृष्टि को देखते हुए आचार्य नंददुलारे वाजपेयी ने लिखा है-"प्रयोग-प्रयोगवादियों में यदि कोई प्रगतिशील संभाग हो, तो उनके प्रतिनिधि के रूप में शमशेर बहादुर को स्वीकारा जा सकता है।"[253] किंतु इसका यह अर्थ नहीं कि वे किसी वाद और घेरे के कवि हैं। इसका कारण यह है कि उन पर देश-विदेश के अनेक कवियों, चित्रकारों और संगीतकारों का प्रभाव है। शमशेर के काव्य में उनके वक्तव्यों के अनुरूप ही रचनाशीलता का अभाव है। उनमें 'सामाजिकता सामाजिक सच्चाई और लोकतंत्र की शक्तियाँ ज्यादा खुलकर नहीं बोलती।' मार्क्सवादी वैचारिकता पर उनकी कुछ कविताएँ पार्टी का मेनिफेस्टो प्रतीत होती हैं। जैसे 'वाम-वाम वाम दिशा' आदि। शमशेर कविता का भेद लोक कलाकारों में मानते हैं। उनके अनुसार "दरअसल आज की कविता का उसके भेद और गुण उन लोक कलाकारों के पास हैं जो जन-आंदोलन में हिस्सा ले रहे हैं। टूटते हुए मध्यवर्ग के मुझ जैसे कवि उस

---

[253] नई कविता, आचार्य नंददुलारे वाजपेयी-पृ.55

भेद को जहाँ वह है, वहीं से पा सकते हैं। वे उसको पाने की कोशिश में लगे हुए हैं।"[254] नई कविता के बारे में शमशेर ने सर्वाधिक ध्यान इस बात पर दिया है कि 'कविता में हम अपनी भावनाओं की सच्चाई खोजते हैं।' वे अपने वक्तव्यों के अनुसार भाषा और कला के विविध रूपों पर ज़ोर देते हैं साथ ही फैले हुए 'जीवन और उसको झलकने वाली कला के अंदर सौंदर्य की पहचान' के लिए दूसरी भाषाओं को महत्व देते हैं। 'कला का रूप निखारने और संवारने में' वे कलाकार की दिलचस्पी को स्वीकारते हैं। शमशेर का स्पष्ट मत है कि "ललित कलाएँ काफी एक दूसरे में समाई हुई हैं। तस्वीर, इमारत, मूर्ति, नाच-गाना और कविता इन सब में, बहुत एक ही बात अपने-अपने ढंग से खोलकर या छिपाकर या कुछ खोलकर कुछ छिपाकर कही जाती है। मगर इनके ये अलग-अलग ढंग दरअसल एक दूसरे से ऐसे अलग-अलग नहीं हैं जैसे कि ऊपरी तौर से लगते हैं।"[255] शमशेर चित्रकार भी थे, वे संगीत के प्रभाव को कविता में ढालने वाले कलाकार थे और उपर्युक्त वक्तव्य के अनुरूप ये तीनों बातें एक दूसरे में समायोजित हो गई हैं। उनमें ड्राइंग, पेंटिंग, संगीत और कविता एक रूप हो गई। अतः इनकी कविता से यही भाव स्पष्ट होता है। अर्थात् शमशेर की मान्यता है कि कविता भी संगीत, चित्रकारिता के समान ललित कला है। शमशेर की काव्यानुभूति पर विचार करते हुए डॉ.संतोष कुमार तिवारी ने लिखा है-"एक चित्रकार के नाते शमशेर की टेकनिक यह है कि वे विशिष्ट प्रभावपूर्ण भाव प्रसंग और घनीभूत संवेदनाओं का चित्रण करते हैं। वे उलझे हुए भाव प्रसंगों के रेशे-रेशे को उधेड़कर रख देते हैं। इसलिए उनमें संवेदनाओं की सच्चाई और अभिव्यक्ति की ईमानदारी है।"[256] शमशेर अपनी कविता में संवेदना की अभिव्यक्ति के लिए संकेतों का प्रयोग करते हैं। इस संबंध में मुक्तिबोध लिखते हैं-"शमशेर की मूल प्रवृत्ति एक इम्प्रेशनिस्टीक चित्रकार की है। इम्प्रेशनिस्टीक चित्रकार अपने चित्र में केवल उन अंशों को स्थान देगा जो उसके संवेदना ज्ञान की दृष्टि से प्रभाव पूर्ण संकेत शक्ति रखते हैं। ... दूसरे शब्दों में इम्प्रेशनिस्ट चित्रकार दृश्य के सर्वाधिक संवेदनाधात करनेवाले अंशो को प्रस्तुत करेगा और यह मानकर चलेगा कि यदि वह संवेदनाधात

---

[254] दूसरा सप्तक, सं.अज्ञेय-पृ.77
[255] दूसरा सप्तक, सं.अज्ञेय-पृ.79
[256] नये कविः एक अध्ययन, संतोष कुमार तिवारी-भाग-4-पृ.13

दर्शक के ह्रदय में पहुँच गया तो दर्शन अचित्रित अंशों को अपनी सृजनशील कल्पना द्वारा भर लेगा।"[257] अतः एक चित्रकार की दृष्टि कविता के रूप में शमशेर के काव्य में अभिव्यक्त होती है जो मनोवैज्ञानिक भाव, भावना पर प्रभाव डालती है।

शमशेर का काव्य अपनी अनुभवों की अभिव्यक्ति है। अपनी कविता की सामाजिकता पर विचार करते हुए शमशेर स्वयं लिखते हैं-"अपनी काव्य कृतियाँ मुझे दरअसल सामाजिक दृष्टि से कुछ मूल्यवान नहीं लगती। उनकी वास्तविक सामाजिक उपयोगिता मेरे लिए एक प्रश्न-सा ही रही है, कितना धुंधला ही सही। खैर, यह मेरी नितांत अपनी निजी आंतरिक भावना है।"[258] अतः शमशेर की धारणा है कविता में अपनी भावनाओं का अभिव्यक्तिकरण अपनी धारणा पर निर्भर होती है। कवि किस की अभिव्यक्ति करे वह उस पर निर्भर है, फिर भी उनकी यह 'नितांत निजीपन का संसार' व्यापक जन चेतना को अभिव्यक्त करता है, इसमें संदेह नहीं।

शमशेर कवि कर्म के बारे में मानते हैं कि कवि का कर्म अपनी भावनाओं, प्रेरणाओं को सामाजिक सत्य के रूप में ढालना है। उन्हीं के शब्दो में "कवि कर्म अपनी भावनाओं में अपनी प्रेरणाओं में, अपने आंतरिक संस्कारों में समाज सत्य के मर्म को ढालना-उसमें अपने को पाना है और उस पाने को अपनी पूरी कलात्मक क्षमता से पूरी सच्चाई के साथ व्यक्त करना है, जहाँ तक वह कर सकता है।"[259] उपर्युक्त मंतव्य से स्पष्ट है कि कवि, कविता और उसके सामाजिक संदर्भों की अभिव्यक्ति अनिवार्य मानता है, उसका कर्म मानता है। शमशेर की कविता पर छायावादी रोमांटिक भावना का प्रभाव दिखाई देता है। साथ ही उसमें जीवन का यथार्थ तत्त्व है केवल वायवी भावना नहीं है। शमशेर की कविता में मांसल प्रेम, सौंदर्य एवं इंद्रिजन्य सहज अनुभूतियाँ हैं जो उन्हें छायावादी, छायावादोत्तर रोमांटिक कवियों की भावधारा से जोड़ती हैं। शमशेर ने जीवन की सच्चाई और सौंदर्य को अपनी कला में सजीव से सजीव रूप देने की साधना की। उनकी जागृत चेतना का यह अहसास है कि "सुंदरता का अवतार हमारे सामने पल-छिन होता रहता है। अब यह हम पर है खास तौर से

---

[257] नयी कविता का आत्मसंघर्ष तथा अन्य निबंध, मुक्तिबोध-पृ.62
[258] चुका भी हूँ नहीं मैं, शमशेर-पृ.5
[259] कुछ और कविताएँ, शमशेर-पृ.5

कवियों पर, कि हम अपने सामने चारों ओर की इस अनंत अपार लीला को कितना अपने अंदर बुला सकते हैं।"[260]

उपर्युक्त विवेचन से हम शमशेर की काव्यानुभूति और उनकी काव्य विषयक मान्यताओं से परिचित हो सकते हैं। उनकी धारणाएँ इन वक्तव्यों से काफ़ी स्पष्ट होती हैं। अतः कविता वैयक्तिक जीवन और सामाजिक चेतना के रूप में अभिव्यक्त होती है।

4.8 प्रभाकर माचवे

श्री प्रभाकर माचवे हिंदी के प्रमुख अहिंदी भाषी रचनाकार हैं। इनका पूरा नाम प्रभाकर बलवंत माचवे है। श्री माचवे जी का जन्म ग्वालियर में सन् 1917 में हुआ। प्राथमिक शिक्षा ग्वालियर में तथा महाविद्यालयीन शिक्षा आगरा में हुई। आगरा से ही इन्होंने सन् 1939 में दर्शनशास्त्र और सन् 1941 में अंग्रेज़ी साहित्य विषय लेकर एम.ए. पास किया। सन् 1940 नवंबर में सेवाग्राम में इनका विवाह 'महात्मा गाँधी के निरीक्षण में संपन्न हुआ।' माचवे जी कुछ दिनों तक उज्जैन में तर्कशास्त्र के अध्यापक रहे।

माचवे जी को चित्रकला और यात्रा-भ्रमण में विशेष रुचि थी। अतः इन्होंने अनेक यात्राएँ की। माचवे जी ने सन् 1948 में अध्यापकीय पेशा और उज्जैन नगर दोनों को छोड़ दिया तथा दिल्ली, इलाहाबाद, नागपुर में ऑल इंडिया रेडियो से जुड़े रहे। छः वर्ष AIR में कार्य करेन के उपरांत वे सन् 1954 में इस अरुचिकर नौकरी को छोड़कर साहित्य अकादमी में सहायक मंत्री रहे तथा बीच में दो वर्ष के लिए (1959-60) अमेरिका विस्कॉन्सिन विश्वविद्यालय में अतिथि अध्यापक के रूप में रहे तथा लोक सेवा आयोग में सदस्य के रूप में भी कार्य किया। प्रभाकर माचवे हिंदी और मराठी साहित्य के लेखक हैं। साहित्य की कविता, कहानी, परिहास, आलोचना उपन्यास आदि विधाओं में इन्होंने लेखन किया साथ ही विविध पत्र पत्रिकाओं में इनकी रचनाएँ छपती रहीं।

श्री प्रभाकर माचवे निरंतर सृजनरत रहे तथा हिंदी-मराठी अंग्रेज़ी की कविताओं का अनुवाद करते रहे। सन् 1957 में इन्होंने 'निर्गुण मराठी-हिंदी संत काव्य' इस विषय पर शोधकार्य कर पी-

---

[260] दूसरा सप्तक, सं.अज्ञेय-पृ.80

एच.डी. की उपाधि प्राप्त की। माचवे जी का रचना संसार उनके व्यापक भावबोध तथा अनुभवों की अभिव्यक्ति है और मानवीयता का आधार बोध इनके काव्य की मूलभूमि है।

रचना संसार

प्रभाकर माचवे जी 'तार सप्तक' में संकलित हिंदी के सशक्त रचनाकार हैं। उन्होंने हिंदी और मराठी साहित्य की विविध साहित्य विधाओं में लेखन किया। उनकी रचनाएँ पाठक से सीधा संबंध स्थापित करती हैं। वे कला को किसी वाद में नहीं बाँधते। वे कविता को जनता के अनुभवों तथा उनकी भावना को वहन करने का साधन मानते हैं। श्री प्रभाकर माचवे जी की रचनाएँ निम्न रूप से हैं-

कविता

स्वप्न भंग (1954), अनुक्षण (1959), तेल की पकौड़ियाँ (1961), में पल

निबंध

खरगोश के सींग (1950), बेरंग (1957)

उपन्यास

परंतु (1952)

काव्य विषयक मान्यताएँ

प्रभाकर माचवे हिंदी साहित्य की प्रयोगवादी धारा के प्रमुख नये कवि हैं। उनकी रचनाएँ अपनी विषय-वस्तु और अभिव्यक्ति के उपादानों से सीधा पाठक के साथ तादात्म्य बनाती हैं और पाठकों से संवाद करती हैं। उनका काव्य सामान्य जन जीवन को अभिव्यक्ति देता है। वे कविता में आत्मवंचना एवं भावाडंबर को स्थान नहीं देते हैं। 'अपनी कविता' तथा 'कविता' पर विचार करते हुए तार सप्तक के 'वक्तव्य' में काव्य विषयक धारणाएँ और मान्यताओं की अभिव्यक्त की हैं। वे भावुकताजन्य आत्मसमर्थन से पाठकों को पूर्वग्रह दूषित करने के विपक्ष में हैं। वे कविता और पाठक के संबंध में विचार करते हुए लिखते हैं-"कविता और पाठक के बीच में व्यक्ति कवि को लाना मैं अवांछित समझता हूँ। अतः 'अपनी' कविता के विषय में मौन रहकर जब कविता मात्र पर, कविता नामक जाति बोधक संज्ञा पर मुखर होने का विचार करता हूँ तब काव्य रचना के आदि कारण और अंतिम हेतु के संबंध में भी कोई सर्वमान्य नियम बनाना मुझे तर्कसंगत नहीं जान पड़ता। कला की

अपनी स्वयं-निर्णीत तर्क पद्धति होती है।"[261] उपर्युक्त कथन से प्रभाकर माचवे जी कविता और पाठक के बीच किसी अन्य की उपस्थिति को ठीक नहीं मानते। कविता और पाठक का सीधा संबंध वे मानते हैं। क्योंकि कविता कवि की नितांत सीधी अनुभूति होती है तथा पाठक उसे जिस प्रकार समझे समझ लें। कविता की रचना प्रक्रिया वस्तु-विषय, व्यंजना आदि के संबंध में विचार करते हुए वे लिखते हैं-"कवितागत रोमांस और यथार्थ, एक ही कोण की दो भुजाएँ हैं। रोमांस स्वस्थ मन का भावनात्मक रुख है, यथार्थ उसी की बुद्धिगत परिकल्पना। कोलरिज का एक बहुत अर्थपूर्ण कथन है कि 'गहरी भावनाएँ गहरे विचार की कोख से जन्मती हैं।' आज हिंदी कविता में रोमांस के छिछले और गंदले हो जाने के कारण यथार्थ पर अधिक जोर दिया जा रहा है। यह अंशतः आवश्यक और इष्ट भी है। पर यही स्थिति क्या सदा के लिए रहेगी? युग की वाणी जैसे गरीबों पर निरे निष्क्रीय आँसु बहाकर या बुर्जुआ को दस-पाँच गाली देकर समाप्त नहीं हो जाती, वैसे ही युग-युग की वाणी भी मर्मियों की भाषा का विवेकशून्य अनुकरण कर, अप्रस्तुत अलंकार योजना से ही पूरी नहीं होती। "[262] इस कथन से माचवे जी की विषयवस्तु तथा भाव के संदर्भ की मान्यता स्पष्ट होती है। उनके अनुसार कविता में गहरी भावनाओं का अभिव्यक्तिकरण करने के लिए प्रथम विचार, भावनाएँ गहरी होनी चाहिए। वह यथार्थ केवल बाहरी अंकन का नहीं बल्कि आंतरिक आत्मानुभूति का मानते हैं। वे ऊपरी तौर पर भावुकता और गाली-गलौज को कविता नहीं मानते न ही कविता का यथार्थ। वे कवितागत मौलिकता का अर्थ अंशांकन में मानते हैं और वह अंशांकन है सामाजिक परिपार्श्व में व्यक्ति की मानसिक प्रभाव-प्रक्रिया, वेदना-संवेदना, प्रगति-अगति आदि का प्रामाणिक बिंब चित्रण है।"[263] कवि का मानना है कि "मैं विशेष को 'साधारण' से अविभाज्य मानता हूँ, एक ओर जहाँ 'स्वांत सुखाय' को स्वरति कहने में नहीं हिचकता, दूसरी ओर त्रॉत्स्की के 'कला हथौडा है'- वाले

---

[261] तार सप्तक, सं.अज्ञेय-पृ.183
[262] तार सप्तक, सं.अज्ञेय-पृ.183
[263] तार सप्तक, सं.अज्ञेय-पृ.184

नारे से भी सहमत नहीं होना चाहता।"[264] अतः माचवे जी की धारणा है कि 'कला की अपनी स्वनिर्णित एक पद्धति होती है।'

छायावादी काव्यधारा और उस प्रकार की तद्युगीन नयी कविता की अभिव्यक्ति के संबंध में वे लिखते हैं-"आधुनिक हिंदी कविता में आत्म-रति, मृत्यु-प्रेम और संकेतों से स्वप्नपूर्ति करने की आदत के कारण घोर अनिश्चय ये तीन दोष (मनोविज्ञान की शब्दावली में ऑटो-एरोटिज्म, नेक्रोफिलिया और एबूलिया) इतने स्पष्ट हैं कि उन्हें प्रमाणित करने की आवश्यकता नहीं। छायावाद हिस्टीरिया की भांति हिंदी कविता का एक रोग है। दोनों में स्मृतियों की प्रच्छन्न और अज्ञान पुनरावृत्ति तथा तज्जन्य अहेतुक त्रास (फ्रायड की भाषा में एर्सार्ट्ज बिल्डुंग और प्लोटिएरेण्डे आंग्स्ट) दिखाई देते हैं। अतः एक तरुण, स्वार्थ मना कवि के लिए छायावाद का माध्यम स्थविर, स्त्रैण और जीर्ण जान पड़ता है।"[265] माचवे जी कविता को सीधे-सीधे पाठकों से सीधे- संपर्क बनाने का माध्यम मानते हैं। अतः उसमें छायावाद समान अस्पष्टता, सूक्ष्मता उन्हें पसंद नहीं है। अतः वे उसकी आलोचना करते हैं। हिंदी कविता की भविष्य की संभावना पर विचार करते हुए माचवे जी वर्तमान कविता पर विचार करते हुए उसके गुण और संभावना पर विचार करते हुए लिखते हैं-"हिंदी कविता में एक समय की बहुत लोकप्रिय बनी हुई राष्ट्रीयतावाद की लहर अब धीमे-धीमे मंद पड़ती जा रही है क्योंकि छायावाद और प्रगतिवाद दोनों के समन्वय-जन्य दोष इसमें इकट्ठे आ गए हैं, क्योंकि वे प्रगति को छाया समझते हैं, और छाया को ही प्रगति। इस प्रकार वस्तु की दृष्टि से हिंदी कविता में अभी विषयों की-विविधता, व्यंग्य का तीक्ष्ण और सुरुचिपूर्ण प्रयोग, प्रकृति के संबंध में अधिक वैज्ञानिक दृष्टिकोण, जन-जीवन के निकटतम जाकर ग्राम गीत, लोक गाथा और बाजारू कहलाई जाकर हेय मानी जानेवाली बहुत सशक्त और मुहावरेदार जबान से नए-नए शब्द रूपों और कल्पना चित्रों को ग्रहण करना, और प्रयोगशील अभिव्यंजना के प्रति औदार्य आना चाहिए।"[266]

---

[264] तार सप्तक, सं.अज्ञेय-पृ.184
[265] तार सप्तक, सं.अज्ञेय-पृ.184
[266] तार सप्तक, सं.अज्ञेय-पृ.185

कविता की भाषा के संदर्भ में विचार करते हुए माचवे जी ने लिखा है कि "कवितागत भाषा को भावानुकूल, अदलने-बदलने का पूरा अधिकार होना ही चाहिए। ज्यों-ज्यों कविता की भाषा अधिकाधिक आम जनता की भाषा बनती चलेगी, उसमें प्रादेशिक शब्द अधिक आएँगे, और यह इष्ट ही होगा। शब्दों की अभिधामूला लक्षणा की अपेक्षा व्यंजनाशक्ति पर मेरी अधिक श्रद्धा है।"[267] अतः वे कविता में जनभाषा तथा जनता की संवेदना पर अधिक बल देते हैं। कवि को अपनी अभिव्यक्ति व्यापक बनाने के लिए व्यापक भाषा-संवेदना को अपनाना चाहिए।

कविता के कल्पना तत्व पर विचार करते हुए वे लिखते हैं-"हमारे यहाँ सूझ और कल्पना को कविजन और आलोचक भी प्रायः पर्यायवाची मान लेते हैं। परंतु मनोवैज्ञानिक कहेंगे कि यह बात सच नहीं है। कल्पना तो वैसे अनेक प्रकार की हो सकती है, जिसमें से काव्य में तीन तरह की कल्पना पायी जाती है-पुनर्निर्माणात्मक, रचनात्मक, मौलिक। अंतिम यानी नवोन्मेष से विस्फूरित और उत्सेकित कल्पना की हिंदी कविता में कमी है। उसके लिए हमें अपना अलंकार विधान आमूल बदलना होगा। उपमान मांजने होंगे, रूपकों की कलई खोलनी होगी, उत्प्रेक्षाएँ सचमुच भाव के उत्स से उत्प्रेरित है या नहीं यह देखना होगा। हमारी कविता में पाये जानेवाले अधिकांश कल्पना-चित्र या बिंब बच्चों के से नीरे शाब्दिक सहस्मृत या परंपरागत होते हैं। इन शाब्दिक, साहचर्यात्मक और पारंपरिक बिंबों की बजाय हमें राग ओर ज्ञान से पूरित ऐंद्रिय, आवेगाश्रित और अभिजात बिंबों की सृष्टि करना है। हमारे अलंकार अधिक वैज्ञानिक, आधुनिक और वैशेषिक हो अन्यथा निरे अलंकार सांख्य से निरलंकार काव्य रचना बेहतर है। ... छंदोरचना के विषय में हमें नव-नवीन प्रयोग अपनाने होंगे। अन्य भाषाओं के छंद भी हम लें।"[268]

उपर्युक्त कथन से हम जान सकते हैं कि माचवे जी ने कविता के भाव विषय वस्तु और रचनाशिल्प पर व्यापक और वैज्ञानिक पद्धति से विचार किया है। वे परंपरागत अलंकार बिंब विधान को छोड़कर नवीन भावबोध के अनुसार नवीन बिंब योजना पर बल देते हैं। जिसे अज्ञेय ने भी समान

---

[267] तार सप्तक, सं.अज्ञेय-पृ.185
[268] तार सप्तक, सं.अज्ञेय-पृ.186

रूप से कहा है। प्रभाकर माचवे जी की मान्यता इतनी अनुकरणीय बनी जिसका प्रयोग नयी कविता के परवर्ती कवियों ने किया।

4.9 केदारनाथ सिंह

केदारनाथ सिंह का नयी कविता तथा तीसरा सप्तक में संकलित कवियों में महत्वपूर्ण स्थान है। केदारनाथ सिंह का जन्म चकिया जिला बलिया (उत्तर प्रदेश) में 1932 को हुआ। केदारजी का बचपन सुख और सुविधाओं में बीता और उनके पिता उन दिनों सक्रिय राजनेता के रूप में कार्यरत थे। आरंभिक शिक्षा गाँव में पाई। बाद की शिक्षा उदयप्रताप कॉलेज, हिंदु विश्वविद्यालय से तथा एम.ए. के बाद 1964 में 'आधुनिक हिंदी कविता में बिंबविधान' विषय पर शोध कार्य कर पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त की।

श्री केदार जी ने जीवन की पहली कविता 'सुभान की मृत्यु' नाम से लिखी और विधिवत काव्य रचना 1952-53 के आसपास आरंभ की। सन् 1954 में 'पाल एलुअर' की प्रसिद्ध कविता 'स्वतंत्रता' का अनुवाद किया जिसके जरिए केदार जी को नयी सौंदय-दृष्टि और समकालीन काव्य चेतना से पहला परिचय हुआ। कुछ समय तक बनारस से निकलनेवाली अनियतकालीन 'हमारी पीढी' से संबद्ध रहे। केदारजी का पहला कविता संग्रह 1960 में छापा तथा 1959 में प्रकाशित तीसरा सप्तक के सहयोगी कवि रहे।

केदारनाथ सिंह पेशे से अध्यापक रहे तथा उनका सामाजिक राजनीतिक, साहित्यिक कार्यक्षेत्र का प्रसार, विस्तार महानगर से ठेठ ग्रामांचल तक रहा। अपने जीवन में वे अनेक शैक्षिक संस्थाओं से संबद्ध रहे जिनमें-उदयप्रताप कॉलेज, वाराणसी, सेंट एण्ड्रूज कॉलेज गोरखपुर, उदित नारायण कॉलेज पडरौना, गोरखपूर विश्वविद्यालय गोरखपुर तथा सन् 1976 से जवाहरलाल विश्वविद्यालय नई दिल्ली में कार्यरत रहे तथा वहीं से अवकाश ग्रहण किया।

केदारनाथ सिंह जी एक व्यापक दृष्टिकोण रखनेवाले साहित्यकार हैं। अतः अनेक साहित्यिक योगदान के लिए उन्हें अनेक सम्मानों से विभूषित किया गया। जैसे-सन् 1980 में केरल के 'कुमारन् आशान कविता' पुरस्कार से सम्मानित किया। 'अकाल में सारस' के लिए साहित्य अकादमी पुरस्कार, मध्यप्रदेश का 'जाशुआ सम्मान', मैथिलीशरण गुप्त सम्मान तथा व्यास सम्मान आदि।

रचना संसार

कविता

अभी बिलकुल अभी, जमीन पक रही है, यहाँ से देखो, अकाल में सारस, उत्तर कबीर और अन्य कविताएँ, बाघ (कविता संग्रह)

आलोचना तथा शोध

कल्पना और छायावाद, आधुनिक हिंदी कविता में बिंब विधान, मेरे समय के शब्द

संपादन

कविता दशक, समकालीन रूसी कविताएँ, 'ताना बाना', (भारतीय कविताओं का संकलन)

काव्य विषयक मान्यताएँ

केदारनाथ सिंह आधुनिक हिंदी कविता के प्रमुख रचनाकार हैं। सप्तक श्रृंखलाओं से प्रयोगवादी साहित्य का निर्माण हुआ तथा भाव बोध, विषयवस्तु, संवेदना और शिल्प के स्तरों पर नवीनता आई, आगे चलकर इसी का विकास नई कविता में हुआ। नई कविता को प्रयोगवाद का ही विकसित रूप माना जाता है। केदारनाथ सिंह अज्ञेय द्वारा संपादित 1959 के तीसरा सप्तक के कवि हैं, तीसरा सप्तक की योजनानुसार कवि के 'वक्तव्य' में उनकी काव्य विषयक धारणाएँ स्पष्ट होती है। कवि ने कविता की बुनावट पर विचार करते हुए 'वक्तव्य' में स्पष्ट लिखा है-"कविता में मैं सबसे अधिक ध्यान देता हूँ बिंब विधान पर। बिंब-विधान का संबंध जितना काव्य की विषयवस्तु से होता है उतना ही उसके रूप से भी। विषय को यह मूर्त और ग्राह्य बनाता है; रूप को संक्षिप्त और दीप्त। चित्रों के प्रति मेरे मन में जो आकर्षण है, उसके कुछ कारण है। प्रकृति बहुत शुरू से मेरे भावों का आलंबन रही है। मेरा घर गंगा और घागरा के बीच में है। घर के ठीक सामने एक छोटा-सा नाला है, जो दोनों को मिलाता है। मेरे भीतर भी कहीं गंगा और घागरा की लहरें बराबर टकराती रहती हैं। खुले कछार, मक्का के खेत और दूर-दूर तक फैली पगडंडियों की छाप आज भी मेरे मन पर उतनी ही स्पष्ट है, जितनी उस दिन थी। जब मैं पहली बार देहात के ठेठ वातावरण से शहर के धुमैले और

शतशः खंडित आकाश के नीचे आया।"[269] केदारनाथ सिंह की कविताओं को बिंब बहुल कविता कहा जाता है। अतः उनकी कविता में चित्रात्मकता और बिंबात्मकता अधिक है। कवि की बिंब दृष्टि इस संदर्भ में महत्त्वपूर्ण है उनकी मान्यता है कि कविता में प्रयुक्त बिंब का विषयवस्तु और रूप से महत्त्वपूर्ण संबंध है जिससे कविता का कथ्य स्पष्ट होता है। केदारनाथ सिंह की कविता पर तथा उनके व्यापक काव्य-विषयक दृष्टि पर विचार करते हुए परमानंद श्रीवास्तव ने लिखा है-"केदारनाथ सिंह शायद हिंदी के समकालीन काव्य परिदृश्य में अकेले ऐसे कवि हैं जो एक ही साथ गाँव के भी कवि हैं और शहर के भी। अनुभव के ये दोनों छोर कई बार उनकी कविता में एक ही साथ और एक ही समय दिखाई पड़ते हैं। शायद भारतीय बनावट की यह अपनी एक विशेष बनावट है, जिसे नकारकर सच्ची भारतीय कविता नहीं लिखी जा सकती।"[270]

अतः इन कथनों के आधार पर स्पष्ट है कि कवि अपनी कविता में बिंबों के माध्यम से अपनी विषयवस्तु एवं कथ्य को भारतीय तत्त्वों के आधार पर अभिव्यक्त करता है। उनकी कविता में बिंब भारतीय परिवेश को प्रस्तुत करते हैं।

कविता की रूप वस्तु और बिंब पर विचार करते हुए केदारनाथ सिंह ने लिखा है-"मानवीय संस्कृति का इतिहास चेतना का इतिहास है। इस विकास के साथ-साथ काव्यात्मक बिंबों के स्वरूप तथा पद्धति में भी अंतर आता गया है। काव्य में बिंब का अंतरावलंबन उसी प्रकार चलता रहता है, जिस प्रकार जीवन में संस्कृतियों का। सामान्यतः काव्य का आनंद लेते समय हम इस बात को लक्ष्य नहीं कर पाते, पर थोड़ा रुक कर यदि वैज्ञानिक दृष्टि से छान-बीन की जाए तो निश्चय ही किसी बहुत बड़े सत्य का उद्घाटन हो सकता है जो संभव है हमारी संस्कृति की गुंथियों को सुलझाने में सहायक हो। उदाहरण के लिए यौन बिंबों को लिया जाय आज अधिकांश यौन-बिंब जीवन के उच्चतर मूल्यों को व्यक्त करने के लिए साहित्य में लाए जाते हैं। प्रायः उनके द्वारा आध्यात्मिक संकेतों का ग्रहण होता है। इसके विपरीत फारसी तथा उससे प्रभावित उर्दू साहित्य में आध्यात्मिक बिंबों के माध्यम से

---

[269] तार सप्तक, सं.अज्ञेय-पृ.181
[270] केदारनाथ सिंह, प्रतिनिधि कविताएँ, सं.परमानंद श्रीवास्तव (भूमिका)

लौकिक जीवन की अनुभूतियों को व्यक्त करने का चलन-सा हो गया है। अपने यहाँ की रीतिकालीन कविता में भी ऐसा पाया जाता है। यौन बिंबों के साथ-साथ आध्यात्मिक मूल्यों का यह विनिमय, संभव है, किसी सांस्कृतिक अंतरावलंबन का प्रतिफल हो।"

केदारनाथ जी की बिंब निर्माण और बिंबों की काव्याभिव्यक्ति के संदर्भ में धारणा है कि "बिना चित्रों, प्रतीकों, रूपकों और बिंबों की सहायता के मानव अभिव्यक्ति का अस्तित्व प्रायः असंभव है, यहाँ तक कि जब हम शुद्ध विचार के क्षेत्र में पहुँचकर गंभीर तत्व दर्शन की चिंता करते हैं, तब भी हमारे उपचेतन में कहीं न कहीं उन विचारों के वर्णन चित्र उभरते-मिटते रहते हैं। बिंब निर्माण की यह प्रक्रिया पूरे मानव-जीवन में फैली हुई है।"[271]

केदारनाथ सिंह नयी कविता में बिंब विधान तथा उसकी उपयोगिता और आवश्यकता पर बल देते हुए लिखते हैं-"नयी कविता की विशिष्टता की परीक्षा न तो चरित्र-चित्रण की पूर्व प्रचलित पद्धति पर हो सकती है, न प्राचीन रसवाद के नियमों के आधार पर; यद्यपि मैं यह मानता हूँ कि रस की सत्ता से इनकार करना काव्य की सत्ता से ही इनकार करने के समान है। पर आधुनिक कविता में रस की धारणा बदल गई है। रसवाद के लक्षणों के अनुसार आज की अधिकांश बौद्धिक कविताएँ अवर कोटि में आएगी। पर फिर भी वे हमें प्रभावित करती है और कभी-कभी बहुत प्रभावित करती है। यह उनके श्रेष्ठ काव्य होने का सबसे बड़ा प्रमाण है। एक आधुनिक कविता की परीक्षा उसके द्वारा आविष्कृत बिंबों के आधार पर की जा सकती है। उसकी विशिष्टता और उसकी आधुनिकता सबसे अधिक उसके बिंबों में ही व्यक्त होती है। बिंब निर्माण के विविध क्षेत्र हैं-प्रकृति, विज्ञान, मनोविज्ञान, धम। लोकसाहित्य, इतिहास आदि-आदि। हिंदी के नए कवियों ने प्रकृति तथा मनोविज्ञान तक ही अपने को सीमित रखा है। धर्म पुराण और लोकसाहित्य का क्षेत्र आज भी अपनी संपूर्ण उर्वरता और संभावनाओं के साथ नए सशक्त हाथों के स्पर्श की प्रतीक्षा कर रहा है। मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि आधुनिक जीवन की जटिलताओं और अंतर्विरोधों को व्यक्त करने के लिए लोकसाहित्य, धर्म, पुराण तथा इतिहास के खंडहरों में बहुत-से ऐसे अज्ञात प्रतीक और अदृष्ट बिंब पड़े हुए हैं जिनकी खोज के

---

[271] तार सप्तक, सं.अज्ञेय-पृ.182

द्वारा नयी कविता की संभावनाओं का पथ और भी प्रशस्त किया जा सकता है।"[272] कवि के बिंब योजना की अनिवार्यता के कारण उपर्युक्त कथन से स्पष्ट हो जाते हैं। बिंबों का कविता में महत्त्व प्रतिपादित करते हुए वे लिखते हैं-"प्राचीन काव्य में जो रचना 'चरित्र' का था आज की कविता में वही स्थान बिंब अथवा 'इमेज' का है।"[273]

नयी कविता की बिंब धर्मिता और उसेस निर्मित होने वाली दुर्बोधिता पर कवि विचार करते हुए लिखते हैं-"नयी कविता पर जो अस्पष्टता और दुरूहता का आरोप लगाया जाता है, उसका सबसे बड़ा कारण है उसमें सर्वथा नए अपरिचित, सघन बिंबों की अधिकता जिसके लिए अधिक संस्कृत और श्रेष्ठ सहृदय वर्ग की आवश्यकता होती है। 'चरित्र' का साधारणीकरण अपेक्षाकृत सरल होता है। पर बिंब तो उसमें भी अधिक सूक्ष्म वस्तु है। फिर वह अधिक-से-अधिक कवि के रागात्मक अनुबंधों पर आधारित होने के कारण अपने साथ एक व्यापक संदर्भ लिये होता है। इसके तल तक पहुँचने के लिए उस संदर्भ का ज्ञान अत्यन्त आवश्यक है।"[274]

कविता की भाषा के संदर्भ में केदारनाथ सिंह जी की मान्यता यह है कि "कविता का सबसे सीधा संबंध भाषा से है। भाषा प्रेषणीयता का सर्वसुलभ माध्यम है। अतः 'शुद्ध कविता' जैसी किसी चीज़ की कल्पना बिल्कुल बेमानी है। समाज के प्रत्येक सदस्य की छोटी-से-छोटी चेतन क्रिया किसी-न-किसी अंश में सामाजिक होती है, फिर कविता तो समाज के सबसे अधिक संवेदनशील व्यक्ति की चेतन-क्रिया है। उसकी सामाजिकता असंदिग्ध है। कविता अपने अनावृत्त रूप में केवल मात्र एक विचार, एक भावना, एक अनुभूति, एक दृश्य इन सबका कलात्मक संगठन अथवा इन सबके 'अभाव' की एक तीखी पकड़ होती है। यह पकड़ जितनी ही वास्तविक होगी, कविता का संवेद्य उतना ही गहरा और प्रभावशाली होगा। इसके लिए उसमें वास्तविकता के विभिन्न स्तरों की प्रत्यक्ष

---

[272] तीसरा सप्तक, सं.अज्ञेय-पृ.183
[273] तीसरा सप्तक, सं.अज्ञेय-पृ.183
[274] तीसरा सप्तक, सं.अज्ञेय-पृ.184

जानकारी होनी चाहिए और यह जानकारी सोलहो-आने उसकी अपनी होनी चाहिए। नयी कविता की यह भी उपलब्धि है कि उसमें कविता का 'अपनापन' अधिक से अधिक सुरक्षित है।"[275]

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि कवि कविता में बिंबों को अत्यन्त महत्वपूर्ण मानता है और बिंबों के माध्यम से संवेदनाओं की अभिव्यक्ति पर बल देता है। कवि इस संदर्भ में व्यापक विचार करते हुए नये बिंबों की खोज और उससे नवीन अभिव्यक्ति को प्रकट करता है। वह कविता की रूप वस्तु और विषय वस्तु पर बिंब का प्रभाव स्पष्ट करता है तथा कविता के विषय को व्यापक मानते हुए, आज की सरलता पर बल देना है। यह आदि उनकी काव्य विषयक मान्यताएँ हैं।

4.10 सुमन राजे

हिंदी साहित्य की काव्यधारा, आलोचना तथा इतिहास लेखन के क्षेत्र में सुमन राजे का नाम महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। सुमन राजे जी का जन्म 22 जून 1938 में हुआ। पिता सरकारी नौकरी में थे। बचपन की शिक्षा उनके तबादले के अनुसार विविध स्थानों पर हुई। इस कारण उनकी पढ़ाई व्यवस्थित नहीं हो पाई। किंतु परीक्षाओं में उत्तीर्ण होती रही। तथा घर वाले संतुष्ट थे कि लड़की पढ़ तो रही है। पिता का आकस्मिक निधन होने के कारण उन पर परिवार की जिम्मेदारी आ पड़ी और जीवन को एक नया मोड़ प्राप्त हुआ। विश्वविद्यालयीन शिक्षा लखनऊ से प्रारंभ हुई तथा 1960 में प्रथम श्रेणी और स्वर्ण पदक लेकर हिंदी साहित्य में एम.ए. की परीक्षा उत्तीर्ण की। फिर नौकरी की खोज में रहीं। 1961 में वहीं से शोध कार्य आरंभ किया और 1964 में 'रासो काव्य परंपरा' पर पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त की। इसी वर्ष आचार्य नरेंद्र देव महापालिका महिला महाविद्यालय में प्रवक्ता पद पर नियुक्त हुई। 1970 में 'मध्ययुगीन काव्य रूपों का अध्ययन' पर डी-लिट्. की उपाधि प्राप्त की। तथा लोक साहित्य पर भी अनुसंधान कार्य किया। सुमन राजे का नाम विशेषतः साहित्येतिहास लेखन के क्षेत्र में चर्चित है। इन्होंने हिंदी साहित्येतिहास दर्शन एवं लेखन पर उल्लेखनीय कार्य किया। इस कार्य के लिए 'साहित्येतिहासःसंरचना और स्वरूप' पर उत्तर प्रदेश सरकार ने 'तुलसी

---

[275] तीसरा सप्तक, सं.अज्ञेय-पृ.185

पुरस्कार' से सम्मानित किया। सुमन राजे अज्ञेय द्वारा संपादित 'चौथा सप्तक' में संकलित कवयित्री हैं।

रचना संसार

सुमन राजे का हिंदी साहित्य की कविता शोध और साहित्येतिहास दर्शन में महत्वपूर्ण योगदान रहा। इनकी रचनाएँ निम्न हैं-

कविता

'सपना और लाशघर' (1973)

शोध

रासो काव्य परंपरा (1973)

मध्ययुगीन काव्य रूपों का अध्ययन

इतिहास दर्शन

साहित्येतिहास ःसंरचना और स्वरूप (1975)

साहित्येतिहास (आदिकाल) 1976

हिंदी साहित्य का आधा इतिहास 2006

आलोचना ः रचना की कार्यशाला

काव्य विषयक मान्यताएँ

सुमन राजे अज्ञेय द्वारा संपादित चौथा सप्तक की दूसरी कवयित्री हैं। अतः सप्तक के 'वक्तव्य' से उनकी काव्य विषयक धारणाएँ स्पष्ट होती हैं। वैसे सुमन राजे ने कविता के क्षेत्र में लेखन कम ही किया है किंतु नयी कविता की धारा में सप्तक श्रंखला का महत्वपूर्ण योगदान रहा और नयी कविता को इससे चेतना मिलती रही। अंतिम चौथा सप्तक तक के कविता की विचारधारा क्या रही? और युगीन कवियों से वह किस प्रकार मिलती है और महिला कवयित्रियों की काव्यविषयक मान्यताएँ क्या रही इसे जानने के औचित्य से सुमन राजे की काव्य-विषयक मान्यताओं पर विचार करना आवश्यक है। सुमन राजे जी ने अपने 'वक्तव्य' में 'कविता' पर विचार करते हुए लिखा है, "इतिहास जीना एक अनिवार्यता हो सकती है, इतिहास खोदना नहीं। मेरे लिए कविता एक ऐसी

प्रक्रिया है जो मन को भरती है, मन को निचोड़ती है, दोनों को भरती है, दोनों को निचोड़ती है। मैं मानती हूँ कविता पीड़ा है लेकिन गलित कुंठा की नहीं। यह प्रसव की पीड़ा है। यह न होती तो धरती बांझ हो जाती और उस पर कभी कोई खूबसूरती नहीं उगती। यह बात दूसरी है कि हमारे लिए यह पीड़ा शुरू होने और खत्म होने के बीच की है। उसके दोनों छोर पकड़ने के लिए फैले हुए हमारे हाथ सलीब पर ठोक दिये गये हैं। नहीं जानती कविता "मणि माणिक मुक्ता-छवि" जैसी है या नहीं, सीप में पड़कर मोती बनती है या नहीं। कविता अब कन्दीलों की तरह आकाश पर ज्योति-चित्र नहीं बनाती, मिट्टी खाकर मिट्टी रचती है, सपने खाकर सपने उगलती है।"[276]

उपर्युक्त कथन से सुमन राजे की काव्य के विषय वस्तु की सोच एवं मान्यता स्पष्ट होती है वह 'जिंदगी को निचोड़ती है और जिंदगी को भरती है'। अर्थात् कविता और जीवन का महत्वपूर्ण संबंध है। कविता में व्यक्ति अपने जीवनानुभव को अभिव्यक्ति प्रदान करता है। राजे कविता का कोई एक निश्चित रूप अथवा मानदंड नहीं मानती है। वे कविता को न 'मणि माणिक मुक्ता छवि' मानती है न 'आकाश का ज्योति-चित्र'। वे वरन् कविता को व्यक्ति मन की स्वानुभूति पर बल देते हुए अनुभव का, आभ्यंतर का बाह्यीकरण मानती है। अर्थात् उनकी स्पष्ट धारणा है कि कविता मानव मन, अनुभव-विचार की तथ्यात्मक अभिव्यक्ति है।

सुमन राजे ने कविता की विषयवस्तु, सामाजिकता तथा वैयक्तिकता, शिल्प पर विचार करते हुए लिखा है, "आज के मुहावरे का ही नहीं, जीवन का आग्रह है कि आदमी कठोर समकालीन सचाई को आँख मिलाकर देख सके। यह आज की स्थिति का साक्षात्कार है, इसलिए यह सवाल बार-बार उठाया जाता है कि कविता 'निजी अभिव्यक्ति' है या 'सामाजिक'। अपने तरीके से यह सवाल हर युग में उछाला गया है और इसके जवाब छाँटे-बीने गए हैं। मुझे लगता है कि यथार्थ की तात्कालिकता में सीमित होकर 'कविता' से निष्कर्ष निकालना न केवल बेमानी कोशिश है बल्कि

---

[276] चौथा सप्तक, सं.अज्ञेय-पृ.184

संभावनाओं के दायरे को बिंदु में बदलना है।"[277] अतः कवयित्री की मान्यता है कि कविता संभावनाओं के दायरे का व्यापक पुंज है। अतः उसमें व्यापक सामाजिकता निहित होती है। उसे कवि की 'निजी' अनुभूति मानना उस व्यापक दायरे को संकीर्ण बिंदु में निहित करना है। इसी संदर्भ में विचार करते हुए वे आगे लिखती हैं-"कोई भी कवि अनुभूतिपूर्ण होकर विचार शून्य नहीं होता। परंतु रचना प्रक्रिया के स्तर पर वे विचार और दर्शन कहीं टकराते नहीं। शिल्प संबंधी सभी शर्तें कहीं गहरे डूब जाती हैं, शेष रह जाता है कवि का विशिष्ट अनुभव और कवि का रचनात्मक क्षण। दोनों की टकराहट जिस बिंदु पर समाप्त होती है वह कविता का जन्म क्षण है। निरंतर झकझोरी हुई स्थितियों में कविता अचानक उगती है, समूची और ऊपर उठने लगती है। मैं उसे पकड़ने का प्रयास करती हूँ, जितनी भी पकड़ में आए, शेष बिखर जाती है। मुझे कभी समझ में नहीं आया कि सामाजिक जागरूकता की कसम खाकर कविता कैसे लिखी जाती है? प्रतिबद्धता, व्यक्ति का गुण है कविता का नहीं। जो व्यक्ति प्रतिबद्ध नहीं-जिसका दर्द सिर्फ सिद्धांतों में रहता है वह अपना दोहरा चरित्र कविता को सौंपने के अलावा कुछ नहीं कर सकता।"[278] कविता के क्षेत्र में कवि की प्रतिबद्धता और उसके चरित्र के बल को महत्त्वपूर्ण मानने के पक्ष में राजे का मंतव्य अत्यन्त सटीक है।

अपने कवि व्यक्तित्व पर राजनैतिक प्रभाव को वे स्वीकार करती हुई लिखती हैं-"दर्शन-राजनैतिक दर्शन-मुझे भी प्रभावित करते हैं, मुझे भी लगता है, शायद यहाँ वह कुंजी मिल जाए, जिससे दर्द की खोह में एक दो झरोखे ही खुल जायें। आदमी को कोई नाम मिल जाए-जिससे उसे पुकारा जा सके। कुंजियाँ हैं, उन के रक्षक फन फैलाए बैठे हैं, पास जाते ही कहते हैं-जब तक हमारी पार्टी का बिल्ला नहीं लगते उस तरफ ताकना भी नहीं। इसलिए मेरा दर्शन अधूरा है क्योंकि मैं अपने मनुष्यत्व को अधूरा रखना नहीं चाहती।"[279]

कविता की रचना प्रक्रिया के संदर्भ में विचार करते हुए सुमन जी लिखती हैं-"मुझे अपने विषय से कोई मुगालता नहीं है। अपनी कविता के विषय में भी नहीं। मेरा कोई दावा नहीं है कि मैं नए

---

[277] चौथा सप्तक, सं.अज्ञेय-पृ.184
[278] चौथा सप्तक, सं.अज्ञेय-पृ.184-185
[279] चौथा सप्तक, सं.अज्ञेय-पृ.185

प्रयोग कर रही हूँ। हाँ, मुझे अपने-आप से शिकायत काफी है। ... कई बार कविता का कोई क्षण कई दिनों तक टकराता रहता है, उसकी छुअन से मन कहीं दुखता रहता है। लेकिन शब्दों में कुछ बंध नहीं पाता। फिर या तो वह लहर ज्वार बनकर मुझे अपने में समेट लेती है, या धीरे-धीरे पीछे हटती हुई फीकी पड़ जाती है।"[280]

कविता की भाषा के संदर्भ में सुमन राजे विवेचन करती हुई लिखती हैं-"मेरी तलाश कविता की तलाश है, मैं भाषा की तलाश को पृथक से कोई समस्या नहीं मानती। कविता अपनी भाषा में स्वयं प्रकट होती है, उसे न तो गुब्बारे की तरह फुलाना होता है, न खप्पच्चियाँ लगाकर सीधा करना होता है। और न ही रीढ़ तोड़कर मुलायम करने की प्रक्रिया-आवश्यक है। जब जीवन की पकड़ सीधी सच्ची है तो भाषा की पकड़ उल्टी नहीं हो सकती। पेड़ पूरे का पूरा उगता है। उसमें कहीं की पत्तियाँ और कहीं के फूल लाकर चिपकाने की जरूरत नहीं है।"[281] सुमन राजे के उपर्युक्त कथन में कविता की भाषा में अनुभूति पर अधिक बल दिखाई देता है। वह अनुभूति, संवेदना के अनुरूप भाषायी अभिव्यक्ति पर बल देती है। कविता को सजाने के अन्य उपादानों को वह प्रयोज्य नहीं मानती है। वह कविता और जीवन के अंतःसंबंधों को रेखांकित करते हुए लिखती है-"जो जीवन हमें जीने के लिए मिला है, उसकी अनिवार्य नियति है-निरंतर चुभती हुई जूते की कील। हर कदम उस जूते को और जर्जर करता है और जख्म को गहराता जाता है लेकिन चलना ही तो हमारा अस्तित्व है। पैरों और पैरों में कोई भेद नहीं होता इसलिए सब के जख्म भी एक होते हैं। उन जख्मों के आस-पास पकती और फूटती रहती है कविता।"[282]

सारांश रूप से सुमन राजे की काव्य विषयक धारणा है कि कविता जीवन की प्रकृत अभिव्यक्ति है। उसे विविध काव्य उपादानों से सजाने की आवश्यकता नहीं है, वह कविता की प्रतिबद्धता को जीवन की प्रतिबद्धता से जोड़ती है। कविता 'निजी' अभिव्यक्ति या 'सामाजिक'

---

[280] चौथा सप्तक, सं.अज्ञेय-पृ.185
[281] चौथा सप्तक, सं.अज्ञेय-पृ.185
[282] चौथा सप्तक, सं.अज्ञेय-पृ.185

अभिव्यक्ति है, इस संदर्भ को वह व्यापक मानती है और कविता पर इन दोनों के अतिरिक्त दबाव को अतिवाद समझती है।

सारांश रूप से इस विवेचन के आधार पर स्पष्ट होता है कि हिंदी नयी कविता के कवियों की काव्य विषयक धारणाओं/मान्यताओं में मतभिन्नता दिखाई देती है। अतः इस संदर्भ की ओर अज्ञेय ने 'तार सप्तक' में ही स्पष्ट किया कि 'इनमें मतैक्य नहीं है।' स्वतंत्रता आंदोलन और नवकविता के आरंभ अर्थात् स्वातंत्र्योत्तर भारतीय परिस्थिति में जीवन यापन करनेवाले इन कवियों की काव्य विषयक मान्यताएँ अपनी जीवन दृष्टि के आधार पर विकसित हुई है। अज्ञेय के अनुसार कविता अपने भावानुभव और अपनी चेतना की अभिव्यक्ति का साधन है तो मुक्तिबोध नयी कविता को 'पर्सनल सिच्युएशन' की कविता मानते हैं। साथ ही अन्य कवि भी कविता को आत्मानुभव, आत्मचेतना, आत्मसंवेदना की अभिव्यक्ति का साधन मानते हैं। सुमन राजे काव्यरचना की प्रक्रिया को सहज मानती है। मन के अनुभवों की अभिव्यक्ति ही उनके लिए कविता है। विषय और विचार के संदर्भ में सभी कवि व्यापक मानते हुए कविता को सर्वजनीन, व्यापक मानते हैं। अर्थात् विषय का व्यापक फलक स्वीकार करते हैं। कविता की भाषा और शैली के संदर्भ में सभी नव कवि नवीन दृष्टिकोण अपनाते हैं। कवि अज्ञेय पुराने उपमान, प्रतीक, त्यागकर नवीन परिस्थितियों के आधार पर विकसित नवीन भावबोधों को सच्चे अनुभव प्रणित अभिव्यक्ति के लिए उसी के अनुरूप भाषा चयन करने के पक्ष में है, मुक्तिबोध का वैचारिक फलक मार्क्स के दर्शन से प्रेरित लगता है और वे कविता का लक्ष्य सामान्य जनजीवन की आकांक्षा की अभिव्यक्ति को प्रथम प्राथमिकता देते हैं। कवि गिरिजा कुमार माथुर की कवि वैयक्तिक सत्ता पर विश्वास करते हुए उसकी मानसिक आस्था, सामाजिक चेतना की अभिव्यक्ति पर बल देते हैं। कविता के शिल्प पक्ष पर बल देते हुए कवियों ने प्रतीक एवं बिंब पर अधिक बल दिया है। बिंब धर्मी भाषा और मानसिक अनुभव के लिए प्रतीकों का चयन अपनी अभिव्यक्ति के लिए आवश्यक माना है। केदारनाथ सिंह कविता में प्रतीक और बिंब योजना की मूलभूत आवश्यकता पर बल देते हैं। उनका मानना है कि बिना चित्रों, प्रतीकों, रूपकों और बिंबों की सहायता के मानव अभिव्यक्ति का अस्तित्व प्रायः असंभव है। यहाँ तक कि जब हम शुद्ध विचार के क्षेत्र में पहुँचकर गंभीर तत्व दर्शन की चिंता करते हैं।" साथ ही काव्य भाषा के संदर्भ में वे मानते हैं

कि कविता का सबसे सीधा संबंध भाषा से है। भाषा प्रेषणीयता का सर्वसुलभ माध्यम है। 'शुद्ध कविता' जैसी किसी चीज़ की कल्पना बिलकुल बेमानी है। समाज के प्रत्येक सदस्य की छोटी-से-छोटी चेतन क्रिया किसी-न-किसी अंश में सामाजिक होती है। फिर कविता तो समाज के सबसे अधिक संवेदनशील व्यक्ति की चेतना क्रिया है। इस प्रकार का व्यापक बोध कवियों की धारणा में अभिव्यक्त होता है। इस प्रकार नयी कविता के कवियों की काव्य विषयक धारणाएँ व्यापक एवं काव्य क्षेत्र के फलक को विस्तृत आयाम प्रदान करनेवाली हैं।

* * *

पंचम अध्याय

मराठी नव कविता के प्रमुख कवि
एवं उनकी काव्य विषयक मान्यताएँ

पंचम अध्याय

मराठी नव कविता के प्रमुख कवि एवं उनकी काव्य विषयक मान्यताएँ

5.1 बाळ सीताराम मर्ढेकर

5.2 पु.शि.रेगे

5.3 सदानंद रेगे

5.4 शरच्चंद्र मुक्तिबोध

5.5 इंदिरा संत

5.6 विंदा करंदीकर

5.7 मंगेश पाडगांवकर

5.8 य.द.भावे

5.9 दिलीप पुरुषोत्तम चित्रे

पंचम अध्याय

मराठी नव कविता के प्रमुख कवि एवं उनकी काव्य विषयक मान्यताएँ

5.1 बाळ सीताराम मर्ढेकर

मराठी साहित्य के 1940 के बाद के मराठी साहित्य परंपरा में बा.सी.मर्ढेकर का नाम उल्लेखनीय है। मर्ढेकर ने अपनी पूर्व परंपरा के केशवसुत के बाद मूलतः परिवर्तनवादी कविताएँ लिखी जिनका मराठी साहित्य में महत्वपूर्ण स्थान है। मराठी साहित्य में प्रथमतः आधुनिक शास्त्रीय साहित्य कला विचार प्रतिपादित करने का श्रेय मर्ढेकर को ही दिया जाता है। श्री बा.सी.मर्ढेकर ने साहित्य की विविध विधाओं में लेखन किया तथा अपनी शास्त्रीय विचारधारा को प्रतिपादित किया। मर्ढेकर के साहित्य का महत्वपूर्ण कालखंड सन् 1945 के आसपास का माना जाता है। इस कालखंड में मराठी साहित्य में मर्ढेकर के साहित्य विचारों का अच्छा वर्चस्व रहा और अनेक साहित्यकार इनकी विचारधारा का अनुगमन कर लेखन करने लगे। "मर्ढेकर के साहित्य की जितनी आलोचना और विरोध हुआ उतना किसी के साहित्य का नहीं हुआ।"[283] सन् 1940 के बाद मराठी साहित्य में ‘मर्ढेकर’ यह मराठी साहित्य की मुख्यधारा तथा साहित्यिक महात्मता का धनी नाम बन गया। मर्ढेकर के काव्य विचारों से परिचित होने से पहले हम उनके जीवन के बारे में परिचय लेंगे क्योंकि साहित्य और साहित्यकार के जीवन के अंतःसंबंध महत्वपूर्ण होते हैं और रचनाकार की रचना उसके जीवन से प्रभावित होती है।

मराठी साहित्य को महत्वपूर्ण साहित्यिक दृष्टिकोण प्रदान करनेवाले बा.सी.मर्ढेकर का जन्म 1 दिसंबर 1909 में खानदेश के ‘फैजपुर’ गाँव में हुआ। मर्ढेकर मूलतः ‘सातारा’ विभाग के थे और सातारा से करीब के ही ‘मर्ढे’ नामक गाँव में उनके पूर्वज रहते थे। अतः अपने गाँव के नाम पर इन्होंने ‘मर्ढेकर’ नाम रखा। अपने घर का पुराना नाम ‘गोसावी’ इन्हें पुरातन पद्धति का सूचक लगता था। बा.सी.मर्ढेकर के चाचा सरकारी कलेक्टर पद पर थे, उन्होंने अपने घर का नाम बदला और यही परंपरा मर्ढेकर ने आगे बढ़ाई।

---

[283] बा.सी.मर्ढेकर, यशवंत मनोहर-पृ.1

बा.सी.मर्ढेकर के पहले जन्मी उनकी तीन बहनों की मृत्यु हो चुकी थी। यह अशुभ नामकरण के कारण हुआ, ऐसा उन्हें लगता था। उनके पिता ने बा.सी.मर्ढेकर का नामकरण ही नहीं किया। घर में सबसे छोटे होने के कारण उन्हें 'बाळ' कहा जाता था। यही नाम आगे रूढ़ हो गया। मर्ढेकर का घराना समर्थ रामदास संप्रदाय से संबंधित था। इस संप्रदाय के संस्कारों का प्रभाव मर्ढेकर पर पड़ा।

पिता शिक्षक रहने के कारण तबादला होता रहा। किंतु इसका कोई असर बाळ मर्ढेकर पर नहीं पड़ा क्योंकि इस समस्या को सुलझाने के लिए उन्होंने अपने मित्र श्री फड़के के पास 'बाळ' को रखा और फैजपूर-सावेद में इनका अंग्रेज़ी तीसरी कक्षा तक शिक्षण हुआ। श्री फडके के निर्देशन में उन्हें अंग्रेज़ी का अच्छा मार्गदर्शन मिला। इस मार्गदर्शन के प्रभाव से वे लंडन के 'किंग्ज कॉलेज' में तथा आय.सी.एस. की परीक्षा तक रहा। प्रथमतः बाळ मर्ढेकर बच्चों में मिलते-खेलते नहीं थे, उन्हें पढ़ाई ही अच्छा मित्र लगता था। उन्होंने अनेक ग्रंथों का अध्ययन किया। 1920 से 24 तक इनकी शिक्षा धुळे में हुई। चौथी कक्षा में अपने मित्रों के प्रभाव से कविता लेखन की शुरुआत की। सन् 1924 से 28 तक इनकी शिक्षा पुणे के 'फर्ग्युसन कॉलेज' में हुई। सन् 1928 में मुंबई विश्वविद्यालय में बी.ए. के लिए प्रवेश लिया और प्रथम वर्ष में प्रथम श्रेणी के साथ पास हुए। इसके बाद उनका स्वास्थ्य ठीक न रहने के कारण प्रथम श्रेणी में पास नहीं हो पाए। इस बीच उन्होंने पत्रिकाओं में लेखन और कॉलेज के डिबेटिंग युनियन के सेक्रेटरी का कार्य किया।

बी.ए.ऑनर्स अंग्रेज़ी लेकर पूर्ण किया तथा एम.ए. के लिए डेक्कन कॉलेज में प्रवेश लिया किंतु एम.ए. की शिक्षा अधूरी रही। सन् 1929 में वे अपने प्रयत्नों से तथा कर्ज लेकर आय.सी.एस. की परीक्षा के लिए इंग्लैंड पहुँचे। इस परीक्षा में चार अंकों से इनका नंबर नहीं लगा। इस घटना से वे अत्यन्त निराश हो गए तथा कर्ज का बोझ भी बढ़ गया था। सन् 1933 में वे असफल बनकर भारत लौटे। इंग्लैंड में रहते हुए वहाँ के अनुभवों ने उनके मन पर गहरी छाप छोड़ी। यंत्र युग, विज्ञान आदि का मानव जीवन पर प्रभाव आदि से वे परिचित थे। इंग्लैंड से वापिस आने के बाद उन्होंने नौकरी की खोज की किंतु पुणे के कॉलेज में कहीं भी अधिव्याख्याता के पद पर चयन नहीं हुआ। अन्य नौकरी में शैक्षणिक समस्या आकर नौकरी न पा सके। अंततः इंग्लैंड के प्रो.सदरलैंड के शिफारिश से 'टाइम्स ऑफ इंडिया' के संपादक ने सह संपादक का कार्य दिया। किंतु यहाँ पर काम के बोझ से नौकरी छोड़नी

पड़ी। सन् 1935 में मुंबई के 'एलफिस्टन कॉलेज' में ट्यूटर (प्रशिक्षक) के रूप में रु.100-00 मासिक वेतन पर कार्य किया। इसके उपरांत धारवाड के 'कर्नाटक कॉलेज' में नौकरी की। अंधेरी के इस्माइल कॉलेज में तथा अहमदाबाद के 'सिडन हेम' आदि कॉलेजों में नौकरी की। किंतु कहीं भी उन्हें स्थिरता नहीं मिली और अध्यापन कार्य में यश नहीं मिला। इस कारण वे उदास होकर अन्य क्षेत्रों में नौकरी ढूँढ़ने लगे। 1938 में 'हॉमिल' नामक व्यक्ति ने श्री लायोनेल फील्डन से सिफारिश कर ऑल इंडिया रेडियो में नौकरी दी और अंत तक वे इसी सेवा में रहे। इस सेवा में आकर उन्होंने नए कार्यक्रमों की खोज और शुरुवात की और अपना लेखन कार्य भी करते रहे। मर्ढेकर स्वभाव से स्पष्टवादी और स्वाभिमानी व्यक्तित्व के धनी थे। उन्हें भ्रष्टाचार से अत्यन्त घृणा थी। सन् 1929 में उनका प्रेम किसी तरुणी पर था। किंतु इंग्लैंड जाने के कारण वह विफल हुआ। सन् 1934 से 38 के कालखंड की दूसरी प्रेम कहानी भी विफल हुई जिसकी अभिव्यक्ति उनकी कविता शिशिरागम में दिखाई देती है।

सन् 1940 में बाळ सीताराम मर्ढेकर का विवाह शिक्षित पारसी तरुणी 'होमाय नल्लासेठ' से हुआ। वह एलफिस्टन कॉलेज की इनकी प्रतिभाशाली छात्रा थी। यह विवाह बहुत विरोध के बाद गुप्त रूप से हुआ। कुछ ही दिनों के बाद पारिवारिक कलह बढ़ा और 'होमाय नल्लासेठ' इंग्लैंड चली गई। इस बीच 'अंजना सायाल' नामक पंजाबी युवती से उनका प्रेम हुआ और 1950 में उन्होंने दूसरा विवाह किया। दूसरी पत्नी से उन्हें 'राघव' नामक पुत्र जन्मा जिससे मर्ढेकर के जीवन में आनंद की लहर आई। मर्ढेकर का जीवन अत्यन्त संकटों और संघर्षों से भरा रहा। असफलता के कारण वे परेशान रहे। अपने लेखन के दौरान उनके काव्य संकलन 'काहीं कविता' पर मुंबई सरकार ने अश्लीलता का आरोप लगाते हुए मुकदमा चलाया जिससे वे बाद में निर्दोष मुक्त हुए। इन्हीं पारिवारिक, व्यावसायिक और लेखन विषयक समस्याओं का सामना करते हुए उन्होंने अपना लेखन कार्य निरंतर रूप से किया। उनका रचना संसार निम्न प्रकार से है-

<u>रचनाएँ</u>

<u>काव्य</u>- शिशिरागम-1939

काही कविता-1947

आणखी काही कविता-1951

मर्ढेकरांची कविता प्र.आ.1959, पनर्मुद्रण 1969, 1977, 1982

<u>उपन्यास</u>

रात्रीचा दिवस-1942

तांबडी माती-1943

पाणी-1948

मर्ढेकरांच्या कादंबत्या-1962

<u>समीक्षा/सौंदर्यशास्त्र</u>

आर्ट्स अन्ड मैन-1937

बेसिक इंग्लिश-1938

वाङ्मयीन महात्मता-1941

टू लिटरेचर ऑन ॲन इथेटिक ऑफ लिटरेचर-1944

सौंदर्य आणि साहित्य-1955

आर्ट्स ॲन्ड मैन-1960 (कला आणि मानव मराठी कथांतर)

<u>संगीत काव्य</u>

कर्ण-1944 म.सा.पत्रिका

संगम-1945 धर्नुधारी पत्रिका

औक्षण-1946 म.सा.पत्रिका

बदकांचे गुपित-1947 साहित्य पत्रिका

<u>नाटक</u>

नटश्रेष्ठ-1944

काव्य विषयक मान्यताएँ

मराठी 'नवकविता' के इतिहास में कविवर्य बाळ सीताराम मर्ढेकर का उल्लेखनीय स्थान है। मर्ढेकर आधुनिक मराठी की नव कविता के प्रणेता माने जाते हैं। उन्होंने अपना लेखन कविता,

उपन्यास तथा आलोचना आदि विधाओं में किया और मराठी साहित्य में नये साहित्य सिद्धांतों के वातायन का विकास किया। मर्ढेकर आंग्ल विद्याविभूषित थे। अतः कहा जाता है कि उन पर 'पाश्यात्य साहित्य सिद्धांतों का प्रभाव है।'[284] किंतु पाश्चात्य साहित्य चिंतन के आधार पर भी उनके साहित्यिक दृष्टिकोण में मौलिकता एवं नवीनता दिखाई देती है। मर्ढेकर की कविताओं से मराठी कविता में 'नवकविता' का आरंभ माना जाता है। आधुनिक युग के मानव की समस्त चेतना, यंत्रयुग का मानव पर प्रभाव एवं उसकी राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक आस्थाओं का चित्र उनकी कविताओं में अंकित हुआ है। मर्ढेकर की काव्यधारणाएँ परंपरा से विकसित होकर भी नवीन हैं। उन्होंने अपना स्वतंत्र साहित्य चिंतन 'कला और साहित्य' (Art and Man) सौंदर्य आदि साहित्य ग्रंथों में किया है। मर्ढेकर की काव्यविषयक भूमिका उनके 'काव्यातील नवीनता' इस निबंध में अभिव्यक्त हुई है। "मर्ढेकर आधुनिकता और नवीनता में अंतर करते हैं। उनके अनुसार आधुनिकता काल सापेक्ष होती है और नवीनता प्रतिभा सापेक्ष, आधुनिकता का स्वरूप विचार भावना सृष्टि पर तथा प्रचलित भाषा और आविष्कार पद्धति पर आधारित होता है।"[285] मर्ढेकर की काव्यविषयक भूमिका को स्पष्ट करते हुए अक्षय कुमार काळे लिखते हैं-"नई शब्द योजना अथवा मुक्तछंदादि नए छंद उपयोग में लाकर कविता में नवीनता लाई जा सकती है। किंतु इस नवीनता का स्वरूप तथाकथित आधुनिकता के समान होता है। कारण शब्दों का स्वरूप, उसकी ध्वनि, संरचना, कालानुरूप बदलते रहते हैं और जीवन प्रवाह के साथ मानव के भाव विषय बदलते रहना अपरिहार्य है। किंतु मर्ढेकर का अपेक्षित नाविन्य सदा ही अनपेक्षित रहता है।"[286] मर्ढेकर की काव्यदृष्टि की मीमांसा करते हुए वे आगे लिखते हैं-"मर्ढेकर के इन विचारों से ही उनकी 'भावनिष्ठ समानता' की अवधारणा विकसित हुई। मर्ढेकर के अनुसार कवि और अकवी की अनुभूति में अंतर यह है कि अकवि की अनुभूति में एक पद रहता है तो कवि की अनुभूति में प्रत्यक्ष एवं अध्याहत इस प्रकार दो पद रहते हैं, इन दो पदों में भावात्मक

---

[284] मर्ढेकर का काव्यः विन्दा करंदीकर, दस्तावेज, जुलाई-1994-पृ.69
[285] अर्वाचीन मराठी काव्यदर्शन, अक्षयकुमार काळे-पृ.405
[286] अर्वाचीन मराठी काव्यदर्शन, अक्षयकुमार काळे-पृ.405

समानता प्रस्थापित करना ही कवि की अनुभूति का लक्षण है। स्वतंत्र रूप में इन पदों का कोई स्थान नहीं। संपूर्ण काव्य इन दो पदों में 'भावनिष्ठ समानता' का निर्माण करना ही कवि का कार्य है।"[287]

मर्ढेकर के काव्य विचार एवं उनके काव्य का मर्म स्पष्ट करते हुए मर्ढेकर के काव्यशास्त्रीय विचारों के संदर्भ में द.भि.कुलकर्णी लिखते हैं मर्ढेकर के अनुसार-"कविता कवि के व्यक्तित्व का आविष्कार नहीं है, तो वह काव्यव्यक्तित्व भिन्न वस्तुनिष्ठ निर्मिति है। ... मर्ढेकर के अनुसार आस्वाद कविरसिक-हृदय संवाद न होकर वह कविता रसिक संवाद होता है। वह संप्रेषण न कर क्रिएशन करता है। ... कविता का अर्थ एकार्थी न होकर बहुमुखी होता है, एक अर्थ दर्शनी होता है, और दूसरा अंर्तनिहित रसिक को यह दो अर्थ जानना आवश्यक है, दर्शनी और अंर्तनिहित। अर्थ ही समझना कविता समझना नहीं, तो वह केवल भाषा समझना है, फिर कविता का अर्थ? तो वह होता है इन दोनों के अर्थ संबंधों में, इन्हीं संबंधों से कविता को 'घाट' केंद्र चैतन्य और सौंदर्य प्राप्त होता है।"[288] "मर्ढेकर के अनुसार कलाकार, कवि, साहित्यकार की निर्मिति, रचना के क्षण की अनुभूति सदा ही द्विदल रहती है।"[289]

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर हम कह सकते हैं कि मर्ढेकर कविता के संदर्भ कवि व्यक्तित्व से अधिक कवि की अनुभूति पर बल देते हैं। उनके अनुसार कवि की अनुभूति द्विदल होती है और वह दो अर्थों को प्रतिपादित करता है-दर्शनी और अंर्तर्निहित। मर्ढेकर की काव्यदृष्टि का विवेचन और मूल्यांकन करते हुए नागनाथ कोत्तापल्ले लिखते हैं-"मर्ढेकर की कविता ने सच्चे अर्थ में मराठी कविता को नए क्षितिज दिए, मर्ढेकर ने कविता का लक्ष्य 'कविता' होने पर रहना चाहिए यह सिद्धांत दिया।"[290] मर्ढेकर अपने साहित्यिक विचारों में शब्द के अर्थ को प्राथमिकता देते हैं। उन्हीं के अनुसार-"अनुभवात्मक प्रेरणा के सतत, अखंड एवं अप्रतिहत दबाव से काव्य अथवा लेखन के

---

[287] अर्वाचीन मराठी काव्यदर्शन, अक्षयकुमार काळे-पृ.506
[288] अनन्यता मर्ढेकरांची, डॉ.द.भि.कुलकर्णी-पृ.58
[289] अनन्यता मर्ढेकरांची, डॉ.द.भि.कुलकर्णी-पृ.132
[290] आधुनिक मराठी कविता : एक दृष्टि, डॉ.नागनाथ कोत्तापल्ले-पृ.71

संपूर्ण वाक् सामग्री में शब्द को प्राथमिकता देनी चाहिए।"[291] शब्द साहित्य का साधन द्रव्य है तो भावानुभूति साहित्य का माध्यम। यह माध्यम 'भाषा' नामक साधन से सिद्ध होता है, साहित्य मीमांसा में माध्यम को केंद्र माना जाता है और भावानुभूति का अर्थ है माध्यम जिसे अभिव्यक्त करने का कार्य भाषा के शब्द करते हैं।"[292] मर्ढेकर सौंदर्यवादी समीक्षक थे। अतः उन्होंने 'सौंदर्य और साहित्य' के बारे में विवेचन किया है। उनके अनुसार-"रचना का सौंदर्य उसकी लय पर निर्धारित होता है। ज्ञानेंद्रियों के द्वारा प्राप्त होने वाले अनुभवों की लयबद्ध रचना कर उसके अनुसार रचना करने से घटनाओं के सौंदर्य निरूपण होता है... लयबद्ध आकृतियों की निर्मिति ही कला का कार्य और उद्देश्य है।"[293] "वाङ्मय कृति को ही भावात्मक लय की केंद्रपूर्ण आकृति कहा जाता है।"[294]

मर्ढेकर कविता में 'लयतत्व' को प्राथमिकता देते हैं। उनके अनुसार "कविता से अंतिम समाधान मिलना असंभव है। मानव जीवन और व्यवहार ने उसे कलुषित किया है।"[295] "भावना प्रधान अर्थ ही कविता का माध्यम है।"[296] मर्ढेकर की लय विषयक अवधारणा को 'माधव आचवल' इस प्रकार स्पष्ट करते हैं-"लयबद्ध संरचना तीन तत्वों से होती है, वह तीन तत्व संवाद, विरोध और संतुलन हैं। 1) एक ही क्षण में प्रतीत होनेवाले अनुभव के दो संदर्भों से एक गुणधर्म दृष्टिकोण से दूसरे से पूर्णतः मिलता हो तो उस अनुभव में संवाद लय की प्रतीति होती है। 2) एक ही क्षण में प्रतीत होनेवाले दो अनुभवों में गुणधर्म दृश्टिकोण से दूसरे अनुभव से पूर्णतः विरुद्ध होगा तो अनुभव में विरोध लय की प्रतीति होती है। 3) एक ही अनुभव में प्रतीत होनेवाले अनुभव संबंधों में दो गुट हों और इन दो अनुभवों के संबंधों की संख्या पूर्णतः समान हो तो समतोल लय की प्रतीति होती है।

---

[291] वाङ्मयीन महात्मता, बा.सी.मर्ढेकर-पृ.22
[292] वाङ्मयीन महात्मता, बा.सी.मर्ढेकर-पृ.23

[293] सौंदर्य आणि साहित्य, बा.सी.मर्ढेकर-पृ.17
[294] सौंदर्य आणि साहित्य, बा.सी.मर्ढेकर-पृ.149
[295] कला आणि मानव, बी.सी.मर्ढेकर-पृ.3
[296] कला आणि मानव, बा.सी.मर्ढेकर-पृ.29

"[297] "... कोई भी साहित्यिक कृति एक पूर्ण आकृतिबद्ध एक झटितिप्रतीति समग्राकृति (Instantaneous.Gastalt) एक लयबद्ध संरचना दिखाई देनी चाहिए।"[298]

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर मर्ढेकर की काव्य तथा साहित्यिक धारणाएँ स्पष्ट होती हैं। उनके अनुसार 'कविता नवीन भावनिष्ठ समानता है'। अतः उसमें मनुष्य की आत्माभिव्यक्ति के लिए शब्द के विविध अर्थ और लय के आधार पर उसकी अभिव्यक्ति होती है। मर्ढेकर ने साहित्यिक विषयों के संदर्भों में नए दृष्टिकोण से विवेचित कर उसे परिभाषित किया तथा नए मानदंड विकसित किये।

5.2 पु.शि.रेगे

श्री पु.शि.रेगे आधुनिक मराठी कविता के महत्वपूर्ण हैं। पुरुषोत्तम शिवराम रेगेजी का जन्म 2 अगस्त 1910 में 'मिठबाव' जि. रत्नागिरी में हुआ। पिता कराची में थे। अतः बचपन का कुछ समय वहीं गुजरा और बाद में मुंबई आ गए। स्कूली शिक्षा कराची से ही आरंभ हुई और मुंबई आने के बाद विल्सन्स हाई स्कूल मुंबई (1920-27) में हुई। सन् 1927 से 31 तक। एलफिस्टन महाविद्यालय से अर्थशास्त्र विषय लेकर स्नातक की शिक्षा पूर्ण की। सन् 1931 से 1934 तक 'लंदन स्कूल ऑफ इकॉनॉमिक्स ॲन्ड पॉलिटिकल साईन्स' से शिक्षा ग्रहण की। इसी समय उन्होंने आय.सी.एस. की परीक्षा दी। लंदन से भारत आने के बाद उन्होंने सन् 1936 से 37 तक पुणे के 'नवरोजी वाडिया कॉलेज' में अर्थशास्त्र के प्रवक्ता के रूप में कार्य किया। अपनी जीवन परिक्रमा में उन्होंने अनेक महाविद्यालयों में विविध विषयों का अध्यापन किया। 'एस.एल.डी कॉलेज' अहमदाबाद में (1937-38) इतिहास के प्रवक्ता रहे। सन् 1938-46 तक मुंबई के 'सिडनहॅम कॉलेज ऑफ कॉमर्स' में उन्होंने अर्थशास्त्र विषय का अध्यापन किया। सन् 1958-62 में इस्माईल युसूफ कॉलेज मुंबई के प्रधानाचार्य बने तथा अर्थशास्त्र के अध्यापन में रत रहे। सन् 1962 से 1969 तक एलफिस्टन कॉलेज मुंबई के प्रधानाचार्य रहे।

---

[297] मर्ढेकरांचा वाङ्मयविचार, माधव आचवल-सत्यकथा, अक्तूबर 1961-पृ.12
[298] कला आणि मानव, बा.सी.मर्ढेकर-पृ.79

पु.शि.रेगे जी का जन्म संपन्न घर में हुआ। उन्हें जीवन की सामान्य कठिनाइयों का सामना नहीं करना पड़ा। घर का वातावरण शिक्षाभिमुख था। साहित्य से इनका परिचय बचपन से ही था। रेगे जी को बचपन से ही अनेक ग्रंथों के अध्ययन में रुचि रही और अंग्रेज़ी स्कूल में पढ़ते समय वहाँ के प्रधानाचार्य 'रेव्हरंड कॅथबर्ट' और 'मोरेश्वर शास्त्री काळे' के कारण काव्य में रुचि विकसित हुई और लेखन की ओर बढ़े। साथ ही भाषायी अभिज्ञान विकसित हुआ। उनके लेखन विकास का यह मूल आधार रहा। श्री पु.शि.रेगे मराठी साहित्य के चर्चित लेखक रहे हैं। लेखन के लिए उन्हें विविध सम्मान प्रदान किये गये जिनमें प्रमुख हैं-मास्को में आयोजित 'लघुकथा' संगोष्ठी में भारत का प्रतिनिधित्व (1965) उद्‌घाटक अखिल भारतीय लेखक परिषद केरल 1967 तथा सन् 1969 में वर्धा में आयोजित अखिल भारतीय मराठी साहित्य सम्मेलन के अध्यक्ष रहे। रेगे जी का आधुनिक मराठी साहित्य में महत्वपूर्ण स्थान है। वे एक सजग शिक्षाविद अध्यापक और सजग रचनाकार थे। अपनी प्रतिभा से उन्होंने मराठी साहित्य की विपुल श्रीवृद्धि की है। मराठी साहित्य के इस सजग प्रहरी की मृत्यु 17 फरवरी 1978 में हुई।

रचना संसार

रेगे जी ने साहित्य की विविध विधाओं में लेखन किया है जिसका विधागत परिचय निम्न प्रकार से है-

<u>कविता</u>

साधना आणि इतर कविता-1931

फूलोर-1937	हिमसेक-1943	दोला-1950
गंधरेखा-1953	पुष्कळा-1960	दूसरा पक्षी-1966
स्वानंद बोध-1970	प्रियाळ-1972	सुहृद गाथा-1975

<u>कहानी</u>

रूप कथ्थक-1956

मनवा-1968

<u>नाटक</u>

रङ्ग पांचालिक आणि दोन नाटक-1958

मालक-1975

मध्यंतर-1976

चित्रकामाख्यम-1977

<u>उपन्यास</u>

सावित्री-1962 अवलोकिता-1964 रेणू-1973

मातृका-1978

<u>आलोचना</u>

छांदसी-1962

<u>अनुवाद</u>

मनु, सावित्री, अवलोकिता, उपन्यासों का हिंदी और अंग्रेज़ी में अनुवाद।

रंगपांचालिका और दो नाटक का हिंदी में अनुवाद

अंग्रेज़ी, जर्मन, डॅनिश, स्पॅानिश, रशियन, चीनी आदि भाषाओं से अनुवाद

<u>संपादन</u>

'छंद' द्वैमासिक पत्रिका का संपादन-1954-60

एका पीढीचे आत्मकथन (एक युग का आत्मकथन) 1977

<u>अंग्रेज़ी में लेखन कार्य</u>

Civics and Administration

Scientific method-1952 (Four Editions)

Artical on transport and allied topics

काव्य विषयक मान्यताएँ

पु.शि.रेगे को "आधुनिक मराठी नव कविता की मुख्य धारा का महत्वपूर्ण कवि माना जाता है।"[299] श्री पु.शि.रेगे अपनी कविता के माध्यम से आधुनिक मानव का चित्रण करते हैं और उसके मूल संवेदना की अभिव्यक्ति इनके काव्य का मानदंड है। रेगे के काव्य पर दृष्टिपात करने से हम पाते हैं कि इनका काव्य विषय व्यापक है-प्रकृति के विविध रूप, प्रेम की विविध भंगिमाएँ, आधुनिक मध्य वर्गीय व्यक्ति का जीवन और उसकी संवेदना, यंत्र युग में मानव की यंत्रात्मक स्थिति आदि का व्यापक चित्रण काव्य में मिलता है। रेगे ने अपने काव्य संकलनों की भूमिका नहीं लिखी। अतः अनुमान लगाया जा सकता है कि वे भी कविता को सोद्‌देश्य नहीं मानते।

आधुनिक मराठी कविता में पु.शि.रेगे का स्थान निर्धारित करते हुए उनकी कविता के संदर्भ में 'रविंद्र धन्वी' लिखते हैं-"पु.शि.रेगे और शरच्चंद्र मुक्ति बोध इस युग की दो स्वतंत्र प्रवृत्तियाँ हैं-बिलकुल दो अलग छोरों की। दोनों ने नवकविता के प्रवर्तन का दावा किया है, उनमें से पु.शि.रेगे की कविता इतनी नित्य नूतन है कि उनमें विभाजन करना अप्रस्तुत है। 'पार्थिव इंद्रिय संवेदनाओं की गाथा' इस प्रकार उसका वर्णन करें तो वह सार्थक ही है, इस कवि का पिंड खानदानी, संस्कार संपन्न और अभिजात प्रवृत्ति का था।"[300] इस कथन के आधार पर हम कह सकते हैं कि कविता में नित्य नूतनता, परंपरा का अनुगमन न कर उसमें परिशोधन करना और कविता में शास्त्रीयता की धारणा अभिव्यक्त होती है। कवि केवल परंपरागत काव्य रचना में अभिरुचि नहीं रखता बल्कि उसमें नित्य नूतनता का आविष्कार करता है।

उक्त उद्धरण से कवि कविता में प्रयोगशीलता को महत्व देता है। रेगे की काव्य रचना पर विचार करते हुए श्री 'राजमल बोरा' लिखते हैं-"साधना, फूलोरा, हिमसेक, दोला, गंधरेखा, पुष्कळा, दूसरा पक्षी और प्रियाळ संकलनों के प्रकाशन इनकी रचनागत निरंतरता और समृद्धि की साक्षी देते हैं। प्रयोगशीलता इनकी कविता का आधार रहा है।"[301] रेगे की कविता की विषयवस्तु और

---

[299] प्रदक्षिणा खंड-2, सं.अ.अ.कुलकर्णी-पृ.15
[300] प्रदक्षिणा खंड-2, सं.अ.अ.कुलकर्णी-पृ.15
[301] मराठी भाषा और साहित्यः सजमल बोरा, ग.तु.अष्टेकर-पृ.163

अभिव्यक्ति की शैली में अनेक प्रयोग दिखाई देते हैं। कुछ आलोचकों का मानना है कि यह उनकी कविता पर पाश्चात्य साहित्य सिद्धांतों के प्रभाव का परिणाम है।

कवि रेगे के अनुभव विश्व और कविता की दृष्टि पर विचार करते हुए गंगाधर पाटील लिखते हैं-"पु.शि.रेगे की साहित्य सृष्टि पर विचार करने से ज्ञात होता है कि उनका अनुभव विश्व एककेंद्री है। मानवी जीवन की सृजनशक्ति उनके अनुभव विश्व के केंद्रस्थान पर है। इसी सृजनशक्ति को वे जीवनोत्सुकता अथवा passion of life कहते हैं। जीवनोत्सुकता का अर्थ वासना अथवा सृजनशक्ति। यह उनके साहित्य के दो शक्ति केंद्र हैं। उनकी प्रतिभा उन सृजनशील शक्ति केंद्र के इर्द-गिर्द घूमती रहती है। किसी जलाशय में पत्थर फेंकने पर वहाँ से जैसे असंख्य जल लहरियाँ उठती हैं उसी प्रकार रेगे के साहित्य सृष्टि के एक ही शक्ति केंद्र से असंख्य अनुभव लहरियाँ कलारूप लेकर स्फुरित एवं अभिव्यक्त होती हैं।"[302] अपनी कविता के विषय के संबंध में पु.शि. रेगे स्वयं लिखते हैं-"वास्तविक रूप से देखें तो कविता के संभवतः दो रूप हैं। प्रथम सृजन, इसी में प्रेम, श्रृंगार, करुणा आदि का अंतर्भाव होता है। दूसरा मरण। ... मेरे स्वास्थ्य के आधार पर तो मैं प्रथम रूप से अधिक मेल रखता हूँ।"[303]

कवि रेगे की कविता में स्त्री दृष्टि पर विचार करते हुए गंगाधर पाटील लिखते हैं-"रेगे स्त्री की ओर वासनापूर्ति का साधन समझकर अनैतिक दृष्टि से नहीं देखते। इसी प्रकार वह एक पवित्र, आदर्श, उदात्त वस्तु है, इस प्रकार की दृष्टि से भी नहीं देखते। उनके कविमन का पुरुष स्त्री की ओर एक स्त्री समझकर ही देखता है। स्त्री और उसके शरीर मन का वह शुद्ध व न नैतिक (amoral) अनुभव लेता है। रेगे की काव्य सृष्टि निहित पुरुष को स्त्री का शरीरी मन सदा के लिए सौंदर्यमय, काममय, प्रेममय, आनंदमय और करुणामय लगता आया है। इस पुरुष को स्त्री एक ओर अनाकलनीय, रहस्यमयी, तो दूसरी ओर गूढ़, अबोध लगती है। रेगे के काव्यानुभव के मूल में

---

[302] सुहृद्गाथा, गंगाधर पाटील-पृ.10

[303] छांदसी, पु.शि.रेगे-पृ.140

पुरुषमन को लगी सनातन, रहस्य जानने की जिज्ञासा दिखाई देती है।"[304] इस कथन के आलोक में हम रेगे की स्त्री विषयक भावना को समझ सकते हैं, उनकी काव्यानुभूति में स्त्री के विविध रूप दिखाई देते हैं। वह उनके लिए रहस्यमयी, गूढ़ हैं तो दूसरी ओर यथार्थ के धरातल पर जीवन संगिनी। इसी संदर्भ में रेगे के काव्य में स्त्री प्रतिमाओं को स्पष्ट करते हुए 'पाटील' लिखते हैं-"रेगे की स्त्री प्रतिमाएँ आदर्श परंपरा की नहीं हैं, वह आदि स्त्री, आदिमाता समान विमुक्त, करुणामयी है तथा पार्थिवता के ऐश्वर्य एवं सौंदर्य का प्रतीक है।"[305] रेगे की कविता में अनेक कामचित्र, प्रतिमाएँ दिखाई देती हैं। अपनी संवेदनात्मक अभिव्यक्ति के लिए स्त्री के यौनांग की प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति की है। इस संदर्भ में टिप्पणी देते हुए श्री पाटील लिखते हैं-"रेगे की संवेदनशीलता विविध प्रकार की प्रतिमाओं से कामभाव के चित्र अंकित करती है।"[306] इस संदर्भ में हम उनकी प्रतिभा सृष्टि की धारणा को समझ सकते हैं। केशव सद्रे जी के अनुसार रेगे पर पाश्चात्य-कवियों का और आधुनिकता का प्रभाव होगा। ... रेगे के अनुभव में संवेदनाओं की प्रधानता रहती है। यह बात जितनी सही है उतनी ही सही बात यह संवेदनाएँ प्रमुखतः दृकसंवेदना और स्पर्श संवेदना रहती है।"[307] अतः इस विवेचना के आधार पर हम कह सकते हैं कि कवि रेगे कविता में अनुभव और उस अनुभव की संवेदना को प्राथमिकता देते हैं। युगीन कविता के छंद पर विचार करते हुए पु.शि.रेगे जी ने नवीन छंदों की आवश्यकता पर बल दिया। उनके अनुसार-"आज का छंदशास्त्र अधूरा हो गया है क्योंकि उसमें नवकाव्य के छंदों का विचार नहीं है। इस अपूर्णता की ओर छंदशास्त्र ने ध्यान नहीं दिया तो वह व्यावहारिक रूप से निरुपयोगी होकर इतिहास के खाते में जमा हो जाएगा। नव कविता के छंद पुराने काव्य से अभिन्न हैं और उसकी यह भिन्नता स्वाभाविक उच्चार निष्ठा पर अधिष्ठित है, पुराने छंद के उच्चारण कृत्रिम हैं और नए छंद आक्षर हैं।"[308]

---

[304] सुहृद्‌गाथा, सं.गंगाधर पाटील-पृ.15
[305] सहृद्‌गाथा, सं.गंगाधर पाटील-पृ.66
[306] सहृद्‌गाथा, सं.गंगाधर पाटील-पृ.24
[307] कवितेतील आधुनिकतावाद, केशव सद्रे-पृ.69
[308] नव काव्य आणि छंद, कृ.श्री.अर्जुन वाडकर-सत्यकथा 1963-पृ.81

सारांश रूप से हम कह सकते हैं कि श्री रेगे की काव्य विषयक मान्यताएँ आधुनिकता और पाश्चात्य विचारधारा से प्रभावित हैं और वे कविता में नवीनता के पुरस्कर्ता हैं। वे अपनी संवेदनात्मक अनुभूति के लिए यथार्थ संवेदना के धरातल पर स्त्री के विविध रूपों का अंकन करते हैं और इससे नवीन बिंबधर्मिता निर्माण कर अपनी अभिव्यक्ति करते हैं। उन्होंने साहित्यिक छंदशास्त्र के नवनिर्माण का विचार कर साहित्यिक समीक्षा की आद्यंतता को प्रतिपादित किया है।

5.3 सदानंद रेगे

आधुनिक मराठी साहित्य में सदानंद रेगे का महत्वपूर्ण स्थान है। उन्होंने साहित्य की कहानी, कविता, अनुवाद आदि विधाओं में विपुल लेखन कर मराठी साहित्य की श्री वृद्धि की है। सदानंद शांताराम रेगे इनका पूरा नाम है। रेगे का जन्म 21 जून 1923 में रत्नागिरी, उनके ननिहाल में हुआ। उनका संपूर्ण जीवन मुंबई में बीता। रेगे की प्राथमिक शिक्षा मुंबई-दादर के 'छबिलदास हायस्कूल' में हुई तथा 1940 को वे मेट्रिक पास हो गए। रेगे के पिता का निधन अल्पकाल में हो गया तब उनकी आयु केवल 13 वर्ष की थी। घर-परिवार की संपूर्ण जिम्मेदारी रेगे के कंधों पर आ पड़ी। अपने शिक्षण और पारिवारिक जिम्मेदारियों को उन्होंने पूरी प्रतिबद्धता के साथ निभाया। मेट्रिक के बाद जे.जे.स्कूल ऑफ आर्टस में प्रवेश लिया। किंतु पिता के निधन और पारिवारिक आर्थिक दुरावस्था के कारण उन्हें यह शिक्षा अधूरी छोड़नी पड़ी तथा नौकरी की खोज में निकल पड़े। 1942 से उन्होंने कारखानों में 'डिजायनर' के रूप में नौकरी शुरू की तथा इसके बाद उन्होंने अनेक नौकरियाँ बदली। इसी क्रम में 'पश्चिम रेल्वे' से 18 वर्ष जुड़े रहे। श्री रेगे एक मेधावी, जिज्ञासु कवि थे। शिक्षण की पिपासा को वे पूर्ण करते रहे। नौकरी के साथ-साथ शिक्षण का क्रम भी अनावरत शुरू रहा। सन् 1958 में बी.ए.स्नातक बने और सन् 1961 में अंग्रेज़ी विषय में, एम.ए. प्राप्त किया। साथ ही 1962 से वे 'रामनारायण रुईया महाविद्यालय' में अंग्रेज़ी विषय के प्रवक्ता बने और अपनी मृत्यु 1982 तक इसी से जुड़े रहे।

श्री रेगे के पिताजी को वाचन का शौक था। वे चित्रकला में भी रुचि रखते थे। अतः इसी के चलते रेगे ने भी अनेक ग्रंथों का अध्ययन किया था। रेगे जी को चित्रकला में अत्यधिक रुचि थी। वे

कला विषयक अभिरुचि से संपन्न थे। ‘रामनारायण रुईया महाविद्यालय’ में कार्य करते समय उन्होंने अनेक ग्रंथों का लेखन किया।

रेगे अपने जीवन संघर्ष के साथ-साथ लेखन भी करते रहे। 1951 में ‘धनुर्धारी’ पत्रिका में उनकी पहली कहानी तथा 1948 में ‘अभिरुचि’ पत्रिका में उनकी पहली कविता प्रकाशित हुई।

सदानंद रेगे मराठी के चर्चित कवि, कहानीकार तथा अनुवादक हैं। उन्होंने अनेक ग्रंथों की रचना की जिसे अनेक पुरस्कार प्राप्त हुए। ‘अक्षरवेल’, ‘गंधर्व’, ‘देवापुढ़चा दिवा’ आदि को महाराष्ट्र शासन की ओर से पुरस्कृत किया (पॅन्ट धातलिला ढग) गया। रेगे ने ‘मायकॉव्हस्की’ के उपन्यास ‘पँट पहना हुआ बादल’ नाम से अनुवाद किया, जिसे सोवियत रशिया नेहरू ‘पुरस्कार’ प्राप्त हुआ। इस कारण 1972 में उनकी रशिया की यात्रा हुई। इसके पूर्व सन् 1961 में ‘छात्रवृत्ति’ लेकर वे डेन्मार्क की यात्रा कर चुके थे और नार्वे में कुछ समय तक रहे। सन् 1978 में ‘इब्सेन’ के 150 वें जन्मदिवस पर आयोजित समारोह में भाग लेने डेन्मार्क पहुँचे थे तथा 1981 के मुंबई में आयोजित ‘मराठी साहित्य सम्मेलन’ के अध्यक्ष के रूप में कार्य किया।

रेगे कवि एवं कथाकार के साथ-साथ एक सफल अनुवादक रहे हैं। उन्होंने मॅकायव्हस्की के उपन्यास का मराठी में अनुवाद किया तथा सन् 1947 में स्टाईनबेक के ‘मून इज डाउन’ का ‘चंद्र ढळला’ नाम से सन् 1950 में स्टाइन बेक के ही ‘पर्ल’ का ‘मोती’ नाम से अनुवाद किया। अतः इससे उनका पाश्चात्य साहित्य ज्ञान स्पष्ट होता है। साथ ही "स्टाईनबेक, जार्ज आर्वेल, लिन युटांग, मकाव्हस्की, वॉल्ट व्हिटमन, बेटी लार्ड, सॉफक्लीज, इब्सेन, युजीन ओनिल, लीर्ला, नेरुदा, स्टीव्हन्स, खलील जिब्रान आदि लेखकों की प्रमुख रचनाओं का अनुवाद किया।"[309]

रेगे का साहित्य मानव मन के अंतर्मन की गुंथियों के आकलन की जिज्ञासा और उस पर विचार विमर्श करता है। उनके साहित्य में मानव की ‘स्व एवं अहं’ चेतना पर बिंब, प्रतिमाओं से विचार अभिव्यक्त होते हैं। साथ ही दरिद्रता, लाचारता, अकेलापन आदि के अनुभव व्यक्त होते हैं और उनकी कविता मानव मन के वासनाविकारों तथा विक्षिप्तता की खोज करती है।

---

[309] निवडक सदानंद रेगे, वसंत अबाजी डहाके-पृ.II

रचना संसार

रेगे जी ने साहित्य की विविध विधाओं में लेखन किया है। अतः उनके लेखन का विधागत परिचय निम्न प्रकार है-

<u>कविता</u>

अक्षरवेल-1950 गंधर्व-1960

देवापुढचा दिवा-1965 ब्रांकुशीचा पक्षी-1980

'पँन्ट घातलेला ढग'-ब्लादिमिर मायकॉ व्हस्की-(अनुवादष्-1971

तृणपर्णे-वॉल्ट व्हिटमन-1982

<u>कहानी</u>

जीवनाची वस्त्रे-1952

काळोखाची पिसे-1954

चांदणे-1959

चंद्र सावली कोरतो-1963

मासा आणि इतर विलक्षण कथा-1965

<u>रूपांतरण एवं अनुवाद</u>

जयकेतुःसॉफकलीज-1959 ब्रांदःहेनरिक इब्सेन-1963

बादशहाःयुजीन ओनील, ज्यांचे होते प्राकतन शापितःयुजीन ओनिल-1965

गोचीःतादोझ रुझिविच-1974 राजा ईडिपसःसॉफकलीज-1977

पाच दिवसःहेन्री झायगर-1991

<u>अनूदित उपन्यास</u>

चंद्र ढळलाःस्टाइन बेक-1947

मोतीःस्टाइनबेक-1950

बंडःजार्ज आर्वेल-1958

तांबडे तट्टूः स्टाइनबेक-1962

चंद्रोत्सवः बेटी लार्ड-1966

ससेहोलपटः लिन युटांग-1968

बाल वाङ्मय

रडतोंडीचा घाट

चांदोबा चांदोबा-1959

झोपाळयाची बाग-1965

अन्य

रामायणः चक्रवर्ती राजगोपालाचारी-1963

अक्षरगंधर्वः साक्षात्कार, डायरी, पत्र-सं.प्र.श्री.नेरूरकर-1987

काव्य विषयक मान्यताएँ

आधुनिक मराठी कविता की 'नवकाव्य' धारा में सदानंद रेगे का महत्वपूर्ण स्थान है। रेगे का जीवन अत्यन्त संघर्ष से गुजरा। किंतु उनकी जिजीविषा और संघर्ष की प्रवृत्ति ने उन्हें अग्रसर होने में सहायता की। श्री रेगे कवि मर्ढेकर के अनुगामी माने जाते हैं और उन्हीं के अनुसार अपने काव्य में आधुनिक मानव को उसके समस्त जीवनानुभव के साथ अभिव्यक्त किया। श्री रेगे की चित्रकला में अभिरुचि थी किंतु वे इस क्षेत्र में अपना भविष्य नहीं बना सके। अतः इसी पृष्ठभूमि में उनके काव्य में चित्रात्मकता, प्रतीकयोजना, बिंबात्मकता आदि की विविध छटाएँ दिखाई देती हैं। रेगे मराठी के सजग रचनाकार थे और अपने लेखन के कारण उन्हें अनेक विदेश यात्राओं का अवसर प्राप्त हुआ और विदेश की अनेक कलाओं, साहित्यिक विचारधाराओं का उन पर प्रभाव पड़ा, जिससे उनकी कविताएँ आधुनिक और चर्चित कहलाईं। सदानंद रेगे जी ने अपनी काव्य विषयक धारणा, मान्यताओं के बारे में स्वतंत्र रूप से नहीं लिखा और लेखन के उद्देश्य और अपनी साहित्यिक मान्यताओं को भी प्रकट नहीं किया। उनकी काव्य विषयक धारणाएँ और मान्यताएँ कविता में ही अभिव्यक्त हुई हैं। अपने निबंध 'मेरा लेखन किसलिए' में वे अपने लेखन के संदर्भ में लिखते हैं-"स्वयं कुछ लिखने के लिए कलम हाथ में ली उसे अब पच्चीस साल हो गए, उस समय से यही प्रश्न है 'मेरा लेखन

किसलिए?' यही प्रश्न विविध संदर्भों में स्वयं को ही बार-बार पूछता रहा कि मैं क्यों लिखता हूँ... अंतिमतः कसम खाकर बताऊँ तो इस क्षण तक इस प्रश्न का उत्तर मुझे नहीं मिला।"[310]

इस कथन के आलोक में हम समझ सकते हैं कि उनके लेखन का कोई सोदेश्य कारण नहीं है। वे अपना लेखन अपनी आत्मानुभूति के लिए करते हैं। रेगे अपने लेखन के मूल में अपने जीवनानुभव और आत्मानुभव को मूल मानते हैं। वे लिखते हैं-"मैं तीसरी कक्षा में था तब पिताजी का निधन हुआ, वैसे यह घटना दुनिया की दृष्टि से मामूली ही थी, किंतु इस घटना ने मेरा जीवन-मरण अनायास ही खंगाल दिया था। संवेदनात्मक दृष्टि से मेरे जीवन को बहुत बड़ा आघात हुआ। मुझे लगता है इस कोमल आयु में आये हुए विलक्षण अनुभव के कारण ही जीवन की ओर देखने का एक विशिष्ट दृष्टिकोण मिला, जिसका स्वरूप किसी दृष्टांत पुरुष के अनुभव समान ही था।"[311] अपने लेखन के संदर्भ में वे लिखते हैं-"मैंने यह सब किसलिए किया? मेरा और मेरे आसपास के मनुष्यों का जीवन सौंदर्यानुभूत करूँ इसी उद्देश्य से... जो कुछ मैंने मेरे साहित्यिक जीवन में किया इस के पीछे एक विशिष्ट अनुभव की प्रेरणा थी। ... काव्यानंद और मित्र ये जीवन के दो फल मेरे जीवनवृक्ष को न लगते तो इसे विष वृक्ष बनने में समय न लगता।"[312] अर्थात् रेगे अपने जीवनानुभव एवं आत्मानुभूति को अपनी काव्य प्रेरणा और अपने परिसर के सभी मनुष्यों को सौंदर्यबोधित करना अपने काव्य का उद्देश्य मानते हैं। रेगे का काव्य जनसामान्य के विविध जीवनानुभव को अभिव्यक्त करता है। जन सामान्य की विविधाँगी भावभूमि उनके काव्य में अंकित हुई है। उनके काव्य के संदर्भ में आलोचक अक्षय कुमार काळे लिखते हैं-"परंपराबद्ध कविता न लिखकर भावानुभूति, आशय की अलग राह खोजनेवाले मर्ढेकरोत्तर कवियों में रेगे का स्थान महत्वपूर्ण है। उनके काव्य में दिखाई देनेवाला नवीनता का आग्रह फैशन नहीं बल्कि वह कविता के माध्यम से स्वयं की खोज थी।"[313]

---

[310] निवडक सदानंद रेगे-सं.अ.आ.डहाके-पृ.220
[311] निवडक सदानंद रेगे, व.आ.डहाके-पृ.221
[312] निवडक सदानंद रेगे, व.आ.डहाके-पृ.223
[313] सुक्त संदर्भ, अक्षय कुमार काळे-पृ.79

रेगे का काव्य प्रतिमा धर्मी कहा जाता है। उनके काव्य में अनेक युरोपीय लेखकों की प्रतिमाएँ मिलती हैं और प्रकृति चित्रण के काव्य में प्रकृति के अनेक रूपों की प्रतिमा अभिव्यक्त होती है। रेगे की प्रतिमाधर्मिता के संदर्भ में विचार करते हुए 'वा.ल.कुलकर्णी' लिखते हैं-रेगे की प्रकृत्ति विषयक कविता पर विचार करने पर लगता है कि प्रतिमाओं की पंक्तियाँ ही पंक्तियाँ आँखों पर तरंगती है तथा उनकी प्रतिमा निर्मिति में नवीनता दिखाई देती है।"[314]

सारांश रूप से हम कह सकते हैं कि कवि सदानंद रेगे के अनुसार कविता कवि के जीवनानुभव और आत्मानुभव की अभिव्यक्ति होती है, जिसका कोई सोद्देश्य कारण नहीं होता। उसके जीवनानुभव में व्यापक मानवता और मानव के कल्याण की कामना होती है। कवि अपनी अभिव्यक्ति को विविध संदर्भों का सहारा लेकर अभिव्यक्त करता है। कवि अपनी अभिव्यक्ति अपनी जमीन से जुड़कर करता है, इस संदर्भ में कवि की कविता पर विचार करते हुए म.सु.पाटील लिखते हैं-यह कवि (सदानंद रेगे) सर्वांग से मिट्टी से जुड़ा हुआ है। वह मिट्टी के गर्भ से अर्थात् उसकी अचेतनता से अपना नाता जोड़ता है।"[315] अतः स्वयं कवि के शब्दों में-

"मिट्टी का वाद्य
मिट्टी का गीत
मिट्टी का स्वर
और मिट्टी का मैं।" (अक्षरवेल-पृ.60)

5.4 शरच्चंद्र मुक्तिबोध

मराठी नव कविता आंदोलन में कवि शरत्चंद्र मुक्तिबोध का नाम उल्लेखनीय है। मुक्तिबोध ने कविता, निबंध, कहानी, आलोचना और उपन्यास आदि विधाओं में मौलिक लेखन किया है। मुक्तिबोध का जन्म 21 जनवरी 1921 को इंदौर में हुआ। प्राथमिक शिक्षा घर से ही हुई तथा इन्होंने उच्च शिक्षा के रूप में एम.ए. तथा एल.एलबी. की उपाधि प्राप्त की। कुछ समय तक वकील का

---

[314] मराठी कविता जुनी आणि नवीः वा.ल.कुलकर्णी-पृ.252
[315] सदानंद रेगे य यांचे काव्यश्विः म.सु.पाटील-पृ.24

व्यवसाय करते रहे तथा उसी समय प्रकाशित होनेवाली मराठी पत्रिका 'प्रकाश' के सहसंपादक के रूप में कार्य किया। सन् 1957 में नागपुर विश्वविद्यालय में प्रवक्ता के रूप में कार्य करते रहे। श्री शरत्चंद्र माधव मुक्तिबोध का जीवन दर्शन एवं रहन-सहन अत्यन्त सरल था। उनकी संवेदना में शोषित व्यक्तियों के प्रति संवेदना थी। अतः मार्क्सवादी दर्शन से प्रभावित होकर अपना जीवन दर्शन स्थापित किया। मुक्तिबोध वकील और प्रवक्ता के रूप में कार्य करते रहे। साथ ही अपना सृजनात्मक लेखन कार्य चालू रखा। सन् 1949 में 'नवी मळवाट' पहला काव्य संकलन प्रकाशित हुआ। इस संकलन की कविताओं ने युगीन कविता से अपना अलग स्थान स्थापित किया। मध्य प्रदेश में जन्म एवं जीवन-यापन करने से वहाँ के सृष्टि सौंदर्य से उनका मन मोहित हुआ और कविता के माध्यम से सृष्टि सौंदर्य के विविध चित्र इन्होंने अपनी कविता में अंकित किए। कवि के जीवन दर्शन को मार्क्स का दर्शन अत्यन्त आकर्षक लगा। अपने कविता संकलन 'नवी मळवाट' की प्रस्तावना में वे लिखते हैं- "मार्क्स ने जीवन के जिस गतिशील द्वंद्वात्मक दर्शन को विशद किया है उससे मैं आज भी सहमत हूँ।"[316]

अतः स्पष्ट है कि मार्क्स का दर्शन उनकी विचारधारा को एक नया आयाम प्रदान करता है जो पूर्व की काव्य परंपरा से भिन्नता स्पष्ट करता है। मुक्तिबोध का जीवन दर्शन और काव्य दर्शन मार्क्स से प्रेरित है। उनके काव्य में समाज के शोषितों की आवाज़ तथा शोषकों के प्रति तीव्र असंतोष, क्रांति की चेतावनी तथा साथ ही त्याग समर्पण और आशावाद दिखाई देता है।

रचनाएँ

<u>कविता</u>

1) नवी मळवाट

2) यात्रिक

3) सत्याची जात

[316] नवी मळवाट, श.मा.मुक्तिबोध

उपन्यास

क्षिप्रा-1963

सरहद्द-1962

जन हे वोळतु जेथे-1969

निबंध

काही निबंध-1963

आलोचना

जीवन आणि साहित्य-1972

सृष्टि, सौंदर्य आणि साहित्य मूल्य-1978

काव्य विषयक मान्यताएँ

आधुनिक मराठी कविता की धारा में श्री शरतचंद्र मुक्तिबोध का महत्वपूर्ण स्थान है। नव कविता आंदोलन में मुक्तिबोध ने विपुल लेखन के साथ उसकी सार्थक आलोचना की। उन्होंने अपनी आलोचना और काव्य संकलनों की प्रस्तावना में अपनी काव्य विषयक मान्यताओं को स्पष्ट किया है। नव कविता के उद्‌भव के मूल में वे तद्‌युगीन सामाजिक, राजनीतिक स्थितियों को महत्वपूर्ण मानते हैं। उनके अनुसार "मानव जीवन के विनाश के मूल में मानव की मूल प्रवृत्ति, स्वभाव को जिम्मेदार न ठहरा कर समाज व्यवस्था को जिम्मेदार ठहराना चाहिए।"[317] अर्थात् मुक्तिबोध के अनुसार मानव की सामाजिक स्थितियाँ उसकी मूल प्रवृत्ति आदि को प्रभावित करती हैं। अर्थात् समाज मन से मानव मन प्रभावित होता है और उससे कवि, लेखक लेखन करता है।

मुक्तिबोध ने अपनी रचना ‘नवी मळवाट’ में युगीन काव्य की समीक्षा करते हुए पूर्ववर्ती साहित्य परंपरा और युगीन कविता पर विचार करते हुए अपनी धारणाएँ स्पष्ट की हैं। युगीन काव्य की सम्यक प्रवृत्तिवादी समीक्षा करते हुए वे लिखते हैं-"आज के काव्य का प्रमुख लक्षण उसका

[317] नवी मळवाट, श.मा.मुक्तिबोध-पृ.9

प्रयोगवादी होना है।"[318] इसे स्पष्ट करते हुए वे कवि करंदीकर का उदाहरण देते हुए लिखते हैं- "मुक्त सुनित से तालचित्र तक की इनकी महत्वपूर्ण यात्रा है। शब्द एवं शब्दक्रम के बजाय प्रतिमा एवं प्रतिमा क्रम ने ही इनके काव्य में महत्वपूर्ण स्थान पाया, करंदीकर के 'मृदगंध' की सामाजिक भावना धीरे-धीरे क्षीण होती गई और उनकी प्रतिभा विविध आकृतिविषयक प्रयोग करने में ही रमने लगी, प्रतिमा उनके काव्य का मुख्य साधन है, शारीरकि-संवेदनात्मकता उनके काव्यानुभव का महत्वपूर्ण गुण। संवेदक प्रतिभा की विवक्षित रचना से वे स्वानुभव को प्रकट करते हैं।"[319]

मराठी नवकविता के स्वरूप और विशेषताओं पर विचार करते हुए मुक्तिबोध लिखते हैं- "आज के काव्य का और एक महत्वपूर्ण गुण है उसका प्रतिमाप्रधान तथा अमूर्त स्वरूप का होना।"[320] नव कविता के सौंदर्यवाद पर विचार करते हुए वे मानते हैं कि-"आज का सौंदर्यवाद रुप सौंदर्य को महत्व देनेवाला है, आज का सौंदर्यवाद मूल्य-मूल्याविरहित वृद्धि से विश्व की ओर इंद्रियाल्हादक रचना प्रबंध निर्माण करने का साधन है। प्रबंध विलक्षणता आज के सौंदर्यवाद का विशेष लक्षण है।"[321]

अपनी काव्यविषयक मान्यताओं में 'मुक्त छंद' की आवश्यकता पर विचार करते हुए वे लिखते हैं-"एक भावात्मक स्थिति की समस्या से अनेक अनुभवों के किनारों को जाते हुए, भिन्न-भिन्न भावनाओं के मोड लेते हुए एक व्यापकतर सम्यक संवेदना की सुदीर्घ यात्रा कविता में मैंने अभिव्यक्त की है। मुक्तछंद की सच्ची आवश्यकता इस प्रकार के काव्य के लिए आवश्यक है। मुक्त छंद में भावात्मक अनुभवों की तथा चिंतन की एक झरने समान स्वैरता महसूस होती है। इसलिए मुक्तछंद आज के काव्य का स्वाभाविक अंग है।"[322]

मुक्तिबोध मूलतः मार्क्सवादी साहित्यधारा के कवि हैं और उनकी विचारधारा पर उसका स्वाभाविक प्रभाव दिखाई देता है। उनका काव्य दीन-हीन दुःखी व्यक्ति की आत्मा और मध्यमवर्गीय

---

[318] नवी मळवाट, श.मा.मुक्तिबोध-पृ.12
[319] नवी मळवाट, श.मा.मुक्तिबोध-पृ.13
[320] नवी मळवाट, श.मा.मुक्तिबोध-पृ.14
[321] नवी मळवाट, श.मा.मुक्तिबोध-पृ.15
[322] नवी मळवाट, श.मा.मुक्तिबोध-पृ.49

जीवन की विसंगतियों को अभिव्यक्त करता है। मुक्तिबोध साहित्य और समाज की प्रतिबद्धता पर बल देते हैं, उनके अनुसार-"जो साहित्य पीड़ित आत्मा को आवाज़ दे। वही सच्चा साहित्य है।"[323]

अपनी दूसरी काव्य रचना 'यात्रिक' में कविता और विचार पर संक्षिप्त चर्चा करते हुए वे लिखते हैं-"कविता में जीवितता महत्वपूर्ण है। किंतु उसे पहले समग्रता से समझ लेना आवश्यक है। कवि के दृष्टिकोण से कुछ काव्य पंक्तियों का उल्लेख करना काव्य चर्चा नहीं है। कविता में वैचारिक गुण रहता है, यह निश्चित है। किंतु मूल में वैचारिक स्वतंत्र और सत्यदर्शक अमूर्त संकल्पनाओं की तर्कशुद्ध रचना होती है। कवि का 'मानुष दर्शन' उसकी स्वयं की कमाई और जीवन के प्रत्यक्ष संपर्क से निर्मित होता है, उसकी खोज करनी हो तो काव्यांतर्गत अनुभव एवं उसकी विवक्षित विविध व्यवस्थाओं को जानना पड़ता है।"[324] कवि का मानना है कि कवि का व्यक्तित्व उसकी सामाजिक स्थिति से बनता है और कविता में उसके विचार अभिव्यक्त होते हैं। रस, रूप के आधार पर ललित कला पर विचार करते हुए वे लिखते हैं-"भाषा के ललित सामर्थ्य के आधार पर विकसित हुआ एवं उससे भिन्न न रहनेवाला 'अनुभव' ही ललित कृति का माध्यम है।"[325] मुक्तिबोध की कविता पर विचार करते हुए कवि समीक्षक यशवंत मनोहर लिखते हैं-"मुक्तिबोध के काव्यविश्व में सामाजिक संवेदना की कविताओं का महत्वपूर्ण स्थान है। मुक्तिबोध की कविता का शोषित और आज के युग का जागृत क्रांतिकारी समाज ही बहुजन समाज है।"[326] मुक्तिबोध की काव्यचेतना पर विचार करते हुए स.रा.गाडगीळ लिखते हैं-"कवि मुक्तिबोध ने भीषण दीनता और पेट पालने के लिए की जाने वाली देह विक्रय इन भयावह घटनाओं का चित्रण कर शोषितों की अस्मिता को स्पर्श किया है। एक से एक अधिक अर्थपूर्ण प्रतिमाओं से कविता की परिणामकारकता का सामर्थ्य व्यक्त करना इनके ज्वलंत काव्य का विशिष्ट्य है।"[327]

---

[323] नवी मळवाट, श.मा.मुक्तिबोध-पृ.116
[324] यात्रिक, श.मा.मुक्तिबोध, प्रस्तावना
[325] मुक्तिबोधांचे साहित्य, रा.भा.पाटणकर-पृ.201
[326] मुक्तिबोधांची निवडक कविता, यशवंत मनोहर-पृ.18

मुक्तिबोध के काव्य पर विचार करते हुए श्री 'रा.अ.काळेले' लिखते हैं-"मराठी में नव कविता का उद्‌गम कवि 'अनिल' से हुआ ऐसा मुक्तिबोध मानते हैं और स्वयं को अनिल का अनुगामी मानते हैं। अपनी कविता पुरोगामी है ऐसा मुक्तिबोध कहते हैं, उनका कहना है कि पुरोगामी कवि संकटकालीन परिस्थिति का केवल चित्रण नहीं करता वरन रोगी का सम्यक निदान कर उससे उपाय खोजता है। प्रतिकूल परिस्थितियों में पुरोगामी कवि निराश नहीं होता, वह आशावादी होकर आगे बढ़ता है। मुक्तिबोध के विचार और कविता पर कवि अनिल की छाया है अनिल द्वारा प्रणीत 'नया प्रक्षोभ' रस मुक्तिबोध की नव कविता का प्रमुख 'रस' है।"[328]

सारांशतः मुक्तिबोध की कविता और उनकी समीक्षा पर विचार करने से हम कह सकते हैं कि मुक्तिबोध मराठी नव कविता के प्रमुख कवियों में से हैं। मुक्तिबोध की काव्य चेतना और काव्यविचारों पर मार्क्सवादी विचारों का प्रभाव है और वे उन्हीं मानदंडों के आधार पर काव्य विचार अभिव्यक्त करते हैं। उनके अनुसार कविता को समाज से संलग्न रहना चाहिए और सामाजिक स्थितियों की अभिव्यक्ति करनी चाहिए। कवि का व्यक्तित्व उसकी सामाजिक स्थिति से बनता है। मुक्तिबोध के काव्य विषय का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है और आधुनिक मानव से मानवोचित गुणों के मानव की अभिव्यक्ति की संकल्पना दीन-हीन शोषितों के प्रति आस्था और शोषकों के प्रति विद्रोह-क्रांति की प्रज्वलित अग्नि उनके काव्य में दिखाई देती है।

5.5 इंदिरा संत

आधुनिक मराठी कविता में इंदिरा संत का स्थान विशेष उल्लेखनीय है। इंदिरा संत ने साहित्य की कविता, कहानी, ललित आदि विधाओं में विपुल लेखन किया है। श्रीमती इंदिरा संत का जन्म 4 जनवरी 1914 को विजापूर जिले के इंडी नामक गाँव में हुआ। पिता सरकारी नौकरी में थे। अतः

---

[327] मराठी काव्याचे मानदंड भाग-2, डॉ.स.रा.गाडगीळ-पृ.190

[328] नवकविनेचे एक तप, रा.अ.काळेले-पृ.57

परिवार की स्थिति साधारणतः सुदृढ़ थी। पिता के अकाल मृत्यु के कारण पितृ की छाया हट जाने से वह अपने मूल गाँव तंवंदी गाँव में रहने लगे। प्राथमिक शिक्षण की शुरुवात घर से ही आरंभ हुई और चौथी कक्षा तक का शिक्षण घर से ही पूर्ण किया। पिता की मृत्यु के बाद इंदिरा जी अपने चाचा के पास रहने लगी और पारिवारिक कारणों से चाचा ने अपना वास्तव्य बेळगाँव (कर्नाटक) में किया और इंदिरा जी का शिक्षण बेळगाव में होने लगा। उन्होंने सन् 1931 में बी.ए. 1947 में बी.टी और 1949 में डी.बी.एड्. पूर्ण किया। इसी बीच 'फर्ग्युसन महाविद्यालय', पुणे में उनका परिचय श्री नारायण मा.संत से हुआ तथा अनेक विरोधों के साथ उन्होंने श्री संत से 1936 में विवाह किया। बचपन से ही इनके घर से साहित्यिक संस्कार हुए और लेखन की ओर अभिरुचि निर्मित हुई। स्कूल के दिनों से ही उन्होंने कविता लेखन आरंभ किया था। इनकी कविताएँ प्र.श्री.कोल्हटकर द्वारा संपादित 'संजीवनी' मासिक पत्रिका में छपती थी। इंदिरा जी के घर का मूल उपनाम 'दीक्षित' था। नारायणराव संत से विवाहोपरांत वह इंदिरा संत बन गई। श्री संत साहित्य प्रेमी तथा लेखक थे। उनके साथ सहयोगी कवि के रूप में पहला काव्य संकलन 'सहवास' नाम से प्रकाशित किया।

श्रीमती संत पुणे से शिक्षण समाप्त कर बेळगाव वापस आई और सन् 1947 से 1956 तक बेळगाव के 'मराठी ट्रेनिंग कॉलेज' में प्रवक्ता के रूप में काम किया। उसी कॉलेज में सन् 1956 से 1974 तक प्रधानाचार्य का भार संभाला।

इंदिरा संत ने मराठी साहित्य को विपुल रचनाएँ प्रदान की हैं। उसकी मौलिकता को ध्यान में रखते हुए उन्हें विविध साहित्यिक सम्मान प्रदान किये गये। उनकी रचनाओं में उल्लेखनीय हैं-शेला, रंगबावरी, मेंदी, इन काव्य-संकलन को महाराष्ट्र शासन का प्रथम पुरस्कार मिला तथा मेंदि काव्य संकलन को 'इंदूर साहित्योजक मंडल' का पुरस्कार, और 'गर्भरेशीम' काव्यसंकलन को, 'अनंत कानेकर सम्मान' तथा 'साहित्य अकादमी' के सम्मान से पुरस्कृत किया गया। श्रीमती इंदिरा संत का साहित्य अपने युगीन साहित्य में अपनी विशिष्ट छवि को उभारता है। उनके साहित्य में स्त्रियों की करुणामय मानसिकता, प्रेम, विरह, दुःख आदि भावनाओं का गुंफन मिलता है जिसे अनेक निसर्ग प्रतिमाओं से उन्होंने अभिव्यक्त किया है। इस अभिव्यक्ति का निर्वाण 13 जुलाई 2000 को हुआ।

रचना संसार

कविता

सहवास-1940	शेला-1951	मेंदि-1955
मृगजळ-1957	रंगबावरी-1964	बाहूल्या-1972
गर्भरेशीम-1982	चित्कळा-1989	मृण्मयी-1981 सं.रमेश तेंडूलकर

कहानी

श्यामली-1952

कदली-1955

चैतु-1957

आत्मकथन

मृदगंध-1986

काव्य विषयक मान्यताएँ

आधुनिक मराठी नव कविता की धारा में 'इंदिरा संत' नाम महत्वपूर्ण स्थान रखता है। इन्होंने 'कविता', बाल कविता, कहानी, ललित आदि विधाओं में विपुल लेखन किया है। मराठी कविता की धारा में स्वांतः सुखाय काव्य रचना करनेवाले रचनाकारों में 'संत' का काव्य उल्लेखनीय है।

मराठी काव्यधारा में प्रेम के विविध रूप, प्रकृति का विविधांगी चित्रण, वेदना की अभिव्यक्ति, मिलन की उत्कंठा, लोक गीतों के आधार पर काव्य रचना और स्त्री के समस्त जीवनानुभव को अभिव्यक्त करने के कारण इंदिरा संत का काव्य एक अमूल्य निधि समान है। इंदिरा जी अपनी कविता के प्रेरक तत्वों के बारे में बताते हुए लिखती हैं-"मैंने कविता लिखी, उसकी प्रेरणा कहाँ से मिली और उसकी रचना प्रक्रिया किस प्रकार विकसित हुई यह बताना कठिन है। काव्य रचना करना कवि का धर्म है। वह कैसे विकसित हुई यह रसिक, आलोचक आदि को समझना, विश्लेषित करना चाहिए और उसके रसग्रहण में आनंद की वृद्धि करनी चाहिए किंतु उनको भी यक काम कठिन ही लगता है। ... कोई एक पदार्थ रुचिकर बना हो तो वह कैसे बनाया इस प्रकार महिलाएँ आपस में पूछती हैं, किंतु प्रत्यक्ष रूप से उसे बनानेवाले पदार्थों का और रुचि का कोई संबंध नहीं होता, रुचि (Test) तो उस

पदार्थ को बनानेवाली महिला के हाथ का गुण होता है। वह शास्त्र अथवा शब्दों में नहीं मिलेगा, इसी प्रकार की स्थिति कविता की भी है।"[329] इससे स्पष्ट होता है कि कवयित्री, इंदिरा संत की काव्यधारणा 'स्वांतः सुखाय' उक्ति पर आधारित हैं और कवि के व्यक्तित्व गुण के आधार पर काव्य विषय और काव्याभिव्यक्ति होती है, जिसे वह 'महिला के हाथ का गुण' कहकर स्पष्ट करती हैं। अर्थात् इससे यह भी अनुमान लगाया जा सकता है कि कवि के वैयक्तिक सामाजिक सरोकारों की अभिव्यक्ति उसकी कविता में सहज होती है, प्रयत्न से नहीं।

इंदिरा संत अपनी काव्यधारा में प्रकृति के विविध रूपों का चित्रण करनेवाली उल्लेखनीय कवयित्री हैं। उनके साहित्य में प्रकृति सखा, सहचर, ईश्वर आदि रूपों में प्रकट हुई है। अपनी काव्यविषयक धारणा तथा कविता की रचना प्रक्रिया स्पष्ट करते हुए वह लिखती हैं-"मुझे प्रकृति बहुत पसंद है, बचपन से ही प्रकृति के रम्य दृश्य घंटों देखते रहना ही मेरी आदत है, खिड़की से आनेवाले किरणों का प्रकाश, आकाश के तारे, पेड़-पत्तों की आवाज़, समुद्र की लहरें-धूप, बारिश, धुंध, हवा, ये सभी मुझे मोह लेते हैं। यह सब देखते हुए, उसका अनुभव लेते हुए मेरे मन में कोई उद्देश्य नहीं रहता है, समय काटना, कविता के लिए विषय सूझना, वर्णन करना आदि कोई उद्देश्य नहीं रहता। केवल देखने का आनंद, इस आनंद को अनुभूत करने का मोह।"[330] अर्थात् स्पष्ट है कि कवयित्री अपनी मन की नितांत कोमल आनंद प्रदान करनेवाली अनुभूति को शब्द रूप से प्रकट करना कविता मानती हैं। अतः प्रकृति की रम्य अनुभूति को वह प्रकट करना तथा समग्र रूप से मानव मन की विविध अनुभूतियों की अभिव्यक्त करना कविता मानती हैं।

कवयित्री अपने काव्य संकलन 'शेला' में अपनी कविता के बारे में लिखती हैं-"मेरी कविता मेरे साथ ही बड़ी हुई है। मेरे सुख से रंगी और दुःख से जीर्ण और प्रक्षोभ से अस्वस्थ हुई है। मेरे साथ ही उसे प्रौढ़ता आई है। मेरी कविता मेरे भावात्मक जीवन से संलग्न है, किंतु वह मेरी सखी नहीं और मेरी प्रतिकृति भी नहीं है। फिर मेरा उसका संबंध क्या है? जीवन के स्वास्थ्य से संघर्ष पर मेरी

---

[329] कविता फूलते अशी, सं.वा.राढवळे, कुलकर्णी-पृ.31

[330] कविता फूलते अशी, सं.वा.राढवळे, कुलकर्णी-पृ.32

अधिक श्रद्धा है, मानव को जीवन को सार्थक करने का साधन कहीं से मिलेगा तो वह संघर्ष से। इस संघर्ष में व्यक्तित्व के स्फुलिंग खिलते हैं शायद उससे मुझे अधिक आकर्षण है, उन स्फुलिंगों का आकृतिबंद्ध मेरी कविता है।"[331]

कवयित्री अपने काव्य में प्रतिमाधर्मिता के बारे में सहज रूप से बताती है कि प्रकृति के विविध रूप ही इसका कारण हैं। उन्हीं के शब्दों में-"मेरे भाव विश्व में प्रीति समान ही प्रकृति का स्थान है। मन की अस्वस्थ अवस्था में प्रकृति का सान्निध्य मुझे आवश्यक लगता है। इसीलिए मन की भावलहरी प्रकृति की प्रतिमाओं से अभिव्यक्त होती है।"[332]

सारांश रूप से उपर्युक्त विवेचन के आधार पर हम कह सकते हैं कि इंदिरा जी के अनुसार काव्य स्वान्त सुखाय और सहज है। उसे प्रयत्न के आधार पर अभिव्यक्त नहीं किया जा सकता है। वह कविता में कवि/कवयित्री की मानसिक अनुभूति और सामाजिक व्यक्तित्व को अधिक महत्व देती है। साथ ही उनकी मान्यता है कि कविता संवेदनाओं, अनुभवों की, अनुभूति की अभिव्यक्ति है जिसे कवि हृदय शब्द-रूप देकर अभिव्यक्त करता है।

5.6 विंदा करंदीकर

आधुनिक मराठी नव कविता की मर्ढेकर परंपरा से लेखन करनेवाले कवियों में विंदा करंदीकर का महत्वपूर्ण स्थान है। कवि विंदा करंदीकर (विनायक गोविंद करंदीकर) का जन्म 23 अगस्त 1918 में कोकण के सिंधुदुर्ग जिले के देवगढ़ तहसील में हुआ। इनका प्राथमिक शिक्षण गाँव से ही आरंभ हुआ। अतः उन्होंने सन् 1939 में बी.ए. तथा सन् 1949 में अंग्रेज़ी विषय लेकर एम.ए. पूर्ण किया। व्यावसायिक रूप से अध्यापन कार्य स्वीकारा और प्रथमतः विविध स्कूलों में अध्यापन कार्य किया। एम.ए. के बाद मुंबई के 'रुइया कॉलेज' में अध्यापन कार्य संभाला और वहीं से 1976 में सेवा निवृत्त हुए।

---

[331] शेला, इंदिरा संत (प्रस्तावना)
[332] कविता-रती-इंदिरा संत विशेषांक-सं.पुरुषोत्तम पाटील-पृ.31

कवि विंदा करंदीकर ने मराठी साहित्य की कविता, आलोचना, बालगीत, निबंध, अनुवाद आदि विधाओं में विपुल लेखन कर मराठी साहित्य की श्री वृद्धि की है। इनके साहित्यिक अवदान को ध्यान में रखते हुए अनेक सम्मानों से पुरस्कृत किया गया। ललित समीक्षक पुरस्कार, 'सोवियत लैंड नेहरू पुरस्कार' (1970) 'सोवियत फूलब्राइट सम्मान', 'कुमारन आसन पुरस्कार' 1982, 'कुसुमाग्र पुरस्कार', 'कबीर सम्मान पुरस्कार', 1991, 'जनस्थान पुरस्कार' 1993, 'कोणार्क सम्मान', तिलक महाराष्ट्र विश्वविद्यालय की ओर से डी.लिट् 1994, 'साहित्य अकादमी दिल्ली' का 'सदस्यत्व सम्मान' आदि। साथ ही सन् 1967-68 में शिकागो विश्वविद्यालय की अनुसंधानवृत्ति से वे अमरीका गए और रशिया के 'पुष्कीन समारोह' में भारत का प्रतिनिधित्व किया। इसके साथ ही विं.दा. करंदीकर के समस्त साहित्यिक अवदान को ध्यान में रखते हुए भारत का सबसे श्रेष्ठ साहित्यिक पुरस्कार ज्ञानपीठ (2003) से उन्हें सम्मानित किया गया। करंदीकर अंग्रेज़ी के अध्यापक होने के कारण उन पर आंग्ल कवियों का प्रभाव दिखाई देता है। किंतु इस प्रभाव को स्वयं पर केंद्रित होने नहीं दिया। मराठी साहित्य की परंपरा का प्रभाव उनके साहित्य पर दिखाई देता है। "प्रथमतः उनकी प्रारंभ की कविताओं पर कवि माधव ज्युलियन का प्रभाव था किंतु 1945 के बाद की कविताएँ उनके स्वतंत्र वैयक्तिक विचारों की अभिव्यक्ति करती है।"[333]

रचना संसार

विं.दा. करंदीकर ने मराठी की विविध साहित्यिक विधाओं में लेखन किया है, अतः उनकी रचनाओं का विधागत परिचय निम्नलिखित हैं-

कविता

स्वेदगंगा-(1949) मृदगंध-(1954) धृपद-(1959)

जातक-(1968) विरुपिका-(1981) अष्टदर्शने-(2003)

बालकविता

राणीचा बाग-(1963) एकदा काय झाले-(1961)

---

[333] संक्षिप्त मराठी वाङ्मय कोश, सं.व.आ.डहाके-पृ.461

ए टू लोकांचा देश-(1963) सशाचे कान-(1963)

परी ग.परी-(1965) अजबखाना-(1974) सर्कसवाला-(1975)

पिशीमावशी आणि निची भुतावळ-(1981) अडम्-तडम्-(1985)

टॉप-(1993) सात एके सात-(1993) बागुल बोवा-(1993)

<u>ललित निबंध</u>

स्पर्शाची पालवी-(1958) आकाशाचा अर्थ-(1965)

करंदीकरां चे समग्र लघुनिबंध-(1996)

<u>आलोचना</u>

परंपरा आणि नवता-(1967) उद्गार-(1996)

<u>अनुवाद</u>

ऑरिस्टॉटल चे काव्यशास्त्र-(1957) फाउस्ट भाग-1, (1965)

राजा लियर-(1974)

<u>अंग्रेज़ी समीक्षा/अलोचना</u>

लिटरेचर ॲज अ व्हायटल आर्ट, (1991)

अ क्रिटीक ऑफ लिटररी व्हॅल्युज

<u>अंग्रेज़ी में अनुवाद</u>

पोएम्स ऑफ विंदा-(1976) सम मोअर पोएम्स ऑफ विंदा-(1963)

त्रिमुर्ति-(1979) ओंकार-(1996)

द सेक्रिड हेरिस-(1998)

<u>हिंदी अनुवाद</u>

यह जनता अमर है-(2001) अनु.चंद्रकांत बांदिवडेकर

काव्य विषयक मान्यताएँ

कवि विंदा करंदीकर अपने युग के सजग कवि एवं आलोचक रहे हैं। उनकी साहित्य और कविता विषयक मान्यताएँ उनके विविध समीक्षात्मक लेखन में अभिव्यक्त हुई हैं। करंदीकर आधुनिक

युग की नवीनता को परंपरा से निर्मित मानते हैं। उनका विवेच्य ग्रंथ 'परंपरा आणि नवता' इसी प्रतिपाद्य को अभिव्यक्त करता है। कवि कविता में मानव की अनुभव संवेदना को अधिक महत्व देते हैं और संपूर्ण संवेदना को ही कविता का विषय मानते हैं और शब्द की महत्ता को समझते हुए उसे महत्वपूर्ण मानते हैं। उन्हीं के शब्दों में-"मैं संपूर्ण संवेदना को काव्य विषय मानता हूँ इसलिए संपूर्ण शब्द सृष्टि का स्वीकार करने का प्रयत्न किया है, मेरी दृष्टि से सभी शब्द महत्वपूर्ण हैं, काव्यात्मक हैं, किसी विशिष्ट संवेदना को अभिव्यक्त करने के लिए वे सभी विशिष्ट शब्द सच्चे बनकर अभिव्यक्ति करते हैं।"[334]

कवि विंदा के अनुसार-"चिंतनशील व्यक्ति के मानस की अभिव्यक्ति काव्य है। काव्य में चिंतन के संदर्भ में कवि का मत है-"चिंतन से दार्शनिकता निर्माण होने के लिए उस संपूर्ण चिंतन में अंतर्गत सु-संगति की आवश्यकता होती है और चिंतन को शास्त्र पर प्रतिष्ठित करने के लिए इस सुसंगत चिंतन का आलेख वास्तविक रूप में एकनिष्ठ होना जरूरी होता है। मर्ढेकर की चिंतनशीलता में अंतर्गत चिंतनशीलता का अभाव होने के कारण उसमें दर्शानिकता ढूँढ़ने का प्रयास करना हास्यास्पद होगा। सच तो यह है कि इस प्रकार की सुसंगत 'दार्शनिकता' एक कवि के लिए जरूरी नहीं होती। 'चिंतनशील' काव्यात्मा की फलश्रुति दर्शन न होकर काव्य है।"[335] अतः कविता मानसिक चिंतन का आमूर्तन रूप है यह करंदीकर की मान्यता है।

करंदीकर साहित्य और समाज को अन्योन्याश्रित मानते हैं और उनकी कविता में यथार्थ रूप से समाज जीवन की अभिव्यक्ति हुई है। उनकी कविता साम्यवादी क्रांति की विचारधारा के अनुरूप क्रांति की कल्पना करती है। अतः सर्वहारा समाज के प्रति उनके काव्य में अतीव संवेदना दिखाई देती है। विंदा की कविता की सामाजिकता का विश्लेषण करते हुए अक्षय कुमार काळे लिखते हैं- "श्रमिकोंभी को दाहक वंचना और करुण लाचारी, बुर्ज्वा समाज का अन्याय और शोषण इनके संघर्ष दर्शन से 'श्रीमंतों का स्वर्ग बनाया, बने नरक मजदूरों का' इस सार रूप दर्शन तक उनकी कविता

---

[334] परंपरा आणि नवता, वि.दा.करंदीकर-पृ.88

[335] मर्ढेकर का काव्यः एक मूल्यांकन, विंदा करंदीकर, दस्तावेज-64, जु-सितंबर 1994-पृ.69

आई है, किंतु शोषण-क्रांति-संघर्ष इस प्रकार के चक्र में अटकी नहीं। सांस्कृतिक, सामाजिक विषमता, साथ ही यंत्र युगीन आर्थिक पीडितता से ग्रसित वैयक्तिक जीवन उनकी अनुभूति के विषय बना और उससे कभी वास्तव दर्शन, तो कभी चिंतनशैली में तो कभी ज्वाला लगानेवाली क्रांति शैली में अनेक समाज चित्रों का निर्माण हुआ।"[336]

करंदीकर के काव्य में अनेक अनुभवों को विविध प्रतिमाओं से अभिव्यक्त किया गया है। "करंदीकर की प्रतिमाएँ नए युग का संदर्भ अंकित करती है, चित्र में रंगों का जितना महत्व है, कविता में प्रतिमाओं का भी उतना ही महत्व है। ऐसा करंदीकर का मानना है।"[337] करंदीकर के अनुसार- "कल्पना के स्तर पर इंद्रियगोचर बननेवाला, संवेदनाओं से भरा हुआ तत्व प्रतिमा है।"[338] कविता और प्रतिमाओं के संबंध में वे आगे लिखते हैं-अंततः प्रतिमा कल्पना के स्तर पर अनुभूत होनेवाले घटकों का एक घटक है, अन्य सभी घटकों का महत्व उसे नहीं दे सकते। अतः करंदीकर के अनुसार प्रतिमा कविता का महत्वपूर्ण घटक है, किंतु इस का अतिरेक न ही होना चहिए और उसे पूर्ण प्राथमिकता नहीं देनी चाहिए।

कवि करंदीकर अपनी काव्य भाषा के संदर्भ में विद्रोही माने जाते हैं। उनके काव्य में भाषायी शब्दों की अनेकार्थकता दिखाई देती है। उनका काव्य-भाषा के संदर्भ में मंतव्य है कि-"मूलतः भाषा गतिशील है और कवि द्वारा अधिक गतिरूप, संमिश्र तथा अधिक प्रभावी बनने की संभावना रखती है। किसी विशिष्ट कविता का शब्द और उसका अर्थ कविता के विभिन्न ताण से प्रभावित हो सकता है, कविता में उस शब्द की ध्वन्यात्मकता जिस प्रकार कवि को अभिप्रेत होती है वही रसिक ग्रहण करेगा इसे मानने का कोई आधार नहीं है... शब्द जब तक कार्यप्रवण रहता है तब तक वह कार्यप्रवण अनिश्चयार्थक ही रहता है।"[339] कवि करंदीकर कविता में शब्दों की विभिन्नार्थक संवेदना पर बल देते हुए उसके विभिन्न संदर्भगत अर्थों का अनुमान देते हैं। अतः भाषायी शब्दों के संदर्भ में उसे व्यापक

---

[336] अर्वाचीन मराठी काव्यदर्शन, अक्षयकुमार काळे-पृ.427
[337] अर्वाचीन मराठी काव्यदर्शन, अक्षयकुमार काळे-पृ.435
[338] परंपरा आणि नवता, गो.वि.करंदीकर-पृ.90
[339] परंपरा आणि नवता, गो.वि.करंदीकर-पृ.72

आयामी मानते हैं। करंदीकर अपनी कविता की प्रयोगात्मकता के संदर्भ में लिखते हैं-"विभिन्न संवेदनाओं को अभिव्यक्त करने के लिए अनुभूति और शैली के स्वरूप में जो पुर्नरचना बनानी पड़ती है, उसे बनानेवाला प्रतिमा धर्म ही प्रयोगशीलता है।"[340] अपनी प्रयोगात्मक अभिव्यक्ति के संदर्भ में वे आगे लिखते हैं-"मैं परंपरावादी कभी नहीं था, अथवा प्रयोगवादी भी नहीं था। अनुभूति के विभिन्न अंगों पर ध्यान देते हुए कविता की भाषा, शैली, रचना आदि की पद्धतियों का कभी अनायास तो कभी सजग रूप से खोज करना पड़ा, उससे ही मेरी प्रयोगशीलता का स्वरूप निश्चित होता है। ... इस प्रयोगशीलता का पिंडधर्म परस्पर विरोधी, विविध अनुभूतियों की खोज करनेवाला, उन अनुभूतियों के अनुसार कविता की भाषा, छंद, शैली तथा रचना बदलने वाला है।"[341] अतः कवि के अनुसार भाषायी शब्दों का अर्थ विभिन्न प्रकार का होता है और अपनी अभिव्यक्ति को गतिशील बनाने के लिए वे इसका सजग उपयोग कर अपनी अभिव्यक्ति शैली को गतिशील बनाते हैं। उपर्युक्त विवेचन से कवि विदा करंदीकर की साहित्य तथा काव्यविषयक मान्यताएँ स्पष्ट होती हैं।

5.7 मंगेश पाडगांवकर

आर्वाचीन मराठी कविता के इतिहास में कवि मंगेश पाडगांवकर का महत्त्वपूर्ण स्थान है। सन् 1950-1960 के काल में कविता लेखन की शुरुआत कर 'नवकविता' के युग में अपनी कविता के माध्यम से मराठी कविता को नयी संवेदना के साथ 'भावकविता' का सृजन कर युगीन साहित्य में अपना महत्वपूर्ण स्थान निर्धारित करनेवाले कवियों में इनका महत्त्वपूर्ण स्थान है। इनका संपूर्ण नाम मंगेश केशव पाडगावकर है। जन्म कोकण विभाग के 'वेंगुर्लै' जिले में हुआ। प्राथमिक शिक्षा वहीं से प्राप्त की तथा उच्च शिक्षा के रूप में सन् 1956 में बी.ए. स्नातक तथा 1958 में स्नातकोत्तर एम.ए.-मराठी और संस्कृत विषय लेकर पूर्ण किया। एम.ए. की परीक्षा प्रथम श्रेणी में पास करने के उपलक्ष्य में उन्हें 'तर्खडकर सूवर्ण पदक' तथा न.चिं.केष्ळकर सूवर्णपदकों से सम्मानित किया गया।

---

[340] परंपरा आणि नवता, गो.वि.करंदीकर-पृ.201
[341] परंपरा आणि नवता, गो.वि.करंदीकर-पृ.201

"[342] छात्र जीवन से ही ये संवेदनशील एवं प्रतिभाशाली थे। व्यावसायिक जीवन की शुरुआत हाई स्कूल में अध्यापक के रूप में हुई, इसके उपरांत कुछ समय तक 'साधना' साप्ताहिक के सहसंपादक बनें और 'आकाशवाणी' में प्रोड्युसर का कार्य संभाला तथा महाविद्यालय में मराठी विभाग के प्रमुख बने। सन् 1970 से 'युनाईटेड स्टेट्स इर्ल्मेशन सर्व्हिस' में मराठी विभाग के प्रमुख संपादक रहे तथा 1989 में सेवा निवृत्त हुए।"[343] मंगेश जी ने अपना लेखन बचपन से ही शुरु किया। आयु के नौवें-दसवें वर्ष से वे कविता लिखते रहे।"[344]

मंगेश पाडगावकर नवकविता युग के भाववादी, निसर्गपरक, प्रेम विषयक कविताओं के कवि के रूप में विशेष चर्चित हैं। "इनकी भाववादी कविता पर पूर्व परंपरा के कवि बा.भ.बोरकर, कुसुमाग्रज का प्रभाव था। यह प्रभाव उनके प्रथम संकलन 'धारानृत्य' (1950) में विशेष रूप से दिखाई देता है।"[345] किंतु यह प्रभाव धीरे-धीरे समाप्त होकर उनकी कविता नवीन भावजीवन को अभिव्यक्त करने में अग्रसर रही। पाडगांवकर की कविता में प्रकृति के माध्यम से अनेक भावना, अनुभूतियों की अभिव्यक्ति हुई है। अतः उनके काव्य विषयक धारणाओं और मान्यताओं पर विचार करना आवश्यक है।

रचनाएँ

(कविता) धारानृत्य-1950, जिप्सी-1953, निंबोणिच्या झाडा मागे-1954, छोरी-1957, शर्मिष्ठा-1960, उत्सव-1962, वात्रटिका-1963, भोलानाथ-1964, मीरा-1965, विदुषक-1966, बबलगम-1967, सलाम-1978, गझल-1981, भटके पक्षी-1984, मुझे गीत गाण्यासाठी-1989 आदि।

अनुवाद

---

[342] अर्वाचीन मराठी काव्यदर्शन, अक्षय कुमार काळे-पृ.538
[343] संक्षिप्त मराठी वाङमय कोश-सं.प्रभा गणोरकर-पृ.437
[344] छोरी, मंगेश पाडगावकर-पृ.आठ
[345] जिप्सी, मंगेश पाडगावकर, प्रस्तावना-वा.ल.कुलकर्णी-पृ.सहा

विल्यम सेक्सपिअर के नाटकःज्यूलियस सिझर, रोमिओ ज्यूलिएट, टेम्पेस्ट-(वादळ), का मराठी में अनुवाद।

काव्य विषयक मान्यताएँ

मंगेश पाडगांवकर आधुनिक मराठी कविता के चर्चित भावकवियों में प्रमुख स्थान रखते हैं। इनके काव्य में मानव मानस की विविध अनुभूतियाँ प्रकृति के बिंब एवं प्रतीकों के माध्यम से अभिव्यक्त हुई हैं। उन्होंने अपनी काव्य विषयक मान्यताएँ एवं धारणाएँ अपने काव्य संकलन 'छोरी' (1957) में 'मेरे काव्य की भूमिका (माझ्या काव्याची भूमिका)' में विस्तार से अभिव्यक्त की हैं। कवि अपनी कविता की रचना प्रक्रिया के संबंध में लिखते हैं-"मेरी कविता के स्वरूप एवं उसकी प्रेरणा के संदर्भ में मैंने कभी कारण सहित विचार नहीं किया। बहुत बार कविता लिखने के बाद प्रश्न निर्माण होता है कि उसकी रचना किस प्रकार हुई?... रचना प्रक्रिया का गूढ़ स्वरूप अब भी मेरी समझ में नहीं आया। मेरे अनजाने में ही मन की गहराइयों में रिक्त कोई अनुभूति का क्षण मिट्टी का कवच भेद कर अंकुरित होने वाले हरे पत्ते समान, कब और कैसे प्रकट होता है इसका रहस्य मुझे अब तक समझ में नहीं आया। मेरे अनजाने में ही मन की गहराइयों में अंकुरित कोई अनुभूति का क्षण मिट्टी का कवच भेदकर अंकुरित होनेवाले हरे पत्ते समान कब और कैसे प्रकट होता है इसका रहस्य मुझे अब तक समझ में नहीं आया। वह क्षण अपरिहार्य एवं अनपेक्षित रहता है इतना ही मैं कह सकता हूँ।"[346] उपर्युक्त कथन के आधार पर हम कह सकते हैं कि पाडगावकर की काव्य संबंधी मान्यता वर्ड्स्वर्थ की कविता की अवधारणा 'Poetry is spontionus overflow of powerful feelings. से अधिक मिलती है। उनका मानना है कि कविता सहज रूप से अपने मन की भावात्मक अनुभूति से अभिव्यक्त होती है और अभिव्यक्ति का 'वह क्षण अपरिहार्य एवं अनपेक्षित' होता है।साधारणतः यह मान्यता सहज है क्योंकि कोई भी कवि शब्दों को जोड़कर अपनी अनुभूति अभिव्यक्त नहीं कर सकता।

कवि पाडगांवकर कविता में शब्दों के अर्थ लय और नाद तत्व पर बल देते हैं। इन्हीं के शब्दों में-"तब मैं चमचमाते शब्द और रूपकों से मेरी कविता का श्रृंगार करता था। शब्दों के अर्थ से

---

[346] छोरी, मंगेश पाडगांवकर-पृ.सात

अधिक उनका नाद (ध्वनि) अधिक महत्वपूर्ण लगता था। अनुभवों का खास अपना संगीत होता है- नादतत्व।-"इसकी तब बिलकुल कल्पना भी मुझे नहीं थी। किसी अनुभव के प्रथम आवेग से कोई पंक्ति मेरे मन में निर्मित होती थी... शब्दों के नाद सौंदर्य से मुग्ध होकर मैं कविता की निर्मिति करता था। यह मुग्धता समाप्त होने पर लगता था कि स्वर्ग से पृथ्वी पर आ गया।"[347]

पाडगावकर की कविता भावकविता के रूप में चर्चित है। उन्होंने अनुभूति को महत्वपूर्ण मानकर अपनी कविताओं में मानव मन के प्रेम श्रृंगार, सहवास, मस्ती, सामाजिक स्थिति आदि को अभिव्यक्त किया और इस अभिव्यक्ति का माध्यम था प्रकृति। प्रकृति के विविधांगी, मनोहारी चित्र इनकी कविता में दिखाई देते हैं। अतः प्रकृति इनके काव्य विषय वस्तु, अभिव्यक्ति के मूल में है। इसे कवि स्वीकार करते हुए, उसे अपनी कविता की मूल प्रेरणा कहते हैं। उन्हीं के शब्दों में-"मेरी कविता की प्रथम प्रेरणा प्रकृति है। मेरा बचपन 'कोकण-वेंगुर्ले' में बीता, हरे गोलाकार ऊँचे माड के पेड़, नीला आकाश, अपनी ही तंद्रा में दूर तक जानेवाली लाल मिट्टी की पगडंडियाँ इन सभी ने मेरे मन से अनायास नाता जोड़ा, मेरे अनुभव में उन्होंने अपना रंग भर दिया था। मेरी भावनाओं में उन्होंने ताल (हृदम) भर दिया था। अपने रूप सौंदर्य की असंख्य प्रतिमा मेरे मन में भर दी थी। प्रृकति की विविध अवस्थाओं का दर्शन इस युग में मुझे हुआ। मन में अंकुरित अनुभव प्रतिमाओं को शब्दों का रूप आने लगा।"[348] प्रकृति दर्शन से मन में निर्मित होनेवाले रंग गंध के तरल संवेदनाओं से भी काव्य निर्माण हो सकता है, इसका आभास हुआ। "यह सूक्ष्म तरल संवेदना भाववृत्ति से एक बन जाती है, तथा कथित रूपक अथवा रूपकों के आश्रय से अभिव्यक्त होने वाला विचार कविताओं में न हो तो भी संवेदनाएँ गहरे अनुभव से जुड़ी रहती हैं।"[349] कवि अपने अनुभव एवं प्रकृति की मानसिक प्रतिक्रिया की अभिव्यक्ति अपनी कविता का मूल मानता है। साथ ही वह कविता को अपने अनुभव का स्पष्टीकरण मानता है। उनके अनुसार-"किसी भी गतिमान अनुभव का स्पष्टीकरण नहीं हो सकता केवल अनुभव का स्पंदन प्रतीत करवाना ही महत्वपूर्ण है। काव्य रूप लेनेवाले अनुभव को शब्द,

---

[347] छोरी, मंगेश पाडगांवकर-पृ.दहा, अकरा
[348] छोरी, मंगेश पाडगांवकर-पृ.नए, दहा
[349] छोरी, मंगेश पाडगांवकर-पृ.तेरा

प्रतिमा, ध्वनि से अलग नहीं कर सकते। डाल से फूटनेवाले चैतन्य रूपी पर्ण, फूल समान अनुभवों से शब्द, प्रतिमा फूटकर बाहर निकलती है।"[350] अर्थात् पाडगावकर का मानना है कि कविता में भावानुभव की अभिव्यक्ति के लिए शब्द प्रतिमाएँ आदि सहज रूप में कवि के मन से अभिव्यक्त होती हैं। वे इसी संदर्भ में आगे लिखते हैं-"कोई अनुभव, अन्य अनुभवों के अन्य संबंधों के साथ व्यक्त नहीं हुआ तो उसे सच्चे अर्थ में अभिव्यक्ति नहीं कह सकते।"[351] पाडगावकर अनुभूति को कविता के लिए महत्वपूर्ण मानते हुए लिखते हैं-"काव्य निर्मिति की इस प्रकार की अवस्था में किसी भी बाह्य तंत्र के अनुसार लेखन नहीं होता। प्रत्येक अनुभव का अपना स्वतंत्र 'व्यक्तित्व' रहता है और इस व्यक्तित्व के अनुसार ही अभिव्यक्ति का तंत्र निर्धारित होता है। कविता किस प्रकार लिखनी चाहिए, पहले निर्धारित करना असंभव है क्योंकि निर्मिति की गतिशील प्रक्रिया में वह अपने आप विकसित होती है। इसीलिए एक कविता का तंत्र (रचना प्रक्रिया) दूसरी कविता से भिन्न होता है। विभिन्न प्रकार के अनुभव विभिन्न पद्धतियों से अभिव्यक्त होते हैं।"[352]

सारांश रूप से उपर्युक्त विवेचन के आधार पर हम कह सकते हैं कि कवि पाडगावकर की काव्य मान्यताएँ अनुभूति को प्रथम और प्रकृत मानती हैं और उनके अनुसार मानस की प्रकृत अनुभूतियाँ विभिन्न प्रकार के अनुभवों का आलंबन लेकर शब्दों के माध्यम से अभिव्यक्त होकर कविता का रूप ग्रहण करते हैं। पाडगांवकर कविता में लयतत्व, ध्वनिनाद तत्व और अनुभूति की सौंदर्यात्मक अभिव्यक्ति महत्वपूर्ण मानते हैं। उनकी काव्य विषयक धारणाएँ प्रकृति के प्रकृत अनुभवों की प्रतिक्रिया समान सहज हैं। वे कविता को कोई तंत्र, पद्धति विशेष न मानकर मन की अनुभूति, अनुभवों का सहज प्रस्फुटन मानते हैं।

5.8 य.द.भावे

---

[350] छोरी, मंगेश पाडगांवकर-पृ.सोळा
[351] छोरी, मंगेश पाडगांवकर-पृ.सतरा
[352] छोरी, मंगेश पाडगांवकर-पृ.सतरा

यशवंत दत्तात्रेय भावे आधुनिक मराठी नवकविता के प्रमुख चर्चित कवि हैं। श्री भावे का जन्म 26 जुलाई 1911 को पुणे में हुआ। पुणे में ही उनकी प्राथमिक शिक्षा का आरंभ हुआ। भावे छात्र जीवन में मेधावी थे। इनका महाविद्यालयीन तथा उच्च शिक्षण पुणे में ही हुआ। व्यावसायिक रूप से ये शिक्षा से जुड़े रहे तथा चिपळुन, पुणे, मुंबई, राजकोट, बेळगाव आदि शहरों के महाविद्यालयों में अंग्रेज़ी विषय का अध्यापन कार्य करते रहे तथा कुछ वर्ष प्रधानाचार्य पद का कार्यभार संभाला। श्री भावे की काव्य रचनाएँ निम्नलिखित है-

काव्य रचनाएँ

आर्द्रा-1949 हळवे भिंग-1951 मिलन-1955

पुष्पगंधा-1985

काव्य विषयक मान्यताएँ

श्री भावे जी ने अपनी काव्य विषयक भूमिकाओं को अपने काव्य संकलनों की भूमिकाओं में स्पष्ट किया है। भावे अंग्रेज़ी के अध्यापक थे। अतः उन्होंने अंग्रेज़ी साहित्य विचारों का अध्ययन किया, उसका प्रतिबिंब प्रभाव स्वरूप उनकी कविता में दिखाई देता है। इस संदर्भ में आलोचक अक्षय कुमार काळे लिखते हैं-"य.द.भावे की कविताओं पर आधुनिक आंग्ल कवियों के संस्कार दिखाई देते हैं।"[353] इस संदर्भ में भावे अपने कविता संकलन के बारे में लिखते हैं-"इन कविताओं की पंक्तियों अथवा शब्द रचना में नये-पुराने आंग्ल-मराठी कवियों का प्रभाव पाठकों को दिखाई दें तो उसमें आश्चर्य कारक कुछ भी नहीं है। पाठक का वाचन अगर सृजनशील होगा तो जो कुछ पढ़ा गया वह अपने अंतर्मन की एक इकाई बन जाता है और जब कभी अपनी ओर से कुछ निर्माण होता है उस समय पठन किए गए शब्द, कोई पंक्ति बिजली समान अनायास कलम से वर्ण्यविषय का एक भाग बनकर चमक जाता है। यह सभी के संदर्भ में होता है। किंतु ऋण तो ऋण ही है। अतः नये पुराने आंग्ल-मराठी कवियों का यह ऋण स्वीकार कर उनको विनम्र अभिवादन करता हूँ।"[354]

---

[353] अर्वाचीन मराठी काव्यदर्शन, अक्षयकुमार काळे-पृ.437

[354] आर्द्रा, य.द.भावे-पृ.3

इस कथन के आधार पर स्पष्ट है कि ‘भावे’ मानव की अनुभव संवेदनात्मक परंपरा में अनुभव और अध्ययन के प्रतिबिंब को महत्वपूर्ण मानते हैं। उनके अनुसार मानव अपने अनुभव की क्रिया-प्रतिक्रिया से सोचता विचार करता है और अपने अध्ययन से भी ग्रहण करता है अर्थात् मानव के विचारानुभव में परंपरा का अध्ययन महत्वपूर्ण मानते हुए स्पष्ट करते हैं कि कोई भी विचारानुभव शुद्ध कोरा नहीं बल्कि प्रत्येक अनुभव, विचार में सामाजिकता होती है, प्रभाव ग्रहण होता है और यह प्रभाव अनिवार्य है जिसकी प्रतिक्रियास्वरूप मानव अपनी अनुभूति की अभिव्यक्ति देता है जिसे हम साहित्य कहते हैं। इसी संदर्भ में कवि भावे लिखते हैं-"मेरा और मेरी कविता का जो कुछ व्यक्तित्व है वह मेरे शिक्षण और मेरे प्रत्यक्ष जीवनानुभव से बना हुआ है।"[355] अर्थात् कवि अनुभव की अभिव्यक्ति को प्राथमिकता देते हैं।

कवि कविता में जीवनानुभव के साथ कल्पना को भी महत्वपूर्ण मानते हैं। कवि के अनुसार-"मेरा मन कल्पना के खेल में सहज रममान होता है। ‘टर्नर’ कवि के ‘रोमांस’ कविता के बालक के समान अनुभूति मुझे बहुत बार हुई। कल्पनाविश्व में अनेक बार गुम हो गया हूँ, इस कल्पना शक्ति के साथ ही एक प्रकार की तरंगी तरलता (Liquid sensitivity) मेरे स्वभाव में है। ये दोनों बातें सहायक तथा विघातक होती हैं।"[356]

भावे की काव्यविषयक मान्यताओं पर विचार करते हुए आलोचक रा.अ.काळेले लिखते हैं-"कवि ने अपनी काव्य प्रक्रिया स्पष्ट की है कि "जीवन के अनेक अनुभव मनुष्य के अंतर्मन में अनायास गहरे बैठ जाते हैं और कभी-कभी किसी कारण से ‘एक प्रकार की रसायनिक प्रक्रिया होकर अंतर्मन जाग उठता है और वैचारिक भावना का उद्रेक होता है।’ इस अनुभूति को अभिव्यक्त करने के लिए शब्दों का अंतर्संगीत साथ देता है। प्रतिमाएँ प्रतीकात्मक रूप धारण करती हैं और विसंवादिता से एकतानता रूप लेती है।"[357]

---

[355] पुष्पगंधा, य.द.भावे-पृ.सात
[356] पुष्पगंधा, य.द.भावे-पृ.सात
[357] नवकवितेचे एक तप, रा.अ.काळेले-पृ.43

भावे नवकविता के सजग कवि रहे हैं। अतः उन्होंने अपने संकलन 'हळवे भिंग' (sensative impressions) संकलन में नवकविता के स्वरूप और दृष्टिकोणों पर विचार किया है। अतः वे नयी-पुरानी कविता पर विचार करते हुए लिखते हैं-"पुरानी कविता में कवि का अर्ध व्यक्तित्व तथा आधा वास्तवदर्शन दिखाई देता है तो नव कविता में कवि का संपूर्ण व्यक्तित्व और संपूर्ण वास्तव दर्शन। इस अर्थ में नया कवि पुरोगामी है। उसकी कलासजगता स्वप्निल और सामाजिकता जागरूक और वह मानव मूल्यों का पूजक रहता है। मानव की संख्या बढ़ रही है किंतु मानवता नष्ट हो रही है जिससे नवकवि का मन व्यथित होता है।"[358]

कवि अपनी कविता पर विचार करते हुए कविता के लक्षण पर विचार करते हुए लिखते हैं- "मेरे अनुभव में जो आया उसे मैंने कुछ मुक्त छंद में कुछ पादाकुलक तो कुछ शुद्ध गद्य में लिखा है। कविता का व्यावच्छेदक लक्षण छंद अथवा गेयता न होकर 'अंतर्संगीत' है, इस पर मेरा पूर्ण विश्वास है।"[359] भावे कविता में प्रतीकों की उपयोगिता के संदर्भ में लिखते हैं-"जागृत एवं अर्धसुप्त मन के अनुभव तथा अनुभूति की अभिव्यक्ति करने के लिए सहज ही प्रतिबिंब एवं प्रतीकों का उपयोग करना पड़ता है। क्योंकि उसका जागृत अनुभव के साथ अर्धसुप्त अनुभवों से संबंध आने के कारण प्रतिबिंब, प्रतीक अनिवार्य बनते हैं। ... प्रतिबिंब और प्रतीक सहज प्रवृत्ति के संस्कार और शिक्षण के विश्व से उस्फूर्त हो आती है। वह बिंब, प्रतिमाएँ एक के बाद एक आकर सजीवता से कार्य प्रणाली में मिल जाती है। इन प्रतिमाओं के द्वारा की गई कवि की अभिव्यक्ति पाठक समझेगा तो ही उसे बोध हो सकता है। कविता का विश्व मूलतः अशरीरी तथा आंतरविश्व का होता है। ... प्रतिमाओं की सूचना दूरान्वय से नहीं हो सकती। वह अनुभूति के साथ, जीवंतता से एक बनी होने के कारण अभिव्यक्ति का सजीव भाग बनकर ही बाहर आती है।"[360]

---

[358] नवकवितेचे एक तप, रा.अ.काळेले-पृ.49
[359] हळवे भिंग, य.द.भावे (निवेदन)
[360] हळवे भिंग, य.द.भावे-पृ.9-10

कवि भावे का मानना है कि कविता के संसार में कुछ भी वस्तुनिष्ठ नहीं रहता है। उन्हीं के शब्दों में-"कविता के संसार में शुद्ध वस्तुनिष्ठ (factual) कुछ भी नहीं रहता। सृजनशील कल्पना की ऊर्जाशक्ति के आवेग में सब कुछ काव्यात्म (poetic) बन जाता है।"[361]

सारांश रूप से उपर्युक्त विवेचन के आधार पर श्री य.द.भावे की काव्य विषयक मान्यताओं को समझा जा सकता है। उनकी मान्यता है मानव मन अपार है और उसके अनुभव भी। मानव जो कुछ देखता है, महसूस करता है उसकी मानस में क्रिया-प्रतिक्रिया होती है और उस क्रिया प्रतिक्रिया की अभिव्यक्ति अनिवार्य होकर शब्द प्रतिमा प्रतीक आदि के माध्यम से अभिव्यक्त होती है। कवि की अभिव्यक्ति में काव्य सहज निर्माण होता है और प्रतीक-बिंब सहज रूप से उसकी कविता में आते हैं। कविता मानव मन, मानवीय चेतना की अभिव्यक्ति करती है।

5.9 दिलीप पुरुषोत्तम चित्रे

आधुनिक मराठी कविता की 'नवकविता' में दिलीप चित्रे का महत्वपूर्ण स्थान है। "1956 में नव कविता के प्रणेता बा.सी.मर्ढेकर की मृत्यु के बाद 'नव कविता' आंदोलन के नेतृत्व का भार दिलीप चित्रे ने संभाला।"[362] दिलीप चित्रे का जन्म 17 सितंबर 1938 को बड़ौदा में हुआ। उनके 'पिता' पुरुषोत्तम चित्रे सुप्रसिद्ध कवि एवं 'अभिरुचि' मासिक पत्रिका के संपादक थे। अतः घर से ही उन्हें साहित्यिक संस्कार मिलते रहे। सन् 1951 में आयु के बारहवें साल में बडौदा छोड़कर मुंबई पढ़ने आ गए और सन् 1959 में अंग्रेज़ी विषय लेकर मुंबई विश्वविद्यालय से बी.ए. पास किया। चित्रे अपने युगीन साहित्यिक गतिविधि में सक्रिय रहे। बी.ए. के बाद उन्होंने 'इथिओपिया' में तीन वर्ष 'शिक्षक' का कार्य किया। इंटरनेशनल वर्कशाप के लिए वे कुछ वर्ष अमरीका में रहे। अतः उन्होंने युरोपीय साहित्य और संस्कृति का अध्ययन किया। भारत वापस लौटने के बाद, विज्ञापन अधिकारी विक्रीकर अधिकारी, पत्रकार आदि के रूप में कार्य किया। 'इंडियन एक्सप्रेस' के कला विभाग में कुछ वर्ष कार्य तथा 'शब्द' एवं 'न्यू क्वेस्ट' पत्रिकाओं का कुछ समय तक संपादन, साथ ही भारत भवन

---

[361] हळवे भिंग, य.द.भावे-पृ.49
[362] अर्वाचीन मराठी काव्यदर्शन, अक्षयकुमार काळे-पृ.478

भोपाल से निकलनेवाली पत्रिका 'वागर्थ' के संचालक के रूप में कार्य किया। श्री चित्रे ने अमरीका और अफ्रीका में दीर्घकाल तक निवास किया और वहाँ की साहित्यिक गतिविधियों में सक्रिय रहे। अतः उनके अनुभव विश्व में व्यापक तत्व चिंतन एवं नवीन दृष्टिकोण दिखाई देते हैं। दिलीप चित्रे आधुनिक मराठी कविता के चर्चित कवि हैं। उन्होंने साहित्य की विविध विधाओं में लेखन कर मराठी साहित्य की श्री वृद्धि की है। उनके रचना संसार का विधागत परिचय निम्नलिखित है-

रचनाएँ

1) कविता-कविता 1961, कवितेनंतरच्या कविता 1978, दहा बाय दहा 1983, एकुण कविता-1-1992, एकुण कविता 2-1996
2) कहानी-आर्फियस, 1968, चतुरंग 1996
3) उपन्यास-त्यांची व्याली अशी पोरे
4) नाटक-मिठू-मिठू पोपट
5) प्रवास वर्णणात्मक आत्मवृत्त, शिबा राणीच्या शोधात
6) ललित-चाव्या, 1982, शतकांचा संधिकाल, 1995, तिरकस आणि चौकस, 1990
7) अनुवाद एवं संपादन-भाउ पाध्यें की श्रेष्ठ कहानियाँ, ट्रॅव्हलिंग इन अ केज (अंग्रेज़ी कविताओं का संकलन) ॲन ॲन्थॉलॉजी आफ मराठी पोएट्री (अंग्रेज़ी अनुवाद) पुन्हा तुकाराम (समीक्षा) तुका सेज (अंग्रेज़ी अनुवाद)

दिलीप चित्रे का लेखन विविध पत्रिकाओं में व्याप्त है जो पुस्तक रूप में प्रकाशित नहीं हुआ। इस संदर्भ में उल्लेखनीय है, आधुनिक कवितेला सात छेद (लेखमाला), स्पॉनिश कविताओं का अनुवाद, दहा बाय दहा (अंग्रेज़ी अनुवाद), बोदलेयर, एझरा पाउंड, रेम्बो, रिल्के आदि पर वैचारिक लेख, 'सफायर', 'रुधिराक्ष' उपन्यास।

काव्य विषयक मान्यताएँ

कवि दिलीप चित्रे आधुनिक मराठी नव कविता के इतिहास में महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। चित्रे का नवकविता के संदर्भ में अवदान रेखांकित करते हुए अक्षय कुमार काळे लिखते हैं-"सन् 1956 में मर्ढेकर का निधन हुआ। नव कविता की पहली पीढ़ी का नेतृत्व समाप्त हुआ। इस नेतृत्व को स्वीकार

करने की जिम्मेदारी दिलीप चित्र ने उठाई। 1960 में चित्रे का 'कविता' नामक संकलन प्रकाशित हुआ और मर्ढेकर की काव्य परंपरा को एक नया मानदंड प्राप्त हुआ। यह मानदंड अस्तित्ववादी जीवन दर्शन का था।"[363] उपर्युक्त कथन के आधार पर स्पष्ट होता है कि दिलीप चित्रे 'नवकविता' के एक विशिष्ट कवि हैं और उन्होंने अपनी लेखन शैली से मराठी नव कविता को नया दृष्टिकोण प्रदान किया। कवि दिलीप चित्रे की काव्य विषयक मान्यता आधुनिक है, वे किसी भी पारंपरिक काव्य मानदंडों से परिचालित लेखन के विरोध में है। अपनी काव्य विषयक मान्यताएँ उन्होंने अपने संकलनों की, भूमिका तथा अन्य निबंधों में अभिव्यक्त की हैं। दिलीप चित्रे अपनी काव्य रचना की प्रेरणा के संदर्भ में अपने विचार व्यक्त करते हुए लिखते हैं-"मेरा कविता लेखन आत्म प्रकटीकरण का सहज माध्यम है। सार्वजनिक जीवन से उसका संबंध होगा तो भी वह दूसरे अथवा तीसरे स्तर पर होगा।"[364] कवि चित्रे का मानना है कि कविता आत्माभिव्यक्ति का सहज, सुलभ माध्यम है। मनुष्य अथवा रचनाकार जो भी जीता है, अनुभव संवेदना से महसूस करता है। उसे अभिव्यक्त करता है वही उन्होंने अपनी कविताओं में अभिव्यक्त किया। उन्हीं के शब्दों में "मेरी दृष्टि से मैं जिस प्रकार जीवन व्यतीत कर रहा था उसका भाषायी संस्कार मेरी कविता के माध्यम से प्रकट हो रहा था। और समय-समय पर (सार्वजनिक प्रतिमा/प्रतिष्ठा और वाङ्मयीन अभिरुचि के सत्ता संघर्ष का विचार न करते हुए) वह 'जैसे को तैसा' समकालीन पाठकों के सामने रखना ही मेरा कर्तव्य था। काव्य निर्मिति के संदर्भ में मेरे सामने 'तुकोबा' (संत तुकाराम) की 'गाथा' का आदर्श था। स्वयं का काव्य रूप चरित्र और चारित्र्य "स्पष्ट रूप से, पारदर्शक रूप से, प्रामाणिक रूप से पाठकों के सामने रखना यह बात मेरी दृष्टि से, किसी शैली से, सौंदर्य शास्त्र से अथवा अन्य किसी भी साहित्यिक मूल्यों से भी मूलभूत और महत्वपूर्ण थी।"[365] कवि चित्रे का मानना है कि रचनाकार जो भी जीवन जीता है, अनुभव, संवेदना से महसूस करता है, उसे अभिव्यक्त करता है और इस जीवन के अनुभव की प्रामाणिक अभिव्यक्ति ही

---

[363] अर्वाचीन मराठी काव्य दर्शन, अक्षयकुमार काळे-पृ.479
[364] एकूण कविता, दिलीप चित्रे, प्रस्तावना-पृ.6
[365] एकूण कविता, दिलीप चित्रे, प्रस्तावना-पृ.5-6

उनके साहित्य का मूल मंत्र है। रचनाकार के 'स्व' तथा संपूर्ण व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति को वे प्राथमिकता देते हैं। कवि चित्रे का जीवन दर्शन अस्तित्ववादी है। अतः वे स्वयं की गतिमान अस्तित्व सत्ता का रूपांतरण कला की मूल प्रेरणा मानते हैं। उनके अनुसार-"अन्य सभी मनुष्यों समान मेरा भी जन्म मेरी स्वयं की अनुमति से नहीं हुआ है किंतु जन्म होने के बाद मेरी सभी गतिविधि स्वयं अस्तित्व मुक्ति और श्रेयस्कर करने में लगी है। ... हम मर्त्य है इसकी पहचान मुझे है। 'अस्तित्व भान' अर्थात् जीने की इच्छा, हम मरेंगे इसका ज्ञान और प्रेम करना, इन तीन बातों से निर्मित होने वाले अनुभव की विशिष्ट उत्कटता अर्थात् वह अस्तित्व विडंबनात्मक ही क्यों न हो, हमें अनुभूत हो ऐसा लगता है, लेखन उसी पर आधारित विधि है। बाह्य पदार्थ में अपने गतिशील अस्तित्व भाव का सिंबॉलिक टान्सफर करना ही कला की मूल प्रेरणा है।"[366] लेखक की दृष्टि से भाषा वह बाह्य पदार्थ है। कवि रचनाकार के मूल सचेत व्यक्तित्व को प्रधानता प्रदान करते हैं और कला को उस व्यक्तित्व का बिंबमूलक परिवर्तन।

कवि चित्रे साहित्य में स्वयं के जीवन की, संवेदना की अभिव्यक्ति को प्रधानता देते हैं और उस अभिव्यक्ति को अस्तित्ववादी जीवन चेतना मानते हैं। कवि चित्रे इस संदर्भ में आगे लिखते हैं- "लेखक अपने नैतिक, सामाजिक, मानसिक एवं सांस्कृतिक मर्मस्थानों पर आघात कर अपनी स्वयंभू अस्तित्व संवेदना जागृत करता है। मेरे आत्माभिव्यक्ति के आवश्यक कारण मेरे लौकिक और अंतस्थ जीवन से निर्माण हुए हैं। अगर इंद्रिय अनुभव और भाव अनुभव अस्तित्व के मूल घटक हैं तो भी प्रत्यक्ष अनुभव के अर्थसंबंधी चिंतन और अपने उद्देश्य का ज्ञान ये बातें भी उसमें निहित होती हैं। "... मन पर पड़े हुए एक अनुभव से कविता का अथवा कहानी का मूल चित्र मुझे मिलता है।"[367]

चित्रे अपनी काव्य विषयक प्रेरणा के संदर्भ में लिखते हैं कि आत्माभिव्यक्ति ही उनकी मूल प्रेरणा है। उनके अनुसार "मैं मेरी पुरानी लिखी कविताएँ कम ही पढ़ता हूँ, साधारणतः उनके संदर्भ में विचार भी नहीं करता, जब विचार करता हूं तो तटस्थता से करता हूँ, किंतु काव्यात्मश्रेय की कल्पना,

---

[366] निवडक मराठी समीक्षा, सं.म.द.हातकणंगलेकर-पृ.221
[367] निवडक मराठी समीक्षा, सं.म.द.हातकणंगलेकर-पृ.222

निश्चित रूप से लिखते समय मेरे मन में नहीं रहती। उस समय 'अभिव्यक्ति की आवश्यकता' ही निर्णायक प्रेरणा मेरे मन में रहती है।"[368]

कवि चित्रे कविता की रचना प्रक्रिया में अनुभव को प्राथमिकता देते हैं किंतु केवल अनुभव निवेदन कविता नहीं है, अतः कविता में अनुभव निवेदन के साथ लेखन में अनुभव विकास भी आवश्यक मानते हैं, उनके अनुसार "अगर कविता अनुभवों के संदर्भ में रहती है तो भी लिखने की शैली से उस अनुभव के आंतरिक भेद विचलित होते हैं। उसमें अनेक निर्णायक बातों का फोकस होता है। इसलिए मुझे लगता है कि लेखन में केवल अनुभवों का निवेदन न होकर अनुभवों का विकास किया जाता है। अधूरे प्रतीत होनेवाले अनुभवों को लेखन में तीव्रता प्रदान की जाती है। उसका अधुरापण उत्कट अनुभवशोधन से भर दिया जाता है। अनेक संदिग्ध मूलाकृतियों को लेखन में प्रत्यक्षता दी जाती है। अनुभव का रस, शरीर, लेखन में पूर्णतः विकसित किया जाता है।"[369] इसी संदर्भ में वे आगे लिखते हैं-"कविता का उदय व्यक्तिगत अस्तित्वानुभव में होना अनिवार्य है। मेरी कविताएँ अत्यन्त निजी होती है। इसका मुझे दुःख नहीं है। किंतु अभिव्यक्त होनेवाले अनुभव को एक सामान्य रूप अपने आप ही मिल जाता है।"[370] अतः यहाँ कवि अपने अनुभवों के व्यापक साधारणीकरण को महत्व देता है। कवि चित्रे अपने लेखन पर अपने परिवेश के प्रभाव को स्वीकार करते हैं। इस संदर्भ में वे लिखते हैं-"आसपास के जीवन का संस्कार मुझ पर होता है। मैं कोई परोंवाला प्रतिभावान नहीं हूँ। मुझे जीवन व्यतीत करते हुए जितना कष्ट होता है तथा आनंद होता है उतना ही लिखते समय होता है। स्वयं का मन प्रवाहमान रखने एवं वस्तुविषयक आस्था से जगत में मग्न होने का लेखन ही एक साधन है।"[371] ... मेरा लेखन केवल साहित्यिक संस्कारों से विकसित नहीं हुआ। यह स्वयं के अस्तित्व की खोज से जुड़ा होने के कारण उसमें साधारणतः बदलाव भी नहीं आएगा। ... मेरे लेखन पर अनेक प्रकार के लेखन बाह्य संस्कार हुए हैं। भारतीय और पाश्चात्य, अभिजात तथा लोकप्रिय,

---

[368] निवडक मराठी समीक्षा, सं.म.द.हातकणंगलेकर-पृ.224
[369] निवडक मराठी समीक्षा, सं.म.द.हातकणंगलेकर-पृ.224
[370] निवडक मराठी समीक्षा, सं.म.द.हातकणंगलेकर-पृ.225
[371] निवडक मराठी समीक्षा, सं.म.द.हातकणंगलेकर-पृ.225

संगीत, चित्रकला, सिनेमा, शिल्प आदि क्षेत्र के संस्कार तो हैं ही किंतु दर्शन से लेकर राजनीति, अन्य शास्त्रों की गतिविधियाँ आदि का मेरी ग्रहण शक्ति एवं चिंतन क्षमता पर संस्कार हुए हैं। लेखन में यह संस्कार अप्रत्यक्ष रूप से संवेदन स्वभाव के अनुसार प्रकट होते हैं किंतु लेखन को उनके मूल्य, मानदंड और निकष नहीं लगाता। अर्थात् लेखन पर मूल संस्कार एक ही होता है-वह है समकालीन जीवन का और स्वयं को आनेवाले अनुभवों का।"[372] स्वयं के जीवन और कला की ओर एक सकारात्मक निरपेक्ष दृष्टिकोण से चित्रे की कविता विकसित हुई है। नितांत वैयक्तिक अनुभव से लेकर व्यापक अस्तित्व अनुभव की अभिव्यक्ति उनके काव्य का मानदंड है। अतः इस अभिव्यक्ति में सामाजिक, नैतिक और साहित्यिक उपयोगिता आदि की चिंता वे नहीं करते। इस संदर्भ में चित्रे का मंतव्य है-"मेरा लेखन मैं स्वयं लिखता हूँ। इसका अर्थ यह है कि मैं शैलीवादी अथवा अंतिम मूल्यवादी लेखक नहीं हूँ। साहित्य संबंधी प्रचलित कल्पनाओं, संकेतों का दबाव मुझ पर नहीं होता। इसके विपरीत भाषा के बारे में मैं अधिक सजग रहता हूँ। क्योंकि भाषा से मैं स्वयं से और अन्य लोगों से विनिमय तो करता ही हूँ किंतु शब्द मुझे रॉमटेरीयल अथवा चलन पदार्थ समान लगते हैं। मेरे अस्तित्व एवं प्रेरणाओं का संस्कार करने के लिए मैं उद्युक्त रहता हूँ इसलिए लेखन मेरी स्वयं की इच्छा का विषय है।"[373]

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर हम कवि दिलीप चित्रे की काव्यविषयक मान्यताएँ समझ सकते हैं। उनके लेखन और काव्य विषयक मान्यताओं में 'स्व' की तथा स्वानुभूति की अनुभूति को महत्वपूर्ण स्थान है। अतः 'स्व' का अनुभव ही उनके साहित्यिक चिंतन का केंद्र बिंदु है। वे आत्माभिव्यक्ति को साहित्य का मानदंड मानते हैं और अनुभवों का संस्कार। अपने लेखन पर परिवेश के प्रभाव को स्वीकार करते हैं तथा समाज जीवन विविध गतिविधियों को अपनी प्रेरणा के रूप में मानते हैं। किंतु किसी भी उपादान, साहित्यिक, सामाजिक, नैतिक मानदंड का दबाव अस्वीकार करते हैं। शब्द की गरिमा को समझते हुए उसे अपनी अभिव्यक्ति का साधन मानते हैं। इस संदर्भ में

---

[372] निवडक मराठी समीक्षा, सं.म.द.हातकणंगलेकर-पृ.227

[373] सत्यकथा, दिलीप चित्रे, जुलाई 1967-पृ.10

दिलीप चित्रे का नवकविता पर तथा युगीन कविता में स्थान मूल्यांकित करते हुए शरत्‌चंद्र मुक्तिबोध लिखते हैं-"इन दो कवियों (पु.शि.रेगे तथा विंदा करंदीकर) के समान प्रयोगवादी दृष्टि से काव्य रचना करने वाले कवि दिलीप चित्रे हैं। पु.शि.रेगे अपनी विलक्षण भाषा शैली से एक पारदर्शक मनोवस्था का निर्माण करते हैं। करंदीकर अपने स्वयं का संवेदना प्रधान अनुभव अपनी विशिष्ट प्रतिमा तंत्र से साकार करते हैं और दिलीप चित्रे की प्रवृत्ति इन दोनों से भिन्न है। उनकी कविता से प्रकट होनेवाली प्रचिति केवल ऐंद्रीय अथवा केवल मनोवस्था प्रधान नहीं है। उनकी अनुभूति आत्मनिष्ठ तो है ही किंतु साथ ही वह व्यक्ति केंद्रित है। आज के विसंवादी जीवन में स्वयं की भिन्न प्रकार की तीव्र संवेदना, वासना और कल्पनाओं का निरंतर भोग करनेवाले तथा उसका छिद्रान्वेषण करनेवाले कवि का काव्य है। बाह्य जगत अपने विभिन्न तथा विपरीत संवेदना में बंधकर प्रयोगात्मक प्रतिमा बंधों का रूप लेकर उनके काव्य में प्रकट होता है। चित्रे का शब्दों की तथा प्रतिमाओं की मंत्र शक्ति पर अधिक विश्वास है और वे संवेदन शक्ति से रसिकों की समझ, अभिव्यक्ति विषयक तथा शब्दविषयक सचेत चिंतन और मौलिक प्रतिमानिर्मिति पर उनका अधिक बल है। अतिरिक्त भावना प्रधान तथा अकेलेपन की वृत्ति के कारण उनके व्यक्तितत्व का नाता रिल्ले एवं काफ्ला इन कलावादियों से तथा उन्नीसवीं सदी के फ्रेंच कवियों से प्रवृत्ति की दृष्टि से निकट का है। मर्ढेकर की परंपरा का 'अतिव्यक्तिवादी आविष्कार' इस प्रकार का वर्णन उनके काव्य का करना होगा।"[374]

उपर्युक्त विवेचन से दिलीप चित्रे की काव्य विषयक मान्यताएँ स्पष्ट होती हैं। उनका काव्य, साहित्य के प्रति देखने का दृष्टिकोण आधुनिक तथा आत्म प्रधान है।

सारांश रूप में इस विवेचन से स्पष्ट होता है कि मराठी नव कविता का आरंभ युगीन शिक्षित वर्ग ने किया और उनकी कविता विषयक मान्यताएँ आधुनिक विचारधाराओं से तथा दर्शनों से प्रभावित है। नव कविता के प्रणेता कवि मर्ढेकर ने अपनी युगीन नवीन परिस्थितियों के आधार पर काव्य के मानदंड निर्माण किये और युगीन जीवनानुभव को कविता के माध्यम से अभिव्यक्त किया। युगीन परिस्थितियाँ और उन परिस्थितियों में मानवीय जीवन के संघर्ष और उसकी संवेदना को

---

[374] शरत्‌चंद्र मुक्तिबोध, नवी मळवाट-पृ.13

कविता के माध्यम से अभिव्यक्त किया। मर्ढेकर नव कविता को 'नवीन भावनिष्ठ समानता मानते हैं'। (New emotional equavalance) वे कविता की लयात्मक भाषा और अर्थ के वैविध्य पर बल देते हुए प्रतीक, बिंबों की योजना को कविता में आवश्यक मानते हैं। अतः इससे कविता में अमूर्तन से अधिक दृश्यात्मकता का निर्माण आवश्यक मानते हैं। इसी प्रकार की अवधारणा कवि 'पु.शि.रेगे' और 'विंदा' करंदीकर की है। मुक्तिबोध का चिंतन मार्क्सवादी विचारधारा पर आधारित है। वे अपनी कविता विषयक मान्याताओं में कल्पना से अधिक यथार्थ चित्रण पर बल देते हैं और कविता को विचार वहन और मानसिक संवेदनों की अभिव्यक्ति मानते हैं। कवयित्री 'इंदिरा संत' और 'मंगेश पाडगावकर' इस धारा के प्रमुख भाववादी कवि हैं। दोनों की धारणा है कि कविता भावनाओं से उभरती है और मानस के संवेदनाओं की अभिव्यक्ति करती है। सामाजिकता के संदर्भ में इनका मानना है कि व्यक्ति के सामाजिक सरोकार के आधार पर उसकी संवेदना बनती है और उसी की सहज अभिव्यक्ति कविता में होती है। इस धारा के कवि दिलीप चित्रे की काव्यविषयक धारणाएँ आधुनिक दर्शनों से प्रभावित हैं। उनके अनुसार प्रथम मनुष्य का अस्तित्व है, बाद में उसका सामाजिक चिंतन। अतः उनके काव्य में व्यक्ति प्रधानता और आत्मप्रधानता की भावना अधिक दिखाई देती है। चित्रे भाषा शैली पर विशेष ध्यान देते हैं। वे बोलचाल की शब्दावली का उपयोग कर अपने मानस की वास्तविक भावनाओं की अभिव्यक्ति उसी भाव के अनुरूप शब्द चयन कर अभिव्यक्त करते हैं। समग्र रूप से इन कवियों की काव्यधाराओं पर विचार करने से स्पष्ट है कि प्रत्येक कवि की काव्यधाराएँ भिन्न-भिन्न हैं। किंतु विषय, काव्य संवेदना, भाषा शिल्प के संदर्भ में काफी मनैक्य दिखाई देता है।

* * *

षष्ठम अध्याय

नई कविता और नव कविता
आंदोलनों का तुलनात्मक अध्ययन

षष्ठम अध्याय

नई कविता और नव कविता आंदोलनों का तुलनात्मक अध्ययन

6.1 उदय और विकास के स्तर पर तुलना

6.2 युगीन परिस्थितियों के स्तर पर तुलना

6.3 विविध दार्शनिक, विचाराधारात्मक प्रभाव के स्तर पर तुलना

6.4 आंदोलनात्मक रूप के स्तर पर तुलना

6.5 सामाजिक परिवेश के स्तर पर तुलना

6.6 कथ्य और विषय के स्तर पर तुलना

6.7 भाषा एवं शिल्प के स्तर पर तुलना

6.8 अर्थ लय की अवधारणा के स्तर पर तुलना

षष्ठम अध्याय

नई कविता और नव कविता आंदोलन का तुलनात्मक अध्ययन

मानव के इतिहास पर ध्यान देने से ज्ञात होता है कि मानव की भावगत चेतना एक समान है। उसके मन के सभी भाव, संवेदनाएँ आदि कुछ भिन्नताओं के साथ एकात्म रूप से समान ही दिखाई देते हैं। काव्य साहित्य के इतिहास पर दृष्टिपात करने से स्पष्ट है कि काव्य मानवीय भावों को अनेक भाषाई उपादानों से अभिव्यक्त करता है। आदि कवि वाल्मीकि के करुण स्वर से लेकर आज के उत्तर-आधुनिक दर्शन एवं यंत्र युग के मानव की मनोभावाभिव्यक्ति की अभिव्यक्ति तक का सहज उपादान कविता रही है।

रामचंद्र शुक्ल ने साहित्य की परिभाषा देते हुए लिखा है कि-"प्रत्येक देश का साहित्य वहाँ की जनता की चित्तवृत्ति का संचित प्रतिबिंब होता है तब यह निश्चित है कि जनता की चित्तवृत्ति के परिवर्तन के साथ-साथ साहित्य के स्वरूप में भी परिवर्तन होता चला जाता है।"[375] अतः साहित्य जनता की चित्तवृत्ति का संचित प्रतिबिंब है। जनता, व्यक्ति अपनी भाषाई अभिव्यक्ति शब्द रूपी साहित्य से करता है, उसकी अभिव्यक्ति के उपादान विविध हैं किंतु मूल मन की संवेदनात्मक भावों की अभिव्यक्ति के लिए उसने कविता विधा का निर्माण किया। कविता जनता की संवेदनात्मक

---

[375] हिंदी साहित्य का इतिहास, रामचंद्र शुक्ल-पृ.काल विभाग

अभिव्यक्ति का चित्र प्रदान करती है। जीवन गतिशील है और परिवर्तन प्रकृति का प्रकृत धर्म है। मानव जीवन में जिस तरह बदलाव की स्थितियाँ, परिवर्तन आते हैं, उससे वह प्रभावित होता है। साहित्य समाज से निर्मित एवं प्रभावित होता है। साथ ही प्रत्येक समाज अपने युगीन परिस्थितियों, राजनीतिक, धार्मिक, आर्थिक और सामाजिक सरोकारों से जुड़ा हुआ रहता है और उससे परिचालित होता है, उसीसे उसके जीवन की प्रक्रिया बनती है। मानव जीवन गतिशील है उसके विविध आयाम है। व्यक्ति इन गतिविधियों से अपनी आत्मानुभूति को जोड़ते-तोड़ते अपनी अभिव्यक्ति करता है। मानव जीवन का गतिशील चित्र साहित्य में अंकित होता है। जनता अपने जीवन में विविध दर्शन, विचार तत्वों पर निर्भर रहती है। उससे उनकी अभिलाषाएँ जुड़ी रहती हैं। अपने इन्हीं दर्शनों को वह साहित्य के माध्यम से अभिव्यक्त करती है। इस संदर्भ में हम कह सकते हैं कि जीवन विषयक दृष्टिकोणों की संवेदनात्मक अभिव्यक्ति कविता है। यह संवेदना गतिशील और विविध आयामी होती है। भारतीय साहित्य पर दृष्टिपात करने पर हम यह पाते हैं कि प्रत्येक भाषाई समाज में कविता विधा अत्यन्त सजग और विपुल लेखन की विधा है। प्रत्येक भाषाई समाज ने अपने जीवन, जीवन दृष्टिकोण, अपनी युगीन परिस्थितियाँ, युग बोध और उसके संबंध में उनकी संवेदनात्मक प्रतिक्रियाओं की अभिव्यक्ति की है। और यह कविता विधा की अभिव्यक्ति प्रत्येक समाज के आधार पर भिन्न किंतु भाव, संवेदन वहन के रूप में संपूर्ण एकात्म है।

जनता की चित्तवृत्ति परिवर्तनशील है क्योंकि जनता का जीवन गतिशील एवं परिवर्तनशील है। इसी जीवन से प्रभावित उसका भाव चिंतन भी गतिशील एवं परिवर्तनशील है। इसी परिवर्तन का चित्र कविता के इतिहास पर दृष्टिपात करने से स्पष्ट हो जाता है। हिंदी साहित्य के संदर्भ में विचार करने से स्पष्ट है कि आदिकालीन कविता में युद्ध, वीरता, प्रशंसा, श्रृंगार आदि की काव्य प्रवृत्तियाँ परिलक्षित होती हैं। मध्यकाल में श्रृंगारपरक काव्य, रीति की प्रणयन परंपरा और ईश्वरीय शरणागत भक्ति की प्रवृत्ति परिलक्षित होती है। अतः अपने युगीत परिस्थितियों के परिप्रेक्ष्य में कविता में विषय, भाव, संवेदना, शैली आदि के रूप में परिवर्तन दिखाई देते हैं।

भारत के इतिहास पर दृष्टिपात करने से ज्ञात होता है कि भारत सदियो ंसे आक्रमण और साम्राज्य विस्तार की भूमि रही है। सदुर अफगान प्रान्तों से बाबर, अब्दाली, गजनवी आदि ने

आक्रमण तथा अपना साम्राज्य विस्तार किया तथा युरोपीय आधुनिक युग के आरंभ में अंग्रेज़ों ने अपना साम्राज्य विस्तार भारत को उपनिवेश बनाकर किया। भारतीय चिंतन की चेतना इन आक्रमण और साम्राजय विस्तार से काफ़ी प्रभावित तथा परिवर्तनशील रही। इन शासकों के दमन से आर्त, करुण स्वर कविता रूपी साहित्य में अंकित हुआ। अंग्रेज़ों की नीतियाँ तथा भारत के प्रगल्भ दूरदर्शी विचारकों के कारण भारतीय चेतना में परिवर्तन आने लगा और भारत में आधुनिक युग का आरंभ हुआ। इस आधुनिक युग की चेतना का प्रतिबिंब भारतीय भाषाओं के साहित्य में अपने भाषायी समाज के परिस्थितियों के आधार पर उभरा है, अतः प्रत्येक भारतीय भाषाओं में इस चेतना की क्रिया प्रतिक्रिया अंकित है। हिंदी और मराठी साहित्य की धाराएँ इसके लिए अपवाद नहीं है। प्रत्येक युग में साहित्य और साहित्य की मूल आधार विधा कविता अपने युग का युगीन चित्र उसके पूरे युगबोध के साथ अंकित करती आयी है।

भारतीय भाषाओं के साहित्य में आधुनिक प्रवृत्तियों का विकास साधारणतः एक समान हुआ है। हिंदी और मराठी साहित्य में यह चेतना लगभग न्यूनाधिक रूप से एक साथ आरंभ हुई है। आधुनिकता की यह चेतना अंग्रेज़ शासन व्यवस्था से प्रेरित थी। हिंदी साहित्य में आधुनिक युग का आरंभ 1857[376] और मराठी साहित्य के संदर्भ में "आधुनिक मराठी काव्य साहित्य का आरंभ 1885 से माना जाता है।"[377] इस युग के काव्य साहित्य के नेता उभय साहित्य में क्रमशः 'भारतेंदु और केशवसुत' थे। भारतेंदु ने अपने साहित्य के माध्यम से नवजागरण की चेतना निर्माण की और राष्ट्रीयता, देशप्रेम, सामाजिक विकास आदि के संदर्भ में नव विचारों का चिंतन किया। इसी प्रकार केशवसुत ने अपनी कविता से राष्ट्रीयता, देशप्रेम, सामाजिक विकास आदि भावों का विकास करते हुए 'क्रांति' की कल्पना की। आधुनिक कविता के उदय पर विचार करते हुए इसकी काल सीमा 1840 से निर्धारित करते हुए 'रा.श्री.जोग' केशव सुत के युग को 'क्रांति काल' नाम देते हैं।"[378] इसी संदर्भ

---

[376] हिंदी साहित्य का इतिहास, सं.नगेंद्र-पृ.429
[377] प्रादेशिक भाषा और साहित्येतिहास, सूर्यनारायण रणसुभे-पृ.15

[378] प्रदक्षिणा, खंड-1, सं.रा.श्री.जोग-पृ.1

में वे आगे लिखते हैं सन् 1840 से 1885 को मैं क्रांतिपूर्व काल मानता हूँ और "मराठी कविता के 1885 से 1920 के काल में अंतर्बाह्य क्रांति हुई है ऐसा मेरा मानना है।"[379] साधारणतः हम मान सकते हैं कि मराठी और हिंदी कविता का आधुनिक काल लगभग एक समान ही माना गया है। इस समानता का मूल आधार भारतीय चेतना है। अंग्रेज़ों की भारत नीति के अनुसार महाराष्ट्र में सन् 1818 को पेशवा की सत्ता समाप्त हुई"[380] और भारत में आधुनिक वातावरण का निर्माण होने लगा। सर्वश्रुत है कि अंग्रेज़ों ने अपनी सुविधा के लिए विविध यातायात की सुविधा के साथ पाश्चात्य आधारों पर शिक्षण की व्यवस्था की और आधुनिक विचारों का प्रणयन किया और इससे प्रभावित होकर भारतीय युवा नेताओं ने अपनी सामाजिक, सांस्कृतिक, शैक्षिक धारणाओं पर विचार कर उसमें सुधार की पहल की। अतः साहित्य में भी यह प्रभाव दिखाई देने लगा। इस प्रभाव को रेखांकित करते हुए श्री अक्षयकुमार काळे लिखते हैं-"सन् 1818 में पेशवाओं की सत्ता समाप्त हुई। अंग्रेज़ी सत्ता का महाराष्ट्र में धीरे-धीरे विस्तार होने लगा। विजेताओं की भाषा-साहित्य और संस्कृति का प्रभाव स्वाभाविक रूप से देशी जनता पर होने लगा। मानव मन की प्रवृत्ति एकदम नवीनता का स्वीकार नहीं करती है। इसलिए नये-पुराने को जोड़ते हुए मराठी कविता उदित होने लगी। पुरानी काव्य परंपराएँ लगभग समाप्त हो गई... स्वाभाविक ही इस युग की कविताएँ अनूदित और रूपांतरित थीं।"[381]

आधुनिक काल की पूर्वपीठिका पर व्यापक विचार करते हुए 'बच्चन सिंह' लिखते हैं "संपूर्ण देश पर आधिपत्य जमाने के लिए अंग्रेज़ों को दो अन्य शक्तियों को पराजित करना शेष था। वे शक्तियाँ थीं-मराठे और सिक्ख। सिक्ख तो पंजाब में थे, परंतु मराठों का प्रभाव बहुत व्यापक था। पारस्परिक फूट और संघर्ष के कारण 'असी' 1803 और लासवारी 1803 के युद्धों में मराठे विजित हो गये और उनकी संघशक्ति समाप्त हो गई। 1849 ई. में सिक्खों को पराजित करने के बाद संपूर्ण देश अंग्रेज़ों के अधीन हो गया। 1856 में अवध भी अंगरेज़ी राज्य में सम्मिलित कर लिया गया। इस विजय के कारण अंगरेज़ों का मदोन्मत्त होना स्वाभाविक था। उनकी नीतियों से असंतुष्ट देशी

---

379 प्रदक्षिणा, खंड-1, सं.रा.श्री.जोग-पृ.7
380 अर्वाचीन मराठी काव्यदर्शन, अक्षयकुमार काळे-पृ.1
381 अर्वाचीन मराठी काव्यदर्शन, अक्षयकुमार काळे-पृ.7

राजाओं ने एकजुट होकर 1857 ई. में व्यापक स्तर पर विद्रोह किया। फलस्वरूप ईस्ट इंडिया कंपनी समाप्त कर दी गई और भारतवर्ष ब्रिटिश साम्राज्य का उपनिवेश बन गया। अंगरेज़ों ने अपनी आर्थिक, शैक्षणिक और प्रशासनिक नीतियों में परिवर्तन किया। इस देश के लोग भी नये संदर्भ में कुछ नया सोचने और करने के लिए बाध्य हुए।"[382] इन संदर्भों के परिप्रेक्ष्य में हम कह सकते हैं कि दोनों भाषाओं में आधुनिक साहित्य के आरंभिक प्रभाव समान हैं, इन प्रभाव के परिप्रेक्ष्य में भारतीय जनता को एक नई सोच एवं चिंतन प्रणाली मिली, जिसके फलस्वरूप वे अपने परिवर्तन अनुगामी चिंतन की अभिव्यक्ति आधुनिक साहित्य में कर सके। हिंदी और मराठी के आधुनिक साहित्य के उदय की पृष्ठभूमि समान दिखाई देती है। नवजागरण, जागरण सुधार की साहित्यिक भूमिका दोनों साहित्य में समान है। साहित्य की सामाजिक उपयोगिता, उसके अवदान को ध्यान में रखकर साहित्य के माध्यम से व्यापक सामाजिक, राष्ट्रीय भावनाओं का प्रचार-प्रसार किया गया। दोनों साहित्य प्रदेश में साहित्य ने अपनी भूमिका सजग रूप से निभाई। हिंदी प्रदेश का नवजागरण साहित्य के माध्यम से निर्मित हुआ तथा मराठी साहित्य की स्थिति में प्रथम राजकीय, राष्ट्रीय, धर्मसुधारक कार्य यह विचारधाराएँ निर्माण होकर साहित्य के माध्यम से इसका व्यापक प्रचार-प्रसार किया गया। साथ ही साहित्यिक भाषा का विवेचन कर उसे सम्यक रूप प्रदान किया गया। उभय दोनों भाषाओं का साहित्य समान रूप से जनताभिमुख बनकर जनता की चित्तवृत्तियों का यथार्थ अंकन करने लगा। हिंदी साहित्य के परिप्रेक्ष्य में साहित्यिक आंदोलनों ने राजनीतिक आंदोलन चलाया। इसके विपरीत मराठी साहित्य के परिप्रेक्ष्य में राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक तथा राष्ट्रीय विचारों को प्रसारित करने के लिए साहित्य को माध्यम बनाकर उसे विचारों का संवाहक बनाया गया। सामाजिक ने राजनीतिक नेता रानडे, आगरकर, गोखले, टिळक आदि ने अपनी विचारधारा को साहित्य के माध्यम से व्यापक फलक प्रदान किया। महाराष्ट्र के सभी सामाजिक, राजनीतिक आंदोलनों ने साहित्य को एक व्यापक एवं प्रभावी माध्यम बनाया। इस आधुनिक संदर्भ का कविता साहित्य के परिप्रेक्ष्य में विचार करते हुए श्री अक्षयकुमार काळे लिखते हैं-"इस प्रकार के सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक, साहित्यिक

---

[382] हिंदी साहित्य का इतिहास, सं.डॉ.नगेंद्र-पृ.429

वातावरण से महाराष्ट्र के नये लेखक वर्ग का नए अर्थ में मानसिक आधार बन रहा था। समकालीन सामाजिक अनास्था जिन कवियों की अनुभूति और चिंतन का विषय थी, उन्हें समाज-सुधारकों का यह आधुनिक रूप, दर्शन, उनका कार्य एवं उनकी संवेदना आदर्श लगने लगी। एक व्यापक सामाजिक एकरूपता की प्रत्यय रूप वह अनुभूति काव्य क्षेत्र में निर्माण हुई।"[383] अर्थात् इस आधार पर हम कह सकते हैं कि हिंदी और मराठी साहित्य की प्रेरणा अपने मूल उद्देश्य समाजसुधार, राष्ट्रीय भावनाओं का विकास आदि से निर्माण हुई थी और उसी से विकसित हुई है। आधुनिक मराठी कविता के निर्माण और उसके विकास के संदर्भ में अक्षयकुमार काळे लिखते हैं-"आधुनिक काव्यनिर्माण के केंद्रबिंदु में आध्यात्म से यथार्थ, दैववाद से कर्मवाद, मोक्ष से सांसारिकता की ओर उन्मुख मन की विकास यात्रा मुख्य थी।"[384] सारांशतः यह स्पष्ट है कि आधुनिक युग के आरंभ के साथ भारतीय चिंतन का आधुनिक, वैज्ञानिक परिदृश्य से परिचय हुआ तथा इस परिदृश्य से साक्षात्कार होने पर स्वाभाविक रूप से जीवन की ओर देखने का दृष्टिकोण भी परिवर्तित हुआ जिससे प्रभाव ग्रहण कर अपने सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक विकास की ओर जनता उन्मुख हुई। इसी चेतना की अभिव्यक्ति साहित्य में हुई जिसे आधुनिक साहित्य कहा गया। अतः आधुनिकता की अवधारणा उभय आधुनिक साहित्य की आधारभूमि है।

नवजागरण एवं जागरण सुधारकाल का साहित्य राष्ट्रीयता देशप्रेम, सामाजिक विकास के साथ-साथ अंग्रेज़ी शासन व्यवस्था की दासता का प्रतिरोध करने लगा और साहित्यिक अभिव्यक्तियों के माध्यम से स्वतंत्रता आंदोलन को गति मिली। इस संदर्भ में इस युग की समग्र विचारधारा, प्रभाव, प्रक्रिया में साहित्य ने अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई और स्वतंत्रता आंदोलन का स्वरूप व्यापक जनसमूह में फैलाया। स्वतंत्रता प्राप्ति के दिव्य क्षणों का साक्षात्कार उसकी अपेक्षाएँ आदि से स्वतंत्रता के सपने संजोए गए, किंतु अनेक राजनीतिक-सांप्रदायिक गतिविधियों के कारण स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारतीय जनता के सपने बिखर गए। अतः इस युग की त्रासदियाँ अलग-

---

[383] अर्वाचीन मराठी काव्यदर्शन, अक्षयकुमार काळे-पृ.4

[384] अर्वाचीन मराठी काव्यदर्शन, अक्षयकुमार काळे-पृ.5

अलग थीं। इस युग की विचारधारा का अंकन साहित्य की विविध विधाओं के माध्यम से हुआ जिसमें कविता साहित्य का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है। सन् 1945-50 के बाद का हिंदी और मराठी साहित्य अपनी साहित्यिक परंपरा में अलग स्थान रखता है जिसमें स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद की भारतीय जनता की चित्तवृत्ति का अंकन सटीक रूप से हुआ है।

जिस प्रकार यूरोपीय आधुनिकता के विकास से भारत में आधुनिकता का विकास हुआ, उसी प्रकार यूरोपीय साहित्य के New Writing आंदोलन से भारतीय भाषाओं में 'नवलेखन' आंदोलन का आरंभ हुआ, जिसमें हिंदी और मराठी साहित्य दृष्टव्य है। हिंदी साहित्य के नवलेखन पर यूरोपीय प्रभाव को स्वीकार करते हुए रामस्वरूप चतुर्वेदी लिखते हैं-"हिंदी नवलेखन की साहित्यिक पृष्ठभूमि का संदर्भ तब तक अधूरा रहेगा जब तक अंग्रेज़ी तथा यूरोपियन नवलेखन की रूपरेखा नहीं समझ ली जाती।"[385] ठीक इसी प्रकार नयी कविता की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का विवेचन करते हुए लक्ष्मीकांत वर्मा लिखते हैं-"राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना ने जहाँ राजनीतिक और नागरिक अधिकारों के लिए अपना संगठन किया वही साहित्यिक क्षेत्र में भारतेंदु हरिश्चंद्र ने उस साहित्यिक आंदोलन का सूत्रपात किया जो परंपराओं से भिन्न एक नयी चेतना का प्रतीक था। नायक-नायिका भेद, अलंकार ग्रंथों के सृजन की भावना के अतिरिक्त साहित्य में भारतवर्ष की दुर्दशा का भी वर्णन होने लगा। पाश्चात्य साहित्य से प्रभावित नवीन पद्धतियों का भी अनुकरण किया गया और हिंदी साहित्य की आधुनिक प्रवृत्तियों का विकास हुआ।"[386] अतः विविध पड़ावों की यात्रा करते हुए 'कविता' अपने प्राचीन रूप की परंपराबद्धता से निकलकर नवीन भावबोध को अभिव्यक्त करने के लिए नवीन शब्द, विषय, छंद, अभिव्यक्ति प्रणाली आदि के रूप में नयी बनी जिसे नई कविता का नामाभिधान दिया गया। छायावाद युग की कविता में वैयक्तिक अनुभूतियों की छायाभासी कल्पनात्मक अभिव्यक्तियाँ की गईं और प्रगतिवादी कविता मार्क्स अनुप्रणित, दर्शन से प्रभावित होकर सामाजिक सरोकारों की अभिव्यक्ति करने लगी। प्रयोगवाद और नयी कविता अपना एक स्वतंत्र साहित्यिक नवीन दृष्टिकोण

---

[385] हिंदी नवलेखन, रामस्वरूप चतुर्वेदी-पृ.18

[386] नयी कविता के प्रतिमान, लक्ष्मीकांत वर्मा-पृ.5-6

लेकर उभरती है। इस संदर्भ में ‘रामदरश मिश्र’ का निम्नलिखित कथन दृष्टव्य है-"नयी कविता भारतीय स्वतंत्रता के बाद लिखी गई उन कविताओं को कहा गया, जिनमें परंपरागत कविता से आगे नये भावबोधों की अभिव्यक्ति के साथ ही नए मूल्यों और नये-शिल्प-विधानों का अन्वेषण किया गया।"[387]

अतः उपर्युक्त विवेचन के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि कविता अपनी साहित्यिक यात्रा में किस प्रकार जनता की गतिशील चित्तवृत्तियों का अंकन करती है। इस संदर्भ में स्पष्ट है कि वह भारतीय-चेतना, अभिव्यक्ति का सजग प्रतिबिंब है। नयी कविता भारतीय संदर्भ में विशेषतः हिंदी और मराठी के संदर्भ में अपनी अनेक प्रभाव-प्रक्रिया से लेकर अभिव्यक्तियों की भंगिमा तक साम्य और वैषम्य अंकित करती है। हमारा अभीष्ट लक्ष्य इन दोनों की विविध आधारों पर तुलना करना है। अतः निम्नलिखित बिंदुओं के आधार पर उभय साहित्य के इन आंदोलनों का तुलनात्मक अध्ययन-विवेचन करेंगे।

6.1 उदय और विकास के स्तर पर तुलना

किसी भी साहित्य धारा में कोई एक विशेष प्रवृत्ति अचानक उत्पन्न हुई और लुप्तप्राय हो गयी ऐसा नहीं होता। साहित्य जनता की चित्तवृत्तियों का प्रतिबिंब है और उसकी चित्तवृत्ति गतिशील है, समाज की गतिविधियाँ विभिन्न आधारों से परिचालित होती है और समाज जीवन उससे प्रभावित होता है और साथ ही उसे प्रभावित करता है। कोई भी भाषा-भाषी समाज हो उसके सामाजिक, राजनीतिक गतिविधियों का प्रभाव उसकी भाषाभिव्यक्ति, साहित्य और व्यवहार में दिखाई देता है। मराठी और हिंदी साहित्य की संवेदनशील साहित्य विधा ‘कविता’ में जो विभिन्न गतिशील परिवर्तन दिखाई देते हैं, उसमें दोनों भाषा-भाषी समाज की विभिन्न गतिविधियों का प्रभाव दिखाई देता है। युगीन परिस्थितियों के आधार पर कोई भी सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, साहित्यिक प्रवृत्तियों का उद्‌भव और विकास होता है। उसी प्रवृत्तियों की अधिकता को लक्षित करते हुए उसका विकास विशिष्ट साहित्यधारा अथवा आंदोलन का रूप ग्रहण कर लेता है। भारतीय साहित्य के संदर्भ में यह

---

[387] हिंदी साहित्य का इतिहास, सं.डॉ.नगेंद्र-पृ.629

बात विशेष ध्यान देने योग्य है। भारतीय भाषाओं के साहित्य में यूरोपीय विचारधारा 'आधुनिकता' के कारण तथा यूरोपीय शिक्षा, विज्ञान, औद्योगिकता के प्रभाव स्वरूप यहाँ की जनता की चित्तवृत्ति में विशेष अंतर आया और वह अपनी परंपरागत मान्यताओं को छोड़कर नवीन इहलौकिक दृष्टिकोण से विचार कर परंपरा का मूल्यांकन करने लगा और अपने प्राचीन पुराण-पंथी परंपरावादी विचारों में परिवर्तन कर नवीन दृष्टिकोण का स्वीकार करने लगा। यह स्थिति संपूर्ण भारतीय भाषा-भाषी समाज की थी। ब्रिटिश सत्ता का ध्वज संपूर्ण भारत भर राज कर रहा था और इसकी स्थिरता और अपनी सुविधा के लिए अंग्रेज़ों ने जो शिक्षा पद्धति आरंभ की इससे भारतीय चेतना प्रभावित और विकसित होने लगी। आधुनिकता का आरंभ हिंदी साहित्य में 'भारतेंदु युग' से माना जाता है और मराठी साहित्य के संदर्भ में 'कवि केशवसुत' के काल से। मराठी कविता की आधुनिक पार्श्वभूमि को रेखांकित करते हुए अक्षयकुमार काळे इस संदर्भ में लिखते हैं-"पश्चिमात्य संस्कृति, कला और साहित्य के संपर्क से 19 वीं सदी के पूर्वार्ध में हिंदु धर्म सुधारक आंदोलनों का प्रारंभ हुआ। पाश्चात्य धर्मसुधारणा का फलित परिणाम सामने था ही। इस फलित परिणाम से व्यक्ति स्वतंत्रता को अत्यन्त महत्व मिला। केवल धर्म क्षेत्र में ही नहीं, जीवन के विविध क्षेत्र में व्यक्ति के संपूर्ण स्वतंत्रता का जयकार हुआ। धार्मिक, आध्यात्मिक, सामाजिक, ऐहिक सभी क्षेत्रों में व्यक्ति की स्वतंत्रता की पहल को माना जा रहा था, धर्मविचार और कर्मकांडों के पाश टूटकर व्यक्ति केंद्रित समाज रचना की ओर विश्व समाज ने कदम उठाया।"[388] इस संदर्भ में स्पष्ट है कि आधुनिक शिक्षा-दीक्षा तथा यूरोपीय प्रभाव के कारण भारतीय जनता की चित्तवृत्ति में परिवर्तन आने लगा और उसी के कारण उसके मानसिक अभिव्यक्ति का पक्ष, साहित्य की चेतना में परिवर्तन। किसी भी युग के साहित्य के निर्माण में उस युग की भूमिका अनिवार्य रूप से महत्वपूर्ण होती है। अतः हिंदी और मराठी की काव्य विधा के 'नव कविता', 'नयी कविता' आंदोलन के उदय और विकास के मूल में साहित्यिक, सामाजिक, राजनीतिक कारण महत्वपूर्ण थे, जिनके आधार पर नवीन भावबोधों को अभिव्यक्त करनेवाले 'नव कविता' आंदोलन का उद्भव हुआ। यह जानना अत्यन्त अनिवार्य है। अतः हम इस युग के समाज,

---

[388] अर्वाचीन मराठी काव्यदर्शन, अक्षयकुमार काळे-पृ.1

राजनीतिक और साहित्यिक पार्श्वभूमि का विचार करें। इसी क्रम में तुलना के आधारों में सादृश्य, सादृश्य, विपरीतता आदि पर भी ध्यान देना होगा जो कि तुलना के मूल रूप हैं।

हिंदी और मराठी की आधुनिक साहित्य की धारा अंग्रेज़ी, यूरोपीय शिक्षा दीक्षा तथा दर्शन से प्रभावित हुई है। यह उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट होता है। 'भारतेंदु युग' तथा 'केशवसुत युग' से इस प्रभाव से प्रभावित नवीन विचारों को अभिव्यक्त करनेवाली तथा परंपरागत काव्य रीतियों को त्याग करनेवाली कविताएँ उभय साहित्य में लिखी जाने लगी। इस समय राष्ट्रीय आंदोलन जोर पकड़ रहा था और दोनों साहित्य में राष्ट्रीय चेतना के भाव तथा समाज सुधार के जागरण की ध्वनि प्रतीत होती है और साथ ही भाषा परिमार्जन के साथ हिंदी में 'छायावाद' और मराठी साहित्य में 'रविकिरण मंडळ' का युग आता है दोनों में वैयक्तिक भावों की सूक्ष्म अभिव्यक्ति 'छाया' रूप से की गई जिसे छायाभासी काव्य कहा गया है। इस के उपरांत हिंदी कविता का अगला सोपान प्रगतिवादी कविता के रूप में अग्रसर होता है। वहीं मराठी में 'नव कविता' का सोपान आता है जिसका कालखंड विविध विद्वान 1945 से मानते हैं।"[389] अतः इसी के लगभग 1936 में हिंदी साहित्य में प्रगतिवाद का कालखंड माना जाता है। जब प्रगतिवादी लेखक संघ का लखनऊ में प्रेमचंद की अध्यक्षता में प्रथम अधिवेशन हुआ।"[390] इसी बीच राष्ट्रीय आंदोलन के चलते भारतीय जनता स्वतंत्रता के सपने लिए उज्वल भविष्य की कामना कर रहे थी। उसी समय विश्व युद्ध का आरंभ हुआ। इस विश्वयुद्ध का परिणाम संपूर्ण जगत के संवेदनशील मानव पर पड़ा और उसने अपनी नवीन अभिव्यक्तियाँ दी। मराठी की 'नवकविता' के संदर्भ में समकालीन परिस्थितियों का संदर्भ लेते हुए इस युगीन समस्याओं तथा 'नवकविता' के संदर्भ को जोड़ते हुए इसके मूल में अक्षयकुमार काळे 1939 का महायुद्ध और उसकी विभीषिका, बंगाल का अकाल, महात्मा गाँधी की हत्या, 1947 को देश विभाजन और स्वतंत्रता के उपरांत मोहभंग की अवस्था को आधार मानते हैं।"[391] इसी रूप में नई कविता की

---

[389] मराठी कविता: स्वरूप आणि विवेचन, निशीकांत ठकार-पृ.335
[390] हिंदी साहित्य का इतिहास, सं.नगेंद्र-पृ.623
[391] आर्वाचीन मराठी काव्य दर्शन, अक्षय कुमार काळे-पृ.398

वैचारिक पृष्ठभूमि का विवेचन करते हुए रामवचन राय[392] इन्हीं समान तत्वों को नई कविता की पृष्ठभूमि में विवेचित करते हैं। अतः दोनों साहित्य की धाराएँ अपने युगीन संदर्भों के साथ चल रही थी। यह दोनों में समान रूप से दिखाई देता है। नवकविता के युगीन संदर्भ का विवेचन करते हुए अक्षयकुमार काळे लिखते हैं-"1940 के बाद के कालखंड में निर्मित हुई राष्ट्रीय एवं वैश्विक अराजकता और मानसिक उद्धस्तता नव कविता का आधार रही... और सभी नव कवियों ने इसी का करुण असह्य दर्शन अपने काव्य में अभिव्यक्त किया है।"[393]

अतः इस प्रकार समाज एवं राजनीतिक जीवन की अस्थिरता से मानव की सामाजिक, राजनीतिक चेतना भी अस्थिर हो गई और वह अपनी अस्मिता की खोज में लगा उसे अपने जीवन की वर्तमान गतिविधियाँ समस्या समान लगने लगीं। इसी पृष्ठभूमि में अपनी अभिव्यक्ति को नई चेतना के आधार पर अभिव्यक्ति देने लगा जिसके फलस्वरूप अपनी अभिव्यक्ति में उसने अनेक प्रयोग किये। नयी कविता को एक ऐतिहासिक अनिवार्यता मानते हुए उसके उदय की पृष्ठभूमि को रेखांकित करते हुए जितेंद्र नाथपाठक लिखते हैं-"हिंदी काव्य ने विश्व के भयावह तनावों के बीच फसते आधुनिक मनुष्य को इतने निकट से नहीं देखा था, जितना 'नयी कविता' का कवि देख रहा था। बड़े बल के साथ कहा जा सकता है कि 'नयी कविता' जिस ऐतिहासिक उत्तरदायित्व को साहसपूर्वक वहन करने के लिए सामने आई है, उसे नयी कविता के विरोधी आलोचक ठीक से नहीं समझते। यह जो नया यथार्थ अपनी समूची विकरालता लिए सामने खड़ा है, उससे बचकर कविता को मानव-मंगल की साधना से युक्त नहीं किया जा सकता। समुन्नत देशों के साहित्य इस नये यथार्थ को कविता के वाहन पर प्रथम महायुद्धोपरांत ही चढ़ा चुके हैं। किंतु हममें इस ऐतिहासिक अनिवार्यता के प्रति विरोध का भाव है... समस्त विश्व में सांस्कृतिक अंतरावलंबन की क्रिया तीव्र गति से चल रही है, भौगोलिक सीमा रेखाएँ आज अपना महत्व खो चुकी है। समस्याओं की विश्वजनीनता और उनका विश्वजनीन दबाव इसके पूर्व इतना अधिक कभी नहीं था। ...कुल मिलाकर नयी कविता आधुनिक जीवन के समग्र

---

[392] नयी कविता: उद्भव और विकास, रामवचन राय-पृ.89
[393] अर्वाचीन मराठी काव्य दर्शन, अक्षयकुमार काळे-पृ.401

रूपों के बृहत्तर संदर्भ में व्यक्ति के विवेकपूर्ण अस्तित्व को पूरी प्रतिष्ठा देते हुए, परंपरा की मिटती अर्थवत्ता को अस्वीकार करते हुए एक अन्वेषी का दृष्टिकोण लेकर कविता के शिल्प और वस्तु, दोनों क्षेत्रों में महत्वपूर्ण उपलब्धि उपस्थित कर रही है।"[394] अतः नयी कविता की यह सामाजिक स्थिति प्राचीन कविता अर्थात् पूर्ववर्ती कविता से अलग है। नयी कविता का आविर्भाव सामाजिक परिस्थितियों से हुआ जिसे 'हिंदी काव्य ने विश्व के भयावह तनावों के बीच फसते आधुनिक मनुष्य को इतने निकट से नहीं देखा था, जितना नई कविता का कवि देख रहा था।' सामाजिक, राजनीतिक परिस्थितियों के आधार पर जनता की चेतना में आमूल-चूल परिवर्तन आने लगा और इस प्रकार की मनोवृत्तियों को अभिव्यक्त करने के लिए साहित्यिक अभिव्यक्ति के मानदंड बदलने की आवश्यकता महसूस हुई। इसी संदर्भ में अज्ञेय ने लिखा है-

ये उपमान मैले हो गये,
देवता इन प्रतीकों के कर गए हैं कूच (अज्ञेय)

अतः सन् 1945 से अज्ञेय के संपादकत्व में 'तार सप्तक' के साथ चार 'सप्तक' निकाले गये। इसमें संकलित कविताएँ अपने युगीन परिस्थितियों की भाव भंगिमा से निर्मित हुई थी जो नवीन भावबोध-विषय वस्तु को अभिव्यक्त करती रही। इसी का निर्वसन आगे 'नयी कविता' 1954 में हुआ, जो जगदीश गुप्त के संपादकत्व में निकली।

मराठी 'नवकविता' का उदय, आविर्भाव काल स्पष्ट है। इसे कई विद्वान 1940 के बाद मराठी साहित्य में नवीन, भाव, भाषा, विषय, रूप, शैली के आधार पर विकसित संज्ञा रूप 'नव कविता' मानते हैं। नव कविता के आविर्भाव के संदर्भ में नव कविता पर टिप्पणी करते हुए कवि 'अनिल' (आत्माराम रावजी देशपांडे) लिखते हैं-"इस कालखंड में (मर्ढेकर का कालखंड) कविता के आशय और अभिव्यक्ति में भिन्न प्रकार का परिवर्तन हुआ। इस काव्य का परीक्षण करते हुए उसमें भ्रमनिराशता दंभस्कोट, क्लैष्य, लंपट कामुकता, औद्धत्य, विफलतावादी मनोवृत्ति इस प्रकार का आशय साधारणतः दिखाई देता है और अभिव्यक्ति में अनाकलणिय प्रतिमा, शब्दों का मिलान,

---

[394] नयी कविता, सैद्धांतिक पक्ष, सं.जगदीश गुप्त-पृ.181-182

तोड़, बीच-बीच अंग्रेज़ी शब्दों का उपयोग अर्थ की विपरीतता, अर्थहीनता का पुरस्कार, बुद्धि पुरस्कृत विडंबन आदि लक्षण दिखाई देते हैं; ऐसा कहनेवाला एक गुट है और दूसरा गुट अब तक काव्य विचारों से घटस्कोट किया हुआ अलौकिक क्रांतिकारक 'नवकाव्य' माननेवालों का है। इस प्रकार के काव्य को ही 'नव काव्य' कहना चाहिए, ऐसा इस गुट का आग्रही प्रचार है। तथाकथित भिन्न प्रकार की कविता का परिचय देनेवाला उपनाम समझकर 'नवकाव्य' संबोधित किया जाता है, कुछ आलोचकों ने इस प्रकार के काव्य को 'अतिनवकाव्य' संबोधित किया है। मुझे लगता है, 'नव काव्य' शब्द केशवसुत की कविता से प्रतीत होनेवाले मूल्यों से संदर्भित काव्य को ही देना योग्य होगा।"[395] अतः आधुनिक कवि केशवसुत की कविता से नवीन भाव विचार और नवीन मूल्यगत दृष्टिकोण अभिव्यक्त होता है, उसे नव काव्य मानने के पक्ष में कवि अनिल हैं।

कवि शरतचंद्र मुक्तिबोध नव कविता का विवेचन, नामकरण करते हुए लिखते हैं-नवकवियों का स्वयं का एक सामाजिक दृष्टिकोण रहा है। आज के सामाजिक यथार्थ ने व्यक्तित्व की सभी मानवी सहज प्रवृत्तियों पर भयानक आक्रमण कर देश विकृत एवं एकांगी कर दिया है। उसका और आनेवाले कल का जीवन दर्शन बनानेवाली शक्ति का चित्र 'नवकविता' में होना अनिवार्य है। पुरोगामी नवकाव्य केवल सामाजिक चित्रण करने का अभिलाषी नहीं है, वरन् उस समग्र सामाजिक परिस्थितियों पर आरूढ़ होकर उसे बदलना चाहता है। इसीलिए यह नवकाव्य अत्यन्त ज्वलंत एवं परिस्थिति के आधार पर अनिवार्य रूप से जनता में बदलाव लाने की, निष्ठा से निर्माण होना चाहता है।"[396] अपने आपेक्षित नवकाव्य की विशेषताओं पर प्रकाश डालते हुए मुक्तिबोध लिखते हैं- "समाज प्रवण, समाज को बदलने वाली वैचारिक आधार प्रतिमाओं का उपयोग केवल अलंकार के लिए न कर यथार्थ (आज और कल का) का प्रकटीकरण करने के लिए प्रतिमाओं का उपयोग करने पर बल और 'नवछंद' आदि नवकाव्य की विशेषताएँ हैं। वह इस पूर्व के कविता में नहीं थी। इसलिए

---

[395] भग्नमूर्ति, अनिल-पृ.113, 114
[396] नवी मळवाट, शरच्चंद्र मुक्तिबोध-पृ.103, 104

इसे 'नवकाव्य' कहना चाहिए।"[397] नव कविता की कथ्य विशेषता के संदर्भ में विवेचन करते हुए 'रा.अ.काळेले' लिखते हैं-"नवकवियों की कविता में जैसी समानता है वैसी ही भिन्नता भी है। सभी नवकवियों का मानसिक आधार विचार है, कवियों को परिस्थितियों की सुजान बोध है, परिस्थितियों पर उनकी प्रतिक्रिया बहुमुखी है और दृष्टि बहुजनीन। सामाजिक विषमता कवियों का केंद्र बिंदु है और उनकी कविता में जनव्यापी पीड़ा का कंप दिखाई देता है। बदलती परिस्थितियों के मूल में 'यंत्र' का आलंबनविभाव नवकवियों में विशेष दिखाई देता है। मानवी जीवन की विकृतता को अभिव्यक्त करना नवकवियों का मुख्य उद्देश्य है।"[398] इस संदर्भ में हम निश्चित रूप से कह सकते हैं कि मराठी नव कविता आंदोलन का निर्माण उदय के मूल कारणों में युगीन बदली हुई सामाजिक, राजनीतिक, साहित्यिक परिस्थितियाँ हैं जिनकी प्रतिक्रिया स्वरूप नवीन भावाभिव्यक्ति करनेवाले साहित्य का निर्माण हुआ। हिंदी साहित्य के संदर्भ में बदलती परिस्थितियों के आधार पर नवीन भावानुभूति की प्रतिक्रिया स्वरूप नयी कविता का निर्माण हुआ। इस संदर्भ में विवेचन करते हुए रामदरश मिश्र लिखते हैं-"नयी कविता भारतीय स्वतंत्रता के बाद लिखी गई उन कविताओं को कहा गया, जिनमें परंपरागत कविता से आगे नये भावबोधों की अभिव्यक्ति के साथ ही नये मूल्यों और नये शिल्प विधानों का अन्वेषण किया गया... फिर भी नयी कविता नाम स्वतंत्रता के बाद लिखी गई उन कविताओं के लिए रूढ़ हो गया, जो अपनी वस्तु छवि और रूप छवि दोनों में पूर्ववर्ती प्रगतिवाद और प्रयोगवाद का विकास होकर भी विशिष्ट है...। नयी कविता की प्रवृत्तियों की परीक्षा करने पर उसकी सबसे पहली विशिष्टता जीवन के प्रति उसकी आस्था में दिखाई देती है।"[399]

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि हिंदी और मराठी साहित्य में नवकविता आंदोलन का आविर्भाव युगीन सामाजिक, राजनीतिक, साहित्यिक परिस्थितियों की प्रतिक्रिया स्वरूप हुआ है, जो परिस्थितियों से अनुभूत नवीन अनुभूतयों की अभिव्यक्ति करता है। दोनों साहित्य में नवकविता के उदय की पृष्ठभूमि समान रूप से दिखाई देती है और नवीन साहित्यिक भावाभिव्यक्ति की

---

[397] नवी मळवाट, शरच्चंद्र मुक्तिबोध-पृ.106
[398] नवकवितेचे एक तप-रा.अ.कळेले-पृ.90
[399] हिंदी साहित्य का इतिहास, सं.नगेंद्र-पृ.629

काव्याभिव्यक्ति को 'नवकाव्य', 'नयी कविता' नामकरण दिया गया। हिंदी में इस अभिव्यक्ति का सोद्देश्य आंदोलन चला जो एक संगठन के रूप में आगे आकर इस प्रकार की अभिव्यक्ति के प्रकाशन के लिए 'नयी कविता' (1954), जगदीश गुप्त के संपादकत्व में पत्रिका निकली। हिंदी 'नयी कविता' के आंदोलन के निर्माण के संदर्भ में विवेचन करते हुए रामस्वरूप चतुर्वेदी लिखते हैं-"नयी कविता युग का संबंध 'नयी कविता' पत्रिका से है जो इलाहाबाद में आरंभ हुई। इसके प्रकाशन का संक्षिप्त वृत्त इस प्रकार है। 'आलोचना' त्रैमासिक के संपादक मंडल (धर्मवीर भारती, रघुवंश, ब्रजेश्वर वर्मा, विजयदेवनारायण साही) की एक बैठक में जो भारती के इलाहाबाद स्थित आवास पर आयोजित थी। इसके प्रकाशक ओमप्रकाश भी आए हुए थे। वहाँ यह निर्णय हुआ कि इलाहाबाद के युवा लेखकों के सहकारी प्रकाशन 'कविता प्रकाशन' की ओर से 'नयी कविता' शीर्षक एक अर्द्धवार्षिक पत्रिका का प्रकाशन किया जाए। संपादन का दायित्व 'जगदीश गुप्त और रामस्वरूप चतुर्वेदी' को दिया गया। व्यवस्था और वितरण का जिम्मा राजकमल प्रकाशन की ओर से होना स्थिर हुआ। सारी योजना व्यवस्था के स्तर पर आकस्मिक थी। पर रचनात्मक स्तर पर उतनी आकस्मिक नहीं। पिछले कुछ समय में 'नयी कविता' की चर्चा-परिचर्चा एक काव्य आंदोलन के रूप में इलाहाबाद में, और बाहर भी चल रही थी। यह प्रकाशन योजना उसकी स्वाभाविक परिणति थी। ... नयी कविता पत्रिका का 1954 में प्रकाशन लघु पत्रिकाओं की एक श्रृंखला में है। 'नये पत्ते', 'नयी कविता', 'निकष', 'प्रतिमान' जैसी पत्रिकाएँ परिमल वृत्त के लेखकों द्वारा आयोजित हुईं।"[400] इस संदर्भ में मराठी साहित्य में इस प्रकार के संगठन का अभाव दिखाई देता है। प्रत्येक कवि की कविताएँ तद्युगीन पत्रिकाओं में स्वतंत्र रूप से प्रकाशित हुईं। इस संदर्भ में रा.अ.काळेले के अनुसार "नव कवियों की कविताओं को विशेष रूप से 'अभिरुचि', 'साहित्य', 'सत्यकथा' आदि से प्रकाशित किया गया।"[401] किंतु इसी कालखंड में 'लघुनियतकालिक' पत्रिकाओं का आरंभ मराठी साहित्य में हुआ। इससे नवकाव्य को बल मिला। इस संदर्भ में अक्षयकुमार काळे लिखते हैं-"मराठी साहित्य में

[400] हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास, रामस्वरूप चतुर्वेदी-पृ.233, 234

[401] नवकवितेचे एक तप, रा.आ.काळेले-पृ.13

लघुनियतकालिक का आरंभ सामान्यतः 1955 में हुआ। रमेश समर्थ द्वारा संपादित 'शब्द' मराठी का प्रथम लघुनियतकालिक माना जाता है। 1960-1970 का कालखंड लघुनियतकालिकों के विकास का काल माना जाता है। इस युग में प्रकाशित पत्रिकाओं की संख्या 75 से 100 तक रही होगी।"[402] इसी संदर्भ में इनमें प्रकाशित होनेवाली कविताओं का स्वरूप विवेचन करते हुए वे आगे लिखते हैं- "सामान्यतः प्रस्थापितों के विरुद्ध वाङ्मयीन संघर्ष से इन लघुनियतकालिकों का जन्म हुआ। साहित्य प्रकाशित करनेवाली रूढ़ व्यवस्था विविध कारणों से पसंद न आने पर वैकल्पिक रूप से यह व्यवस्था निर्मित हुई उसमें उपरोल्लेखित संघर्ष महत्वपूर्ण था।"[403]

सारांशतः उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि हिंदी और मराठी साहित्य में नवकविता का उदय और विकास युगीन परिस्थितियों के अनुभव और उनकी साहित्यिक प्रतिक्रिया स्वरूप हुआ। नव कविता के कवि अपनी युगीन यथार्थ अनुभूति को अभिव्यक्त करते हैं। भारतीय जनमानस की युगीन अवस्था समान थी। चाहे वह महाराष्ट्र हो या हिंदी प्रदेश, यह इससे स्पष्ट होता है। आरंभ के कालखंड के आधार पर भी लगभग यही समानता दिखाई देती है। "सन् 1945 के आसपास से मर्ढेकर के आविर्भाव से, और कुछ आलोचक नवकाव्य का आविर्भाव केशवसुत (1885 निधन) से मानते हैं।"[404] किंतु साधारणतः नवकाव्य का आरंभ मर्ढेकर से माना जाता है और हिंदी साहित्य में स्वातंत्र्योत्तर काल से। इस क्रम में 1954 की 'नयी कविता' से यह आंदोलन रूप में विकसित हुआ। अर्थात् उभय साहित्य में नव काव्य, नयी कविता का विकास स्वतंत्रता के उपरांत हुआ यह स्पष्ट है और दोनों साहित्यों में इस प्रकार के साहित्य के आविर्भाव में तद्‍युगीन सामाजिक, राजनीतिक और साहित्यिक परिस्थितियाँ महत्वपूर्ण रहीं। मराठी साहित्य में रविकिरण मंडल और हिंदी में छायावादी काव्यांदोलन चला। किंतु इसके उपरांत मार्क्सवादी दर्शन पर आधारित प्रगतिवादी साहित्य आंदोलन का अभाव रहा। इस प्रकार का दर्शन साहित्य और मानवीय चिंतन के लिए नया था। इसलिए इस प्रकार की अभिव्यक्ति धारा के कवि 'मुक्तिबोध, करंदीकर' आदि नवकाव्य में ही सम्मिलित माने

---

[402] अर्वाचीन मराठी काव्यदर्शन, अक्षयकुमार काळे-पृ.505
[403] अर्वाचीन मराठी काव्यदर्शन, अक्षयकुमार काळे-पृ.506
[404] भग्नमूर्ति, अनिल, प्रस्तावना से

गए। अर्थात् मराठी नव कविता की धारा प्रगतिवादी विचारधारा के साथ प्रयोगवादी काव्य को भी सम्मिलित करते हुए आगे बढ़ती है। मराठी नव कविता को शरतचंद्र मुक्तिबोध प्रयोगवादी काव्य मानते हैं। उनके अनुसार "आज के काव्य का पहला और प्रमुख वैशिष्ट्य उसका प्रयोगवादी होना है।"[405] अर्थात् हिंदी काव्य साहित्य के समान इस युग का काव्य 'प्रयोगवादी' अवधारणा को सम्मिलित कर आगे बढ़ता है। वह प्रत्येक नवीन भावधारा, अभिव्यक्ति को विभिन्न प्रवृत्तियों के आधार पर विभाजित नहीं करता। सारांशतः कह सकते हैं कि उभय साहित्य में नव साहित्य, नव कविता, नयी कविता का निर्माण समान युगीन परिस्थितियाँ और आंदोलनों से निर्माण हुआ है जिनमें अधिकतम समानताएँ दिखाई देती हैं। और इसे लघुनियतकालिक पत्रिकाओं से गति मिली। असमानता की दृष्टि से हिंदी नयी कविता की तरह 'परिमलवृत्त' और 'नयी कविता' पत्रिका के समान संगठनात्मक आंदोलन नहीं दिखाई देता। अतः उदय और विकास की पार्श्वभूमि समानता, असमानता और विपरीतता के बिंदु उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट होते हैं।

6.2 युगीन परिस्थितियों के स्तर पर तुलना

युगीन परिस्थितियाँ किसी भी सामाजिक आंदोलन के विकास के मूल होती है। सर्वजनीन है कि युग और साहित्य का अनिवार्य संबंध है और युगीन परिस्थितियों के मूल्यांकन के अभाव में किसी भी सामाजिक, राजनीतिक, साहित्यिक आंदोलनों और परिवर्तनों का तटस्थ मूल्यांकन नहीं हो सकता। रामचंद्र शुक्ल जी ने भी तथ्य के आधार पर हिंदी साहित्य के इतिहास का मूल्यांकन करते हुए लिखा कि 'साहित्य जनता की चित्तवृत्ति का संचित प्रतिबिंब होता है' और 'जनता की चित्तवृत्ति बहुत कुछ राजनीतिक, सामाजिक, सांप्रदायिक तथा धार्मिक परिस्थिति के अनुसार होती है। साथ ही प्रसिद्ध विचारक क्रिस्टोफर कॉडवेल का उद्धरण सर्वविदित है कि-"साहित्य का मोती समाज की सीपी से जन्म लेता है।" इन तथ्यों के आधार पर साहित्य परिदृश्य का मूल्यांकन करने से स्पष्ट होता है कि युगीन परिस्थितियों के अभाव में किसी भी व्यवस्था, आंदोलन का मूल्यांकन असंभव है।' हिंदी और मराठी का 'नव कविता' आंदोलन किन सामाजिक, राजनीतिक परिस्थितियों के आधार पर निर्मित हुआ यह

---

[405] नवी मळवाट, शरदचंद्र मुक्तिबोध, प्रस्तावना-पृ.12

जानना सबसे अधिक प्राथमिक है क्योंकि साहित्य अगर अधिरचना है तो समाज एवं समाज की युगीन परिस्थितियाँ उसकी आधार भूमि है। "भाषा-साहित्य के निर्माण में युगीन वातावरण का विशेष योगदान हुआ करता है। क्योंकि युगीन वातावरण राजनीति, समाज संस्कृति, साहित्य और कला के मूल्यों द्वारा निर्मित होता है, अतएव युग विशेष के साहित्य के अध्ययन के लिए तत्कालीन राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अवस्था का ज्ञान होना अपने-आप में अनिवार्य हो जाता है।"[406] अनिवार्यतः मूल्यांकन के आधार के महत्व को ध्यान में रखते हुए 'हिंदी और मराठी' की 'नवकविता' के आंदोलन की युगीन परिस्थितियों का विवेचन करते हुए उनका तुलनात्मक विवेचन करना अनिवार्य होगा। अतः इस युग की राजनीतिक परिस्थितियों पर प्रथम ध्यान केंद्रित करें-

राजनीतिक परिस्थितियाँः

"'नयी कविता' भारतीय स्वतंत्रता के बाद लिखी गयी उन कविताओं को कहा गया, जिनमें परंपरागत कविता से आगे नये भावबोधों की अभिव्यक्ति के साथ ही नए मूल्यों और नए शिल्प विधानों का अन्वेषण किया गया।"[407] अतः इस कथन के आलोक में हम भारतीय स्वतंत्रता के उपरांत की राजनीतिक परिस्थितियों पर ध्यान देंगे जिनके प्रभाव-प्रेरणा स्वरूप साहित्य में नवीन भावबोधों की अभिव्यक्ति पर आधारित नयी कविता का आविर्भाव हुआ। इस युग की राजनीतिक घटनाओं में भारतीय स्तवंत्रता संग्राम का आंदोलन अपनी पूरी शक्ति के साथ अंग्रेज़ी राज से संघर्ष कर रहा था और इस संघर्ष की परिणति भारत की स्वतंत्रता में हुई और स्वतंत्रता के उपरांत 'भारतीय गणराज्य' का विकास करने के लिए प्रधानमंत्री नेहरू ने अनेक घोषणाएँ की जिनका प्रभाव संपूर्ण राष्ट्र की जनता पर पड़ा। "इस दौर की मुख्य घटना को विवेचित करते हुए सुधीश पचौरी लिखते हैं-"इस दौरान की मुख्य घटना 1936 में लखनऊ में होनेवाला कांग्रेस का अधिवेशन रहा। अध्यक्षीय भाषण में पंडित नेहरू ने (स्वतंत्रता के साथ) समाजवाद को कांग्रेस का लक्ष्य घोषित किया... इस व्यापक बदलाव की प्रक्रिया के पीछे कांग्रेस के अंदरूनी द्वंद्व के अतिरिक्त अंतर्राष्ट्रीय

---

[406] हिंदी साहित्य का इतिहास, सं.नगेंद्र-पृ.281

[407] हिंदी साहित्य का इतिहास, सं.नगेंद्र-पृ.629

वस्तुस्थितियाँ भी सक्रिय थी।"[408] साथ ही भारतीय भूखंड के विकास के लिए पंचवर्षीय योजनाएँ बनाई गईं और उसमें यूरोपीय विकास के केंद्र औद्योगिक और 'यंत्र' सभ्यता तथा विज्ञान को प्राथमिकता दी गई जिसका भारतीय चेतना पर व्यापक प्रभाव पड़ा। विकास के आधार पर "औद्योगीकरण ने मनुष्य को बहुत सारी सुविधाएँ प्रदान की, किंतु सभ्यता में मशीनीकरण इतना बढ़ गया कि मनुष्य की सहज संवेदनाएँ शून्य-सी हो गईं, मशीन मनुष्य पर हावी हो गया, मनुष्य की गतिविधियाँ एवं चिंताएँ मशीन द्वारा ही संचालित एवं अनुशासित हो गई। मनुष्य के पास समय नहीं रहा कि वह समय देकर अपनी सहजताओं के साथ जी सकें। मशीन के कारण मनुष्य का महत्व घट गया।"[409] परिणाम यह हुआ कि विज्ञान की प्रगति ने भारतीय जनमानस की प्राचीन भावधारणाएँ टूटकर नवीन वैज्ञानिक बुद्धिनिष्ठ विचारों का निर्माण हुआ। युगीन पटल की शिक्षा-दीक्षा का संस्कार यूरोपीय दर्शन एवं वैज्ञानिक दृष्टिकोण से होने के कारण भारतीय जनमानस के सामने मार्क्स, हिगेल आदि के साम्यवादी, मार्क्सप्रणित विचारों के नवीन युग का प्रतिबिंब था। भारतीय जनमानस का रुझान इस नए दर्शन की ओर रहा और इसी आधार पर भारत में भी राजनीतिक दल बनकर अपना प्रभाव दिखाने लगे, जिनका स्पष्ट प्रभाव हम युगीन राजनीति, समाज और साहित्य पर देख सकते हैं। राष्ट्रीय राजनीति में दक्षिण पंथी और वामपंथी दल निर्मित हो गए। "दक्षिणपंथ और वामपंथ के एक नए स्तर के इस सह-अस्तित्व ने धारा को एक हद तक मोड़ सकने वाले परिणाम दिए। नेहरू की अध्यक्षता में तथा समाजवादियों के सहयोग से घोषणापत्र और कृषि-कार्यक्रम तैयार हुए और नेहरू ने देश का तुफानी दौरा किया। उनके उग्र नारों से अनुप्राणित हजारों वामपंथी तरुण राजनीति में सक्रिय हुए। इसमें वामपंथ की विचारधारा तेज़ी से फैली। समाजवाद-जंगी और समझौता हीन, साम्राज्य विरोध, जमींदारों और पूंजीपतियों के विरुद्ध संघर्ष, दुनिया की साम्राज्यवाद विरोधी, फ्रांसिज्म विरोधी और शांति-पक्षी शक्तियों की एक जुटता आदि विचार आम जनता में फैल गए।

---

[408] नयी कविता का वैचारिक आधार, सुधीश पचौरी-पृ.35, 36

[409] नयी कविता की चिंतनभूमि, डॉ.उषा कुमारी-पृ.15

"[410] इसी संदर्भ में वे युगीन नवीन राजकीय आंदोलनों और पार्टियों के संदर्भ में विवेचन करते हुए लिखते हैं-"मध्यवर्गीय लोगों में भी समाजवादी-साम्यवादी विचार तेज़ी से फैले जिनके फलस्वरूप तीन और जन-संगठनों की स्थापना हुई। ऑल इंडिया स्टूडेंट्स असोसिएशन, ऑल इंडिया स्टेट्स पिपुल्स कांग्रेस और ऑल इंडिया प्रोग्रेसिव राईटर्स असोसिएशन जिसके सभापति प्रेमचंद थे।"[411] इस विवेचन से स्पष्ट है कि युगीन राजनीति में राष्ट्रीय कांग्रेस की सक्रियता के साथ अनेक दलों का निर्माण हुआ और अपनी धारणाओं के अनुसार शासन व्यवस्था को नियमित करने के प्रयत्न किए गए। सहज है इन राजनीतिक गतिविधियों का प्रभाव साहित्य पर पड़ा और 'प्रगतिशील लेखक संघ' तथा 'प्रगतिवादी साहित्य आंदोलन' का निर्माण हुआ। भारतीय राष्ट्र के नव निर्माण का यह युग था और आधुनिकता की विचारधारा का आगमन हुआ जिससे राजनीति, समाज की मूल परंपराओं में बदलाव आया। अर्थात् युगीन परिस्थितियाँ संघर्षपूर्ण रही। इस संदर्भ में विवेचन करते हुए 'जबरीमल्ल पारख' लिखते हैं-"आज़ादी के बाद भारत के सामने सबसे बड़ी समस्या विभिन्न राष्ट्रीयताओं के बीच वास्तविक एकता की स्थापना की थी। लेकिन सत्ता परिवर्तन जिस ढंग से हुआ उससे इन समस्याओं का समाधान होने के बजाय वे और अधिक उलझ गई। जातियों धार्मिक समुदायों, भाषाई सांस्कृतिक समूहों तथा जनजातियों की बाधाएँ राष्ट्रीय एकता और विकास के मार्ग को अवरुद्ध कर रही थी।"[412] इस युग के भारतीय मनुष्य की मानसिक अवस्था विकल थी वह आज़ादी से नए स्वप्न और उज्वल भविष्य की कामना करता था किंतु आज़ादी के बाद व्याप्त भारतीय विघटन, सांप्रदायिक दंगे और देशविभाजन आदि से मोहभंग हुआ और उसके सभी सपने टूटते हुए दिखाई देने लगे। साहित्य में भी इसी राजनीति का प्रतिबिंब हम देख सकते हैं। विविध साहित्यिक आंदोलन और उनकी विचारधाराएँ व्यापक रूप से साहित्य में उथल पुथल करती रही। हिंदी नयी कविता की युगीन राजनैतिक परिस्थितियों का काफी प्रभाव कविता पर पड़ा। इसी संदर्भित बिंदु के आधार पर मराठी कविता की युगीन राजनीतिक परिस्थितियों का आकलन करना आवश्यक है।

---

[410] नयी कविता का वैचारिक आधार, सुधीश पचौरी-पृ.37, 38

[411] नयी कविता का वैचारिक आधार, सुधीश पचौरी-पृ.38

[412] नयी कविता का वैचारिक परिप्रेक्ष्य, जवरीमल्ल पारख-पृ.19

मराठी नव कविता के संदर्भ में समकालीन राजनीतिक परिस्थितियों पर ध्यान देते हुए अक्षयकुमार काळे लिखते हैं-"दार्शनिक जगत में निर्मित क्रांतिकारी परिवर्तन और विविध साहित्यिक कला-संप्रदायों ने नव कवियों पर जितना प्रभाव डाला उतना ही प्रभाव समकालीन राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय गतिविधियों का रहा है। अर्थात् दूसरा महायुद्ध इस परिस्थितियों के केंद्र बिंदु के रूप में था।"[413] इस संदर्भ में मानवीय तथा राजनीतिक रूप से युद्ध की विभीषिका से संपूर्ण मानव जीवन आतंकित हो गया था। जिसने मानव के संवेदनशील मन पर अत्यन्त व्यापक प्रभाव डाला। इसी संदर्भ में वे भारतीय राजनीतिक गतिविधियों का विवेचन करते हुए लिखते हैं कि-"इस युद्ध के बीच ही भारतीय स्वतंत्रता संग्राम अपनी चरम सीमा पर पहुँच गया। महात्मा गाँधी के सन् 1942 के आंदोलन से भारतीय जनमानस स्वतंत्रता की आकांक्षा से जाग उठा सन् 1857 के स्वतंत्रता संग्राम के वारिस गांधीजी बने इस युग की घटनाओं सुभाष बाबू का ऐतिहासिक पलायन, आज़ाद हिंद सेना की स्थापना, चलो दिल्ली का नारा और उनकी अपघाती मृत्यु आदि बातों का गहरा असर भारतीय जनमानस पर हुआ। देश विभाजन के मानसिक आघात के साथ ही भारतीयों को महात्मा गाँधी की हत्या का आघात भी सहन करना पड़ा। महाराष्ट्र के बहुजन समाज में तीव्र असंतोष निर्माण होकर आगजनी की घटनाएँ घटित हुईं जिसे पुराने वर्णविद्वेष और वर्ण विषमता का आधार था। हिंदू महासभा और राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ से बहुजन समाज अलग निकला साथ ही ये संघटनाएँ ब्राह्मण वर्ग का आश्रय स्थान बनी। इन्हीं संघटनाओं से जनसंघ समान राजकीय दलों का निर्माण हुआ। राजकीय दलों को और धार्मिक संघटनाओं को पूर्व की जातीय विद्वेष का आधार मिला और समता, बंधुता आदि भावों को कायमरूपी हड़ताल लगा। सत्ता संपादन में भी जातीयता को ही महत्व मिला, धार्मिक तनाव ने बारूद का रूप धारण किया, धार्मिक दंगलों के भय की तलवार भारतीय जनमानस पर सदा लटकती रही।"[414] उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि भारत एक राष्ट्र रूपी सूत्र में बँधा हुआ है

---

[413] अर्वाचीन मराठी काव्यदर्शन, अक्षयकुमार काळे-पृ.398

[414] अर्वाचीन मराठी काव्यदर्शन, अक्षयकुमार काळे-पृ.400

चाहे उसकी भाषाएँ अलग क्यों न हों। स्पष्ट है कि हिंदी नई कविता और मराठी नव कविता की युगीन परिस्थितियाँ एक समान हैं, जिससे साहित्य ने अनुभव ग्रहण कर उसकी अभिव्यक्ति की है।

सामाजिक परिस्थितियाँः

समाज को साहित्य की आधारभूमि माना गया है। सामाजिक परिस्थितियों के परिवर्तन के साथ साहित्य और राजनीतिक गतिविधियों में भी परिवर्तन होता है। समाज और राजनीति का भी अन्योन्याश्रित संबंध है। कुछ समय राजनीतिक गतिविधियों, परिवर्तन तथा निर्णयों का समाज पर प्रभाव पड़ता है और सामाजिक स्थितियों में परिवर्तन होता है। हिंदी और मराठी नव कविता आंदोलन के युगीन परिस्थितियों का विवेचन करने से हम पाते हैं कि इस युग की सामाजिक स्थिति एक नए परिवर्तन की कगार पर खड़ी थी और स्वतंत्रता के पश्चात उसमें मूलभूत परिवर्तन आए। स्वतंत्रतापूर्व की राजनीतिक, राष्ट्रीय गतिविधियों के कारण संपूर्ण राष्ट्र एक सूत्र में बंधकर स्वतंत्रता की मांग कर रहा था, उसने अपने नए भविष्य के सुनहरे सपने देखे थे किंतु इन सपनों-आशाओं का मोहभंग हो गया। भारतीय स्वतंत्रता के साथ देश विभाजन की त्रासदी भारतीय जनता को मिली साथ ही हिंदु-मुसलमान दंगों का जहर। बंधुभाव का सूत्र टूटकर सांप्रदायिक विद्वेष की धारा भारत में बहने लगी और हज़ारों लोगों को अपनी जान-माल से हाथ धोना पड़ा। साथ ही भारतीय सरकार की विकास नीति में पंचवर्षीय योजनाओं का निर्माण किया गया और नगरीकरण, आद्योगीकरण को बढ़ावा मिला। इस संदर्भ में औद्योगिक सभ्यता और सामाजिक प्रभाव के संदर्भ में विवेचन करते हुए 'रामवचन राय' लिखते हैं-"आधुनिक युग में साहित्य रचना पर औद्योगिक सभ्यता का काफ़ी प्रभाव पड़ा है। वस्तुतः 18 वीं शताब्दी में इंग्लैंड में जो औद्योगिक क्रांति हुई उसके फलस्वरूप एक नई सभ्यता का जन्म हुआ। एक व्यापक स्तर पर पूंजी का संचयन और उत्पादन के साधनों का निर्माण आरंभ हुआ। स्टीम-इंजिन के आविष्कार से उत्पादन में मशीन का उपयोग होने लगा।"[415] इस औद्यागिक सभ्यता की चर्चा करते हुए डॉ.रमेश कुंतल मेघ ने लिखा है-"विश्व इतिहास में पहली बार मनुष्य मशीनों का दास हुआ। पहली बार रैनेसां का आरंभिक कृषक वर्ग-व्यापारी-वर्ग में

---

[415] नई कविताः उद्भव और विकास, रामवचन राय-पृ.53

रूपांतरित हो गया, पहली बार उच्च मानवतावाद की परिणति व्यक्तिवाद में हुई, फलस्वरूप अकेले मनुष्य और व्यवस्थित समाज के बीच परायेपन की भीषण समस्या आ खड़ी हुई। पुराने आदर्श और प्रारूप अनुपयोगी तथा अप्रमाणिक हो गए।"[416] परंपरागत मूल्यों में बदलाव आरंभ हुआ। तर्क की कसौटी पर धार्मिक विचारों का खंडन किया गया और विज्ञान तथा यंत्र सभ्यता की उपयोगितावादी जीवन दृष्टि समाज में व्यापक रूप से विकसित होने लगी।

इस युग की राजनीतिक गतिविधियों के साथ पाश्चात्य शिक्षा के प्रसार और ज्ञान से भारतीय समाज में नए दर्शनों का प्रभाव बढ़ा तथा अस्तित्ववाद, मार्क्सवाद के प्रभाव से मानव जीवन क्षणिक भौतिक सुख की अपेक्षा में लगा और पूंजीवादी सभ्यता के विरोध में मार्क्स की दृष्टि का अनुगमन करते हुए भारतीय समाज में पूँजीवादी और सर्वहारा वर्ग का निर्माण हुआ। यंत्र युग की सत्ता के साथ नगरीकरण, औद्योगीकरण को बढ़ावा मिला जिसका परिणाम पूँजीवाद, नगरीकरण और बेरोजगारी के रूप में विकसित हुआ। इस परिणाम स्वरूप समाज में पारिवारिक विघटन होकर स्वतंत्र व्यक्तिवाद के आधार पर पारिवारिक संघटना का निर्माण हुआ। प्राचीन ग्राम व्यवस्था के मूल्य कमज़ोर पड़े। अतः आधुनिक परिवेश ने हमारे सामाजिक मूल्यों की भोगवादी जीवन-दर्शन के आधार पर पुनर्व्याख्या की। इस संदर्भ में मराठी नव कविता के कालखंड की सामाजिक स्थिति पर विचार करते हुए अक्षयकुमार काळे लिखते हैं-"स्वतंत्रता की प्राप्ति के आधार पर भारतीयों ने जिन सुख स्वप्नों की कल्पना की थी वे भंग हो गईं। बढ़ती लोकसंख्या महानगर, बेरोजगारी, दरिद्रता धीरे-धीरे बढ़ती गई। बढ़ती हुई आतंकवादी घटनाएँ इन कारणों से समाज जीवन में निरंतर अस्थिरता बनी रही, प्रचंड तनाव, धांधली, संवेदनहीनता, नैराश्य और विकलता की भावना विकसित हुई। स्वतंत्रता के लिए एक रूप बनी स्वतंत्रतापूर्व काल के जनता की ध्येयनिष्ठा, त्याग, समर्पणशीलता का ऱ्हास हुआ। स्वातंत्र्योत्तर काल में स्खलनशील प्रवृत्तियों को बढ़ावा मिला तथा भ्रष्टाचार, अवसरवादिता, दोगलापन, स्पर्धा आदि वृत्तियों ने जोर पकड़ा जिसका अनुभव आज के जीवन में भी हमें होता है। समाजवादी स्वप्नों का टूटकर पूँजीवादी व्यवस्था का विकास हुआ। निम्न मध्यवर्ग बेकारी और महंगाई

---

[416] आधुनिकता बोध और आधुनिकीकरण, रमेश कुंतल मेघ-पृ.60

से ग्रस्त हो गया तथा कनिष्ठ वर्ग दरिद्रता की रेखा से नीचे चला गया। स्वाभाविक रूप से इन परिस्थितियों की स्थिति से निर्मित हड़ताल, मजदूरों का संघर्ष आदि का विकास होकर राष्ट्रीय विकास की गति बाधित हुई। अलगाववादी प्रवृत्तियों का विकास होकर राष्ट्रीय जीवन अस्थिर बन गया। 1940 के बाद के कालखंड की यह राष्ट्रीय और वैश्विक परिस्थिति नवकाव्य का मूल आधार थी।"[417] साथ ही इस संदर्भ में महाराष्ट्र के सामाजिक परिवर्तन में डॉ.अंबेडकर का आविर्भाव हुआ और दलित वर्ग ने अपने अधिकारों के लिए दलित आंदोलन का आरंभ किया। जिसके फलस्वरूप सामाजिक मूल्यों पर पुनर्विचार किया गया।

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर स्पष्ट होता है कि स्वतंत्रता के उपरांत सामान्य मानव की आस्था और विश्वास में प्रश्न चिन्ह उपस्थित हुए, सामाजिक, सांप्रदायिक विद्रोह, आधुनिक दर्शन के कारण भारतीय समाज मन की टूटती आस्था, औद्योगीकरण यंत्र युग से निर्मित व्यक्तिवादी समाज रचना, पारिवारिक, मानसिक विघटन आदि का प्रतिबिंब दोनों साहित्य की नवकविता में अभिव्यक्त हुआ है। इस आधार पर वास्तविक जीवन की अभिव्यक्ति साहित्य में हुई। उभय साहित्य की सामाजिक परिस्थितियाँ समान रहीं। साहित्य के प्रेरक सामाजिक तत्त्व के आधार पर दोनों ने नवीन परिस्थितियों के अनुभव की अभिव्यक्तियाँ की हैं जो समान रूप से दिखाई देती हैं। अतः इस सामाजिक परिस्थिति के प्रति अभिव्यक्ति देते हुए कवि शरतचंद्र मुक्तिबोध अपनी कविता में लिखते हैं-

"आज-हृदय में धधकती है नयी सविता,
कैसे रोक सकता हूँ मैं यातनाओं की प्रदीप्त आभा?
(आज-हृदयी-धगधग करी नवा सविता
... कसा रोखू मी यातनांची ही प्रदिप्त आभा।)"[418]

साहित्यिक परिस्थितियाँः

---

[417] अर्वाचीन मराठी काव्यदर्शन, अक्षयकुमार काळे-पृ.400, 401

[418] नवी मळवाट, शरदचंद्र मुक्तिबोध-पृ.4

हिंदी और मराठी की स्वातंत्र्योत्तर युग की कविता को नयी कविता का काल कहा गया। अतः नयी कविता (हिंदी, मराठी) का आविर्भाव अपनी युगीन साहित्यिक गतिविधियों से प्रेरित रहा। प्रत्येक युग के साहित्य की धारा में अपनी युगीन प्रतिक्रिया स्वरूप नए विचारों की अभिव्यक्ति होती है और उसकी विकसित धारा नए राहों का अन्वेषण करते हुए आगे बढ़ती है। अतः हिंदी और मराठी साहित्य के नव कविता आंदोलन की पार्श्वभूमि में युगीन साहित्य की गतिविधियों तथा परिस्थितियों का आकलन आवश्यक है। जिनके आलोक में हम इन आंदोलनों का मूल्यांकन कर सकते हैं। इस संदर्भ में युगीन साहित्य पर दृष्टिपात करने से हम पाते हैं कि भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन अंग्रेज़ी शासन, शिक्षा-दीक्षा, नवीन विचार आदि से विकसित हुआ। इसी प्रकार यूरोपीय साहित्यिक विचारों ने इस युग के साहित्य को प्रभावित किया। इस संदर्भ में दृष्टव्य है कि युगीन छायावाद और प्रगतिवाद की कविताएँ अपना मूल विषय छोड़ रही थीं और इस संदर्भ में 'तार सप्तक' की योजना से अज्ञेय ने सप्तक श्रृंखला से 'प्रयोगवाद' का आंदोलन चलाया। इस कविता की परिणति नई कविता में हुई इस संदर्भ में हम पाते हैं कि इलाहाबाद से सन् 1954 में 'राजकमल प्रकाशन एवं परिमल संस्था' की 'नयी कविता' पत्रिका आरंभ हुई। 'नयी कविता' के प्रकाशन से यह नाम चर्चित होकर पूरे प्रवाह में आ गया। इलाहाबाद के नए रचनाकार और आलोचक धर्मवीर भारती, रघुवंश तथा विजय देवनारायण साही, 'आलोचना' त्रैमासिक के संपादक मंडल में थे। 'परिमल' की विचार गोष्ठी में इन सभी ने नई सर्जनात्मक संवेदना पर पाठकों का ध्यान केंद्रित करने के लिए 'नयी कविता' पत्रिका निकालने का निर्णय लिया। इसी अवधि में इलाहाबद के युवकों में 'नयी कविता' संबंधी बहसें हो रही थी। अतः इसी के परिणामस्वरूप 'नयी कविता' काव्यांदोलन के रूप में शुरू हुई। नयी कविता के सन् 1954 से 1967 तक आठ अंक प्रकाशित हुए जिनमें लक्ष्मीकांत वर्मा, सर्वेश्वर, कुँवर नारायण, विपिन कुमार अग्रवाल, श्रीराम शर्मा, अजित कुमार आदि अनेक कवियों की कविताएँ तथा अज्ञेय, रघुवंश, जगदीश गुप्त, विजयदेवनारायण साही जैसे काव्य मर्मज्ञों की टिप्पणियाँ और आलेख प्रकाशित हुए। 'भारती' की 'कनुप्रिया' तथा 'अंधायुग' जैसी रचनाओं के अंश भी 'नयी कविता' में प्रकाशित हुए तथा आधुनिक संवेदना की अभिव्यक्ति में प्राचीन पौराणिक मिथकों, आख्यानों के सफल-सार्थक प्रयोग की संभावनाओं पर भरोसा किया गया। पत्रिका के 'संचयन स्तंभ' में अनेक

परिचित-अपरिचित नए रचनाकार छापे गए। बहुत सी नई प्रतिभाएँ नयी कविता पत्रिका से प्रकाश में आई। 'नयी कविता' पत्रिका के कुछ महत्वपूर्ण लेख 'लघुमानव के बहाने हिंदी कविता पर बहस', 'अर्थ की लय' 'रसानुभूति और सहअनुभूति' निबंध प्रकाशित हुए जिनमें 'बिंब विधान', 'आधुनिकता', 'विचारधारा' पर करारी बहसें हुईं जिसके आधार पर इस युग में विचार-चिंतन-और नवसृजन का वातावरण बना। नई कविता की पार्श्वभूमि में 'प्रयोगवाद' और 'परिमल' संस्था की साहित्यिक विचारधारा अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही थी। तार सप्तक के माध्यम से इन कवियों की काव्यदृष्टि पर विचार करते हुए अज्ञेय ने लिखा था "तार सप्तक में सात कवि संकलित हैं सातों एक दूसरे से परिचित हैं किंतु इससे यह परिणाम न निकाला जाए कि वे कविता के किसी एक स्कूल के कवि हैं, या कि साहित्यिक जगत के किसी गुट अथवा दल के सदस्य अथवा समर्थक हैं। बल्कि उनके तो एकत्र होने का कारण यह है कि वे किसी एक स्कूल के नहीं हैं, किसी मंजिल पर पहुँचे हुए नहीं हैं, अभी राही हैं… राही नहीं मतैक्य राहों के अन्वेषी। उनमें नहीं है।"[419] अर्थात् इस कथन के आलोक में हम समझ सकते हैं कि सन् 1940 के बाद एक साहित्य के प्रति 'अन्वेषी' धारणा रखनेवाली विचारधारा व्याप्त थी जिसका प्रवाह सप्तक के द्वारा प्रवाहित। अर्थात् नयी कविता के निर्माण संबंधी एक लंबी साहित्यिक परंपरा साहित्य में विकसित हो रही थी जिसका परिणाम नयी कविता है।

मराठी नव कविता की साहित्यिक स्थितियों पर विचार करते हुए 'निशिकांत मिरजकर' लिखते हैं-"कविता के संबंध में विचार करें तो मर्ढेकर से बदली हुई नव कविता के स्वरूप विषय ने 'कविता' को धक्का पहुँचाया। उसे नव कविता संबोधित किया गया और उसके नव वैशिष्ट्य के संदर्भ में समर्थन किया जाने लगा। तब नव कविता के गुण गौरव का पूर्ण समर्थन किया जाने लगा। … कवि पुरानी पद्धति से कविता सीखते रहे किंतु नवीन अभिव्यक्ति पद्धति का उन पर धीरे-धीरे निश्चित प्रभाव होता रहा।"[420] इस संदर्भ में कवि मर्ढेकर का लेखन अन्य लेखकों को प्रभाव स्वरूप प्रेरणा प्रदान करता रहा। उनकी नवलेखन संबंधी धारणा है कि-"शब्दों का स्वरूप उनकी ध्वनि और संरचना

[419] तार सप्तक, अज्ञेय-पृ.12
[420] मराठी कविता प्रेरणा व स्वरूप, सं.गो.मा.पवार, म.द.हातकणंगलेकर-पृ.89

काल के साथ बदलती रहती है और यह परिवर्तन अनायास कविता में प्रतिबिंबित होता रहता है। उसी प्रकार जीवन प्रवाह के साथ मानवी विचार और भावना परिवर्तित होती रहती है। यह परिवर्तन भी अनायास प्रतिबिंबित होता रहता है। कविता में प्रतिबिंबित होनेवाले यह परिवर्तन, क्रिया-प्रतिक्रिया स्वरूप अपना अस्तित्व प्रकट करते हैं।"[421] अतः इस संदर्भ में हम जान सकते हैं कि मर्ढेकर के काव्य की नवीनता काल सापेक्ष आधुनिकता की अवधारणा सदृश्य है। काल सापेक्ष साहित्य परिवर्तन का मानदंड प्रभावी रहा। इस आधार पर अनेक कवियों ने अपनी परिवर्तित जीवन प्रवाह की अभिव्यक्ति नवीन भावबोधों के आधार पर प्रदान की। इस प्रकार की नवीनता का प्रवाह सा मराठी साहित्य में सन् 1945 के बाद निर्माण हुआ जिसे आलोचकों ने नवीन भावबोधों के आधार पर 'नव काव्य' की संज्ञा प्रदान की। इस संदर्भ में विवेचन करते हुए कवि शरच्चंद्र मुक्तिबोध लिखते हैं- "आज की कविता का प्रथम और प्रमुख लक्षण है उसका प्रयोगवादी होना। मर्ढेकर ने जो प्रयोग किए उसके पीछे एक विशिष्ट उद्देश्य था। उन प्रयोगों द्वारा उन्हें एक विवक्षित आशय व्यक्त करना था। काव्य रूपों का नित्य नवीन प्रयोग करते रहना आज का कविधर्म है।"[422] इस विवेचन के आधार पर हम मराठी नव कविता के युग की साहित्यिक परिस्थितियों का विचार कर सकते हैं। सारांश रूप से मर्ढेकर के काव्य लेखन तथा समीक्षात्मक पद्धति से मराठी 'नव कविता' का जन्म हुआ इसी प्रकार अज्ञेय द्वारा प्रतिपादित प्रयोगवादी धारा का विकास नयी कविता के रूप में हिंदी साहित्य की नयी कविता की धारा विकसित हुई।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि उभय साहित्य की साहित्यिक गतिविधियाँ अपनी पूर्ववर्ती साहित्य परंपरा के कालगत परिवर्तन एवं नवीन भावबोधों के आधार पर विकसित हुई। कवियों ने अपनी अभिव्यक्तियाँ अपने आस-पास की परिवर्तित सामाजिक स्थितियाँ तथा स्वातंत्र्योत्तर काल में विकसित नवीन भावबोधों के आधार पर दी है। ये अभिव्यक्ति प्रणालियाँ जीवन के यथार्थ अनुभव एवं सामान्य, लघु मानव की संवेदना पर केंद्रित रही। इसी रूप में वह परंपरा में नवीन रही। यह

---

[421] सौंदर्य आणि साहित्य, बा.सी.मर्ढेकर-पृ.135
[422] नवी मळवाट, शरद्चंद्र मुक्तिबोध-पृ.104

काव्यांदोलन हिंदी में 'परिमल' तथा नयी कविता (1954) में प्रवाहित किया तथा मराठी साहित्य में कवि बा.सी.मार्ढेकर ने विकसित कर एक अपना अलग प्रवाह बनाया जिसे 'नव कविता' नाम से अभिहित किया गया। इस युग की उभय साहित्य की परिस्थितियाँ समान रूप से दिखाई देती है। अतः इन राजनीतिक, सामाजिक, साहित्यिक परिस्थितियों की समानता असमानता के मूल में उसका राष्ट्रीय तत्व प्रतिपादित होता है। भारत की राजनीतिक, सामाजिक, साहित्यिक गतिविधियाँ प्रादेशिक तत्वों के बावजूद लगभग समान है, यह स्पष्ट होता है।

6.3 विविध दार्शनिक, विचाराधारात्मक प्रभाव के स्तर पर तुलना

साहित्य समाज पर आधारित समाज द्वारा निर्मित अधिरचना है। सामाजिक परिवर्तन एवं सामाजिक गतिविधियों का प्रभाव मानव की मानसिकता तथा उसकी रचनात्मकता पर निश्चित रूप से होता है। अतः यह स्पष्ट है कि सामाजिक, राजनीतिक, अंतर्राष्ट्रीय तथा साहित्यिक मूल्यांकनों के मानदंडों का प्रभाव साहित्य पर होता है। किसी भी युग का साहित्य अपनी युगीन विचारधाराओं तथा दर्शनों से अप्रभावित नहीं रह सकता। हिंदी और मराठी 'नयी कविता' भी अपने युग का प्रतिबिंब प्रस्तुत करती है। इस आधार पर यह जानना है कि इस युग के किन-किन दर्शनों से नयी कविता प्रभाव ग्रहण करती रही जिसकी प्रतिक्रिया स्वरूप उसकी अभिव्यक्तियाँ हुईं। नयी कविता ने अपने पूर्ववर्ती तथा युगीन सामाजिक, राजनीतिक और साहित्यिक परिस्थितियों से प्रभाव ग्रहण कर अपने युग के साहित्य से नवीन भावबोधों की यथार्थ अभिव्यक्ति दी यह स्पष्ट है। इस युग के साहित्यिक आंदोलनों पर विचार करने से स्पष्ट होता है कि युगीन कालखंड में अनेक आधुनिक दर्शनों का उदय एवं विकास हुआ और उन दर्शनों ने साहित्य, समाज और राजनीति में अपनी सशक्त परिवर्तनगामी भूमिका निभाई और नए दृष्टिकोण प्रदान किए। नयी कविता आंदोलन की नवीन भावबोधों की भूमिका इन्हीं दर्शनों से प्रभावित रही, क्योंकि साहित्य अपने युग का चित्र अंकित करता है। इस आधार पर हिंदी और मराठी की नयी कविता आंदोलन में किन आधुनिक विचारधाराओं तथा साहित्यिक दर्शनों का प्रभाव रहा और इस दार्शनिक प्रभाव की न्यूनाधिकता कितनी मात्रा में रही इसका तुलनात्मक ज्ञान आवश्यक है।

रचना रचनाकार के अंतर्निहित अनुभवों उसके ज्ञान और संवेदना की अभिव्यक्ति देती है। इस दृष्टिकोण से हिंदी-मराठी नव कविता आंदोलन पर विचार करने पर यह स्पष्ट होता है कि इस युग का रचनाकार अत्यन्त सजग रूप से वर्तमान यथार्थ एवं अनुभवों की संवेदना के यथार्थ की अभिव्यक्ति प्रदान करता है, साथ ही इस युग के कवियों के व्यक्तित्व पर ध्यान देने से ज्ञात होता है कि ये आंग्ल विद्याविभूषित हैं। विचारधारात्मक प्रभाव-प्रतिक्रिया स्वरूप हम कह सकते हैं कि इन कवियों का परिचय यूरोपीय दर्शन से रहा इस आधार पर अनुमानित रूप से हम कह सकते हैं कि पाश्चात्य दर्शनों का प्रभाव इन रचनाकारों (हिंदी-मराठी) नयी कविता पर रहा होगा। इस संदर्भ में भारतीय 'नवलेखन' पर विचार करते हुए रामस्वरूप चतुर्वेदी लिखते हैं-"हिंदी नवलेखन की साहित्यिक पृष्ठभूमि का संदर्भ तब तक अधूरा रहेगा जब तक अंग्रेज़ी तथा यूरोपियन नव लेखन की रूपरेखा नहीं समझ ली जाती।"[423] चतुर्वेदी जी का स्पष्ट मानना है कि अंग्रेज़ी और यूरोपियन 'न्यू राइटिंग' का प्रभाव हिंदी नवलेखन पर है। इसी प्रकार अन्य विविध वादों के प्रभाव हिंदी और मराठी की नव कविता पर रहा। अतः इसका विवेचन आवश्यक है। हम क्रमागत निम्नलिखित बिंदुओं के आधार पर इन वादों, दर्शनों के प्रभाव का अध्ययन करेंगे-

'न्यू राइटिंग'-नवलेखन:

यूरोपीय साहित्य में नवलेखन की अवधारणा दो महायुद्धों की पार्श्वभूमि में विकसित हुई और इन युद्धों की त्रासदी से वहाँ के सभी मानव मूल्य एवं साहित्यिक मूल्य मानदंड बदल गए। इस स्थिति में यूरोपीय लेखकों ने अपनी विद्रोही भूमिका प्रतिपादित करते हुए सन् 1930 के लगभग न्यू राईटिंग, नवलेखन का आंदोलन आरंभ किया। इस संदर्भ में विवेचन करते हुए रामस्वरूप चतुर्वेदी लिखते हैं- "पश्चिम के देशों में नवलेखन का घनिष्ठ संबंध दो महायुद्धों से है। प्रथम महायुद्ध ने यूरोप की मानसिक संवेदना को गहराई से झकझोर दिया था। युद्धजनित भौतिक क्षतियाँ तो कुछ समय में पूर्ण हो जाती हैं, परंतु संवेदनात्मक घाव बहुत गहरे होते हैं और वे जनमानस को साधारणतः और कलाकारों को विशेषतः बहुत दिनों तक आंदोलित करते रहते हैं। इस दृष्टि से यूरोप के नये साहित्य

---

[423] हिंदी नवलेखन, रामस्वरूप चतुर्वेदी-पृ.18

का प्रारंभ लगभग 1930 ई. से होता है, जब प्रथम महायुद्ध की भौतिक क्षतियाँ बहुत कुछ भरी जा चुकी थीं-परंतु आस्था का विघटन धीरे-धीरे आरंभ हो रहा था। महायुद्ध जन्य सबसे बड़ा खतरा-संस्कारहीनता (डी मॉरलाइसझेन) का वातावरण बराबर गहरा होता जाता था। यूरोपीय मस्तिष्क के इसी संघर्ष ने वहाँ के नवलेखन को जन्म दिया।"[424] पाश्चात्य नवलेखन की विचारधारा का हिंदी नवलेखन के साथ संबंध जोड़ते हुए वे लिखते हैं-"नवलेखन के मूल तत्व, बीज रूप से 'जेम्स जॉयस' वर्जिनिया वुल्फ, टी.एस.ईलियट जैसे पुराने ख़ेमे के लेखकों की रचनाओं में व्याप्त थे। कुछ उसी प्रकार की बात हिंदी नवलेखन के संदर्भ में कही जा सकती है। नवलेखन के पूर्व निराला (नए पत्ते) पंत, इलाचंद्र जोशी, जैनेंद्र तथा कुछ प्रगतिवादियों का विद्रोह, अपनी मूल प्रकृति में वस्तुतः दब नहीं सका था। भिन्न भिन्न रूपों तथा परिस्थितियों में वह प्रकट होता रहा है। विद्रोह की इस अर्ध-अनुभूत स्थिति को एक व्यवस्थित रूप नवलेखन के तत्वावधान में मिला।"[425] इसी प्रकार मराठी 'नवकविता' का संबंध यूरोपीय, आंग्ल, न्यू राइटिंग से जोड़ते हुए अ.ना.देशपांडे लिखते हैं-"मराठी में 'नव कवि' का पद लगाने लायक कवियों में बा.सी.मर्ढेकर य.द.भावे तथा मुक्तिबोध प्रमुख हैं। उनमें भी नवलेखन का सही संबंध मर्ढेकर के काव्य संकलन 'काही कविता' ने बिठाया है। इस संकलन का प्रकाशन वर्ष 1947 इस को मराठी नवलेखन का प्रारंभ काल मानना सुलभ एवं सयुक्तिक होगा। नवकाव्य की मुख्य प्रवृत्तियों एवं प्रेरक वैचारिकता की पार्श्वभूमि का विचार करें तो उसके समान सुस्पष्ट एवं सुसंवादी स्वर पाश्चात्य कवियों में 'इलियट' और ऑडेन में मिलता है। उधर पश्चिमी नवकाव्य का निशान बीसवीं सदी के दूसरे दशक में ही लग चुका था। 'दी टॉवर' संकलन से यह निशान प्रथम दिखाई दिया। इस संकलन से यीट्स, एझरा पौंड और इलियट ने स्वच्छंदतावाद के विरुद्ध विद्रोह कर यथार्थवाद को उभारा था। इसी के साथ इलियट ने बॉदलेयर की प्रतीकवादी विचारधारा का प्रणयन किया। इलियट के इस प्रयत्न से अंग्रेज़ी कविता को नए संस्कार, नयी अभिव्यक्ति और नई संवेदना प्राप्त हुई। प्रगतिशील नई विचारधारा के कुछ ऑक्सफोर्ड कवियों ने

---

[424] हिंदी नवलेखन, रामस्वरूप चतुर्वेदी-पृ.18
[425] हिंदी नवलेखन, रामस्वरूप चतुर्वेदी-पृ.20

'ऑडेन' के नेतृत्व में एकत्र होकर 1930 में एक नयी संघटना बनाई। दूसरे महायुद्ध के बाद ऑडेन के गट से बाहर निकलकर कुछ कवियों ने अतियथार्थवाद को अपनाया। इस नवकाव्य का कुछ प्रतिबिंब अपने (मराठी) साहित्य में प्रतिबिंबित हुआ यह अंध तथा बुद्धिहीन अनुकरण का अनुकरण नहीं था। ... अतः अंग्रेज़ी नवकवियों से यह दृष्टि हमें मिली। किसी भी साहित्य के इतिहास में नवीनता के साथ, नवीन जीवन विषयक दृष्टिकोण का निर्माण होना अपरिहार्य एवं स्वाभाविक है। मराठी कविता ने आज तक उसके स्वरूप के संदर्भ में परिवर्तन पाया। नवकाव्य उन्हीं परिवर्तनों में से एक है।"[426] इस संदर्भ में हम स्पष्ट रूप से जान सकते हैं कि हिंदी और मराठी नवकविता ने यूरोपीय नवलेखन से प्रेरणा ग्रहण की थी। इसका तात्पर्य यह नहीं कि उन्होंने उसका अनुकरण किया। इस संदर्भ में यह ध्यान देने योग्य है कि हिंदी और मराठी नव कविता के पुरोधा अज्ञेय एवं बा.सी.मर्ढेकर दोनों आंग्ल विद्या विभूषित थे। उन्होंने अपने अध्ययन के रूप में इस प्रकार के आंदोलन से प्रेरित होकर अपनी अभिव्यक्तियाँ अपने भाषा साहित्य में की। इस संदर्भ में हम निश्चित रूप से कह सकते हैं कि दोनों काव्यांदोलन के पीछे इस न्यू राईटिंग की प्रेरणा रही है। अतः सारांश रूप से हम कह सकते हैं कि हिंदी और मराठी की 'नवकविता' आंदोलन की पार्श्वभूमि में इस आंदोलन की प्रेरणा रही।

अस्तित्ववादः

आधुनिक दर्शनों में अस्तित्ववाद का महत्वपूर्ण स्थान है। हिंदी और मराठी कविता पर विशेष रूप से प्रभाव डालने वाले दर्शनों में अस्तित्ववाद का महत्वपूर्ण योगदान रहा। उभय साहित्य के कवियों ने अपनी अभिव्यक्तियाँ इस दर्शन के अनुरूप दी है। इस दर्शन के आविर्भाव से मानव की आध्यात्म, धर्म, संस्कृति संबंधी रहस्यात्मक भावनाएँ टूटी और वह अपने 'स्वयं' को केंद्र में रखकर अपने भविष्य निर्माण की योजना बनाने लगा। अस्तित्ववादी दर्शन का विवेचन करते हुए 'बच्चन सिंह' लिखते हैं-"अस्तित्ववाद परंपराभुक्त दार्शनिक प्रणाली से भिन्न ऐसा दर्शन है जो जिया जाता है। परंपरित दार्शनिक पद्धति की तरह इसकी सुनिश्चित पद्धति भी नहीं है। एक तरह से यह पद्धति-

---

[426] आधुनिक मराठी वाङ्मयाचा इतिहास, अ.ना.देशपांडे-पृ.440

निर्माण के विरुद्ध है। विभिन्न अस्तित्ववादियों की अलग-अलग सारणियाँ हैं जो कभी एक दूसरे को काटती तथा कभी एक दूसरे के समानांतर चलती हुई प्रतीत होती है। फिर भी उसकी अवधारणाओं में एक 'कौटुंबिक सादृश्य' दिखाई पड़ेगा।"[427] अतः इस मान्यता के आधार पर नयी कविता तथा 'नवकविता' के संदर्भ में विचार करने पर हम पाते हैं कि नयी कविता (हिंदी-मराठी) की वैयक्तिक चेतना, परंपरा विमुखता को प्रतिपादित करती है। इस रूप के कई तत्त्व इन कविताओं में मिलते हैं। "'व्यक्ति की वैयक्तिकता' या 'युनिकेस' अस्तित्ववाद का केंद्रीय विवेच्य है।"[428] तो नयी कविता ने व्यक्तित्व की महत्ता को अधिक महत्व दिया है। इस संदर्भ में मराठी नव कविता पर अस्तित्ववादी दर्शन के प्रभाव का विवेचन करते हुए अक्षयकुमार काळे लिखते हैं-"अस्तित्ववादी दर्शन और साहित्य में रूढ़ प्रस्थापित दर्शन से भिन्न है। विशेष रूप से ईश्वरविहीन अवस्था में मानव के जीवन की महत्ता प्रस्थापित करना यह उसकी पृथक संवेदना का मूल उद्देश्य है। बीसवीं सदी के विश्व साहित्य पर अस्तित्ववादी साहित्य का गहरा प्रभाव है। मराठी कविता में यह प्रभाव स्पष्ट रूप से दिलीप चित्रे की कविता से दिखाई देता है। अरुण कोल्हटकर, वसंत आबाजी डहाके आदि के काव्य में इस वाद के प्रतिबिंब विशेष रूप से दिखाई देते हैं।"[429] इस प्रभाव के परिणाम का विवेचन करते हुए वे लिखते हैं-"अस्तित्ववादी जीवन दर्शन के प्रभाव से मराठी कविता में क्षणवाद, मृत्युचिंता, अजनबीपन, मानवी कुरूपता, विभत्सता, शारीरिक संबंधों का मुक्त चित्रण आदि बातें मराठी कविता में आई है।"[430] अतः अज्ञेय की कविता 'नदी के द्वीप' मनुष्य की वैयक्तिक अस्मिता को प्रतिपादित करते हुए कहती है-

"किंतु हम हैं। हम धारा नहीं हैं।
स्थिर समर्पण है हमारा, हम सदा से द्वीप है स्त्रोतस्विनी के
किंतु हम बहते नहीं हैं, क्योंकि बहना रेत होना है

---

[427] आधुनिक हिंदी आलोचना के बीज शब्द, बच्चन सिंह-पृ.19
[428] आधुनिक हिंदी आलोचना के बीज शब्द, बच्चन सिंह-पृ.19
[429] अर्वाचीन मराठी काव्यदर्शन, अक्षयकुमार काळे-पृ.596
[430] अर्वाचीन मराठी काव्यदर्शन, अक्षयकुमार काळे-पृ.398

हम बहेंगे तो रहेंगे ही नहीं।"   (अज्ञेय-नदी के द्वीप)

"रहमान रहमान अल्ला को नहीं रहता रंग,

हमें सुनाई देता है उसका अंतरंग

हाँ अब्बाजान मैं ही अल्ला हूँ।"   (दिलीप चित्रे-कविता-1-पृ.210)

अतः इस संदर्भ में हम उभय कवियों की अस्तित्व चेतना पर विचार करने पर कह सकते हैं कि दोनों कवियों ने अस्तित्व को स्वयंभू माना है। सामान्य धरातल पर हिंदी मराठी कविता में सन् 1945 के बाद व्यक्तिवादी दर्शन जो अस्तित्ववाद की मूल धारणा से उभरा है उसी के अनुरूप कवियों ने अपनी अभिव्यक्तियाँ कविता में दी है। यह कवि अपने जीवन को प्रथम प्राथमिकता देता है और उसमें 'स्व' को केंद्र में रखते हैं। इसी आधार पर मनोविश्लेषणवादी विचारकों फ्रायड, युंग, एडलर आदि की धारणानुसार वह कामक्रीडा, अहं भावना की अभिव्यक्तियाँ अपने साहित्य में करता है। अतः इस प्रभाव के स्त्रोत के संदर्भ में काळे जी लिखते हैं-मराठी नव कविता की प्रथम पीढ़ी के सरदार मर्ढेकर, विंदा करंदोकर, य.द.भावे आदि कवि अंग्रेज़ी साहित्य के अध्येता एवं अध्यापक थे इसे नकार नहीं सकते। इसका अर्थ यह नहीं कि मराठी के सभी नव कवियों ने अस्तित्ववादी दर्शन का अध्ययन करके कविताएँ लिखीं बल्कि इससे स्पष्ट होता है कि अंग्रेज़ी और अमेरीकन कविता के अभिरुचि से अपने व्यक्तित्व को सुसंगत प्रवृत्ति को आत्मसात कर अभिव्यक्ति दी है।"[431]

साधारणतः उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि हिंदी-मराठी नवकविता पर अस्तित्ववादी दर्शन का गहरा प्रभाव रहा है। कवियों ने तद्‌युगीन वर्तमान जीवन के आधार पर अपनी आदर्श दार्शनिक परंपरा को छोड़कर अपने वैयक्तिक जीवन के केंद्र की संवेदनाओं की अभिव्यक्ति दी है। जीवन का यथार्थ कटु है, जीवन क्षणमय है तथा जीवन में असंगतियाँ अधिक हैं, ईश्वर की सत्ता समाप्त हो चुकी है या उसे अस्वीकार कर कवियों ने अपने जीवन विषयक दृष्टिकोण की अभिव्यक्ति नवीन भावबोधों के आधार पर कविता में की है। उभय दोनों काव्य साहित्य पर इसका समान प्रभाव दिखाई देता है, यह स्पष्ट है।

---

[431] अर्वाचीन मराठी काव्यदर्शन, अक्षयकुमार काळे-पृ.497

मार्क्सवादः

आधुनिक युग को अपने वैश्विक विचार से प्रभावित करने वाले दर्शन में मार्क्सवाद का महत्वपूर्ण स्थान है। मार्क्स और ऐंगेल्स के दार्शनिक चिंतन ने विश्व को नया दृष्टिकोण दिया। उन्होंने अपने सिद्धांतों के आधार पर विश्व को 'बुर्ज्वा' और 'सर्वहारा' (Haves and Haves not) दो विभागों में विभाजित कर द्वंद्वात्मक भौतिकवाद, 'अतिरिक्त श्रम सिद्धांत' की स्थापना की। मार्क्स के इस दर्शन ने विश्व की राजनीति अर्थशास्त्र और साहित्य विषयक विचारदृष्टि में परिवर्तन लाया। विश्व साहित्य के रूप में भारतीय भाषाओं के साहित्य एवं समाज चिंतन पर प्रभाव पड़ा। राजनीति के क्षेत्र में स्पष्ट रूप से समाजवादी/मार्क्सवादी विचारधारा की पार्टियाँ सक्रिय रूप से कार्य करने लगी। हिंदी और मराठी साहित्य पर भी इस विचारधारा का प्रभाव दिखाई देता है। इस संदर्भ में दृष्टव्य है कि-मार्क्स के समाजवादी विचारों के आधार पर प्रगतिवादी साहित्य की धारा विकसित हुई। हिंदी की प्रगतिवादी साहित्य धारा के उदय संबंधी विवेचन करते हुए नामवर सिंह लिखते हैं- "छायावाद के गर्भ से सन् 1930 के आसपास नवीन सामाजिक चेतना से युक्त जिस साहित्य धारा का जन्म हुआ उसे सन् 36 में 'प्रगतिशील साहित्य' अथवा 'प्रगतिवाद' की संज्ञा दी गई और तब से इस नाम के औचित्य-अनौचित्य को लेकर काफी वाद-विवाद होने के बावजूद छायावाद के बाद की प्रधान साहित्यधारा को प्रगतिवाद के नाम से ही पुकारा जाता है।"[432] सज्जाद जहिर और मुल्कराज आनंद आदि के प्रयत्नों से 'प्रोग्रेसिव राइटर्स असोसियेशन' की एक शाखा भारत में निकाली गई और इसे प्रगतिशील लेखक संघ नाम दिया गया जिसका प्रथम अधिवेशन लखनऊ में सन् 1936 प्रेमचंद की अध्यक्षता में हुआ। प्रगतिवादी आंदोलन समान काव्य साहित्य में शोषक, सर्वहारा के चित्र खींचे गये और सर्वहारा के करुणता का गान किया गया। इस संदर्भ में आगे चलकर इस धारा के कवियों ने ही प्रयोगवाद तथा नयी कविता के युग में लेखन किया। इस धारा के परिवर्तन के संदर्भ में रामविलास शर्मा का मंतव्य है-"प्रगतिशील लेखकों के आंतरिक संघर्ष से उन लोगों को आगे बढ़ने का मौका मिला जो साहित्य को प्रगतिविरोधी दिशा में ले जाना चाहते थे लेकिन इस नई हलचल में प्रगतिवाद

---

[432] आधुनिक हिंदी साहित्य की प्रवृत्तियाँ, नामवर सिंह-पृ.59

के साथ एक दूसरा वाद भी काम आया। वह था प्रयोगवाद।"[433] अतः प्रयोगवाद की अगली कड़ी नयी कविता है। इस संदर्भ में मराठी नव कविता पर मार्क्सवाद के प्रभाव का विवेचन करते हुए प्रा.सं.त्र्यं कुल्ली लिखते हैं-"सन् 1930 से मराठी साहित्य पर मार्क्सवाद का प्रभाव दिखाई देता है।"[434] मराठी साहित्य में मार्क्स की आधारभूत विचारधारा के अनुसरण पर किसी काव्यांदोलन का विकास नहीं हुआ जैसे हिंदी में प्रगतिवाद का। किंतु "'कार्ल मार्क्स' के दर्शन का प्रभाव अनेक मराठी लेखकों पर हुआ इससे पुरोगामी साहित्य का निर्माण हुआ जिन्होंने मार्क्सवादी दर्शन आत्मसात कर लेखन किया उससे मराठी साहित्य को नई दृष्टि मिली।"[435] मार्क्स के प्रभाव स्वरूप मार्क्सवादी चेतना के कवियों के रूप में प्रमुखतः मुक्तिबोध, मर्ढेकर अरुण कोलटकर तथा नारायण सूर्वे का नाम चर्चित है। मुक्तिबोध की चेतना मुख्यतः मार्क्सवाद से प्रेरित थी। उन्हें मराठी का प्रखर मार्क्सवादी विचारधारा का कवि माना जाता है। उन्होंने अपने काव्य संकलन 'नवी मळवाट यात्रिक' में अनेक कविताएँ यंत्रसभ्यता, पूंजीवाद आदि के विरोध में लिखकर सर्वहारा वर्ग की दीन दशा का चित्रण किया। उनकी 'नयी कविता' इसी क्रांति के राग को अभिव्यक्त करती है-

नयी कविता

"आज-हृदय में धधकता नव सविता
जल रहा है प्राणपिंड का संपूर्ण गोल,
कैसे रोक सकता हूँ मैं यह प्रदीप्त आभा?
काली रात की फौलादी छाती फोड़ता है विद्युत्तेज का शूल,
यातनाओं की काली शाखा उसे लगेगा ज्वाला का फूल
क्रुद्ध प्रचंड नव मार्तन्ड उर उर में प्रज्वलित है,
महा प्रखर उसका प्रकाश मेरे उर में कैद है,
प्रकाश के सागर पर गिरते हैं काले पहाड़,
नभघुमट भरता है ब्रह्माण्ड भेदी धडाड्
उसी ध्वनि से प्रतिध्वनियों से प्रकाश गीत मारुकता नहीं अब
उर में जन्म लेती है नयी कविता
आज-हृदय में धधकता नव सविता।"

श.मा.मा.मुक्तिबोध (नवी मळवाट-पृ.4)

---

[433] नयी कविता और अस्तित्ववाद, रामविलास शर्मा-पृ.30
[434] अर्वाचीन मराठी काव्यदर्शन, अक्षयकुमार काळे-पृ.387
[435] तीन मार्क्सवादी कविःएक दृष्टिकोण-प्रा.सं.त्र्यं.कुल्ली-पृ.50

त्याच ध्वनिनि-प्रतिध्वनिनी प्रकाशगीत नावरे आता

उरी जन्मते नवी कविता

आज-हृदयी धगधग करी नवा सविता।"

शा.मा.मा.मुक्तिबोध (नवी मळवाट-पृ.4)

इसी प्रकार के नव क्रांति के भाव उनकी अन्य कविताओं 'रूधिराच्या लाल सड्यांतच, कष्टाचे गीत, गंभीर झडते गगनदुदुंभी, उसळला वरती तेजोगोल' आदि में भी दिखाई देते हैं। मार्क्सवादी साहित्य धारा से प्रेरित होकर अनेक लेखकों ने रचनाएँ लिखीं। परंतु हिंदी के प्रगतिवादी साहित्य आंदोलन समान गतिविधियों का अभाव मराठी साहित्य में दिखाई देता है। अतः इस संदर्भ में यश-अपयश का विवेचन करते हुए 'यशवंत मनोहर' लिखते हैं-"मराठी साहित्य में मार्क्सवादी कविता का अलग व्यक्तित्व संपन्न क्रांतिकारी प्रवाह निर्माण करना आवश्यक था किंतु वह निर्माण नहीं किया गया। मार्क्सवादी कविता 'नवकाव्य' में विलीन हो गई और इसका चेहरा धूसर हो गया। हिंदी में ऐसा नहीं हुआ। मार्क्सवादी काव्यधारा वहाँ (हिंदी में) प्रमुख काव्यधारा मानी जाती है और प्रयोगवादी, रचनानिष्ठ एवं परंपरानिष्ठ काव्यधारा से भी अधिक मौलिक मानी जाती है। मराठी में यह हो सकता था। किंतु मराठी में इस विचारधारा का ठीक प्रसार नहीं हुआ। इसका प्रसार पूर्व के कवि अनिल नहीं कर सकते थे। ... किंतु मुक्तिबोध और करंदीकर इन दो कवियों में यह ताकद थी उनके पास यह शक्ति थी इन महानुभावों ने 1945 से ही मार्क्सवादी कविता का मराठी की अभिव्यक्तिवादी, पारंपरिक कविता का विरोध किया होता तो मर्ढेकर आदि की कविता को 'नवकविता' यह गलत नाम प्रचारित न होकर यथार्थ रूप से इस काव्यप्रवाह को 'रीतिवादी' कविता का नामाभिधान होता। 'नवकाव्य' शब्द ने जो धांधली निर्माण की वह टाली जा सकती थी।"[436] इस कथन के आधार पर स्पष्ट होता है कि मराठी साहित्य में मार्क्सवादी साहित्य आंदोलन 'नव कविता' की धारा में ही समाहित रहा। हिंदी साहित्य की तरह मराठी में प्रगतिशील आंदोलन नहीं चला किंतु मार्क्स के प्रगतिशील तत्वों के आधार पर लिखा लेखन 'नवलेखन' 'नवकाव्य' में ही समाहित किया गया क्योंकि यह दृष्टिकोण, दर्शन एवं भावबोध साहित्यिक परंपरा में नवीन था।

---

[436] मराठी कविता आणि आधुनिकता, यशवंत मनोहर-पृ.258

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि हिंदी-मराठी साहित्य की काव्यधारा विशेषतः 'नव कविता' पर मार्क्सवादी दर्शन का काफी प्रभाव रहा। इस प्रभाव ने हिंदी साहित्य के क्षेत्र में एक आंदोलनात्मक रूप ग्रहण कर नयी कविता की आधार भूमि के रूप में कार्य किया तो मराठी की नवकविता के संदर्भ में यह दार्शनिक दृष्टिकोण उसका एक अंग या उसकी एक अंतर्निहित धारा के रूप में रहा। इस संदर्भ में हम कह सकते हैं कि मार्क्सवाद, प्रगतिवाद हिंदी काव्यधारा का प्रमुख अंग है। इस प्रकार की धारा मराठी साहित्य में क्षीण रही। इसके तत्कालीन, युगीन साहित्यिक संदर्भ भिन्न रहे हैं। इस संदर्भ में सुस्पष्ट है कि मार्क्स के दर्शन ने विश्व साहित्य पर अपना विशिष्ट प्रभाव दिखाया जिसे हिंदी मराठी नवकविता आंदोलन भी अपवाद नहीं रहा।

मनोविश्लेषणवाद :

यूरोपीय दर्शन का दूसरा महत्वपूर्ण दृष्टिकोण 'सिगमंड फ्रायड' प्रणित मनोविश्लेषणवाद है। मार्क्स के दर्शन के समान ही इस दार्शनिक विचारधारा ने विश्व साहित्य पर अपनी अलग छाप डालकर उसे नये दृष्टिकोणों की ओर प्रवाहित किया। फ्रायड के अनुसार-"मानव जीवन की प्रत्येक गतिविधि काम वासना से प्रेरित होती है, मनुष्य के अचेतन मन में यह भावनाएँ सुप्त रूप में रहती हैं। वह इन सुप्त भावनाओं को दैनंदिन जीवन में समाजभय, परंपरा, नैतिकता, संस्कृति के कारण अभिव्यक्त नहीं कर सकता। इन भावनाओं का मनुष्य दमन करता है। किंतु यह भावनाएँ मनोव्याधि, स्वप्न, साहित्य, कला आदि के द्वारा अभिव्यक्त होती है... फ्रायड के अनुसार कलाकार का मन सदैव इससे पीड़ित रहता है और उसकी कला-काव्य रचना उपचार का साधन होती है। इस प्रकार फ्रायड काम वासना की अभिव्यक्ति को जीवनी शक्ति मानता है।"[437] "फ्रायड के साथ ही मनोभावों को आधार मानकर युंग और एडलर ने (Ego) 'अहं' का सिद्धांत प्रस्थापित किया। उनके अनुसार 'अहं' मानव की गतिविधियों का संचालक है।"[438] इस विचारधारा का भी प्रभाव साहित्य पर हुआ। हिंदी नयी कविता के संदर्भ में 'गोविंद रजनीश' के अनुसार "हिंदी की नई कविता पर फ्रायड के

---

[437] अर्वाचीन मराठी काव्यदर्शन, अक्षयकुमार काळे-पृ.388

[438] अर्वाचीन मराठी काव्यदर्शन, अक्षयकुमार काळे-पृ.385

यौनवाद और लॉरेन्स की यौन परिकल्पनाओं का अधिक प्रभाव पड़ा है।"[439] इस कथन के संदर्भ में हमें अज्ञेय के कथन पर भी ध्यान देना चाहिए। उनके अनुसार "आधुनिक युग का साधारण मनुष्य यौन वर्जनाओं का पूंज है। उसके जीवन का एक पक्ष है उसकी सामाजिक रूढ़ि की लंबी परंपरा, जो परिस्थितियों के परिवर्तन के साथ विकसित नहीं हुई। और दूसरा पक्ष है स्थिति परिवर्तन की असाधारण तीव्र गति जिसके साथ रूढ़ि का विकास असंभव है। इस विपर्यास का परिनाम है कि आज के मानव का मन यौन-परिकल्पनाओं से लदा हुआ है। और वे कल्पनाएँ दमित, कुंठित हैं। उसकी सौंदर्य चेतना भी इससे आक्रांत है। उसके उपमान सभी प्रतिकार्थ रखते हैं और इस आंतरिक संघर्ष से ऊपर जैसे काठी कसकर एक बाह्य वर्ग बैठा है, जो व्यक्ति का या व्यक्ति का नहीं व्यक्ति समूह और व्यक्ति समूह का, वर्ग श्रेणियों का संघर्ष है। व्यक्तिगत चेतना के ऊपर वर्गगत चेतना भी लदी हुई है। "[440] इस संदर्भ में अपनी विचारधारा या मानसिक अभिव्यक्ति के लिए उभय साहित्य के नव कवियों ने यौन वर्जनाओं के आधार पर यौनांगों को प्रतीक, बिंब आदि के रूप में अभिव्यक्त किया। इस संदर्भ में हम निम्न रूप से उदाहरण ले सकते हैं-

"ठहर-ठहर आततायी। जरा सुन ले,
मेरे क्रुद्ध वीर्य की पुकार आज सुन जा।
और यह दृढ़ पैर मेरा,
गुरु, स्थिर स्थानु सा गड़ा हुआ
तेरी प्राणपीठिका पर लिंग-सा खड़ा हुआ।"
अज्ञेय-'इत्यलम'

"लक्का कबुतरा की पुंछ सी
छतनार
केश सज्जा कंधो तक की
काली हंसीनी की गर्दन-सी
लंबी गोल गोल पतली बाहें।"
-मदन वान्सायन-नयी कविता काव्यपक्ष,
सं.जगदीश गुप्त-पृ.153

"शिवलिंग माझे लिंग। हेच अशांतीचें बिंग,
ज्यांच्या झुंजे संज्ञारिंग। व्यापिले गा।।
दोन्ही खाविस खमंग। एक अंगातला अनंग
दुजा निर्गुनाचा ढंग। झटपटीं।।" **बा.सी.मर्ढेकर (काही कविता)**

गात्र बोलले, रक्त बोलले, ओठ बोल ले एकच, माला, माला
केस तुझे सुटले पाठीवरती,
उभारलेले स्तन टवटवती पुढती
आणिक त्या उन्मादक
भरिव नितंबांच्या भवतीच्या नीटस रेषा मोहक
नितंब गोरे मृदुल, गोल नी मांसल,
मस्त पुष्ट, मादक मांड्या थरथरती
विवस्त्र झालेली तव कंबर माझ्या पुढती झूलती।
-स्वेदगंगा-विंदा करंदीकर-पृ.82

---

[439] यौन परिकल्पनाएँ और हिंदी की नयी कविता, गोविंद रजनीश, आलोचना-32/6, अक्तूबर, 1964

[440] तार सप्तक, भूमिका, अज्ञेय

इस प्रकार यौन परिकल्पनाओं के माध्यम से नये कवियों ने अपनी विवर्जित यौन कुंठाओं, दमित वासनाओं को काव्य में व्यवहृत किया है। इस संदर्भ में मराठी कवि 'बा.सी.मर्ढेकर' पर अश्लीलता के प्रचारार्थ काव्य मानकर उन पर आरोप लगाया और वे कचहरियों के फेरे काटते रहे, अंततः उन्हें निर्दोष घोषित किया गया।"[441]

सारांश रूप से उपर्युक्त विवेचन के आधार पर स्पष्ट होता है कि उभय साहित्यों की नवकविता के कवियों ने अपनी अभिव्यक्ति की प्रखरता के लिए परंपरागत काव्य शैली से बहिष्कृत यौन प्रतीक बिंबों का प्रयोग समान रूप में किया है। अतः मनोविश्लेषणवाद की मूल भूमि से प्रभाव ग्रहण कर कवियों ने काव्य लेखन किया अथवा इस संदर्भ में मनोविश्लेषणवाद की प्रेरणा रही यह स्पष्ट होता है।

प्रतीकवाद :

प्रतीकवादी विचारधारा का उदय एवं विकास फ्रांसीसी साहित्य में सन् 1885 के आसपास हुआ। बोदलेयर को प्रतीकवाद का प्रणेता माना जाता है। "आंदोलन के रूप में प्रतीकवाद का आरंभ 1886 में फ्रांस में हुआ। वस्तुतः यह रोमांटिसिज़्म की एक विकसित शाखा है। इसमें प्रतीकों का सायास और सचेत प्रयोग होता है। शुक्ल जी ने इसे 'प्रतीक रहस्यवाद', 'रहस्यात्मक मजहबी प्रतीकवाद' कहकर इसे सीमित अर्थ में प्रयुक्त किया। प्रतीकवाद रहस्यवाद का पर्याय नहीं है। पर इसके नसोन्मुखी तत्व को अस्वीकार नहीं किया जा सकता। इस धारा में बोदलेयर मेलार्मे रिंबो आदि श्रेष्ठ कवि हुए हैं।"[442] इस प्रतीकवादी काव्यधारा की वैचारिकता का प्रभाव हिंदी-मराठी नव कविता पर स्पष्ट दिखाई देता है। "मनुष्य प्रतीक सृष्टा प्राणी है। वह अपनी अनुभूति की अभिव्यक्ति के लिए प्रतीकों की तलाश करता है। प्रतीकों की तलाश एक सर्जनात्मक व्यापार है। मानव होने की सार्थकता इसी में है।"[443] इस संदर्भ में प्रतीक की अवधारणा पर ध्यान देने से स्पष्ट है कि प्रतीक और मानव

---

[441] काव्य आणि अश्लिलता, सत्यकथा-अगस्त 1952

[442] आधुनिक हिंदी आलोचना के बीज शब्द, बच्चन सिंह-पृ.63

[443] आधुनिक हिंदी आलोचना के बीज शब्द, बच्चन सिंह-पृ.62

भाषा का मूल उत्स एक ही है क्योंकि "भाषा यादृच्छिक-ध्वनि प्रतीकों की वह संरचना है, जिससे भाषा-भाषी समाज आपस में विचार विनिमय करता है।"[444] अपनी भावनाओं का संप्रेषण करता है। "प्रतीकों की सामान्यतः दो कोटियाँ निर्धारित की जा सकती हैं। परंपरागत प्रतीक और वैयक्तिक प्रतीक। परंपरागत प्रतीक हज़ारों वर्षों से मनुष्य के भावों, विचारों और कल्पनाओं का वहन करते आए हैं। अलग-अलग देशों की अलग-अलग परंपराएँ होती हैं।"[445] इस संदर्भ में बिंब और प्रतीक पर विवेचना करते हुए जगदीश गुप्त लिखते हैं-"किसी बिंब द्वारा प्रस्तुत अर्थ एक होते हुए भी उसके अनेक प्रतीकार्थ हो सकते हैं क्योंकि बिंब एक साथ अनेक वस्तुओं का प्रतिनिधित्व कर सकता है। या उसे भिन्न-भिन्न अर्थों में ग्रहण किया जा सकता है। जैसे निश्चित बिंब के द्वारा उत्पन्न वर्ण-बोध अनेक प्रतीकार्थों का द्योतक माना जा सकता है।"[446]

इस संदर्भ में मर्ढेकर की कविता में 'प्रतीक' पर चर्चा करते हुए रा.अ.काळेले लिखते हैं-"पारंपरिक शब्दों में प्रकट न किए जानेवाले अमूर्त आशय/भाव को नवकवि प्रतिमाओं के द्वारा अभिव्यक्त करता है। मर्ढेकर जिसे भावनिष्ठ समानता (Emotional Equivalance) कहते हैं। वह दुहरी समस्वरूपी काव्यानुभूति की प्रतीम प्रतिक्रिया है। मर्ढेकर के अनुसार-"नवकाव्य का लक्षण नवीन भावनिष्ठ समानताओं की (नई प्रतिमाओं की) अभिव्यक्ति है।"[447]

पुरानी भाव पद्धति का त्याग करना नव कवियों की नवीनता का द्योतक है। कवि मर्ढेकर प्रतीक के बारे में लिखते हैं-"काव्यजन्य संवेदनाएँ प्रत्यक्ष संवेदनाएँ न होकर संवेदनाओं के प्रतिबिंब होते हैं। " अर्थात् कवि अपनी संवेदनाओं को कविता में अन्य संवेद्य प्रतिबिंब से अभिव्यक्त करता है। साधारण रूप से परंपरागत प्रतीक कमल, सूर्य, चंद्र, कुसुम पल्लव, तांडव आदि अपने विशिष्ट अभिव्यक्ति के संदर्भ में सौंदर्यमान माने गए किंतु आधुनिक नव कवियों ने अपनी अनुभूति को अधिक

---

[444] भाषा-विज्ञान, भोलानाथ तिवारी (भूमिका)
[445] आधुनिक हिंदी आलोचना के बीज शब्द, बच्चन सिंह-पृ.62
[446] नयी कविता: स्वरूप एवं समस्याएँ, जगदीश गुप्त-पृ.69
[447] नव कवितेचे एक तप, रा.अ.काळेले-पृ.5

गोचर, पारदर्शक बनाने के लिए प्रतीकों का उपयोग किया। अतः इस संदर्भ में नव कवियों (हिंदी-मराठी) के संदर्भ में परखा जाए तो अधिकतम प्रतीक नवीन दिखाई देते हैं। अतः -

"तोड़ी हुई मर्यादा, कुचले हुए अजगर सी

गुंजलिका में कौरव वंश को लपेटकर

सूखी लकड़ी सा तोड़ देगी।"   (अंधायुग-भारती)

इस संदर्भ में हम प्रतीकों की नवीन योजना पर ध्यान देने से समझ सकते हैं कि कवि ने मर्यादा को जगर को, तोड़ने की प्रक्रिया को 'सूखी लकड़ी' समान, नवीन रूप से अभिव्यक्त किया है। इस संदर्भ में मर्ढेकर की नव प्रतिमाएँ इस प्रकार हैं-

पंक्चर लेली रात्र पिपात मेल्या ओले उंदीर/पृथ्वी ची तिरडी आदि।

ग.मा.मुक्तिबोध के काव्य में लाल रक्त, लाल फूल, 'अग्नि' आदि क्रांति, परिवर्तन के प्रतीक हैं-

"सेमल का ऊँचा ऊँचा वह, पेड़ रुचिर,

संपन्न लाल फूलों को लेकर खड़ा हुआ

रक्तिमा प्रकाश करता सा।"   - मुक्तिबोध

"हवा के अकेली सांवली बेचैन उड़ती है

कि श्यामल-अंचला के हाथों में

तब लाल कोमल फूल होता है।"   - मुक्तिबोध

मध्यवर्ग के प्रतीक रूप में 'ब्रहमराक्षस' तथा अंधेरा, गहरी गुफाएँ, अरुण कमल आदि प्रतीकों के माध्यम से वे अभिव्यक्ति प्रदान करते हैं। अज्ञेय ने अपनी कविता में घोषणा की कि-

"ये उपमान मैले हो गए, देवता इन प्रतीकों के कर गए कूच।"   - अज्ञेय

इस संदर्भ में वे नवीन प्रतीक योजना करते हैं व्यक्ति के अस्तित्व के लिए नदी के द्वीप, जिजीविषा के लिए सोन मछली, प्रतीक्षा के लिए चकोर की आँखें, रघुवीर सहाय जनता के लिए 'औरत', 'नारी', 'रामदास' आदि प्रतीक प्रयोग में लाए हैं। मराठी कवि करंदीकर 'क्रांति' के लिए

'होळी' (होली), लाल रक्त, मजुर जीवन के लिए 'घडयाळ' आदि प्रतीकों का प्रयोग करते हैं। श.मा.मुक्तिबोध 'क्रांति' के लिए, धधकती ज्वाला, नवा सविता/रक्त आदि का प्रयोग करते हैं। इस संदर्भ में दोनों बंधओं में समानता दिखाई देती है। शरतचंद्र मुक्तिबोध लिखते हैं-

"रात्रीच्या उरात खंजीर घुसुन

रक्ताचा कोसळे प्रचंड प्रपात

रक्तस्त्रावांतुन जन्मास येतसे

अरुण कोमल महान पहाट।"   (गंभीर झडते गगन दुंदुभि) नवी मळवाट

"अब अभिव्यक्ति के सारे खतरे

उठाने ही होंगे।

तोड़ने होंगे ही मठ और गढ सब।

पहुँचना होगा दुर्गम पहाड़ों के उस पार

तब कहीं देखने मिलेगी हमको

नीली झील की लहरीली थाहें

जिसमें कि प्रतिपल कांपता रहता

अरुण कमल एक,

धंसना ही होगा

झील के हिम-शीत सुनील जल में

जादूई झील को करनी ही होगी मेरी प्रतीक्षा।" -अंधेरे में... मुक्तिबोध

इन दोनों कवियों की संवेदना में 'अरुण' प्रतीक है जो नई संभावनाओं का सूर्य है। पु.शि.रेगे अपनी कविता में 'पक्षी' और 'पेड़' को प्रतीक बनाकर कलाकार के जीवन की कविता करते हैं।

"पक्षी जे झाडावर गाणे गातो,

आहे झाडच दूसरे पुन्हा त्या गाण्यात

पक्षी जे झाडावार गाणे गातो,

झाडावर जे गाणे पक्षी गातो

आहे पक्षी दूसरा गाण्यातच त्या पुन्हा

झाडावर जे पक्षी गाणे गातो।   -सुहृदगाथा पु.शि.रेगे, पृ.52

उपर्युक्त कविता में प्रयुक्त प्रतीकों की संरचना निम्नानुसार है-पक्षी-कलाकार माणुस-झाड (पेड):कलाकार का प्रयास जीवन उसकी सृजनशीलता, गाणे (गीत) कलाकृति अथवा कला।

उपर्युक्त रूप से स्पष्ट होता है कि उभर साहित्य के नवकवियों पर प्रतीकवादी आंदोलन का प्रभाव दिखाई देता है और उनकी कविता ने नई प्रतीकों की सृष्टि कर नए भावबोधों को अभिव्यक्त किया है। प्रतिमाओं में सादृश्य और प्रादेशिक संस्कृति के स्तर पर व्यतिरेक दिखाई देता है।

बिंबवाद :

बिंबवादी विचारधारा का हिंदी और मराठी की नवकविता पर व्यापक प्रभाव पड़ा है। बिंबवादी आंदोलन का विवेचन करते हुए बच्चन सिंह लिखते हैं-"बिंब अंग्रेज़ी के 'इमेज' शब्द का हिंदी रूपांतरण है। लेविस बिंब को शब्द चित्र मानता है। अनेक बिंबों द्वारा निर्मित कविता अपने आप में बिंब है ही। इसकी परिभाषाएँ भी एक नहीं अनेक हैं-यह ऐंद्रिय माध्यम द्वारा आध्यात्मिक अथवा बौद्धिक सत्यों तक पहुँचने का मार्ग है। बिंब किसी अमूर्त विचारधारा अथवा भावना की पुनःनिर्मिति है; बिंब पदार्थों के आंतरिक सादृश्य की अभिव्यक्ति है। सन् 1908 में हूल्मे और फिल्ट को इसका प्रवर्तक माना जाता है। 1912 से 1917 तक लंदन और अमरिका में बिंबवाद का आंदोलन आरंभ हुआ। इसके अगुआ थे 'एजरा पाउंड' इस आंदोलन में ड्रिलिटल, डी.एच.लॉरेंस, लोवेल, कैरील विलयम्स, रिचर्ड एलिंगटन आदि सम्मिलित थे। ... शुक्ल जी के अनुसार बिंब योजना विभाव के अंतर्गत होती है, चित्रण उसका मुख्य धर्म है। इसकी दूसरी विशेषता है संश्लिष्ट रूप विधान। बिंब व्यक्ति या विशेष का होगा, सामान्य या जाति का नहीं। कविता में बिंब ग्रहण होता है अर्थग्रहण नहीं। उन्होंने लिखा है-काव्य का काम कल्पना में बिंब (इमेज) या मूर्तभावना उपस्थिति करना है। बुद्धि के सामने कोई विचार (कान्सेप्ट) लाना नहीं। किसी भाव, विचार, वस्तु, घटना आदि का इंद्रिय संवेद्य काल्पनिक शब्दबद्ध संमूर्तन काव्य बिंब है। बिंब का ऐंद्रिय संवेद्य होना अनिवार्य है। क्योंकि इसके अभाव में उसका रचनात्मक होना संभव नहीं। काव्य बिंबों में रूप, रस, गंध, स्पर्श और स्वाद के बिंब

समाहित हैं।"[448] इस संदर्भ में हम उभर साहित्य के कवियों की बिंब योजना पर दृष्टिपात करें। मराठी और हिंदी की नयी कविताओं में बिंब बहुलता अधिक दिखाई देती है। अतः- ऐंद्रिक बिंब-

* **"शिवलिंग माझे लिंग। हेच अशांतीचे विंग,**
  ज्यांच्या झुंजे संझारिंग। व्यापिलेंगा।" **-बा.सी.मर्ढेकर**
  "और वह दृढ़ पैर मेरा
  गुरु स्थिर स्थानु सा गड़ा हुआ
  तेरी प्राणपीठिका पर लिंग सा खड़ा हुआ।"अज्ञेय-इत्यलम
* **"केस तुझे सुटलेले पाठीवरती**
  उभारले ले स्तण टवटवती पाठीवरती
  आणिक त्या उन्मादक
  भरीव नितंबाच्या भवंतीच्या नीटस रेषा मोहक
  नितंब गोरे, मृदुल, गोल, नी मांसल,
  मस्त पुष्ट मादक मांड्या थरथरती
  विवस्त्र झालेली तव कंबर माइया पुढती झूलती।" **-विंदा करंदीकर**
* **"थक जाए तेरे कुच**
  मेरे सीने पर
  धक धक करके (फडल) रह जाए,
  गुम्पित सजाएँ।" **-रघुवीर सहाय-सिढीयों पर धूप में**

<u>दृश्य बिंबः</u>

"निकल गली से तब हत्यारा, आया उसने नाम पुकारा
हाथ तौलकर चाकू मारा, छूटा लोहू का फव्वारा
कहा नहीं था उसने आखिर, उसकी हत्या होगी।
भीड़ ठेलकर लौट गया वह, मरा पड़ा है रामदास यह
देखो देखो बार-बार कह, लोग निडर उस जगह खड़े रह
लगे बुलाने उन्हें, जिन्हें संशय था हत्या होगी। **-रघुवीर सहाय-रामदास**

* **"पृथ्वीची तिरडी**
  (एरव्ही परडी
  फूलीनी भरली!

---

[448] हिंदी आलोचना के बीज शब्द, बच्चन सिंह-पृ.70

जळोदेवा भली!!" **- मर्ढेकर (काही कविता)**

* **"अस्ताव्यस्थ पसलेले केस खाली सांडलेले**

अजुनही चाचपते बाभूळ मुठ छिन्न स्तन।

स्थुलकाय नारी-नर

बैसलेले विवसन,

लालीमा जळते ओठी,

वासना कमळे लाल घेतली हाती त्यांनी,

आत्म मुग्ध बैसलेले सावळ्या दर्पनापुढे

उत्सुकसे न्याहळीत कसे त्यांचे दिसे प्रेम। **-नवी मळवाट, मुक्तिबोध**

श्रव्य बिंब

* **"छन छननछन**

छन छन छन-छा,

छनन छा छन छन छा

झन झनन झन

छन झनन छन

छन्+छन्+छन् छन छन छन छा।

छन्न् छंद वाजत झांजा,

छंन छंद पैंजन पायी

लोलोवत आले लोलक।" **-एकूण कविता-दिलीप चित्रे-पृ.70**

* **"अरे! अरे!!**

तालाब के आस-पास अंधेरे में वन बृहत

चमक चमक उठते हैं हरे-हरे अचानक

वृक्षों के शीश पर नाच-नाच उठती हैं बिजलियाँ

शाखाएँ डालियाँ झूमकर झपटकर

चीख, एक दूसरे पर पटकती है, सिर के अकस्मात

वृक्षों के अंधेरों में छिपी हुई किसी एक

तिलिस्मी खोह का शिला-द्वार

खुलता है धड़ से।" **- अंधेरे में, मुक्तिबोध**

सारांशतः हम कह सकते हैं कि उभय साहित्य की नवकविता धारा ने बिंबवाद से प्रभाव ग्रहण कर अपनी अभिव्यक्तियों को अधिक मूर्त बनाकर उसकी अभिव्यक्ति की है।

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर स्पष्ट होता है कि दोनों साहित्यों पर आधुनिक दार्शनिक विचारधारा, आधुनिकता, न्युराईटिंग, अस्तित्ववाद, मार्क्सवाद, मनोविश्लेषणवाद, प्रतीकवाद और बिंबवाद का काफी प्रभाव पड़ा। इस संदर्भ में दोनों की अभिव्यक्तियों को प्रखरता मिली और उनकी वैचारिकता को एक नयी आधार-भूमि मिली।

हिंदी और मराठी कविता के संदर्भ में तुलनात्मक रूप से एक भेद दिखाई देता है और वह है इन विचारधाराओं का स्वतंत्र एवं स्पष्ट साहित्यिक प्रवाह। हिंदी साहित्य पर ध्यान देने से स्पष्ट होता है कि मार्क्स के प्रभाव स्वरूप प्रगतिवादी साहित्य आंदोलन चला और बिंब प्रतीक के संदर्भ में प्रयोगवाद किंतु इस प्रकार की धारा मराठी साहित्य में विकसित नहीं है। मराठी नव कविता मार्क्सवादी एवं प्रयोगवादी साहित्यधारा को अपने में समाहित कर विकसित हुई। हिंदी में इस संदर्भ में विपरीत स्थिति है।

6.4 आंदोलनात्मक रूप के स्तर पर तुलना

कोई भी विचार, दर्शन आंदोलन अपने युगीन परिस्थितियों के आधार पर निर्माण होता है और उसकी सामाजिक उपयोगिता और उसके नव निर्माण की परिवर्तनगामी चेतना के आधार पर वह विकसित होता है। हिंदी और मराठी साहित्य में नवलेखन का आंदोलन कविता की विधा से प्रथम उदित होकर विकसित हुआ है। इन आंदोलन के उदय और विकास की चेतना के पीछे युगीन परिस्थितियों का संदर्भ अनिवार्य रूप से जुड़ता है। इस बिंदु के आधार पर हम हिंदी और मराठी साहित्य में 'नव कविता', 'नयी कविता' के आंदोलनात्मक रूप की तुलना कर उसका उभय साहित्य में योगदान तथा उसकी समानता, असमानता तथा विपरीतता का अध्ययन करेंगे।

हिंदी और मराठी साहित्य का 'नवकविता' आंदोलन स्वतंत्रता के उपरांत के भारत की सामाजिक राजनीतिक और साहित्यिक गतिविधियों का कारण तथा प्रतिक्रिया स्वरूप था। इस युग के नव कवियों का मनना है कि युगीन संदर्भों को अभिव्यक्ति देने में प्राचीन परंपरा की काव्य पंरपरा और मानदंड असमर्थ है इसलिए नवीन अनुभवों की अभिव्यक्ति, नवीन भावबोधों की अभिव्यक्ति के लिए नए काव्य उपादानों के आधार पर अभिव्यक्ति आवश्यक है। इसी नवीन चेतना के आधार पर विविध काव्यांदोलनों के साथ दोनों भाषाओं के साहित्य में नवकविता आंदोलन का निर्माण हुआ। इस आंदोलन

का मूल रूप और परिस्थितियों के आधार पर अभिव्यक्ति समान रूप से दिखाई देती है। "हिंदी साहित्य के संदर्भ में नयी कविता 'पूर्ववर्ती प्रगतिवाद और प्रयोगवाद का विकास' है।"[449] किंतु मर्ढेकर के लेखन काल से मराठी नवकविता का आरंभ काल माना जाता है और इससे अनेक कवि प्रभावित होकर अपनी अभिव्यक्ति देने लगे और इसके एक निश्चित काव्य विषयक दृष्टिकोण के आधार पर आंदोलनात्मक रूप निर्माण हुआ। इस काव्य का योगदान और तद्‌युगीन साहित्यिक प्रवृत्तियों के आधार पर इसे कविता के इतिहास में नव कविता नामकरण दिया गया। "इस युग के काव्य का नयापन उसमें निहित नये आशय और आशय की नयी अभिव्यक्ति में है।"[450] अतः इस प्रकार के काव्य का एक प्रवाह चल पड़ा और उसका एक निश्चित आंदोलनात्मक रूप सामने प्रकट हुआ।

हिंदी साहित्य में 'नवलेखन काल' से नयी कविता का विकास हुआ। "'नवलेखन' का प्रारंभ 'तारसप्तक' 1943 की प्रकाशन तिथि से माना जाता है।"[451] इस संदर्भ में रामस्वरूप चतुर्वेदी का मंतव्य है-"यद्यपि नवलेखन तथा प्रयोगवाद ठीक-ठीक पर्याय नहीं है। प्रयोगवाद तो मानो नवलेखन की मात्र भूमिका थी जैसा नाम से ही स्पष्ट है, इसकी प्रवृत्ति में बहुत कुछ अस्थिरता के तत्व थे। उसके तत्वावधान में नवीन प्रयोग किए गए जिनमें कुछ सफल निष्कर्षों की सदृढ़ भूमि पर नवलेखन की प्रतिष्ठा हुई। इस दृष्टि से प्रयोगवाद को नवलेखन की पूर्वपीठिका ही समझना चाहिए।"[452] इस संदर्भ में नरेंद्रदेव वर्मा का मंतव्य है-"प्रयोगवाद और नयी कविता हिंदी काव्यधारा के एक विशिष्ट टहराव की प्रतिस्पर्धिनी अभिधाएँ हैं। प्रयोगवाद की अभिधा तो समीक्षकों की आक्रामक रुख को प्रकट करती है और 'नयी कविता' कवियों के द्वारा आत्मरक्षा के निमित्त प्रयुक्त की गई है। कई लोगों ने इन दोनों अभिधाओं की रक्षा के लिए कालगत चौहद्दियों का निर्माण किया है। इस दृष्टि से 'प्रयोगवाद' पूर्ववर्ती है और नयी कविता पश्चादवर्ती। प्रयोगवाद जहाँ समाप्त होता है, वहीं से 'नयी कविता' की

---

[449] हिंदी साहित्य का इतिहास, सं.नगेंद्र-पृ.629
[450] नवकविते चे एक तप, ए.अ.काळेले-पृ.8, 9

[451] हिंदी नवलेखन, रामस्वरूप चतुर्वेदी-पृ.14
[452] हिंदी नवलेखन, रामस्वरूप चतुर्वेदी-पृ.14

शुरुआत होती है। असल में ‘शुरुआत’ और ‘समाप्ति’ जैसे शब्द विज्ञान की दृष्टि से भले ही सम्मत हो जाए, पर साहित्यिक अनुशीलन में इनका विशेष महत्व नहीं होता। वहाँ सर्वत्र विकास का क्रम चलता रहता है और इसलिए हमें साहित्य की एक अव्याहत धारा के दर्शन करते हैं।"[453] इस आधार पर स्पष्ट है कि प्रयोगवाद और नव कविता का रूप एक ही है अगर हम ‘शुरुआत’ और ‘समाप्ति’ के शब्दों का सही प्रयोग करें। वैसे नवीन भावानुभूतियों की अभिव्यक्ति का संदर्भ अज्ञेय के ‘तारसप्तक’ से चला आ रहा है और "‘नयी कविता’ नाम अज्ञेय का ही दिया हुआ है, जो एक रेडियो वार्ता में इन्होंने इस पद का पहले प्रयोग किया था।"[454] इस संदर्भ में डॉ.जगदीश गुप्त के संपादकत्व में नयी कविता पत्रिका का प्रकाशन सामने आया जिसके आठ अंक प्रकाशित हुए। इस ‘नयी कविता’ नाम को व्यापक स्वीकृति भी मिली। स्वयं प्रयोगवादी कवियों ने भी वाद शब्द की संकीर्णता से बचने के लिए नयी कविता को मौन स्वीकृति दी है, क्योंकि मूलतः उनके मन में यह धारणा रही होगी कि नयी कविता उनसे पृथक नहीं है। सच कहा जाए तो यह मान्य होना भी चाहिए कि प्रयोगवाद और नयी कविता भिन्न-भिन्न काव्यधारा नहीं है, अपितु नयी कविता तो प्रयोगवाद का ही विकसित रूप है।"[455] इसी मंतव्य के समान ‘रामदरश मिश्र’ का मंतव्य है। "मेरी स्पष्ट धारणा है कि सन् साठ के बाद कविता में जो स्वर उगे हैं वे नयी कविता में बीज रूप में वर्तमान रहे हैं और गौण भाव से प्रस्फुटित होते रहे हैं। ये स्वर नयी कविता के मूलाधार नहीं रहे हैं। नयी कविता से भिन्न विरोधी स्वर के रूप में उनकी व्याख्या नहीं हो सकती।"[456] अर्थात् इस विवेचन से स्पष्ट है कि हिंदी नयी कविता का आंदोलन 1950-53 से आरंभ हुआ और डॉ.मिश्र के मंतव्य के अनुसार 60 तक रहा। मराठी साहित्य के संदर्भ में नव कविता आंदोलन का आरंभ नवीन साहित्यिक, सामाजिक, राजनीतिक पक्ष को ध्यान में रखते हुए कवि अनिल, ‘केशवसुत’ से मानते हैं उनका मंतव्य है कि "नवकाव्य शब्द केशवसुत की कविता

---

[453] नयी कविता:सिद्धांत और सृजन, नरेंद्रदेव वर्मा, आमुख-पृ.8
[454] हिंदी साहित्य और संवेदना का इतिहास, रामस्वरूप चतुर्वेदी-पृ.234

[455] नयी कविता:पुनर्मूल्यांकन, उषा राणी-पृ.2, 3
[456] हिंदी कविता, तीन दशक, रामदरश मिश्र-पृ.168

से प्रतीत होनेवाले मूल्यों से संदर्भित काव्य को ही देना योग्य होगा।"[457] नवकविता के उदय और आंदोलनात्मक स्थिति पर विचार करते हुए 'श्री निशिकांत ठकार' इसकी समय-सीमा 1946 से 1960 तक निर्धारित करते हुए लिखते हैं-"मर्ढेकर की 'काही कविता' (1947) संकलन ने फिर से मराठी साहित्य में केशवसुत समान युगांतरवादी परिवर्तन ला दिया। वा.ना.देशपांडे, काणेकर, पु.शि.रेगे, मनमोहन आदि ने नवयुग के चिन्ह प्रस्तुत किए। किंतु काव्याशय, काव्यभाषा और कविता के स्वरूप संवेदना में क्रांतिकारी परिवर्तन निर्माण हुआ। वह केवल मर्ढेकर की कविता से[458] नवकविता के आंदोलनात्मक रूप के विकास का विवेचन करते हुए समीक्षक 'रवींद्र घवी' लिखते हैं- "सौंदर्यवादी कविता समकालीन पाठकों से सहज संबंध स्थापित करती थी। सन् 1940 के बाद कविता का पाठकों से होनेवाला सहज संबंध टूट गया और यह आगे अधिक ही दूर होती गई। यहाँ से मराठी कविता की नई धारा बहने लगी। ... यह युगांतरकारी परिवर्तन मर्ढेकर की कविता ने लाया। उनकी कविताओं से आरंभ होनेवाली कविता को 'नवकविता' संज्ञा प्राप्त हुई। यह कालखंड दूसरे महायुद्ध का अंतिम काल था और 'नव साहित्य' का आंदोलन निर्माण हो रहा था। इस वाङ्मयीन आंदोलन के नेता बा.सी.मर्ढेकर यह कवि था। 1818 में अपने (मराठी) साहित्य में जो क्रांति निर्माण हुई वह सीख बन गई थी। इस दूसरे कालखंड के समय वह अग्रसर बनी। मर्ढेकर सौंदर्यमीमांसक, उपन्यासकार समीक्षक थे। किंतु वे मूलतः कवि थे। .. पुरानी परंपरा को नकार कर अलग रास्ते से मार्ग क्रमण करने का कार्य मर्ढेकर ने किया।"[459] इस संदर्भ में मराठी साहित्य की परिवर्तनशीलता का विवेचन करते हुए नवकविता के संदर्भ में 'वसंत बिरादार' लिखते हैं-"बा.सी.मर्ढेकर से नवकविता का आरंभ हुआ। विषय, आशय, भाषा, प्रतिमा और अभिव्यक्ति की शैली में नवकविता की विशेषता दिखाई देती है।"[460] अतः उपर्युक्त विवेचन के आधार पर स्पष्ट है कि मराठी नव कविता का आरंभ कवि 'बा.सी.मर्ढेकर' की कविता से होता है। उनका काव्य संकलन 'काही कविता' (1946) से नवीन

---

[457] भग्नमूर्ति, अनिल-पृ.114
[458] मराठी कविता:स्वरूप आणि विवेचन, निशिकांत ठकार-पृ.335
[459] प्रदक्षिणा-खंड 2 (स्वातंत्र्योत्तर मराठी साहित्य) सं.रवींद्र घवी
[460] आधुनिक मराठी वाङ्मयाचा इतिहास, डॉ.वसंत बिरादार-पृ.443

भावाभिव्यक्ति के आधार पर काव्य सृजन हुआ। अतः इससे नव कविता का उद्‌भव होकर वह अन्य रचनाकारों को प्रभावित करती रही और इस प्रकार की पद्धति से प्रभावित होकर अन्य रचनाकार रचना करने लगे और इस आंदोलन का विकास होता रहा। इस युग में मराठी नवकविता के आंदोलन के पीछे कवियों की साहित्य विषयक नवीन मान्यता थी और वह वैयक्तिक विचारधारा से निर्मित हुई थी। उसके लिए कोई संगठनात्मक आंदोलन नहीं चलाया गया। इसके विपरीत परिस्थिति हिंदी नयी कविता की रही और उसके पीछे 'परिमल वृत्ति' की विशेष भूमिका दिखाई देती है। इस प्रकार के संगठनात्मक तत्व की भूमिका मराठी नवकविता को नहीं मिली। हिंदी नयी कविता के आंदोलनात्मक रूप के इतिहास के बारे में रामस्वरूप चतुर्वेदी लिखते हैं-"नयी कविता युग का संबंध 'नयी कविता' पत्रिका से है, जो इलाहाबाद में आरंभ हुई। इसके प्रकाशन का संक्षिप्त पक्ष इस प्रकार है। आलोचना त्रैमासिक के संपादक मंडल की एक बैठक में, जो भारती के इलाहाबाद स्थिति आवास पर आयोजित थी, उसके प्रकाशक ओमप्रकाश भी आए हुए थे। वहाँ यह निर्णय हुआ कि इलाहाबाद के युवा लेखकों के सहकारी प्रकाशन 'कविता प्रकाशन' की ओर से 'नयी कविता' शीर्षक एक अर्द्धवार्षिक पत्रिका का प्रकाशन किया जाए। संपादन का दायित्व 'जगदीश गुप्त' और 'रामस्वरूप चतुर्वेदी' को दिया गया, व्यवस्था और वितरण का जिम्मा राजकमल प्रकाशन की ओर से होना स्थिर हुआ। सारी योजना व्यवस्था के स्तर पर आकस्मिक थी, पर रचनात्मक स्तर पर उतनी आकस्मिक नहीं थी। पिछले कुछ समय से नयी कविता की चर्चा-परिचर्चा एक काव्यांदोलन के रूप में इलाहाबाद में, और बाहर भी चल रही थी। यह प्रकाशन योजना उसकी स्वाभाविक परिणति थी।"[461] ... 1953 की फरवरी में नए लेखकों की संस्था 'परिमल' की ओर से 'नयी कविता' विषयक एक गोष्ठिता इलाहाबाद विश्वविद्यालय के 'ओरिएंटल हॉल' में आयोजन हुआ। हिंदी नयी कविता को परिमल वृत्त और राजकमल प्रकाशन-सी संस्थाएँ आगे बढ़ा रही थीं, नयी कविता के आंदोलनात्मक विकास संगठन के पीछे इनका योगदान रहा। किंतु मराठी नव कविता के नवकविता काव्यांदोलन में इस प्रकार की

---

[461] हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास, रामस्वरूप चतुर्वेदी-पृ.143

संगठनात्मक शक्ति का अभाव था। वह केवल मर्ढेकर की विारधारा-प्रभाव स्वरूप विकसित हुई, अर्थात् इससे स्पष्ट है कि मराठी नवकविता की आंदोलनात्मक पार्श्वभूमि वैयक्तिक एवं स्वतंत्र थी, जबकि हिंदी नवकविता की पार्श्वभूमि में संगठनात्मक योजना और प्रकाशकीय व्यवस्था का आधार दिखाई देता है। इसके साथ ही नयी कविता के पूर्व तारसप्तक की भूमिका भी 'नव कविता' के साथ जुड़ती है जिसमें अज्ञेय ने 'चार' सप्तकों के साथ 28 कवियों को साहित्य की धारा में प्रवाहित किया। इस प्रकार की कोई भी सुनियोजित आंदोलनात्मक स्थिति मराठी नव कविता के साथ जुड़ी हुई नहीं है। अतः यहाँ दोनों कविता की आंदोलनात्मक स्थिति की तुलना करते समय यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि हिंदी नयी कविता की आंदोलनात्मक स्थिति संगठन का मजबूत आधार, प्रयोगवादी काव्यधारा की 'सप्तक श्रृंखला' और 'परिमल' तथा राजकमल की योजना द्वारा प्रकाशित 'नयी कविता' समान पत्रिका है। इस स्थिति का अभाव मराठी की 'नवकविता' आंदोलन के संदर्भ में स्पष्ट दृष्टव्य है। "मराठी नव कविता की योजना बा.सी.मर्ढेकर के काव्य से मराठी में उदित हुई और इनके प्रभाव प्रेरणा से अन्य कवियों ने काव्य लेखन किया और उनकी कविताओं का प्रकाशन 'मौज' सत्यकथा आदि में किया जाता था।"[462] साथ ही मराठी में 'नवकविता' के उत्तरार्ध अर्थात् 1960-70 के कालखंड में मराठी लघुनियतकलिकों का विकास हुआ। इस संदर्भ में तद्‌युगीन नियतकालिक 'अभिरुचि' साहित्य, सत्यकथा, महाराष्ट्र साहित्य पत्रिका, कविता रति आदि ने नव कवियों की कविता को विशेष रूप से प्रकाशित किया।"[463] इस संदर्भ में नव कविता और लघुनियतकालिक पत्रिकाओं के आंदोलन पर विचार करते हुए 'रवींद्र घवी' लिखते हैं-"नियतकालिक पत्रिकाओं के छोटे कलेवर के आधार पर अथवा आत्माभिव्यक्ति का प्रखर प्रकार समझकर 'संतप्त' युवकों ने अन्य साहित्यिक विधाओं से अधिक प्रधानता कविता को दी। महाराष्ट्र के विभिन्न भागों से अनेक नए कवियों का निर्माण इस आंदोलन ने किया।"[464] इस संदर्भ में 'निशिकांत ठकार' नवकविता आंदोलन को तीन स्तरों पर विभाजित करते हुए उनमें नवकविता के प्रथम प्रवर्तन में बा.सी.मर्ढेकर, शरतचंद्र मुक्तिबोध

---

[462] अर्वाचीन मराठी काव्यदर्शन, अक्षयकुमार काळे-पृ.505
[463] नवकवितेचे एक तप, रा.अ.काळेले-पृ.13
[464] प्रदाक्षिणा, दूसरा खंड, सं.रवींद्र घवी-पृ.25

पु.शि.रेगे, वसंत हजरनीस, गं.ब.ग्रामोपाध्ये, य.द.भावे आदि को तथा नवकविता के दूसरे प्रवर्तन काल में विदा करंदीकर, वसंत बापट, मंगेश पाडगांवकर, इंदिरा संत, त्र्यं.वि.सरदेशमुख आदि को तथा नव कविता के तीसरे प्रवर्तन में सदानंद रेगे, आरती प्रभु (चिं.त्र्यं.खानोलकर) दिलीप चित्रे आदि को स्थान दिया है।[465] अतः प्रत्येक प्रवर्तन युग में कविता का आंदोलन कवियों ने आगे बढ़ाया। अर्थात् इस विवेचन से स्पष्ट है कि मराठी 'नवकविता' का आंदोलन कवियों की वैयक्तिक शक्ति और विचारधारा पर विकसित हुआ जिसमें संगठनात्मक शक्ति तथा प्रकाशकीय शक्ति का अभाव दिखाई देता है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि हिंदी और मराठी की नव कविता का आंदोलन सन् 1940 के बाद शुरू हुआ और मराठी में मर्ढेकर की कविता 'काही' कविता 1946 से जोर पकड़ा तथा इसी रूप में 'तारसप्तक' 1943 से हिंदी में प्रयोगवाद का आरंभ हुआ जिसे नयी कविता की पार्श्वभूमि आलोचक मानते हैं और 1954 से परिमल संस्था और राजकमल प्रकाशन की योजना से जगदीश गुप्त के संपादकत्व में 'नयी कविता' पत्रिका का प्रकाशन हुआ। जिससे कविता के क्षेत्र में 'नयी कविता' का आंदोलन एक मुख्य धारा बनी। इस प्रकार की योजना का अभाव मराठी नव कविता के संदर्भ में दिखाई देता है। मराठी नवकविता अपने युगीन साहित्य के नवीन मानदंड निर्माण कर लेखन करने वाले कवि मर्ढेकर, मुक्तिबोध करंदीकर, दिलीप चित्रे इन प्रमुख कवियों ने नवकविता के आंदोलन में विशेष सहयोग देकर इस आंदोलन को आगे बढ़ाया। अर्थात् उभय साहित्य में नवकविता के आंदोलनात्मक रूप का तुलनात्मक विवेचन करने पर हम पाते हैं कि हिंदी नयी कविता के आंदोलन के साथ सशक्त संगठनात्मकता और निश्चित योजना थी जिसका अभाव मराठी नवकविता आंदोलन में दिखाई देता है। समानता के आधार पर दोनों काव्यांदोलन पत्रिकाओं पर आधारित थे और मराठी काव्यांदोलन को 'सत्यकथा', 'अभिरुचि' साहित्य आदि पत्रिकाओं ने प्रकाशित किया। साथ ही विपरीतता यह है कि मराठी काव्य साहित्य प्रगतिवाद, प्रयोगवाद, समान काव्यांदोलन को नवकविता

---

[465] मराठी कविताः स्वरूप आणि विवेचन, निशिकांत ठकार-पृ.339-359

में ही समाहित करता है और हिंदी साहित्य में प्रगतिवाद, प्रयोगवाद समान स्वतंत्र साहित्यिक आंदोलन विकसित हुए।

6.5 सामाजिक परिवेश के स्तर पर तुलना

समाज और साहित्य का संबंध अन्योन्याश्रित है। समाज साहित्य की उत्स भूमि और साहित्य उसकी आधारशिला है। व्यक्ति सामाजिक अनुभवों की क्रिया प्रतिक्रिया एवं उसके अनुचिंतन को साहित्य में अभिव्यक्त करता है। सामाजिक परिवेश एवं सामाजिक परिस्थितियाँ तथा युगीन विचारधारा का प्रभाव भी व्यक्ति के चिंतन पर होता है और व्यक्ति उस चिंतन प्रक्रिया को साहित्य के माध्यम से अभिव्यक्त करता है, यह प्रक्रिया साहित्य की मूल भूमि है। इस रूप में स्पष्ट है कि व्यक्ति अपने युगीन सामाजिक परिवेश के साथ प्रतिबद्ध रहकर सामाजिक स्थितियों की अभिव्यक्ति करता है। इस संदर्भ में यथार्थवादी साहित्य आंदोलन की धारा प्रवाहित हुई। इस विचारधारा के संदर्भ में विवेचन करते हुए 'त्रिभुवन सिंह' लिखते हैं-"यथार्थवादी साहित्य की सबसे बड़ी विशेषता यही है कि वह समाज के मूल में सक्रिय क्रांतिकारी शक्तियों की पहचान कर और उनके द्वारा बढ़ते हुए आंदोलन का उल्लेख करके पूंजीवाद के नाश और निम्न वर्ग की विजय में पूरी आस्था व्यक्त करें।"[466] इस संदर्भ में यह धारणा मार्क्स प्रणित विचारधारा से प्रेरित लगती है। यहाँ हम मराठी और हिंदी कवियों की सामाजिक परिवेश के साथ प्रतिबद्धता और उनकी 'अभिव्यक्ति की इमानदारी' के संदर्भ में विचार करें, क्योंकि साहित्य समाज का प्रतिबिंब माना जाता है।

हिंदी नयी कविता और मराठी नवकविता के कवियों ने अपने युगीन समस्याओं को साहित्य के माध्यम से अभिव्यक्त किया है। अपने युग की समस्याओं तथा व्यक्ति-समाज के जीवन का चित्र इनके साहित्य में अभिव्यक्त हुआ है। यह धारा ही अपनी पूर्व की परंपरा 'छायावाद' और 'रविकिरण मंडल' की अभिव्यक्ति की परंपरा से भिन्न है क्योंकि इसमें वायवी, अज्ञात प्रियतम की खोज एवं उसकी अभिव्यक्ति नहीं बल्कि समाज में व्याप्त लघुता और उसकी अभिव्यक्ति पर बल है। मराठी नव कवियों का सामाजिक परिवेश तथा उनकी सामाजिक प्रतिबद्धता पर विचार करते हुए डॉ.प्रह्लाद

---

[466] हिंदी उपन्यास और यथार्थवाद, त्रिभुवन सिंह-पृ.201

वडेर लिखते हैं-"मराठी कविता में आज साधारणतः चार प्रवाह दिखाई देते हैं। उनमें पहला प्रवाह शरतचंद्र मुक्तिबोध, बिदा करंदीकर, कांत, मनमोहन और नारायण सूर्वे का है। आगे दलित कवियों का एक अलग प्रवाह आता है-यह सामाजिक प्रतिबद्धता को माननेवाला प्रवाह है। मर्ढेकर ने सामाजिक और वैयक्तिक प्रतिबद्धता के इन दो प्रवाहों का जो यशस्वी मिलान किया वह शायद ही आगे कोई कर पाया। उनकी कविता वैयक्तिक होकर भी उसे सामाजिक अधिष्ठान था। वह आगे के अन्य कवियों में दिखाई नहीं देता।"[467] इस संदर्भ में जनता के लिए साहित्य पर विचार करते हुए अज्ञेय लिखते हैं-"लेखक सिवा अपने कुछ नहीं बदलता सिवा कला के कोई समस्या हल नहीं करता। उसमें कुछ सामाजिक परिवर्तनकारी शक्ति आती है या उसकी कृतियों का कोई ऐसा प्रभाव होता है तो इसीलिए कि वह केवल अपने को बदलने के शुद्ध आग्रह के कारण व्यक्ति के अभ्रंश्य सामाजिक मूल्य या प्रतिमान के रूप में प्रतिष्ठित करता है और समाज में मूल्य की प्रतिष्ठा ही उसका सच्चा सामाजिक कर्म है।"[468] अतः स्पष्ट है कि अज्ञेय कवियों की सामाजिकता पर बल देते हैं। इस संदर्भ में व्यक्ति के व्यक्तितत्व को और समाज को महत्व देते हुए लिखते हैं-

"हम नहीं कहते कि हमको छोड़कर स्रोत स्विनी बह जाए।
वह हमें आकार देती है।
हमारे कोण, गालियाँ, अंतदीप, उभार सैकत-कूल
सहज गोलाइयाँ उस की गढ़ी है।
माँ है वह। है, उसी से हम बने।"   -अज्ञेय (हरी घास पर क्षण भर)

इस संदर्भ में दृष्टव्य है कि कवि व्यक्तितत्व के अविष्कार के लिए समाज की महत्ता का प्रतिपादन करता है। उभय साहित्य के नवकवियों ने अपनी सामाजिक गतिविधियों के साथ अपने समाज का चित्रण किया है। द्वितीय महायुद्ध के विनाश के बाद मानव जीवन अव्यवस्थित एवं विकराल रूप धारण कर लिया किंतु कवि की सामाजिक प्रतिबद्धता उसकी करुण भावना में अभिव्यक्त होती है। महायुद्धोत्तर विनाश का चित्रण करते हुए कवि मर्ढेकर लिखते हैं-

---

[467] आशय आणि अविष्कार, डॉ.प्रहलाद वडेर-पृ.70
[468] आत्मनेपद, अज्ञेय-पृ.60

"प्रेमाचे लव्हाळे

सौंदर्य नव्हाळे

शोधु? आसपास।

मुडद्यांची रास

यंत्रातुन आग

गोळ्यांचे पराग

बेचिराख जिल्हे।

रक्ताची थारोळी,

अपंग आरोळी।

बेभानले मन

रोखतां संगीन।

विटली ही काया

देशावर माया। - मर्ढेकर (आणखी काही कविता)

अतः कवि महायुद्धोपरांत सामाजिक अव्यवस्था और मानवी जीवन की व्यथा को अभिव्यक्त कर समाज, देश के प्रति विद्रोही स्वर उद्घाटित करता है। इस संदर्भ में नव कवियों की सामाजिक धारणाओं को स्पष्ट करते हुए 'श.मा.मुक्तिबोध' लिखते हैं-"स्वयं नव कवियों का एक सामाजिक दृष्टिकोण रहा है। आज के सामाजिक यथार्थ ने व्यक्ति के सभी सहज प्रवृत्तियों पर भयानक आक्रमण कर उसे एकांगी एवं विकृत बना दिया है। उसका एवं कल के भविष्य के जीवन का चित्रण नवकविता से किया जाना अनिवार्य है। पुरोगामी नवकाव्य केवल सामाजिक परिस्थिति का चित्रण ही नहीं करना चाहता बल्कि उस समग्र सामाजिक स्थितियों पर आरूढ होकर उसे बदलना चाहता है। इसलिए नवकाव्य अत्यन्त ज्वलंत एवं परिस्थितियों को बदलने के लिए लोगों को कटिबद्ध करना चाहता है।"[469] इस संदर्भ में कवि 'मुक्तिबोध' का विवेचन है कि नवकवि अपने समाज की परंपरा से

---

[469] नवी मळवाट, श.मा.मुक्तिबोध-पृ.104

विद्रोह करना चाहते हैं क्योंकि समाज ने व्यक्ति की वैयक्तिकता संकीर्ण कर दी है। इसी संदर्भ में वे उसे बदलना चाहते हैं। साथ ही एक ऐसे समाज की पुनर्रचना की आकांक्षा रखते हैं जो सभी इस समाज को बदलने के लिए प्रतिबद्ध हो। इस संदर्भ में वे आगे लिखते हैं-"नव कवियों को यह कार्य करना है इसलिए वे कल्पनाओं में बंधकर और अंधे नहीं होना चाहते। वे वास्तविकता से तीव्र बनी अनुभूति को उसकी संपूर्ण पार्थिवता के साथ प्रकट करने का उद्देश्य रखते हैं। भावना का उन्नयन, वास्तविकता से दूर मधुर स्वप्निल दिशा में भाग जाना नवकविता की प्रकृति के विरुद्ध है। इसलिए समता देशप्रेम आदि भावनाओं के आधार सुंदर कल्पनाओं का विन्यास करने की पद्धति नव कविता की नहीं है। नव कवियों का दृष्टिकोण अत्यन्त व्यापक एवं निष्ठा पुरोगामी होने के कारण विषम जीवन एवं उससे निर्माण इस जीवन के अनेक अंगों पर प्रकाश डालनेवाली अनेक अनुभूतियों के सत्य को वे अपनी कविता से अभिव्यक्त करना चाहते हैं। इस सभी का परिणाम रसिकों के मन में 'प्रक्षोभ' निर्माण करने से है पुरोगामी नव काव्य अप्राकृतिक अमानवी जीवन का केवल नाश ही नहीं करना चाहता बल्कि नया विश्व बनाना चाहता है।"[470] इस संदर्भ में नव कवियों की सामाजिक धारणा स्पष्ट होती है। वे विषमता के आधार बनी व्यवस्था को तोड़कर नए दिशा का निर्माण करना चाहते हैं और साथ ही वर्तमान जीवन सत्य तथा भोगे हुए मानवी यथार्थ की अभिव्यक्ति करना चाहते हैं। इस संदर्भ में समसमान अभिव्यक्ति 'जगदीश गुप्त' की है, जो मुक्तिबोध की इस धारणा को पुष्ट एवं व्याख्यायित करती है-"कला और कविता सभी असह्य बंधनों को तोड़ती हुई आज जिस जगह पर आ गई है वहाँ उसे स्वच्छंदता के साथ गतिशील होने और अपने लिए विवेकपूर्ण स्वयं दिशाबोध प्राप्त करने का पूरा अधिकार मिल गया है। अपेक्षा है प्राण शक्ति के सजीव स्पंदनों की जो बिना भाव की प्रतिष्ठा के संभव नहीं है। अपेक्षित भाव-तत्व से रहित कृति रीते घट की तरह अशुभ प्रतीत होने लगती है। इसमें आत्मीयता और सह-अनुभूति निर्माण करने की शक्ति धीरे-धीरे समाप्त हो जाती है। ... कविता और कला का क्षेत्र ऐसा है जहाँ प्रत्येक व्यक्ति को यदि वह सक्रिय है तो अपने अनुरूप

---

[470] नवी मळवाट, श.मा.मुक्तिबोध-पृ.107

स्वतंत्र अभिव्यंजना पथ अन्वेषित करना ही होता है।"[471] अतः दोनों कवि अपनी विचारधारा के अनुरूप नए पथ पर चलकर नये विचारों के साथ नव अन्वेषण एवं नव निर्माण नए कवि करना चाहते हैं।

स्पष्ट है कि उभय साहित्य के कवि अपनी सामाजिक व्यवस्था से, परंपरागतता से विरोध कर नवीन समाज की रचना पर विश्वास करते हैं। इसी रूप में उनका विद्रोह एवं नवनिर्माण की चेतना स्पष्ट है-

"चांदनी चंदन सदृश

हम क्यों लिखें

मुख हमें कमलों सरीखे क्यों दिखें?

हम लिखेंगे,

चांदणी उस रुपये सी है, कि जिसमें

चमक है पर खनक गायब है!" -अजित कुमार (कवियों का विद्रोह)

कवि श.मा.मुक्तिबोध युगीन वर्तमान सामाजिक जीवन और उसकी विषमता की अभिव्यक्ति अपनी कविता में करते हैं। उन्हें इस समाज की दीन-हीन अवस्था पर एवं उनकी विषमता पर क्रोध है। वह युगीन जीवन का वर्णन करते हैं-

"मानवा मानवा काय ही स्थिति-

किडयांचे मरण! जिण्याची भीति

काय ही लाचारी! अलोट हे दुःख

जाळते जीवन भूख ही किती!

माणसेच काही कोळयांची जाळी!

प्रेतच ऊठून चालाया लागली।"

-श.मा.मुक्तिबोध (भविष्याच्या गर्भातल्या बाळाचे रुदन)

---

[471] नयी कविता स्वरूप एवं समस्या, जगदीश गुप्त-पृ.399

हिंदी नयी कविता के कवि कविता में व्याप्त कटुता व्यंग्य और विरोधाभास के आधार पर अपनी सामाजिक चेतना की अभिव्यक्ति करते हैं। इस संदर्भ में कवि गिरिजाकुमार माथुर लिखते हैं- "नयी कविता की प्रवृत्ति यथार्थ की कटुता, व्यंग्य और विरोधाभास से उठकर बौद्धिक अनास्था से होती हुई विडंबना और विसंगति के मर्माघात तक पहुँची है। आवश्यकता केवल इस बात की है कि भारतीय सामाजिक परिवेश के संदर्भ में ही इस प्रवृत्ति को विकसित किया जाए।"[472]

नयी कविता का स्वर यथार्थवादी है। वह वर्तमान जीवन की त्रासदी को त्यागकर सामान्य मानव मूल्य एवं सामान्य मानव, लघुमानव के जीवन और मूल्यों की प्रतिष्ठापना पर बल देता है। उभय दोनों नव कवियों में समाज के प्रति एक नवीन दृष्टिकोण है। वे अपनी वर्तमान त्रासदी का चित्रण कर इस समाजव्यवस्था से अस्वीकार का स्वर तेज़ करते हैं। हिंदी और मराठी नव कविता के कवियों की चेतना में यह समान धारा है कि उनकी सामाजिक चेतना अपने परिवेश से उभरी है और दोनों अपनी वैयक्तिकता को महत्व देते हुए नए समाज की प्रतिष्ठापना नए मानव मूल्यों का विकास करना चाहते हैं। दोनों की धारणा व्यक्ति प्रधान समाज के निर्माण में है क्योंकि व्यक्ति के बिना समाज का कोई अस्तित्व नहीं है।

6.6 कथ्य और विषय के स्तर पर तुलना

आधुनिक साहित्य मनोरंजन की काल्पनिक भावभूमि को छोड़कर वर्तमान विषय और यथार्थ, वास्तविक भावाभिव्यक्ति की भूमि पर स्थिर है, वह मानव की मूल, यथार्थ अभिव्यक्ति पर बल देता है। नयी कविता का कवि अपनी अभिव्यक्ति को अलंकारिक उपमानों के आधार पर अभिव्यक्त करना नहीं चाहता। वह अपने मंतव्यों, अनुभवों को उसकी यथार्थ अनुभूति के आधार पर ही अभिव्यक्ति देता है। इस संदर्भ में अज्ञेय का मंतव्य है-

"ये उपमान मैले हो गए
देवता इन प्रतीकों के कर गए हैं कूच।" -अज्ञेय

---

[472] नयी कविता : सीमाएँ और संभावनाएँ, गिरिजाकुमार माथुर-पृ.115

अर्थात् कवि अपनी अभिव्यक्ति के लिए नवीन मानदंडों का निर्माण करता है। इसी संदर्भ में प्राचीन साहित्यिक मान्यताओं के संदर्भ में नव कवि य.द.भावे विद्रोह की भूमिका अपनाते हुए लिखते हैं-

"ये झणी पावसा।

ये झंझावात वीज आण संगे।

लाव उडवून

टाक जाळुन

धुरांची जाळी

कर ठिणगीची भडकती ज्वाला

कदर न मला।

जरी बळी माझा! **-आर्दा-य.द.भावे**

अर्थात् भावे अपनी अनुभूति के आधार पर सामाजिक तथा भाषिक मान्यताओं का विरोध करते हैं और उसे नष्ट कर नवनिर्माण करने की अभिलाषा रखते हैं। हिंदी मराठी नवकवियों की सामाजिक साहित्यिक मान्यताओं में समानता है। वे अपनी वर्तमान अनुभूति को वर्तमानता के साथ ही अभिव्यक्त करना चाहते हैं। अतः कवि अपने युग से जुड़ा हुआ है। अपने सामाजिक राजनीतिक अनुभवों को अपने काव्य में अभिव्यक्त करता है। अतः समाज-जीवन का प्रतिबिंब उसके साहित्य में अंकित है। समाज एवं सामाजिक चिंतन उसके काव्य की विषय वस्तु एवं उसका कथ्य है। साथ ही वह अपनी वैयक्तिकता का भी अंश अलग प्रतिपादित करता है। नयी कविता की विषय वस्तु पर विवेचन करते हुए कवि 'गिरिजा कुमार माथुर' उसे मुख्यतया चार विभागों में अभिव्यक्त करते हैं। उनके अनुसार -"पहला वर्ग उन सभी रचनाओं का है, जिनमें विशेष रूप से नए सामाजिक यथार्थ को पकड़ने का आग्रह रहा है और जिनका मुख्य प्रेरणा स्रोत देश विदेश की सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक परिस्थितियाँ तथा तज्जनित वर्ग संघर्ष है। ... दूसरा विभाग उन रचनाओं का है जिनका प्रेरणा-स्रोत व्यक्तिगत परिस्थितियों से उत्पन्न मानसिक अंतर्द्वंद्व है और जिनकी मुख्य गूंज रोमानी, असंतोष, अनास्था द्विविधा, संदेह और सामाजिक अवस्था की 'पैसीव' रही है। ... तीसरा विभाग उन

रचनाओं का है जिनमें परिस्थितिजन्य असंतोष और उदासी है, जीवन संघर्ष के कारण थकान, हार और मस्ती भी अक्सर झलकती है। लेकिन फिर भी सामाजिक चेतना पर्याप्त मात्रा में मिलती है। ... चौथे विभाग में वे सद्‌यजात रचनाएँ आती हैं, जिनमें कवि या तो वादों और संघर्षरत विचारधाराओं से अछूता रहने के प्रयत्न में रोमानी गीतात्मकता की पृष्ठभूमि पर लोकप्रिय (Popular) चीज़ें लिखने का प्रयास करते रहे हैं या ताजगी लाने के लिए प्रकृति के यथातथ्य चित्रण, ग्रॅन्ड लेन्डस्क्रेप, जनपदीय शब्दावली, बोलचाल की भाषा के प्रयोग और लोकगीतों के प्रकारों को अंगीकार करके नयी कविता में स्थानीय रंग भर रहे हैं।"[473] इस कथन पर दृष्टिपात करने से हम नयी कविता की विषयवस्तु एवं कथ्य भंगिमा का पता लगा सकते हैं। अतः नयी कविता के कवियों का महत्वपूर्ण आग्रह सामाजिक यथार्थ की अभिव्यक्ति का रहा। युगीन परिस्थितियों की प्रवृत्तियों से परिचालित यह आग्रह था। अपने देश की वर्तमान तद्‌युगीन परिस्थितियों को आधार बनाकर कवियों ने अपनी विषय वस्तु ग्रहण की। स्पष्ट है कि नयी कविता महायुद्धोपरांत एवं स्वातंत्र्योपरांत युग की मानवीय, सामाजिक, राजनीतिक समस्याओं पर अपनी अभिव्यक्ति देती है। नयी कविता का विषय आधुनिक युग की दो घटनाएँ महायुद्ध और भारतीय स्वतंत्रता के बाद उभरी स्थितियाँ एवं उससे लगी आशाओं का भंग तथा सामाजिक, राजनीतिक परिवर्तन की गतिविधियाँ और सामान्य मानव आदि संबंध रखता है।

मराठी नवकविता आंदोलन की शुरुआत भी इसी समय (1945) से हुई है। दृष्टव्य है कि मराठी नवकविता की पार्श्वभूमि में भी यही तत्व विद्यमान है जो नयी कविता की पार्श्वभूमि में निहित है। मराठी नव कविता की विषयवस्तु का विवेचन करते हुए अक्षयकुमार काळे लिखते हैं- "स्वातंत्र्योपरांत जीन सुखस्वप्नों का आभास भारतीयों ने देखा वह धीरे-धीरे टूट गए। बढ़ती जनसंख्या विकराल महानगर, प्रचंड बेरोजगारी, दारिद्र्य आतंकवाद धीरे-धीरे बढ़ता गया। इसलिए भारतीय समाज जीवन में कायम अस्थिरता बनी रही। प्रचंड तनाव, धांधली, नैराश्य एवं विफलता निर्माण होकर परात्मभावना बढ़ती गई। स्वतंत्रता के लिए संघटित बनी सर्वसामान्य जनता की

---

[473] नयी कविता :सीमाएँ और संभावनाएँ, गिरिजा कुमार माथुर-पृ.66-67

धेय्यनिष्ठा, त्यागभावना, समर्पण शीलता आदि गुणों की परिस्थित सापेक्ष विकास ही सामाजिक राजकीय एवं सांस्कृतिक स्तरों पर दिखाई देता है। किंतु स्वतंत्रता के उपरांत स्खलनशील प्रवृत्तियों का विकास होकर भ्रष्टाचार, अवसरवाद, दोगलापन, स्पर्धा आदि प्रवृत्तियों को बढ़ावा मिला, जिसका अनुभव आज भी हमें होता है। समाजवाद का स्वप्न बिखरकर पूँजीवाद का विकास हुआ। निम्न मध्यवर्ग बेरोजगारी और महंगाई से तो कनिष्ठ वर्ग दरिद्र रेखा से नीचे गया। मजदूरों के संघर्ष बढ़कर राष्ट्रीय विकास की गति अवरुद्ध हुई। प्रादेशिक फूट का विकास होकर राष्ट्रीय जीवन अस्थिर बना। 1940 के बाद के बाद की राष्ट्रीय वैश्विक परिस्थिति निर्मित नवकाव्य की भावभूमि सामाजिक दारिद्रय और मानसिक उध्वस्तता रही है।"[474] इस संदर्भ में कवि मर्ढेकर की कविता 'प्रेमाचे लव्हाळे' का उदाहरण समर्पक है-

"प्रेमाचे लव्हाळे

सौंदर्य नव्हाळे

शोधु?

-आसपास

मुडद्यांची रास

यंत्रांनून आग

गोळ्यांचे पराग

विमानांचे हल्ले

वैचिराख जिल्हे

रक्ताची थारोळी

अपंग अरोळी

बेभानले मन

रोखता संगीत

---

[474] अर्वाचीन मराठी काव्यदर्शन, अक्षयकुमार काळे-पृ.400, 401

विटली ही काया

देशावर माया

कुणाच्या? कुणाची?

पडत्या फळाची

असा होतां वीर

हाती घेई शीर

कुणाचे? कशाला?

भाकरी पोटाल!!!

प्रथ्वीची तिरडी

(एरव्ही परडी

भरली फूलांनी)

जळो देवा भली।"   (काही कविता-मर्ढेकर)

उपर्युक्त कविता में कवि महायुद्धोपरांत मानव की स्थिति का चित्रण करता है। 'देशावर माया' से कवि विफलता, वैराग्य का दर्शन कराता है। कवि युगीन विकरालता और बेरोजगारी का चित्रण करते हुए लिखता है-

"केला थोडा रोजगार। आणि अन्नाचा विचार;

आता शेवटी लाचार। माझा मीच।।

दृष्टि पडे जेथे जेथे। तेथे अंधत्वाचे काटे;

झाले रान उरकाटे। कुंपण की।।"   -मर्ढेकरांची कविता

कवि करंदीकर की कविता मार्क्सवादी विचारों के आधार पर समाज का विवेचन प्रस्तुत करती है। साम्यवादी जीवन दर्शन उनके काव्य का आधार विषय है। कवि अपनी युगीन त्रासदी, बेरोजगारी एवं मजदूरों की दरिद्रावस्था का चित्रण करता है-

"या उंच हेवेल्या! का रस्त्यावर पडतां?

ही धान्यागारें! कां तळतळनी मरता?

ही शीघ्र वाहने! रखडत का मग पायी?

या प्रचंड गिरण्या! मग वस्त्र तुम्हाका ना नाही? - करंदीकर (मुंबई)

इस संदर्भ में दृष्टव्य है कि करंदीकर यंत्र युग में उपेक्षित मजदूरों के प्रति अपनी संवेदना व्यक्त करते हैं। उनका प्रश्न है कि आप ही महल बनाते हैं, किंतु रास्ते पर क्यों सोते हैं? आप ही धान्यों के गोदाम भरते हैं किंतु भूख से क्यों बिलखते हैं। कपड़ों की प्रचंड मील आपसे चलती है किंतु आपके बदन पर वस्त्र क्यों नहीं हैं? अर्थात् कवि की समाज संवेदना मार्क्स की विचारधारा पर आधारित है। इस शोषण की व्यवस्था को त्यागकर नवीन समतावादी विचारधारा के आधार पर वे नवीन समाज निर्माण करना चाहते हैं-

''उठ उठ सहयाद्रे, घुमवीत बोल मराठी खड़े,

समतेचे हे तुफान उठले; एठले सागर कडे,

हीच मराठी जिच्यां मुखाने बदली ज्ञानेश्वरी

शिवबाने तलवार घासली याच मराठीवरी,

हिच्या स्वागता साठी झडले फांचे चौघडे,

... ...

उठ खेडूता, पुन्हां एकदां झाडुनियाँ घोंघडी

उठ मजुरा, पुन्हा मारण्या आघाडीवर उडी,

एकजुट ही पाहूण पडतिल अन्यायाला तडे।

- करंदीकर (समतेचे हे तूफान उठले)

कवि की वैयक्तिक चेतना उसके सामाजिक अनुभव और उसकी संवेदना से उठती हैं। कवि समाज की घटनाओं को अनुभवों के माध्यम से अभिव्यक्ति देता है। समाज जीवन उसकी चेतना का अंग बनता है। कवि शमशेर अपनी कविता में सामाजिक विषमता और सर्वहारा वर्ग की नित्य नियति पर दृष्टिपात करते हैं-

''तू न चेता/काम से थककर,

फटे मैले वस्त्र में कमकर

लौट आए खोलियों में मौन।

चेतनेवाला न तू-है कौन?"   (शमशेर)

अतः इससे समाज के निम्न वर्ग का चित्र स्पष्ट होता है जो कष्ट सहन कर सकता है किंतु विरोध नहीं कर सकता। नये कवियों ने अपनी कविता के लिए समाज के विभिन्न विषयों और समस्याओं को केंद्र बनाया। इस संदर्भ में विषय की विविधता 'नयी कविता' का वैशिष्ट है। समाज, राजनीति, साहित्य, ईश्वर, आस्था, अनास्था, काम, वासना, मोह, प्रीति, ईमानदारी, भ्रष्टाचार, अवसरवाद, नगर, शहर, ग्रामांचल, किसान, मज़दूर, औद्योगिक सभ्यता, नगरीकरण आदि व्यापक विषय तत्व को समाहित करते हुए इस धारा के कवि अपनी अभिव्यक्ति प्रदान करते हैं। तद्‌युगीन वर्तमान जीवन को आधार बनाकर उसकी समस्याओं के साथ नयी कविता और उसके विषय वैविध्य के संदर्भ में मुक्तिबोध लिखते हैं-"नयी कविता वैविध्यमय जीवन के प्रति आत्मचेतस व्यक्ति की संवेदनात्मक प्रतिक्रिया है। चूँकि आज का वैविध्यमय जीवन विषम है। आज की सभ्यता त्रसग्रस्त है। इसलिए आज की कविता में तनाव होना स्वाभाविक ही है। किसी भी युग का काव्य अपने परिवेश से या तो द्वंद्व रूप में स्थित होता है या सामंजस्य के रूप में। नयी कविता अधिकतर द्वंद्व रूप में स्थित है। इसका अर्थ यह नहीं कि नयी कविता में हृदय का सहज रस या रमणीयता नहीं है। नयी कविता के निकृष्ट उदाहरणों को चुनकर उस पर दोषारोपण करना व्यर्थ है। उसके श्रेष्ठ उदाहरणों को लेकर ही, उसके विषय में कुछ कहा जा सकता है। नयी कविता ने नए विषय, नयी उपमाएँ, नयी प्रतीक योजना, नयी पद्धति प्रदान की है। लेकिन, यह सब बातें मैं सिर्फ इसलिए कह रहा हूँ कि हम लोग उसकी उपलब्धियों को सबसे पहले पहचान लें। नयी कविता का स्वर एक नहीं है, विविध है। एक ओर यदि उसमें सुकोमल तीव्र गीतात्मक स्वर है तो दूसरी ओर तीव्र आलोचना का स्वर भी। यह स्वर कभी आत्मालोचन का रूप धारण कर लेता है, तो कभी समाजोन्मुख आलोचना भी करता है। प्रकृति के कोमल रमणीय दृश्यों से लेकर तो हृदय की रसात्मक अनुभूतियों तक के मार्मिक चित्र नयी कविता में कम नहीं हैं। सच तो यह है कि नयी कविता के भीतर कई स्वर हैं, कई शैलियाँ हैं, कई शिल्प हैं और कई भाव पद्धतियाँ। नयी कविता एक काव्य प्रकार का नाम है। इस काव्य प्रकार के अंतर्गत

अनेकानेक व्यक्तिगत शैलियाँ, शिल्प, रचनाविधान और जीवन दृष्टियाँ हैं।"[475] इस उद्धरण से नई कविता के विषय वस्तु संदर्भ की धारणाएँ स्पष्ट होती हैं। नयी कविता का विषय किसी एक केंद्र से बंधा नहीं बल्कि विविधता उसकी विषयवस्तु का प्रतिबिंब है। मुक्तिबोध के इस मंतव्य के आधार पर मराठी नवकविता पर विचार करने से यह स्पष्ट होता है कि उभय साहित्य की नवकविता के विषय के संबंध में यह मंतव्य समान रूप से लागू होता है। मराठी कविता के आंदोलनात्मक रूप के आधार पर विचार करने से स्पष्ट होता है कि यह काव्यगत प्रवृत्तियों के और काव्य की काव्य भंगिमा के आधार पर नवकविता है। इसका आंदोलनात्मक पक्ष हिंदी नयी कविता से कमजोर है। अतः इसमें कवियों के व्यक्तिगत चेतनाओं की प्रधानता है। उनका जीवन और समाज के प्रति अपना-अपना वैयक्तिक दृष्टिकोण है और इसे वे अपने विषयानुभव के आधार पर विविध विचारधाराओं से अभिव्यक्त करते हैं। अतः मराठी नव कविता की अनेक धाराएँ हैं। करंदीकर-मुक्तिबोध की विचारधारा मार्क्स प्रणित दर्शन से प्रभावित है और उनकी अभिव्यक्ति और कथ्य भंगिमा का एक अलग स्वर दिखाई देता है। सदानंद रेगे, पु.शि.रेगे की कविता में जीवन के प्रति वेदना और काम, प्रेम, भावना आदि का दृष्टिकोण है और मंगेश पाडगावकर एवं इंदिरा संत का काव्य दृष्टिकोण जीवन जगत के प्रति शुद्ध संवेदनात्मक तथा भावात्मक, सौंदर्य रूप परक है। साथ ही दिलीप चित्रे का दृष्टिकोण अत्याधुनिक दर्शनों से प्रेरित विविधांगी है जिनमें महानगरीय संवेदना तथा फ्रायडीय काम तत्वों की प्रधानता दिखाई देती है। अतः इन सभी के वर्ण्य विषय और कथ्य भंगिमा पर विचार करने से स्पष्ट रूप से परिलक्षित हाता है कि इन कवियों के विषय व्यापक हैं। इन कवियों का काव्य विषय, जीवन की व्यापकता और विविधता समान है। कवियों ने अपने जीवनानुभवों, विचारधाराओं और सामाजिकता को विविध विषयों के माध्यम से दी है। वर्तमान आधुनिक यंत्र युग की सभ्यता, सुविधा और त्रासदी का चित्रण एवं उससे उत्पन्न मनोवृत्तियों की अभिव्यक्ति कविता के माध्यम से हुई है।

अतः इन समान तत्वों के साथ एक विपरीत या व्यतिरेकी तत्व भी हिंदी और मराठी नव कविता के संदर्भ में परिलक्षित होती है। हिंदी कवियों की अनुभूति में अनेक मिथकीय तत्व दिखाई देते

---

[475] नयी कविता का आत्मसंघर्ष तथा अन्य निबंध, ग.मा.मुक्तिबोध-पृ.12, 13

हैं और उन तत्वों के माध्यम से वे अपनी अनास्था प्रकट करते हैं। यह अनास्था समाज ईश्वर व्यवस्था आदि के प्रति नास्तिकता का भाव प्रकट करते हैं-

"हमने मर्यादा का अतिक्रमण नहीं किया,
क्योंकि नहीं थी, अपनी कोई भी मर्यादा
हमने अनास्था को कभी नहीं झकझोरा
क्योंकि नहीं थी, अपनी कोई भी गहण आस्था।"

(धर्मवीर भारती-अंधायुग)

इस प्रकार अनास्था का भाव अधिकतर कवियों की कविता में परिलक्षित होता है। किंतु मराठी नव कविता आस्थावान आस्तिक और अध्यात्म सम्मुख दिाखई देती है। वह कवि मर्ढेकर तथा अन्य नवकवि की अध्यात्म सन्मुखता का विवेचन करते हुए अक्षयकुमार काळे लिखते हैं-"संकीर्ण अनुभूति विश्व से व्यापक अनुभूतिविश्व की ओर यात्रा करने की मर्ढेकर की मानसिक क्षमता असाधारण थी। प्रचंड विश्व व्यापार और उसमें व्यक्तिमात्र का स्थान यह मर्ढेकर चिंतन का विषय रहा। उनकी अनुभूति के दो केंद्र स्पष्ट हैं। प्रथम मर्ढेकर ने संपूर्ण मानव जीवन पर आई क्षुद्रता की परिवर्तन गामी दरिद्रता का चित्र अंकित किया और दूसरा मूल की ईश्वर विषयक सश्रद्धा संदेहों के हिलोरों से विदग्ध होकर अंतिमतः संपूर्ण शरणागत होकर उनकी कविता में अभिव्यक्त हुई है।"[476] अतः इससे कवि आस्था-अनास्था-शरनागतता की यात्रा करता है। वह अपनी यात्रा अपनी मानसिक एवं युगीन परिस्थितियों विचारधाराओं के आधार पर करता है। कवि की अनुभूति गत्यात्मक परिवर्तनानुगामी है। कवि मर्ढेकर अनास्था प्रकट कर अपनी कविता में आस्था के बिंदु प्रकट करते हुए लिखते हैं-

"तुझ्या साठी देवा। काय म्या झुरावे
झुरळाने कैसे। पतंगावे।।
साधुसंत जेथे। बैसले निष्ठत
मना कष्टवित। अहोरात्र।।

---

[476] अर्वाचीन मराठी काव्यदर्शन, अक्षयकुमार काळे-पृ.414, 415

काय तेथे माझी। लांडी धडपड

किरटी पकड। भावनेची।।

काय बोलूं आता। उघड नाचक्की

अंतराल पडी। बोळवण।।"   - मर्ढेकरांची कविता

"भंगु दे काठिण्य माझे,

आम्ल जाउ दे मनीचे;

येउ दे वाणींत माझ्या,

सूर तुझ्या आवडीचे।

लोभ जीभेचा जळुं दे

दे थिजु विद्वेष सारा,

द्रोपदी चे सत्व माझ्या

लाभुं दे भाषा-शरीरा। (मर्ढेकर-मर्ढेकरांची कविता)

नयी कविता समान ही उसकी काव्य भंगिमा विविध आयामी है। कवि की अपनी अभिव्यक्ति को व्यक्त करने की शैली महत्वपूर्ण है। हिंदी 'नयी कविता की कथ्य भंगिमा' पर विचार करते हुए प्रभाकर क्षोत्रिय लिखते हैं-"नयी कविता की यह अत्यन्त महत्वपूर्ण विशेषता है कि इस धारा में कथ्य का वैविध्य हिंदी की अन्य किसी भी काव्यधारा की तुलना में सबसे अधिक है। यह कवियों के आंतरिक वैविध्य और सृजनान्वेषण का प्रमाण है कि नये कवि ने कथ्य के नये नये क्षत्रों और अनेकानेक रंगस्पर्शों (शेड्स) से अपने काव्य जगत को सदा ताजा और पुलकित बनाये रखा। अगर किसी युग में कथ्य के स्तर पर एक-सा पन दिखाई दे तो मानना चाहिए कि या तो कवियों के रिश्ते किसी साहित्य या साहित्येतर अनुशासन से है या उनमें छद्म अनुकृति पनप रही है अथवा अपने परिवेश और अंतर्जगत से उनका संबंध गडबड़ाए हुए है या वे कोई कष्ट या संप्रदाय का निर्माण करना चाहते हैं। सौभाग्यवश नये कवियों के साथ सामान्यतः ऐसी दुर्घटनाएँ नहीं घटीं। तार सप्तक में ही उनकी रुचियों, काव्य प्रवृत्तियों, शिल्प विधाओं और सृजनात्मक विकल्पों का खासा वैविध्य देखा गया था,

जो निरंतर बढ़ता रहा।"[477] नयी कविता का कवि अपनी कथ्य भंगिमा को विविध प्रतीकों, बिंबों के माध्यम से अभिव्यक्त करता है और उसकी यह संपूर्ण अभिव्यक्ति का केंद्र समाज और समाज का सहज, लघुमानव है। इस संदर्भ में नयी कविता की केंद्र बिंदु के रूप में लघुमानव की प्रतिष्ठा है। अपने युगीन जीवन के साथ कवियों ने विविधांगी अभिव्यक्ति दी है, जिसकी विषय वस्तु और कथ्य भंगिमा व्यापक है। मराठी नवकविता की कथ्य भंगिमा का विवेचन करते हुए अक्षयकुमार काळे लिखते हैं- "सामान्य जीवनदर्शन की व्यापकता को देखते हुए इस कविता पर 'लघुमानव' की प्रतिष्ठापना का आरोप किया जाता है। सतही मानवी मन की अनुभूति की अपेक्षा अंतःमन में छिपी चित्र विचित्र गूढ़ अनुभूतियों की अभिव्यक्ति करने में इन कवियों की रुचि है। वर्ण्य विषय के संबंध में कोई भी संकेत, बंधन के पालन की आवश्यकता इन कवियों को महसूस न होने के कारण लैंगिक अनुभूतियों से यांत्रिक अनुभूतियों की अभिव्यक्ति तक क्षेत्र व्यापक बना। प्रचलित नीति-मूल्यों को इस कविता ने झुठला दिया। नैराश्य और विकलता इस कविता का स्थायी भाव है।"[478] इस संदर्भ के आधार पर हम उभय कविता की विषयवस्तु और कथ्य भंगिमा का विवेचन करें तो दोनों काव्यांदोलनों के कवियों में व्यापक समानता दिखाई देती है। इस संदर्भ में युगीन परिस्थितियों, सामाजिक, राजनीतिक, दर्शन एवं मान्यता तथा व्यक्ति का जीवन दर्शन आदि इस के कारण माने जा सकते हैं। सारांश रूप से हिंदी नयी कविता और मराठी नव कविता की विषय वस्तु और कथ्य भंगिमा के साम्य-वैषम्य तथा व्यतिरेक को हम उपर्युक्त विवेचन से समझ सकते हैं।

6.7 भाषा एवं शिल्प के स्तर पर तुलना

साहित्य जनता की चित्तवृत्ति का संचित प्रतिबिंब है और इस प्रतिबिंब का माध्यम भाषा है। भाषाई संरचना के आधार पर व्यक्ति, समाज अपनी अनुभूतियों को अभिव्यक्त करता है। भाषा मानसिक अनुभूतियों के अभिव्यक्ति का माध्यम है। आधुनिक हिंदी मराठी साहित्य की भाषिक संरचना और साहित्य के शिल्प पक्ष का तुलनात्मक विवेचन करते हुए हमें ज्ञात होता है कि उभय साहित्य पर

---

[477] नयी कविता की कथ्य भंगिमा, प्रभाकर क्षोत्रिय, मधुमती-पृ.6, अंक-10, वर्ष 1977
[478] मराठी कविता: परंपरा आणि नवता, सं.रविंद्र शोभणे

विविध साहित्यिक दर्शनों का प्रभाव पड़ा और साहित्य की विचारधारा अपनी गति के साथ नित्य नूतन परिवर्तित होती रही। दोनों साहित्य के कवियों की नव चेतना उनकी भाषा संरचना की नवीनता काव्य शिल्प में दिखाई देती है। नयी कविता की भाषा और शिल्प पक्ष पर विचार करते हुए उसके शिल्प पक्ष की परिवर्तनता के बारे में 'बैजनाथ सिहल' लिखते हैं-"अनुभूति के संप्रेषण में कवि को अनुभूति की संदर्भ सापेक्षता में भाषा, बिंब, प्रतीक अथवा छंद इत्यादि की आवश्यकता का अनुभव होता है। कवि की अनुभूति जितनी अधिक अधुनातन मूल्यों के प्रति सचेत अथवा जवाब देही होगी, उसकी यथावत अभिव्यक्ति उतने ही नये शिल्प की आग्रही होगी। इसका कारण यही है कि नयी संवेदनाओं अथवा संदर्भों को अभिव्यक्ति करने में प्राचीन शिल्प असमर्थ होता है। शिल्प रचना की आंतरिक अवस्था की देन होता है। वस्तु पक्ष के अनुरूप न होने पर शिल्प को गढ़ कर नहीं थोपा जा सकता। वस्तुगत संदर्भों में ही शिल्प को सौंदर्य प्राप्त होता है। इसलिए प्रत्येक नई धारा को नए शिल्प की आवश्यकता होती है। इसका सामायिक प्रमाण तो यह है कि प्रयोगवाद और नयी कविता से संबद्ध काव्यांदोलनों में विषय वस्तु के प्रति परिवर्तन की अनुरूपता में हम उनके शिल्प में भी अंतर देखते हैं।"[479] अतः इस संदर्भ में हम कह सकते हैं कि अपनी अनुभूति को अभिव्यक्त करने के लिए कवियों ने नई भाषा संरचना की अर्थात् नए शिल्पगत प्रयोग किए हैं। इस संदर्भ में मराठी नव कविता पर विचार करते हुए रणसुभेजी लिखते हैं-"मर्ढेकर अपनी काव्यानुभूति के प्रति सर्वाधिक इमानदार थे। मानवीय मन के सूक्ष्मतम स्तर तक वे पहुँचना चाहते थे। इस कार्य में उन्हें अद्भुत सफलता मिली। मूल्यों के विघटन से, कृत्रिमता से, स्त्रीत्व की भयावह स्थिति से वे चिंतित थे। 'आणखी काही कविता' में उनकी जीवन दृष्टि अधिक स्पष्ट हो गई है। सत्य और शब्द का यहाँ अद्भुत समन्वय है। भाषा पर जबरदस्त अधिकार है। भाषा में अधिक कसावट है। इसके पूर्व जो मराठी काव्य में चमत्कार मिलता है, उसका यहाँ अभाव है। कम से कम शब्दों में अधिक से अधिक अर्थ व्यक्त किया गया है। भाषा में व्यंजनात्मकता की अद्भुत शक्ति आ गई है। पुराने उपमान की अपेक्षा नए उपमान हैं। काव्य बिंबों में नवीनता है। इस सारी नवीनता के मूल में काव्य की नवीनता है। उलझे हुए मनुष्यों को

---

[479] नयी कविता का इतिहास, बैजनाथ सिंहल-पृ.184

परंपरागत भाषा, प्रतिमान अथवा बिंब के सहारे व्यक्त करना असंभव था। कथ्य की विशिष्टता के कारण शिल्प अपने आप बदलता चला गया है। मर्ढेकरजी ने कविता को शीर्षक देने की परंपरा को भी तोड़ दिया है। अंतिम संग्रह में कविताओं के शीर्षक नहीं दिए गए हैं। पुराने अभंग छंद में उन्होंने नवीन कथ्य को ढाल दिया है। उनकी कविता छंदोबद्ध है।"[480] स्पष्ट है कि हिंदी नई कविता और मराठी नव कविता के कवियों ने अपनी वर्तमान युगीन अनुभवों को अभिव्यक्त करने के लिए नए उपमान और बिंबों की आवश्यकता महसूस की अर्थात् नवीन काव्य शिल्प पर विचार किया तथा परंपरा से मुक्त होकर नवीन भावबोधों की अभिव्यक्ति नवीन शिल्प गढ़कर की। इस संदर्भ में उल्लेखनीय है कि हिंदी में अज्ञेय द्वारा नवीन अभिव्यक्ति के लिए नवीन उपमान पक्ष पर बल दिया गया। उसी प्रकार मराठी साहित्य की नवकविता धारा में मर्ढेकर द्वारा नवीन भावनाओं के अनुभूति की अभिव्यक्ति के लिए नवीन काव्य शिल्प पर जोर दिया गया। कवि मर्ढेकर की कविता शिल्प के आधार पर विविधांगी है, और उनका प्रभाव ग्रहण करनेवाले कवियों की अनुभूति भी इसी प्रकार दिखाई देती है। अतः इस संदर्भ में हिंदी साहित्य में प्रयोगवाद का आंदोलन आरंभ हुआ जो तारसप्तक (1943) अज्ञेय के नेतृत्व में विकसित हुआ। इसी रूप में यह प्रयोगवादी आंदोलन मराठी की नवकविता आंदोलन में ही अंतर्निहित है। शरत्चंद्र मुक्तिबोध ने मराठी नव कविता की विशेषता पर विचार करते हुए कहा है-"आज की कविता का प्रमुख वैशिष्ट्य उसका प्रयोगवादी होना है। मर्ढेकर द्वारा किए गए प्रयोगों का एक विशिष्ट उद्देश्य था। उन प्रयोगों द्वारा उन्हें एक विशिष्ट/अलग आशय व्यक्त करना था।"[481] इससे स्पष्ट होता है कि शिल्प के संदर्भ में प्रयोग उभय साहित्य के नव कवियों ने किया और दोनों का उद्देश्य अपनी अनुभूति की नवीन वास्तविकता को उसके मूल रूप में अभिव्यक्त करना था। इसी को इंगित करते हुए मुक्तिबोध आगे लिखते हैं-"अनुभूति को उसके संपूर्ण पार्थिव रूप में व्यक्त करने की इच्छा कविता के आशय में नवीनता लाएगी इसमें कोई संदेह नहीं। उसका परिनाम अनिवार्य रूप से अनुभूति को वहन करनेवाले प्रतिमा तंत्र पर होगा ही। बिंब

---

[480] आधुनिक मराठी साहित्य का प्रवृत्तिमूलक इतिहास, सूर्यनारायण रणसुभे-पृ.40, 41

[481] नवी मळवाट, शरत्चंद्र मुक्तिबोध-पृ.45 (प्रस्तावना)

प्रतिमाओं का अलंकरण मूल्य (decorative value) कम होकर बिंब, प्रतिमाओं के द्वारा अनुभूति की पीड़ा तीव्र होकर उसका स्वरूप अपनी संपूर्ण पार्थिवता में प्रकट हो तथा इन प्रतिमाओं द्वारा जीवन के विविध वातावरण, चेतन-अवचेतन अवस्थाओं का जागरण रसिकों के मन में करके उन्हें समग्र अनुभूति की समझ हो यह बिंब तंत्रों का उद्देश्य है।"[482] स्पष्ट है कि नवकवि अपने काव्य में बिंब एवं प्रतीकों का उपयोग काव्य की शोभा बढ़ाने के लिए नहीं करता वरन् अपनी अनुभूति की तीव्र पीड़ा से पाठकीय संप्रेषण करने के लिए करता है। वह अपनी अनुभूति की तद्रूपात्मक संप्रेषणता के लिए बिंब प्रतिमाओं का काव्य में उपयोग करता है। यहाँ कविता का शिल्प अलंकरण को अधिक महत्व देकर विकसित नहीं होता बल्कि अनुभूति की प्रामाणिकता पर बल देता है। इसी मंतव्य के अनुरूप गिरिजाकुमार माथुर लिखते हैं-"आधुनिक संवेदना के अनुरूप नयी रचनाओं का आरंभ ऐतिहासिक अनिवार्यता के कारण हुआ। छायावादी रूपाकार और संवेदना दृष्टि अनुपयुक्त और अपर्याप्त हो चुकी थी। युग यथार्थ के समक्ष उसकी कल्पना प्रधानता और भावुक रोमानवाद एक व्यंग्य प्रतीत होता था। तत्कालीन नए कवि के सामने सार्थक अभिव्यक्ति की बहुत बड़ी समस्याएँ थीं। ... तत्कालीन नए कवि के मार्ग को प्रतिकूल परिस्थितियों ने हर ओर से अवरुद्ध कर रखा था। परिवर्तित भावबोध के अनुरूप न कोई उपकरण थे और न उनकी संकेत दिशाओं का कोई आभास ही था। भाषा, छंद, उपमान, प्रतीक, भावभूमियाँ सभी भस्मीभूत हो चुके थे। यहाँ तक कि काव्यगत संगीत तत्व और तुकांत तक रूढ़ हो गए थे।"[483] अर्थात् इस युग का तत्कालीन साहित्यिक वातावरण नवीन भावबोधों को अभिव्यक्त करने के अनुरूप नहीं था। कवि इससे विद्रोह कर अपनी अनुभूति की अभिव्यक्ति के लिए नए शिल्प तत्व की खोज कर रहा था। कवि अपनी कविता को वायवी या आदर्श का रूप न देकर उसे मानवीय वास्तविकता के धरातल पर अभिव्यक्त करना चाहता था। इस संदर्भ में जगदीश गुप्त का मंतव्य सटीक है, उनके अनुसार "मैं कविता को मानवीय चेतना की अर्थपूर्ण अभिव्यक्ति का श्रेष्ठतम रूप मानता हूँ। उसे मनुष्यमात्र की मातृभाषा कहा गया

---

[482] नवी मळवाट, शरत्चंद्र मुक्तिबोध-पृ.105

[483] नयी कविता: सीमाएँ और संभावनाएँ, गिरिजाकुमार माथुर-पृ.6

है। जीवन के गहन से गहन पहलुओं तक उसकी व्याप्ति है। इसीलिए जीवन की अनल गहराइयों में होनेवाले परिवर्तनों की छाया साहित्य में सबसे पहले कविता पर ही पड़ती है। युग मानस के सूक्ष्मतम आवर्तनों-विवर्तनों का परिचय शब्दों, अर्थों, भावों और विचारों के नए संतुलन से मिलता है।"[484] ... भावना को नया स्तर प्रदान करते हुए नयी कविता का लक्ष्य आधुनिक चेतना एवं संवेदना से संपन्न व्यक्तित्व की प्रतिष्ठापना करना है। मैंने इसे नये मनुष्य की प्रतिष्ठा कहा है।"[485] इससे स्पष्ट है कि नयी कविता का शिल्प पक्ष नवीन मानवीय चेतना पर आधारित है। वह उसे अपनी संपूर्ण चेतना एवं संवेदना के साथ अभिव्यक्त करना चाहता है। इस प्रक्रिया में वह नवीन काव्य उपादानों का उपयोग सहज रूप से करता है।

नयी कविता अपनी अभिव्यक्ति में बिंब और प्रतीकों को अधिक प्राथमिकता देती है। इस संदर्भ में केदारनाथ सिंह का कथन है-"कविता में मैं सबसे अधिक ध्यान देता हूँ बिंब विधान पर। (तीसरा सप्तक)। इस संदर्भ में रामस्वरूप चतुर्वेदी का कविता की भाषा के संदर्भ में मंतव्य है- "कविता की भाषा का केंद्रीय तत्व भाव चित्रों अथवा बिंबों का विधान है।"[486] बिंब विधान सामान्य पाठक के लिए दुर्बोध होते रहे। यह आरोप उभय दोनों कविता पर लगाए गए। इस संदर्भ में नामवर सिंह लिखते हैं-"आज की कविता अपनी प्रकृति में अब तक की बिंब विधान कविता से सर्वथा भिन्न है अथवा उसका झुकाव बिंब-भिन्न है। कवियों का कुछ ऐसा विश्वास हो चला है कि बिंब विधान सीधे सत्य कथन में बाधक है। इधर की अधिकांश बिंबवादी कविताओं को देखते हुए यह आशंका एकदम असंगत नहीं लगती। इसे विरोधाभास ही कहना चाहिए कि जब से कविता में बिंबों की प्रवृत्ति बढ़ी, सामाजिक जीवन के चित्र दुर्लभ हो चले।"[487] इसी रूप में मराठी नव कविता की काव्य-बिंब तथा प्रतिमाओं की दुर्बोधता पर विचार करते हुए रा.ना.वरखेडे जी का मंतव्य है-"नवकविता का अनुभव विश्व, कवियों की अनुभव अभिव्यक्ति की पद्धति और कविता की नवीन शैली के प्रयोग आदि से

---

[484] नयी कविता : स्वरूप और समस्याएँ, जगदीश गुप्त-पृ.180
[485] नयी कविता : स्वरूप और समस्याएँ, जगदीश गुप्त-पृ.219
[486] भाषा और संवेदना, रामस्वरूप चतुर्वेदी-पृ.18
[487] कविता के नए प्रतिमान, नामवर सिंह-पृ.132

काव्यात्मक दुर्बोधता निर्माण होती रही।"[488] इस संदर्भ में वसंत पाटणकर लिखते हैं-"अपने विशिष्ट अनुभव, संवेदनाओं की अभिव्यक्ति के लिए नवकविता ने विविध भाषिक प्रयोग किए। भाषा का विविधांगी प्रयोग, शब्दों का चुनाव, पदक्रम, वाक्य एवं पंक्तियों की संरचना आदि पर इसका प्रभाव पड़ा। अन्य सभी श्रद्धाओं का अस्वीकार करनेवाले इन कवियों की शब्द की शक्ति पर विशेष श्रद्धा दिखाई देती है। इस युग की काव्य भाषा में अधिक सजगता दिखाई देती है। इस संदर्भ में महत्वपूर्ण है कि कविता की शब्द संरचना विषयक पंरपरागत अवधारणाओं को मर्ढेकर एवं अन्य कवियों ने बदल दिया। विशेषतः लैंगिकता से संबंधित शब्द प्रयोगों में यह घटित हुआ। कहीं कहीं लिंग वाचक शब्दों का प्रयोग भी किया गया। ... विविध प्रकार के काव्यबाह्य मानने वाले शब्द, शब्द प्रयोग कविता की परिधि में लाए गए इससे कविता की अलग, नई शब्द संरचना विकसित होती रही।"[489] इस संदर्भ में स्पष्ट है कि उभय कवियों ने अपनी अनुभूति की अभिव्यक्ति को प्राचीन पारंपरिक काव्य शिल्प का अस्वीकार कर अपनी नवीन अनुभूति के आधार पर, शब्दक्रम, पद, पंक्तियों की संरचना तथा बिंब प्रतीकों की योजना कर एक नवीन पद्धति का काव्य शिल्प निर्माण किया। इसी संदर्भ में पाटणकर आगे लिखते हैं-"अनेक जटिल, पेचीदा अनुभूतियों के प्रत्यय एवं अंतर्मन से संबंधित वास्तविकता की अभिव्यक्ति के लिए मराठी नवकवियों ने बिंब, प्रतीक, मिथक आदि का आश्रय लिया। विविध प्रकार की संवेदनाओं का संकर करनेवाली नई प्रतीमाएँ, बिंब, इस युग में निर्माण हुए, अर्थात् कविता बिंबों की संघटना है, बिंब के अभाव में कविता का अस्तित्व नहीं है और बिंब अनिवार्य रूप से ऐंद्रिक संवेद्य होती है आदि धारणाएँ इस युग में विकसित हुईं। आधुनिक जीवन से सुसंगत नए बिंब, प्रतीकों का गठन किया गया और कविता की भाषा में प्रयोग होने लगा। नवकविता में भाषा के लय का प्रयोग भी किया गया। पारंपरिक 'छंद-लय' से निर्माण होनेवाली एकात्मकता, बद्धता टालने के लिए मुक्त छंद शैली का अवलंब किया गया।"[490] इससे स्पष्ट है कि

---

[488] स्वातंत्र्योत्तर मराठी कविता, सं.सुषमा करोगल-पृ.65
[489] स्वातंत्र्योत्तर मराठी कविता, वसंत पाटणकर-पृ.XXII
[490] स्वातंत्र्योत्तर मराठी कविता (1945-1960) वसंत पाटणकर-पृ.XXIII

इसी प्रकार की धारणा हिंदी की नई कविता के संदर्भ में है और कवियों ने अपनी अनुभूति की वास्तविक, यथार्थ अभिव्यक्ति पर बल देते हुए विविध प्रकार के प्रयोग किए गए जिनमें छंद का विरोध और मुक्त छंद का स्वीकार, ऐंद्रिक बिंबों की प्रचुरता, मिथकों का उपयोग तथा काव्यरूपों की विविधता के आधार पर काव्य रचना की गई। इस संदर्भ में स्फुट कविताएँ, लंबी कविताओं का तथा नाट्य काव्य का सृजन भी दोनों काव्यांदोलनों में किया गया। इस संदर्भ में कोलटकर की 'द्रोण' कविता तथा मुक्तिबोध की 'अंधेरे में' विशेष उल्लेखनीय है।

सारांश रूप से हम कह सकते हैं कि हिंदी और मराठी की नवकविता पर शिल्प के संदर्भ में अधिकतम साम्य दिखाई देता है क्योंकि उभय कवियों के चिंतन और अभिव्यक्ति पर यूरोपीय काव्यांदोलन का प्रभाव स्पष्ट है। अर्थात् दोनों की प्रेरणा और अभिव्यक्ति समान है। दोनों कवियों के देशकाल, वातावरण की अनुभूतियाँ, परिस्थितियाँ एवं मानवीय संवेदनाएँ समान ही थी। इस आधार पर दोनों में भाषिक संरचना, शब्द प्रयोग, काव्य पंक्तियों का रचनाक्रम बिंब प्रतीक-उपमान योजना और मुक्त छंद की अवधारणा आदि में समानता है। हिंदी और मराठी नव कविता पर व्यतिरेकी आधार पर विवेचन करने से हम पाते हैं कि मराठी की कविताएँ पूर्णतः छंद मुक्त नहीं है। मर्ढेकर आदि कवियों ने अपनी कविताओं में 'अभंग' छंद का प्रयोग कर अभिव्यक्ति की तथा छंदों के माध्यम से 'विडंबन' काव्य रचना की। किंतु हिंदी कविता में विडंबन, विरूपिका आदि का अभाव दिखाई देता है। स्पष्ट है कि उभय कवियों की भाषा एवं शैली के संदर्भ में समानता है। दोनों आंदोलनों के कवियों की युगीन धारणा थी कि वर्तमान शिल्प उनकी अभिव्यक्ति के लिए अधूरा है और अपनी वास्तविक यथार्थ अनुभूति की अभिव्यक्ति के लिए नवीन भाषा और शैली का विकास करना आवश्यक है। इसी आधार पर उन्होंने काव्य भाषा में सामान्य बोलचाल की भाषा के प्रयोग के साथ प्रतीक एवं बिंबों का प्रयोग किया। जो दोनों के चिंतन में स्पष्ट परिलक्षित होता है।

6.8 अर्थ लय की अवधारणा के स्तर पर तुलना

आधुनिक हिंदी-मराठी की नवकविता पर विचार करते हुए स्पष्ट होता है कि उभय साहित्य के 'नव कविता आंदोलन' की प्रेरणा एवं प्रभाव के संस्कार समान हैं। इस प्रभाव को हम पाश्चात्य विचारधारा से प्रेरित तथा विकसित नवीन साहित्य चिंतन की धारा कह सकते हैं। हिंदी और मराठी

की नवकविता आधुनिक युग से प्रभावित वह काव्यधारा है जो अपनी वर्तमान संवेदनाओं की अभिव्यक्ति वर्तमान भाषा में, नवीन भावबोधों की अभिव्यक्ति करने के लिए उभय साहित्य के कवियों ने काव्य भाषा में परिवर्तन कर अपनी संवेदनात्मक अभिव्यक्ति के अनुरूप काव्य भाषा का विकास किया। यह काव्य भाषा, प्रतीक, बिंब, छंद मुक्तता, लयबद्धता, गेयता, विडंबन आदि के रूप में साकार हुई। इस संदर्भ में प्रतीक, बिंब, शब्द और नए अर्थ लय पर विचार किया गया और इन सभी काव्य उपादानों को नए अर्थ लय में ढालने की कोशिश की गई। इस संबंध में 'अर्थ लय' पर विचार करते हुए जगदीश गुप्त लिखते हैं-"अर्थ की लय का प्रश्न नयी कविता के रूप-विधान से संबंध रखता है। ... 'शब्द' और 'अर्थ' तत्वतः पृथक सत्ता रखते हैं। संगीत में शुद्ध शब्द ध्वनि एवं नाद रूप में ग्रहित होता है। अर्थ से असंपृक्त निरपेक्ष इसी प्रकार लिपि में तथा अन्य संकेत विधियों में 'अर्थ' शब्द निरपेक्ष होकर अवतरित होता है। शब्द श्रवणीय है, अर्थ बुद्धिग्राह्य। वाणी और साहित्य में ही आकर शब्द और अर्थ दोनों अन्योन्याश्रित, असंपृक्त तथा अभिन्न अवस्था प्राप्त करते हैं। शब्दार्थ के युगनद्ध एक प्राण हो जाने में ही साहित्य की सार्थकता है। 'वागर्थो-विव संपृक्तौ' तथा 'गिरा अरथ जल-बीचि सम' जैसी उक्तियाँ केवल साहित्य अथवा काव्य को लक्षित करके ही लिखी गयी है।"[491] अर्थात् जगदीश गुप्त जी शब्द और अर्थ के समन्वय पर बल देते हैं। उनके अनुसार शब्द और अर्थ के समन्वय से ही साहित्य का निर्माण होता है। इसी संदर्भ में मराठी कवि बा.सी.मर्ढेकर का विचार है-"कोई साहित्यिक रचना जब अर्थपूर्ण लयतत्व से नियंत्रित होती है तभी उसे कलाकृति कहना होगा।"[492] लय तत्व की अवधारणा को विश्लेषित करते हुए वे वस्तु साहित्य संबंध पर बल देते हैं। उनके अनुसार "वस्तु-वस्तुओं के अनेक संबंध रह सकते हैं, उसी प्रकार विभिन्न वस्तु और विभिन्न संबंधों का संबंध भी विविध प्रकार के रह सकते हैं। किंतु विभिन्न संबंधों का परस्पर संबंध दो प्रकार का ही रहता है। विभिन्न संबंध एक-दूसरे से सुसंगत (Coherence) तत्व से संबद्ध होते हैं अथवा लयतत्व से। पहले प्रकार में यह संबंध तर्काधिष्ठित

---

[491] नयी कविता : स्वरूप और समस्याएँ, जगदीश गुप्त-पृ.85

[492] कला आणि मानव, बा.सी.मर्ढेकर-पृ.65

तो दूसरे संबंध में यह सौंदर्याधिष्ठित रहते हैं।"[493] ... लय एक प्रकार का संबंध है और वह केवल दो अथवा अधिक संबंधों में रहता है... अनुभव लय निष्ठ रहता है और उस अनुभव में केवल विविध संबंध परस्पर संबंधित होते हैं। अनुभव का एक गुण इस दृष्टि से लय का केवल अनुभव ले सकते हैं। उसका अन्य गुणों में विश्लेषण नहीं कर सकते।"[494] मर्ढेकर के अनुसार कविता की अर्थलय की अवधारणा 'अनुभव' का एक 'गुण' के रूप में है। इसी प्रकार लय के विषय में विवेचन करते हुए रामस्वरूप चतुर्वेदी 'अनुभव चित्र' पर बल देते हैं जो कि प्रकारांतर से समान विश्लेषण है। वे लिखते हैं-"मनुष्य जीवन की नियति को उसके समूचे विस्तार में देखना और प्रासंगिक बनाए रखना रघुवीर सहाय के कवि कर्म का केंद्रीय तत्व है। उनके दोनों आरंभिक संकलन 'सीढ़ियों पर धूप में' तथा 'आत्महत्या के विरुद्ध' इस दृष्टि से नयी कविता की सर्वथा नई क्षमता के सूचक हैं। 'सीढ़ियों पर धूप में' के अनुभव चित्र अपेक्षतया कोमलतर हैं, जबकि दूसरे संकलन में तो समस्त समकालीन जीवन राजनीति के अनेक विकट रूप को साथ लिए अंकित हुआ है। अकिंचन और सामान्य अनुभव की सार्थकता, पर कोमल रूप में, इस कविता में दृष्टव्य है।"[495] अर्थात् 'अनुभव चित्र' के माध्यम से वे वर्णन और अर्थ लय की अभिव्यक्ति मानते हैं। साहित्य में केवल शब्द और पदबंध ही अर्थ प्रदान नहीं करते बल्कि शब्दों और पदबंधों की रचना और उनकी लयात्मक अन्विति से अर्थ स्पष्ट होता है ऐसा मर्ढेकर का मानना है। उनके अनुसार "साहित्य में शब्दों और पदक्रमों के साथ भाव और अर्थ की अभिव्यक्ति होती है। उसे समझने के लिए शब्द और पदक्रम का अभ्यास आवश्यक है। उन्हीं के शब्दों में-"साहित्य में हमें जिन वस्तुओं का साक्षात अनुभव होता है वह वस्तु अर्थात् मुद्रित अथवा उच्चरित शब्द और उसके पदक्रमनिष्ठ संबंध, साहित्य में अभिव्यक्त भावसंबंधों का आकलन करने के लिए हमें भाषा और साथ ही शब्द और पदक्रम (syntax) के द्वारा होनेवाली भावना संबंध अभिव्यक्ति का अभ्यास करना पड़ेगा।"[496] इस क्रम में वे सादृश्य संबंधों की अर्थलयात्मकता के

---

[493] कला आणि मानव, बा.सी.मर्ढेकर-पृ.66
[494] कला आणि मानव, बा.सी.मर्ढेकर-पृ.66, 67
[495] हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास, रामस्वरूप चतुर्वेदी-पृ.237
[496] कला आणि मानव, बा.सी.मर्ढेकर-पृ.69

संबंधों को विश्लेषित करते हुए वे लिखते हैं-"विविध प्रकार के परस्पर संबंधों से, लयनियमानुसार एक दूसरे में गुंफित भावात्मक एक संपूर्ण आकृतिबद्ध निर्माण करने वाले वाक्यों से साहित्यकृति निर्माण होती है। स्वयं के प्रति वात्सल्य और माता-पिता के प्रति प्रेम आदि का लयबद्धता संवादनियम पर आधारित रहेगी। प्रीति और द्वेष अपने विरोध नियमों का दर्शन देगी। गंभीर और हास्यकारक अथवा चुटकुलों के प्रसंग अदल बदलकर आएँगे तो उससे साधारणतः समतोल नियम का दर्शन होगा। ... भावना संबंधों के एक दूसरे में मिलने का यह एक साधारण उदाहरण है। इनके आकृतिबंध को जन समृद्ध व्यामिश्रता मिलेगी तब साहित्य कृति अमर होगी।" इसी प्रकार मर्ढेकर साहित्य कृति की लय संरचना पर बल देते हुए लिखते हैं कि-"कोई भी साहित्य कृति एक पूर्ण आकृतिबंध एक 'झटितिप्रतीत समग्राकृति' (Instantaneous.Gestalt) एक लयबद्ध संरचना के रूप में दिखाई देनी चाहिए। इस पूर्ण आकृतिबंध के सभी अवयव संवेदना में अथवा कल्पना में एक ही बार दिखाई देने चाहिए। साहित्य की ओर जिस लयनिष्ठ संकल्पना से देखने का मैं पुरस्कार कर रहूँ उसमें और अरस्तु के दृष्टिकोण में यह अंतर है कि "अगर लयतत्व की अनुभूति करनी है तो लयबद्ध पूर्णत्व के सभी घटकों को जान लेना आवश्यक है।"[497] इस संदर्भ में स्पष्ट है कि मराठी कवि, समीक्षक बा.सी.मर्ढेकर कवि के संपूर्ण अनुभव तत्व एवं उन अनुभव तत्वों के समग्र पारस्परिक संबंधों की अभिव्यक्ति को लयतत्व मानते हैं। जो अर्थ का विस्फोट करती है साथ ही पाठक को एक नवीन लय-तुक का अनुभव कराते हुए बोधित करती है। इस संदर्भ में जगदीश गुप्त जी की धारणा है-"लय, गति और यति के पारस्परिक संधान से निष्पन्न होती है। यति विरामात्मक और कलासापेक्ष होती है। अतएव लय भी तात्विक दृष्टि से आवृत्तिमूलक और कलासापेक्ष सिद्ध होती है। 'लयतत्व आणी संगीत' शीर्षक लेख में मराठी विचारक अरविंद मारूलकर ने इस तथ्य की ओर स्पष्टता से निर्देश किया है। (लय कालसापेक्ष रहती है, कारण लय के नियम, विराम, कालतत्वानुसार रहते हैं। छंद जून 56, पृ.208) उन्हीं ने लय तत्व को अमर्त, स्वयंभू और स्वतंत्र मानते हुए उसको एक अत्यन्त महत्वपूर्ण विशेषता 'संभरण शक्ति' की ओर भी निर्देश किया है। कविता तथा अन्य ललित

---

[497] कला आणि मानव, बा.सी.मर्ढेकर-पृ.75

कलाओं में लयतत्व की इतनी महत्ता वस्तुतः उसकी इसी शक्ति के कारण रही है।"[498] अर्थ की लय के संदर्भ में वे हॉपकिन्स की "रनिंग रिदम और स्वर रिदम पर बल देते हैं। कविता की सृष्टि छंद से नहीं होती वरन उस सहज आवेगपूर्ण सजीव विचार से होती है जिसमें अपना स्वयं का आवयाविक संगठन होता है।"[499] इसी प्रकार जी.एच.लीविस ने 'द इनर लाइफ ऑफ आर्ट' में कविता और लय के घनिष्ठ मौलिक संबंध का निर्देश करते हुए शब्दों की लय के समानांतर भावनाओं की लय की स्थिति भी स्वीकार की है। कविता में भावनाओं की लय प्रकारांतर से अभिव्यक्त होकर 'अर्थ लय' का रूप धारण कर लेती है। उक्त कथन में सरलता से इतना और जोड़ा जा सकता है। इस क्रम में और भी अनेक काव्य चिंतकों के मत उद्धृत किये जा सकते हैं पर मैं समझता हूँ कि अर्थ की लय संबंधी मूल स्थापना की आधार भूमि का आभास देने के लिए इतने पर्याप्त है। जिस प्रकार ध्वनि अथवा शब्द खंडों का फिर फिर कर आना क्रमिक रूप से लय के विभिन्न प्रकारों को जन्म देता है। उसी प्रकार अर्थ खंडों का क्रमिक ग्रथित आवर्तन प्रत्यावर्तन अर्थ की लय के विविध रूपों की सृष्टि करता है। शब्द की लय की जितनी विधाएँ कविता में व्यवहृत होती हैं उन से कई गुनी अधिक विधाएँ अर्थ के लय की रही हैं। केवल उन के पूरे स्वरूप को पहचानने का प्रयत्न अभी तक नहीं किया गया है। अनेक प्राचीन अर्थालंकारों की कल्पना लयाश्रित है। लक्षणा, व्यंजनादि अनेक शब्द शक्तियों के संश्लिष्ट व्यापार से अगणित अर्थों की निष्पत्ति साहित्य में मानी गई है जो यथार्थ है। उनके लयात्मक समन्वय के बहुसंख्यक प्रकार और प्रभेद हो सकते हैं। यह सोच लेना कठिन नहीं है पर आज मध्यकालीन शैली में भेदोपभेदों का जाल रच देना कविता के लिए उपादेय नहीं होगा। आवश्यकता मूल तत्व के पहचानने और ग्रहण करने की है। यह बलपूर्वक कहा जा सकता है-"'अर्थ की लय' की कल्पना साधार है।"[500]

---

[498] नयी कविता, स्वरूप और समस्याएँ, जगदीश गुप्त-पृ.85
[499] नयी कविता, स्वरूप और समस्या, जगदीश गुप्त-पृ.88
[500] नयी कविता, स्वरूप और समस्या, जगदीश गुप्त-पृ.89

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि लय और अर्थ लय की अवधारणा दोनों काव्य साहित्य में केंद्रित है। नव कवि अपनी भाषागत अभिव्यक्ति बिंब, प्रतीक के साथ काव्य में नए अर्थ लय को भी महत्व देता है। लय विषयक अवधारणा वह तुक से लेकर संगीत ध्वनि एवं अर्थ संबंधों की आवृत्ति-विवृत्ति तक व्याप्त है। मराठी के कवि आलोचक मर्ढेकर लय विषयक पाश्चात्य अवधारणा और भारतीय मान्यताओं के आधार पर 'अनुभव के आकृति बंध और अनुभव की विभिन्न सादृश्य संबंधों और अर्थ विवृत्ति को लय मानते हैं और वे कविता में शब्द क्रम, पदक्रम के साथ शब्दार्थ की विशिष्ट सत्ता को महत्व प्रदान करते हैं। शब्दार्थ का व्यवस्थित क्रम और उससे ध्वनित होनेवाली विभिन्न व्यंजना को लयात्मकता मानते हैं और इस लयबद्धता को वे अनुभवकृति से जोड़ते हैं। इसी रूप में जगदीश गुप्त की धारणा है उनके अनुसार कविता में शब्द और अर्थ तत्वतः पृथक सत्ता रखते हैं।' और यह सत्ता शब्द की ध्वनि संगीत एवं पारस्परिक अर्थ समन्वय पर निर्भर होती है। इस संदर्भ में वे भी पाश्चात्य साहित्य चिंतन से प्रभावित हैं किंतु उनका मानना है कि भारतीय साहित्य चिंतन तथा अलंकार विचार में भी इसका आधार है। तुलनात्मक दृष्टि से विचार करने पर उभय साहित्य के नव कविता आंदोलन में काव्य में नए अर्थ लय पर बल दिखाई देता है और दोनों की धारणा सम-समान इस रूप में है कि उभय साहित्य के विचारक काव्य में शब्द, ध्वनि और नए अर्थ लय के आधार पर अपनी अभिव्यक्तियाँ प्रदान करते हैं।

हिंदी नई कविता और मराठी नव कविता आंदोलनों का तुलनात्मक अध्ययन उपर्युक्त बिंदुओं के स्तर पर विवेचित करने से हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि उभय साहित्य की काव्यधाराएँ अपने युगीन सामाजिक, राजनीतिक एवं साहित्यिक गतिविधियों का विकसित रूप है। साहित्य जनता की चित्तवृत्ति एवं जनसमूह के हृदय का विकास है, यह इससे स्पष्ट होता है। भारतीय जनता की चित्तवृत्ति अपने युग के साथ कुछ प्रादेशिक भेद रखते हुए सम समान दिखाई देती है। अतः विचारधाराओं एवं साहित्यिक गतिविधियों में भी राष्ट्रीय एकता स्पष्ट होती है। हिंदी 'नई कविता' और मराठी 'नव कविता' के साहित्यिक आंदोलन की शुरुआत दोनों साहित्य में लगभग एक समान कालखंड में शुरू हुई। हिंदी प्रयोगवादी काव्य का विकास नई कविता में हुआ। उसी प्रकार सन् 1945 में मराठी नव कविता का आरंभ माना जाता है। दोनों साहित्य में इस आंदोलन के साहित्यिक नेता

क्रमशः अज्ञेय और बा.सी.मर्ढेकर थे और दृष्टव्य है कि उभय नेताओं ने अंग्रेज़ी साहित्य का अध्ययन किया था। अतः दोनों चिंतक साहित्यिकों पर अंग्रेज़ी साहित्यधारा का प्रभाव भी परिलक्षित होता है। इस आंदोलन की शुरुआत अपनी पूर्ववर्ती साहित्य धारा से अलग अपनी युगीन परिस्थितियों के आधार पर नवीन अभिव्यक्ति स्वरूप हुई। समाज की गतिविधियों के साथ साहित्य भी इस युग में गतिशील दिखाई देता है। उदय और विकास के स्तर पर विवेचन करने से स्पष्ट होता है कि दोनों साहित्यांदोलन की सामाजिक, राजनीतिक एवं साहित्यिक स्थिति तथा प्रेरणा एवं विचारधारा समान है। आंदोलनात्मक स्तर पर मराठी नव कविता स्वतंत्र है, वह स्वतंत्र कवियों की नवीन भावबोधात्मक स्थिति है, इसके विपरीत हिंदी नई कविता का व्यापक आयाम दिखाई देता है, जिसके साथ प्रयोगवाद, परिमल संस्था और 'नई कविता' पत्रिका का पक्ष मजबूत दिखाई देता है जिसका अभाव मराठी नव कविता के संदर्भ में परिलक्षित होता है। उभय साहित्य की नयी कविता के पार्श्व में पाश्चात्य काव्यांदोलनों का प्रभाव स्पष्ट है जिस पर न्यू राईटिंग, अस्तित्ववाद, मार्क्सवाद, मनोविश्लेषणवाद, बिंबवाद, प्रतीकवाद आदि का प्रभाव समान रूप से दिखाई देता है और दोनों काव्यधारा में इसका स्वरूप स्पष्ट रूप से उभरकर आता है। सामाजिक परिवेश के आधार पर विचार करने से स्पष्ट है कि उभय कविताओं का केंद्र सामान्य, लघु मानव है और समाज की विसंगति और विडंबना तथा व्यक्ति की सत्ता पर विचार अभिव्यक्त हुए हैं। नई कविता और नवकविता किसी विषय विशेष पर केंद्रित नहीं है। दोनों काव्यधारा के कवियों ने विषय को व्यापक मानते हुए अनेक विषयों को कविता का आधार बनाया। दोनों काव्यधाराएँ बिंब को महत्वपूर्ण मानती हैं और कविता में मुक्त छंद के साथ अर्थवक्रता और अर्थलय को महत्वपूर्ण मानते हुए शब्द की महत्ता प्रतिपादित करते हैं।

* * *

संदर्भ एवं आधार ग्रंथ सूची

संदर्भ एवं आधार ग्रंथ सूची

हिंदी ग्रंथ

क्र.सं.	संदर्भ ग्रंथ का नाम	लेखक का नाम व प्रकाशक
1	अज्ञेय के निबंध	डॉ.सच्चिदानंद चतुर्वेदी, मिलिंद प्रकाशन, 4-3-178/2, कन्दास्वामी बाग, हनुमान व्यायामशाला की गली, सुल्तान बाज़ार, हैदराबाद-500095, प्र.सं.2009
2	अज्ञेय की काव्य तितिषा	नंदकिशोर आचार्य, सूर्यप्रकाशन मंदिर, बिकानेर, प्र.आ.1970
3	अनुक्षण	प्रभाकर माचवे, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, वाराणसी, प्र.सं.1967
4	आधुनिक साहित्य की प्रवृत्तियाँ	नामवर सिंह, लोकभारती प्रकाशन, 15-ए, महात्मा गाँधी रोड, इलाहाबाद-1, नवीन संस्करण-2004
5	आधुनिक हिंदी साहित्य	सचिदानंद वात्सायन, राजपाल एंड सन्ज़, काश्मीरी गेट, दिल्ली, प्र.सं.1976
6	आधुनिक हिंदी आलोचना के बीज शब्द	बच्चन सिंह, राधाकृष्ण प्रकाशन, 2 अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली-110002, प्रथम संस्करण-1983
7	आधुनिक मराठी साहित्य का प्रवृत्तिमूलक इतिहास	सूर्यनारायण रणसुभे, ग्रंथम, रामबाग, कानपुर-12, सं.1976
8	आधुनिक हिंदी साहित्य का इतिहास	अमरप्रसाद जायस्वाल, कल्पना प्रकाशन, उड्डाण पुल के समीप,

		शिवाजीनगर, नांदेड-02
9	आधुनिक हिंदी कविता : विकास के आयाम	नीरज ठाकुर, चिंता प्रकाशन, गिलानी, राजस्थान-333031, प्र.सं.1986
10	आधुनिक हिंदी काव्य में प्रवृत्तिमूलक दार्शनिकता	सुशीला गुप्ता, लोकभारतीय प्रकाशन, 15 ए, महात्मागाँधी मार्ग, इलाहाबाद-1, प्र.सं.1981
11	आलोचना का द्वंद्व	देवीशंकर अवस्थी, वाणी प्रकाशन, 2/ए, दरियागंज, नई दिल्ली-110002, प्र.सं.1999
12	आधुनिक हिंदी कविता (आत्मनिर्वासन और अकेलेपण का संदर्भ)	प्रो.डॉ.सुवास कुमार, भारतीय विद्या प्रकाशन, 1 यू.बी. बंगलो रोड, जवाहरनगर, दिल्ली-110007, प्र.सं.1989
13	आधुनिकता के पहलू	विपिन कुमार अग्रवाल, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद-1, प्र.सं.1972
14	आज के लोकप्रिय हिंदी कवि : गिरिजाकुमार माथुर	सं.डॉ.नगेंद्र, राजपाल एंड संस, दिल्ली, 1961
15	एक साहित्यिक की डायरी	ग.मा.मुक्तिबोध, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, नई दिल्ली, प्र.सं.1976
16	कविता के नए प्रतिमान	नामवर सिंह, राजकमल प्रकाशन प्रा.लि., 1-बी, नेताजी सुभाष मार्ग, नई दिल्ली-100002, छठी आवृत्ति-2003
17	कामायणी एक पुनर्विचार	मुक्तिबोध ग.मा., हिमांशु प्रकाशन, जबलपुर-1961
18	केदारनाथ सिंह : प्रतिनिधि कविताएँ	सं.परमानंद श्रीवास्तव, राजकमल प्रकाशन प्रा.लि., नई दिल्ली-02
19	कुआनो नदी	सर्वेश्वरदयाल सक्सेना, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली
20	कुछ और कविताएँ	शमशेर बहादुर सिंह, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, प्र.सं.1961
21	चर्चे और चरखे	सर्वेश्वरदयाल सक्सेना, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली

22	चूका भी नहीं हूँ मैं	शमशेर बहादुर सिंह, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, प्र.सं.1978
23	छायावाद	नामवर सिंह, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली
24	जनकवि	विजय बहादुर सिंह, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली
25	ठंडा लोहा तथा अन्य कविताएँ	धर्मवीर भारती, साहित्य भवन प्रकाशन, अलाहाबाद, प्र.सं.1952
26	धूप के धान	सर्वेश्वर दयाल सक्सेना, काशी भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, वाराणसी, 1958
27	धर्मवीर भारती की साहित्य साधना	सं.पुष्पा भारती, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली
28	नयी कविता ःसैद्धांतिक पक्ष (खंड एक)	सं.जगदीश गुप्त, रामस्वरूप चतुर्वेदी, विजयदेव नारायण साही
29	नयी कविता ःरचना पक्ष (खंड दो)	सं.जगदीश गुप्त, रामस्वरूप चतुर्वेदी, विजयदेव नारायण साही
30	नयी कविता ःकाव्य पक्ष (खंड तीन)	सं.जगदीश गुप्त, रामस्वरूप चतुर्वेदी, विजयदेव नारायण साही, लोकभारती प्रकाशन, 15-ए, महात्मा गाँधी रोड, इलाहाबाद-1, प्रथम संस्करण-2000
31	नए साहित्य का सौंदर्य शास्त्र	मुक्तिबोध, ग.मा., राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, 1971, प्र.सं.
32	नए कवि, एक अध्ययन, भाग-1 से 6	संतोष कुमार तिवारी, भारतीय ग्रंथ निकेतन, नई दिल्ली, प्र.सं.1991
33	नदी के द्वीप	अज्ञेय, सरस्वती प्रेस, दिल्ली, प्र.सं.1951
34	नयी कविता के प्रमुख हस्ताक्षर	संतोष कुमार तिवारी, जवाहर पुस्तकालय, मथुरा, प्र.सं.1980
35	नई कविता के प्रतिमान	लक्ष्मीकांत वर्मा, भारती प्रेस प्रकाशन, 10-दरभंगा रोड, इलाहाबाद, 1 श्रवण 2014

36	नई कविता का वैचारिक आधार	सुधीश पचौरी, राधाकृष्ण प्रकाशन, 2/38, अन्सारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली-110002, प्रथम संस्करण-1987
37	नयी कविता:सीमाएँ और संभावनाएँ	गिरिजाकुमार माथुर, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, संशोधित एवं परिवर्द्धित संस्करण-1973
38	नयी कविता की चेतना	डॉ.जगदीश गुप्त, सन्मार्ग प्रकाशन, 16, यू.बी.बै.लो रोड, दिल्ली-110007, दूसरा संस्करण-1978
39	नयी कविता का इतिहास	डॉ.बैजनाथ सिंहल, संजय प्रकाशन (अशोक विहार) दिल्ली-52, 26 जनवरी 1977
40	नयी कविता:सिद्धांत और सृजन	डॉ.नरेंद्रदेव वर्मा, वाणी प्रकाशन, दिल्ली-110007, प्र.सं.1978
41	नयी कविता का वैचारिक परिप्रेक्ष्य	जवरीमल्ल पारख, के.एल.पचौरी प्रकाशन, 8/डी ब्लॉक एक्स्टेंशन, इंदापुरी (लोनी), ग़ाज़ियाबाद, प्र.सं.1991
42	नयी कविता की चिंतन भूमि	डॉ.उषा कुमारी, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली-110002, प्रथम संस्करण-1997
43	नयी कविता : स्रोत और सिद्धांत	डॉ.विजय द्विवेदी, प्रगति प्रकाशन, बैतुल बिल्डिंग, आगरा-282 003, प्रथम संस्करण-1978
44	नयी कविता और नरेश मेहता	विमला सिंह, शिल्पी प्रकाशन, इलाहाबाद, प्र.सं.1997
45	नयी कविता और पौराणिक गाथा	रामस्वार्थ सिंह, क्लासिकल पब्लिशंस, नई दिल्ली, प्र.सं.1980
46	नयी कविता और उसका मूल्यांकन	सुरेश चंद्र सहल, आत्माराम एंड संस, नई दिल्ली, 1963
47	नयी कविता और सर्वेश्वर	ऋषिकल्प रमेश, भाषा प्रकाशन, नई दिल्ली, प्र.सं.1979
48	नयी कविता	नंददुलारे वाजपेयी,

		प्रकाशन संस्थान, नई दिल्ली, 1979
49	नयी कविता का परिप्रेक्ष्य	परमानंद श्रीवास्तव, नीलाभ प्रकाशन, इलाहाबाद, प्र.सं.1968
50	नयी कविता की प्रबंध चेतना	महावीर सिंह चौहान, गुजरात गिरणार प्रकाशन, प्र.सं.1981
51	नयी कविता : रचना प्रक्रिया	डॉ.ओमप्रकाश अवस्थी, पुस्तक संस्थान, 109/50 ए, नेहरू नगर, कानपुर-12, दिसंबर-1972
52	नयी कविता का आत्मसंघर्ष तथा अन्य निबंध	ग.मा.मुक्तिबोध, विश्वभारती प्रकाशन, नागपुर-11, द्वितीय संस्करण-1977
53	नयी कविता :स्वरूप और समस्याएँ	डॉ.जगदीश गुप्त, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, 9, अलीपुर पार्क प्लेस, कलकत्ता-27, प्र.सं.1969
54	नयी कविता :पुनर्मूल्यांकन	कु.उषारानी, रंजना प्रकाशन मंदिर, 12/13, सुई कटरा, आगरा, प्र.सं.1980
55	नयी कविता और अस्तित्ववाद	रामविलास शर्मा, राजकमल प्रकाशन प्रा.लि., 8, नेताजी सुभाष मार्ग, नयी दिल्ली-110002, प्र.सं.1978
56	नयी कहानी :संदर्भ और प्रकृति	सं.डॉ.देवीशंकर अवस्थी, राजकमल प्रकाशन प्रा.लि., 1-बी., नेताजी सुभाष मार्ग, नई दिल्ली-110002, पुनर्मुद्रित-2008
57	नयी कविता उद्‌भव और विकास	रामवचन राय, बिहार हिंदी ग्रंथ अकादमी, करमकुआँ, पटना-800003, प्र.सं.जून 1974
58	नयी कविता में मूल्य बोध	शशि सहगल, अभिनव प्रकाशन, 2/ए, दरियागंज, दिल्ली-110006, प्र.सं.1976
59	नयी कविता :निराला, अज्ञेय और मुक्तिबोध	सं.विद्या सिन्हा, वाणी प्रकाशन, 2/ए, दरियागंज, नई दिल्ली-110002, प्र.सं.2003
60	नया काव्य नए मूल्य	ललित शुक्ल, स्टेंडर्ड प्रकाशन, जी-126/2, स्ट्रीट नं.26,

		राजापुरी रोड,नई दिल्ली-59
61	नये साहित्य का सौंदर्यशास्त्र	ग.मा.मुक्तिबोध, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, वर्ष-1971
62	नयी कविता के प्रतिनिधि कवि	डॉ.राजपाल शर्मा
63	नयी कविताएँ एक साक्ष्य	रामस्वरूप चतुर्वेदी, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद-1, प्र.सं.1976
64	पल्लव	सुमित्रानंदन पंत, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1977
65	प्रतिनिधि कविताएँःरघुवीर सहाय	सं.सुरेश शर्मा, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली
66	प्रतिनिधि कविताएँःत्रिलोचन	सं.केदारनाथ सिंह, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली
67	प्रतिनिधि कविताएँःकेदारनाथ सिंह	सं.परमानंद श्रीवास्तव, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली
68	प्रतिनिधि कविताएँःशमशेर बहादुर सिंह	सं.नामवर सिंह, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली
69	प्रतिनिधि कविताएँःअज्ञेय	सं.विद्यानिवास मिश्र, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली
70	प्रसाद ग्रंथावली	जयशंकर प्रसाद, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1986
71	प्रादेशिक भाषा और साहित्येतिहास	सूर्यनारायण रणसुभे, लातूर जिला हिंदी साहित्य परिषद, लातूर-413531, प्र.सं.2004
72	प्रतिनिधि कवि एवं लेखक	डॉ.राजेश्वरप्रसाद चतुर्वेदी, प्रकाशन केंद्र, रेल्वे क्रॉसिंग, सीतापुर रोड, लखनऊ-226020
73	फिलहाल	अशोक वाजपेयी, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र.अ.1989
74	भाषा और संवेदना	रामस्वरूप चतुर्वेदी, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1981
75	भवंती	अज्ञेय, राजपाल एंड संस प्रकाशन, दिल्ली, द्वि.सं.1972
76	भूरी-भूरी खाक धूल	मुक्तिबोध,

		राजकमल प्रकाशन, नई दिल्लजी, 1980
77	मराठी साहित्य परिदृष्य	सं.रामपंडित चंद्रकांत बांदिवडेकर, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्र.सं.1997
78	मराठी भाषा और साहित्य	राजमल बोरा, गणेश अष्टेकर, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, 23, दरियागंज, नई दिल्ली-110002, प्र.सं.1986
79	मुक्तिबोध रचनावली	सं.नेमीचंद्र जैन, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली
80	मुक्तिबोधः जीवन संघर्ष बनाम काव्य संघर्ष	डॉ.श्याम राव, मिलिंद प्रकाशन, कंदास्वामी बाग, सुलतान बजार, हैदाराबाद-500095, प्र.सं.2008
81	मेपल	प्रभाकर माचवे, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, वाराणसी, प्र.सं.1967
82	मैनेजर पाण्डेय, संकलित निबंध	सं.मधुरेश, नेशनल बुक ट्रस्ट, प्लॉट नं.5, इंस्टीट्यूशनल एरिया फेज-II, वसंत कुंज, नयी दिल्ली-110070, प्र.सं.2008
83	भारतीय साहित्य की रूपरेखा	डॉ.भोलाशंकर व्यास, चौखंबा विद्याभवन, वाराणसी, प्र.सं. 2020 वि.सं.
84	भारतीय साहित्य	सं.नगेंद्र
85	तुलनात्मक अनुसंधान एवं उसकी समस्याएँ	सं.डॉ.एस.गुलाम रसूल, डॉ.सरगु कृष्ण मूर्ति, हिंदी साहित्य भंडार, 55, चौपरिया रोड, लखनऊ-226003, प्र.सं.1980
86	धर्मवीर भारती और प्रकाश पारगांवकर	श्रीमती चंद्रलेखा डिसौझा, मिलिंद प्रकाशन, हैदराबाद, प्र.सं.1997
87	धूप के धान	गिरिजा कुमार माथुर, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, काशी, प्र.सं.1958
88	रघुवीर सहाय का कवि कर्म	सुरेश शर्मा, वाणी प्रकाशन, 2/ए, दरियागंज, नई दिल्ली-110002, प्र.सं.2002
89	समीक्षा की समस्याएँ	ग.मा.मुक्तिबोध, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली
90	सर्वेश्वरदयाल सक्सेना	कृष्णदत्त पालीवाल,

		साहित्य अकादमी, नई दिल्ली, प्र.अ.1997
91	समसामायिकता और आधुनिक हिंदी कविता	रघुवंश, केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा-5, द्वि.सं.1993
92	सात गीत वर्ष	धर्मवीर भारती, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, प्र.सं.1969
93	सर्वेश्वर दयाल सक्सेना	कृष्णदत्त पालीवाल, साहित्य अकादमी, नई दिल्ली-1997
94	साहित्यिक निबंध	डॉ.गणपतिचंद्र गुप्त, लोकभारती प्रकाशन, 15-ए, महात्मा गाँधी मार्ग, इलाहाबाद, सत्रहवां संस्करण-2000
95	हिंदी साहित्य का इतिहास	आचार्य रामचंद्र शुक्ल, प्रकाशन संस्थान, 4715/21, दयानंद मार्ग, दरियागंज, नयी दिल्ली-110002, वर्ष 2007
96	हिंदी साहित्य का दूसरा इतिहास	बच्चन सिंह, राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, 7/13, अंसारी रोड, दरियागंज, नयी दिल्ली-110002, संशोधित सं-2006
97	हिंदी साहित्य का इतिहास	विश्वनाथ त्रिपाठी
98	हिंदी साहित्य की भूमिका	डॉ.हजारी प्रसाद द्विवेदी, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1976
99	हिंदी साहित्य का इतिहास	सं.डॉ.नगेंद्र, मयूर पेपरबैक्स, ए-95/5, नोएडा, 201301, नई दिल्ली, पुनर्मुद्रण-2001
100	हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास	रामस्वरूप चतुर्वेदी, लोकभारती प्रकाशन, 15-ए, महात्मा गाँधी मार्ग, इलाहाबाद-1
101	हिंदी उपन्यास और यथार्थवाद	त्रिभुवन सिंह, हिंदी प्रचारक पुस्तकालय, पो.ब.नं.70, ज्ञानवापी, बनारस सीटी
102	हिंदी साहित्यःबीसवीं शताब्दी	शिवदान सिंह चौहान
103	स्वातंत्र्योत्तर हिंदी काव्य चेतना	डॉ.प्रतिभा गर्ग, अन्नपूर्णा प्रकाशन, साकेत नगर, कानपुर-288014, प्रथम संस्करण 1994
104	हिंदी नवलेखन	रामस्वरूप चतुर्वेदी, भारतीय ज्ञानपीठ, काशी, प्र.सं.1960

105	हिंदी कविताः संवेदना और दृष्टि	राममनोहर त्रिपाठी, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, 23, दरियागंज, नई दिल्ली-110002, प्र.सं.1970
106	तार सप्तक	सं.अज्ञेय, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, नेताजी सुभाष मार्ग,नई दिल्ली-06, द्वितीय सं.1966
107	तार सप्तक के कवियों की समाज चेतना	डॉ.राजेंद्र प्रसाद, वाणी प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली-2, प्र.सं.1987
108	दूसरा सप्तक	सं.अज्ञेय, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, नेताजी सुभाष मार्ग,नई दिल्ली-06, द्वितीय सं.1970
109	तीसरा सप्तक	सं.अज्ञेय, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, दुर्गाकुंड रोड, वारावसी, प्र.सं.1959
110	चौथा सप्तक	सं.अज्ञेय, सरस्वती विहार प्रकाशन, 21, दयानंद मार्ग, दरियागंज, नई दिल्ली-110002, प्र.सं.1979

पत्र-पत्रिकाएँ

1) आलोचना, अप्रैल 1964-66, सं.शिवदान सिंह चौहान

2) आलोचना, 1954, सं.धर्मवीर भारती

3) वसुधा (समकालीन मराठी साहित्य विशेषांक), सं.स्वयंप्रकाश, राजेंद्र शर्मा, अतिथि संपादक चंद्रकांत पाटील, अक्तू-दिसंबर 2006

4) समकालीन भारतीय साहित्य (94), मार्च-अप्रैल 2001, साहित्य अकादमी, नई दिल्ली

5) मधुमति, जुलाई 1994

6) दस्तावेज, अक्तूबर 1977

मराठी ग्रंथ

क्र.सं.	संदर्भ ग्रंथ का नाम	लेखक का नाम व प्रकाशक
1	अनन्यता मर्ढेकरांची	डॉ.द.भि.कुळकर्णी, पद्मगंधा प्रकाशन, 36/11, धन्वंतरी सह.गृह.संस्था, पांडुरंग कॉलणी, एरंडवण, पुणे-411038, प्रथम आवृत्ति 2009
2	अरुण कोलटकरांची कविता : काही दृष्टिक्षेप	सं.वसंत पाटणकर, मराठी विभाग, मुंबई विद्यापीठ, लोकवाङ्मय गृह, भूपेश गुप्ता भवन, 85, सयानी रोड, प्रभादेवी, मुंबई-400025, द्वितीय आवृत्ति, जुलाई 2004
3	अर्वाचीन मराठी काव्यदर्शन	डॉ.अक्षयकुमार काळे, पां.ना.बनहट्टी प्रकाशन, 224, टिकेकर रोड, धनतोली, नागपुर-440 012, प्र.आ. 1999
4	अर्वाचीन मराठी वाङमयाचा इतिहास, 1800-1960	प्र.न.जोशी, स्नेहवर्धन प्रकाशन, 863, सदाशिव पेठ, महात्मा फूले सभागृहामागे, पुणे-411030, द्वितीय आवृत्ति, 2000
5	आधुनिक मराठी वाङमयाचा इतिहास (1818 ते 1999)	डॉ.वसंत बिरादार, कैलाश पब्लिकेशन्स, औरंगपुरा, औरंगाबाद, प्र.आ.1999
6	आधुनिक कवि पंचक	माडखोलकर ग.त्र्यं., भट आणि मंडळी, पुणे, प्र.आ.1921
7	आधुनिक कवितेचे प्रणेते-भाग 1, 2	भ.श्री.पंडित, नागपुर प्रकाशन, नागपुर, प्र.आ.1971

8	आधुनिक मराठी काव्य 'उद्गम, विकास आणि भवितव्य'	दि.के.बेडेकर, लोकवाङ्मय ग्रह, मुंबई-025, द्वि.आ.1978
9	आधुनिक मराठी वाङमयाचा इतिहास भाग-1, 2	अ.ना.देशपांडे, व्हीनस प्रकाशन, 381, क, शनिवार पेठ, पुणे-30, पुनर्मुद्रण-जानेवारी, 1979
10	आधुनिक मराठी कविता	प्रा.भ.श्री पंडित, सुविचार प्रकाशन मंडळ लि, नागपुर-1, प्र.आवृत्ति, 1952
11	आधुनिक मराठी पद्याचा पायाभूत अभ्यास	सं.डॉ.कृष्णचंद्र ज्ञाते, अभय प्रकाशन, 112, नंदादिप, विवेक नगर, नांदेड-431602, प्रथम आवृत्ति-1987
12	आधुनिक मराठी कविता : एक दृष्टिक्षेप	डॉ.नागनाथ कोत्तापल्ले, प्रतिभास प्रकाशन, नावंदकर हॉस्पिटल समोर, शिवाजीनगर, परभणी-431401, प्रथम आवृत्ति 1999
13	आशय आणि अविष्कार	डॉ.प्रह्लाद वेडर, मेहता पब्लिशिंग हाऊस, सदाशिव पेठ, पुणे-30
14	आधुनिक मराठी कविता (काही रूपे काही रंग)	गो.म.कुलकर्णी, मेहता पब्लिशिंग हाउस, 1216, सदाशिव पेठ, पुणे-411030, प्रथम आवृत्ति-1991
15	आदिमाया	सं.विजया राजाध्यक्ष, पॉप्युलर प्रकाशन, 35 सी.पं.मालवीय मार्ग, ताडदेव, मुंबई-400034, द्वि.आ.2000
16	आर्दा	य.द.भावे, अजित एजन्सी, वीरभारत प्रेस, टिळक चौक, बेळगाव, प्रथम संस्करण-1949
17	आणखी काही कविता	बा.सी.मर्ढेकर, मौज प्रकाशन लि., खटाववाडी, मुंबई-04
18	अर्वाचीन मराठी कवयित्री	उलका चिडगोपकर, स्नेहवर्धन पब्लिशिंग हाउस, 863, सदाशिव पेठ, पुणे-411030

19	एकुण कविता-1	दिलीप पुरुषोत्तम चित्रे, पॉप्युलर प्रकाशन, 35-सी, पं.मालवीय मार्ग, ताडदेव, मुंबई-400034, प्र.आ.1992
20	काव्य समीक्षेतील धुळाक्षरे	प्रा.रा.ग.जाधव, स्नेहवर्धन प्रकाशन, 863, सदाशिव पेठ, पुणे-411030, प्र.आ.2004
21	कला आणि मानव	बा.सी.मर्ढेकर, मौज प्रकाशन गृह, खटाववाडी, गिरगाव, मुंबई-400004, प्रथम आवृत्ति-1983
22	काव्यातील दुर्बोधता	सं.वा.ल.कुलकर्णी, पाप्युलर प्रकाशन, मुंबई, प्र.आ.1966
23	काव्यगंगेच्या तटावर	डॉ.आशा सावदेकर, विजय प्रकाशन, हनुमान गल्ली, सीताबर्डी, नागपुर-440022, प्रथम आवृत्ति-2005
24	काही मराठी कविः जाणिवा आणि शैली	सुधीर रसाळ, शारदा प्रकाशन, वजिराबाद, नांदेड, प्रथम आवृत्ति-1984
25	कविता दशकाची	सं.मंगेश पाडगावकर, विजया राजाध्यक्ष, ग्रंथाली प्रकाशन, 34/902, नेहरू नगर, कुर्ला, मुंबई, प्रथम आवृत्ति-1980
26	कविता विसाव्या शतकाची	सं.शांता शेळके, निलिमा गुंडी, उत्कर्ष प्रकाशन, पुणे
27	कवितेतील आधुनिकतावाद	डॉ.केशव सद्रे, शब्दालय प्रकाशन, वार्ड-7, श्रीरामपुर-413, 7009, प्रथम आवृत्ति-2000
28	काही कविता	बा.सी.मर्ढेकर, युगवाणी प्रकाशन, त्रिभुवन रोड, मुंबई-4, प्रथम आवृत्ति-1947

29	कविता	दिलीप पुरुषोत्तम चित्रे, मौज प्रकाशन गृह, खटाववाडी, मुंबई-04, प्रथम आवृत्ति-1960
30	कविता फुलते अशी	सं.वा.रा.ढवळे, व.दि.कुलकर्णी, ओरियंट लांगमन लि., कामाणी मार्ग, बॅलार्ड एस्टेट, मुंबई-400038, प्रथम संस्करण-1975
31	कवीच्या गावा जावे	मंदा खांडगे, प्रतीमा प्रकाशन, 1362, सदाशिव पेठ, नवा विष्णु मंदिर चौक, पूणे-411030, प्र.आ.2001
32	5 कवी	मं.वि.राजाध्यक्ष्य, केशव भिकाजी ढवळे, गिरगाव, मुंबई-04, प्रथम आवृत्ति-1946
33	छांदसी	पु.शि.रेगे, मौज प्रकाशन गृह, गिरगाँव, मुंबई-04, प्र.आ.1968
34	छोरी	मंगेश पाडगावकर, मौज प्रकाशन गृह, खटाववाडी, गिरगाव, मुंबई-400004, चवथी आवृत्ति-2003
35	जिप्सी	मंगेश पाडगावकर, मौज प्रकाशन गृह, खटाववाडी, गिरगाव, मुंबई-400004, पंधरावी आवृत्ति-2007
36	जातक	विंदा करंदीकर, पॉप्युलर प्रकाशन प्रा.लि., 25 सी. पं.मालवीय मार्ग, ताडदेव, मुंबई-400034, प्रथम संस्करण-1968
37	जीवन आणि साहित्य	श.मा.मुक्तिबोध, अभिनव प्रकाशन, मुंबई, प्र.आ.1971

38	तीन आर्वाचीन कविः मार्क्सवादी दृष्टिक्षेप	प्रा.सं.त्र्यं कुल्ली, लोकवाङ्मय गृह, 85, सयानी रोड, भुपेश गुप्ता भवन, प्रभादेवी मुंबई-25
39	तौलनिक साहित्यः नवे सिद्धांत आणि उपायोजन	डॉ.आनंद पाटील, साकेत प्रकाशन प्रा.लि., 115, म.गांधीनगर स्टेशन रोड, औरंगाबाद-431218, प्रथम आवृत्ति-1998
40	धृपद	विंदा करंदीकर, पॉप्युलर प्रकाशन प्रा.लि., 25 सी. पं.मालवीय मार्ग, ताडदेव, मुंबई-400034, तृतीय पुनर्मुद्रण-2004
41	निवडक चि.त्र्यं. खानोलकर	सं.रवींद्र धवी, साहित्य अकादमी, रविंद्र भवन 35, किरोज शाह मार्ग, नई दिल्ली-110001, पुनर्मुद्रण-2008
42	निवडक मराठी समीक्षा	सं.म.द.हातकणंगलेकर, गो.मा.पवार, साहित्य अकादमी, रविंद्रभवन, 35, फिरोजशाह मार्ग, नवी दिल्ली, पुनः 2007
43	निवडक सदानंद रेगे	सं.वसंत आबाजी डहाके साहित्य अकादमी, रविंद्र भवन-35, किरजशाह रोड, नवी दिल्ली-110 001, प्र.आ.1996
44	नवकवितेचे एक तप	रा.अ.काळेले, मनोहर ग्रंथमाला, 1609, सदाशिव पेठ, पुणे-2, प्रथम आवृत्ति, 1960
45	नव वाङमयीन प्रवृत्ति आणि प्रमेय	रा.श्री.जोग, कॉन्टिनेंटल प्रकाशन, पुणे, प्र.आ.1972
46	नवी मळवाट	शरच्चंद्र मुक्तिबोध, मौज प्रकाशन गृह, खटाववाडी, मुंबई-04, चतुर्थ संस्करण-1997

47	प्रदक्षिणा खंड-1	सं.रा.श्री.जोग, पां.ना.बनहट्टी, कॉन्टिनेंटल प्रकाशन, विजयानगर, पुणे-411030, पुनर्मुद्रण-2002
48	प्रदक्षिणा खंड-2	सं.रविंद्र घवी, पुष्पा भावे, कॉन्टिनेंटल प्रकाशन, विजयानगर, पुणे-411030, पुनर्मुद्रण 2004
49	पहिली परंपरा	द.भि.कुलकर्णी, अमेय प्रकाशन, रुईकर मार्ग, नागपुर-440 002, प्रथम आवृत्ति-1976
50	परंपरा आणि नवता	गो.वि.करंदीकर, पाप्युलर प्रकाशन, 35, सी.पं.मालवीय मार्ग, ताडदेव, मुंबई-400034, प्र.आ.1967
51	पुष्पगंधा	य.द.भावे, मौज प्रकाशन ग्रह, खटाववाडी, मुंबई-400004, प्रथम संस्करण-1985
52	पार्थिवतेचे उदयास्त	द.भि.कुलकर्णी, पॉप्युलर प्रकाशन, 35, सी ताडदेव, मुंबई-400038, प्रथम आवृत्ति-1977/1899
53	बा.सी.मर्ढेकर	डॉ.यशवंत मनोहर, साहित्य अकादमी, रविंद्र भवन, 35, फिरोज शाह मार्ग, नवी दिल्ली-110001, तृतीय आवृत्ति-1997
54	भग्नमुर्ती	अनिल, व्हीनस प्रकाशन, पुणे, द्वि.आ.1965
55	मराठी वाङमयाचा इतिहास	प्रा.रा.ना.घाटोळे, श्री मंगेश प्रकाशन, श्री शंता दुर्गा निवास, 23, नवी रामदास पेठ, नागपुर-440 010, तृतीय आवृत्ति, 1995
56	मराठी कविता 1920 ते 50	सं.वि.ह.कुळकर्णी, रा.भि.जोशी, प्रभाकर पाध्ये, वा.ल.कुळकर्णी, मौज प्रकाशन, खटाववाडी, गिरगाव, मुंबई

57	मराठी कविताःआकलन आणि आस्वाद	डॉ.नागनाथ कोत्तापल्ले, स्वरूप प्रकाशन, अक्षर 858, सहयाद्रीनगर, सिडको, औरंगाबाद-431003
58	मराठी काव्याचे मानदंड खंड-1,2	डॉ.स.रा.गाडगीळ, पद्मगंधा प्रकाशन, 36/11, धन्वंतरी सह.गृह.संस्था, पांडुरंग कॉलनी, पुणे-411038, प्रथम आवृत्ति-2005
59	मराठी साहित्यःप्रेरणा व स्वरूप (1950-1975)	संपा-गो.मा.पवार, म.द.हातकणंगलेकर, पॉप्युलर प्रकाशन, 35-सी, पं.मालवीय मार्ग, ताडदेव, मुंबई-400034, प्र.आ.1986
60	मराठी कविता आणि आधुनिकता	डॉ.यशवंत मनोहर, अंबेडकर धम्म प्रकाशन, प्रोफेसर्स कॉलनी, अमरावती मार्ग, नागपुर-440010, प्रथम आवृत्ति-1993
61	मराठी कविताःपरंपरा आणि दर्शन.	सं.रविंद्र शोभणे, विजय प्रकाशन, सीतावर्डी, नागपुर-440012, प्रथम आवृत्ति-2006
62	मराठी कविताःजुनी आणि नवी	वा.ल.कुलकर्णी, पाप्युलर प्रकाशन प्रा.लि., 35 सी ताडदेव, मुंबई-400034, प्रथम आवृत्ति-1980
63	मराठी वाङ्मय, चर्चा आणि चिकीत्सा	डॉ.भीमराव कुलकर्णी, नीहार प्रकाशन, 534 बुधवार पेठ, पुणे-411002, प्रथम आवृत्ति, 1993
64	मराठी कविताःनवी वळणे	प्रकाश देशपांडे केजकर, साकेत प्रकाशन प्रा.लि., 115, म.गांधी नगर, औरंगाबाद-431005, प्रथम आवृत्ति-1994
65	मराठी विश्वचरित्र कोश 1,2	सं.श्रीराम पांडुरंग कामत, विश्वचरित्र संशोधन केंद्र, गोवा, प्र.आ. 2000, 2003

66	मराठी कविता, स्वरूप आणि विवेचन	निशिकांत ठकार, स्वाध्याय महाविद्यालय प्रकाशन, पुणे- प्र.आ.1977
67	मर्ढेकरांची कविता	बा.सी.मर्ढेकर, मौज प्रकाशन गृह, खटाववाडी, मुंबई-04, पुनर्मुद्रण-1991
68	मर्ढेकरांची कविता, स्वरूप आणि संदर्भ खंड-1, 2	विजया राजाध्यक्ष, मौज प्रकाशन गृह, खटाववाडी, गिरगाव, मुंबई-400004, प्रथम आवृत्ति 1991
69	मर्ढेकरांचे सौंदर्यशास्त्र पुनःस्थापना	डॉ.द.भि.कुळकर्णी, अमेय प्रकाशन, 2, विजयानंद बिल्डिंग, धनतोली, नागपूर-400010, प्रथम आवृत्ति- 1982
70	मुक्तिबोधांची निवडक कविता	सं.यशवंत मनोहर, साहित्य अकादमी, रविंद्र भवन, 25, फिरोजशाह मार्ग, नवी दिल्ली-110001, प्रथम आवृत्ति, 1993
71	मुक्तिबोधांचे साहित्य	रा.भा.पाटणकर, मौज प्रकाशन गृह, खटाववाडी गिरगाव, मुंबई-400004, प्रथम आवृत्ति-1986
72	रविकिरण मंडळाची निवडक कविता	सं.अनुराधा पोतदार, वसंत कानेटकर, साहित्य अकादमी, रविंद्र भवन, 35, फिरोजशाह मार्ग, नवी दिल्ली-110001, प्रथम आवृत्ति-1994
73	यांत्रिक	शरच्चंद्र मुक्तिबोध, मौज प्रकाशन गृह, खटाववाडी, मुंबई-04, प्रथम संस्करण-1957
74	विवर्त	प्रभा गणोरकर, पॉप्युलर प्रकाशन, 35, सी.मालवीय रोड.ताडदेव, मुंबई-400 038

75	विचारशलाका	सं.प्रा.नागोराव कुंभार
76	वाङमयीन वादस्थळे	वा.ल.कुलकर्णी, पॉप्युलर प्रकाशन, 35, सी.ताडदेव, मुंबई-400 038
77	विसाव्या शतकातील मराठी समीक्षा	सं.विलास खोले, प्रतीमा प्रकाशन, 1362, सदाशिव पेठ, पुणे-411030, प्रथम आवृत्ति-2004
78	वाङमयेतिहास:आठ निबंध	द.दि.पुंडे, प्रतिमा प्रकाशन, 1362, सदाशिव पेठ, औदुंबर अपार्टमेंट, नवा विष्णु मंदिर चौक, पुणे-30, प्रथम आवृत्ति-2003
79	सौंदर्य आणि साहित्य	बा.सी.मर्ढेकर, मौज प्रकाशन गृह, खटाववाडी, गिरगाव, मुंबई-400004, तीसरी आवृत्ति-1975
80	साठोत्तरी मराठी कविता व कवि	रा.ग.जाधव, साकेत प्रकाशन प्रा.लि., 115 म.गांधीनगर, स्टेशन रोड, औरंगाबाद-431005
81	सदानंद रेगे यांचे काव्य विश्व	म.सु.पाटील, प्रतिमा प्रकाशन, 1359, सदाशिव पेठ, पुणे-30, प्र.आ.1989
82	सुहदगाथा, पु.शि.रेगे यांची निवडक कविता	गंगाधर पाटील, कॉन्टिनेंटल प्रकाशन, विजयानगर, कॉलनी, पुणे-30, प्रथम आवृत्ति-1975
83	साहित्य आणि अस्तित्वभान	दिलीप पुरुषोत्तम चित्रे, शब्दालय प्रकाशन, पोस्ट बॉक्स नं.90, वार्ड 7, श्रीरामपुर-413709
84	सुक्त संदर्भ	डॉ.अक्षय कुमार काळे, अमेय प्रकाशन, 85, कॅनाल रोड, रामदास पे., नागपुर-440010, प्रथम आवृत्ति 1985
85	साहित्यास्वाद	सं.प्रा.शैलेश त्रिभुवन, के.एस.पब्लिकेशन, पुणे, प्र.आ.2006

86	साहित्य विवेक	म.द.हातकणंगलेकर, श्री विद्या प्रकाशन, 250 क/16, शनिवार पेठ, पुणे-411030, द्वितीय आवृत्ति-2008
87	संक्षिप्त मराठी वाङमय कोश	सं.प्रभा गणोरकर, व.आ.डहाले, जया दंडकर, सदानंद भटकळ, जी.आर.भटकळ फाउंडेशन, 35-सी, पं.मदनमोहन मालवीय मार्ग, मुंबई-400034, प्रथम आवृत्ति-2004
88	साहित्यातील अधोरेखिते	म.द.हातकणंगलेकर, सुपर्ण प्रकाशन, 26, पार्वती, पुणे-411009, प्रथम आवृत्ति-1980
89	साहित्यातील संप्रदाय	डॉ.रा.श.वाळिंबे, कॉन्टिनेंटल प्रकाशन, विजयानगर कॉलनी, पुणे-30, तृतीय आवृत्ति-1974
90	सौंदर्य आणि साहित्य	बा.सी.मर्ढेकर, मौज प्रकाशन, मुंबई, नृ.आ.1975
91	शेला	इंदिरा संत, मौज प्रकाशन, मुंबई-द्वि.आ.1966
92	शुभवर्तमान	व.आ.डहाके, मौज प्रकाशन गृह, खटाववाडी, गिरगाव, मुंबई-400004, प्रथम आवृत्ति-1987
93	शिशिरागम	बा.सी.मर्ढेकर पॉप्युलर प्रकाशन, 35, सी.मालवीय रोड.ताडदेव, मुंबई-400 038
94	सूरदास	मंगेश पाडगावकर, मौज प्रकाशन गृह, खटाववाडी, गिरगाव, मुंबई-400004, दूसरी आवृत्ति-2004
95	संवाद	विजया राजाध्यक्ष, ग्रंथाली, वाचक चळवळ, 34/902, नेहरू नगर, कुर्ला, मुंबई-400024, प्रथम आवृत्ति-1985

96	साहित्य संचार	वि.भ.कोलते, ठोकळ प्रकाशन, लक्ष्मी रास्ता, पुणे-02, प्रथम आवृत्ति-1965
97	सेतु	वसंत बापट
98	स्वातंत्र्योत्तर मराठी कविता	सं.सुषमा करोगल, प्रतिमा प्रकाशन, 1362, सदाशिव पेठ, औदुंबर अपार्टमेंट, नवा विष्णु चौका जवळ, पुणे-411030, प्रथम आवृत्ति 1999
99	स्वातंत्र्योत्तर मराठी कविता-1945-60	सं.वसंत पाटणकर, साहित्य अकादमी, रविंद्र भवन 35, फिरोजशाह रोड, नई दिल्ली-110001, प्रथम आवृत्ति-2002
100	स्वेद गंगा	विंदा करंदीकर, पॉप्युलर प्रकाशन प्रा.लि., 25 सी. पं.मालवीय मार्ग, ताडदेव, मुंबई-400034, प्रथम आवृत्ति-1949
101	सृष्टि, सौंदर्य आणि साहित्य मूल्य	श.मा.मुक्तिबोध, लोकवाङ्मय गृह, मुंबई, द्वि.आ.1997
102	हळवे भिंग	य.द.भावे, मधुकर प्रिंटिंग प्रेस, बेळगाव, प्रथम आवृत्ति-1951
103	स्त्री साहित्याचा मागोवा भाग-1, भाग-2	सं.डॉ.मंदा खांडगे, डॉ.अरुण ढेरे, साहित्यप्रेमी भगिनी मंडल, पुणे, 580, शनिवार पेठ, श्री समर्थ अपार्टमेंट, केसरी कार्यालया समोर, पुणे-411030, प्रथम आवृत्ति, डिसेर-2002

पत्र-पत्रिकाएँ

1	कविता रति	सं.पुरुषोत्तम पाटील, विजय पोलिस वसाहत, वाडी भोकर रस्ता, देवपुर, धुळो-424002
2	कविता रति, कुसुमाग्रज विशेषांक 1,2	सं.पुरुषोत्तम पाटील, विजय पोलिस वसाहत, वाडी भोकर रस्ता, देवपुर, धुळे-424002
3	कविता रती	सं.पुरुषोत्तम पाटील, विजय पोलिस वसाहत, वाडी भोकर, रस्ता, देवपुर, धुळे-424002
4	सत्यकथा	सं.वि.पु.भागवत, मौज प्रकाशन गृह, खटाववाडी, मुंबई-400004
5	महाराष्ट्र साहित्य पत्रिका	सं.श्रीपाद महादेव माटे
6	कविता रति, रेगे विशेषांक, जुलै अगस्त 78, जुलै अगस्त 80	सं.पुरुषोत्तम पाटील, विजय पोलिस वसाहत, वाडी भोकर, स्ता, देवपुर, धुले-424002

* * *